ISSN 0976-0849

विमर्श

अन्तः अनुशासनात्मक शोध पत्रिका

वर्ष 14 • अंक 14 • आश्विन कृष्ण चतुर्थी, विक्रम सम्वत् 2077 • सितम्बर 2020

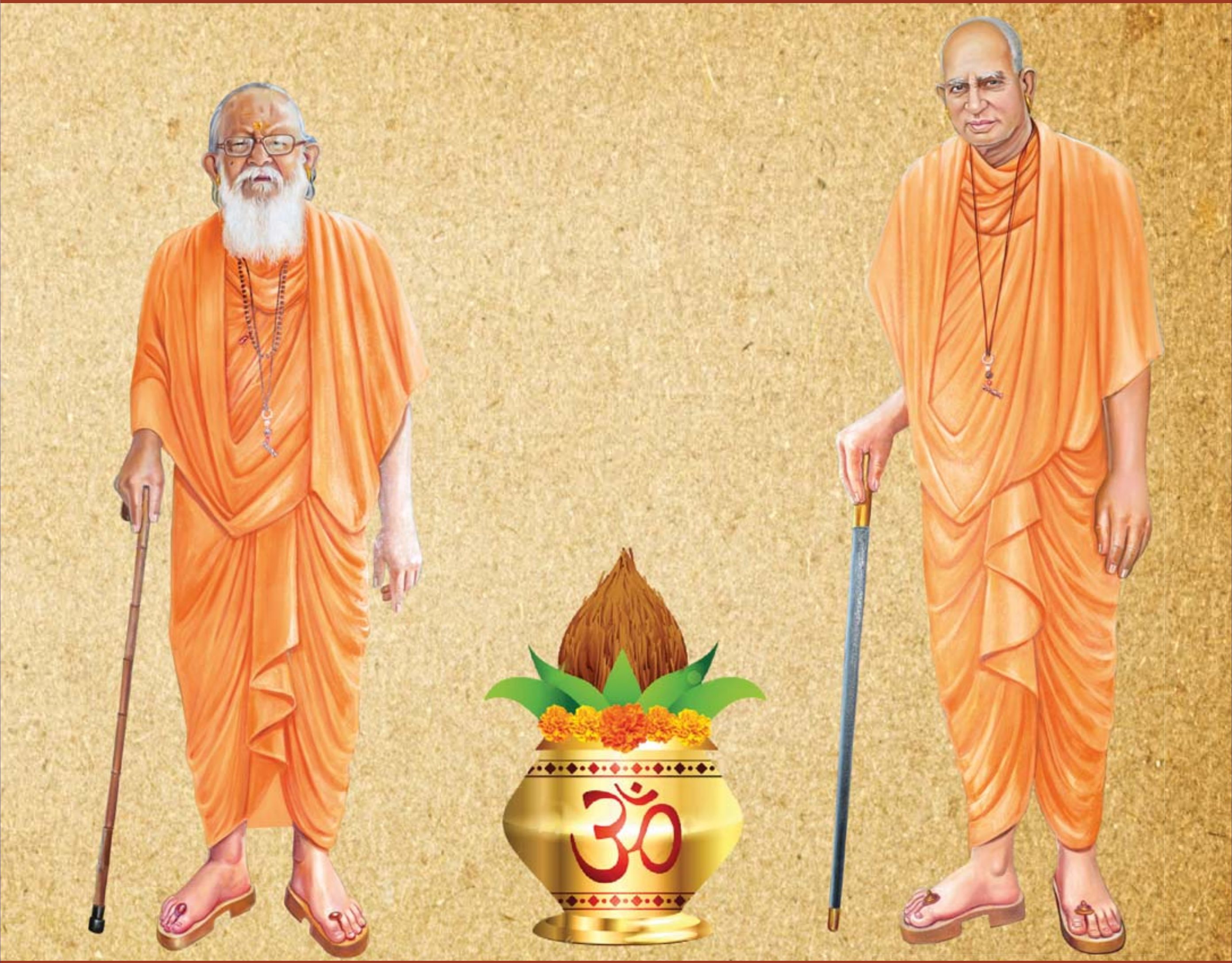

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की 51वीं एवं राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की 6ठवीं पुण्यतिथि की पावन स्मृति को समर्पित

VIMARSH

AN INTERDISCIPLINARY JOURNAL

Editorial Advisory Board

U.P. Singh, Ex Vice Chancellor, V.B.S. Purvanchal University, Jaunpur

Pratap Singh, Ex Chairman, Higher Education Service Commission (HESC), Uttar Pradesh

Ram Achal Singh, Ex Vice Chancellor, R.M.L. Awadh University, Faizabad and
Ex Chairman, Higher Education Service Commission (HESC), Uttar Pradesh

K.B. Pandey, Ex Vice Chancellor, Chhatrapati Shahu Ji Maharaj University, Kanpur and
Ex Chairman, Public Service Commission, Uttar Pradesh

Narendra Kohli, Renowned author and thinker

Makkhan Lal, Director, Delhi Institute of Heritage Research and Management, New Delhi

Mrinal Shankar Raste, Ex Vice Chancellor, Symbiosis International University, Pune

Ram Sakal Pandey, Ex Pro-Vice Chancellor, Allahabad University, Allahabad

Prof. Surendra Dubey, Vice Chancellor, Siddhartha University, Kapilvastu, Siddharthanagar

Shri Prakash Mani Tripathi, Vice Chancellor, Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak (M.P.)

Sadanand Prasad Gupta, Executive Chairman, U.P. Hindi Sansthan, Lucknow

Shivajee Singh, Professor, Ancient History, Archaeology and Culture, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Jay Prakash Chaturvedi, Professor, Physics. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

V.K. Srivastava, Professor, Geography. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

N.K.M. Tripathi, Professor, Psychology. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Pratibha Khanna, Professor, Education. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Murli Manohar Pathak, Professor, Sanskrit. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

S.S. Verma, Professor, Geography. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

S.S. Das, Professor, Chemistry, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

D.K. Singh, Professor, Zoology, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Rajawant Rao, Professor, Ancient History, Archaeology and Culture. D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Himanshu Chaturvedi, Professor, History, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Harsh Sinha, Professor, Defence and Strategic Studies, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Chandrashekhar, Professor, Law, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Pragya Mishra, Professor, Ancient History, Ram Manohar Lohia Awadh University, Faizabad

Manvendra Pratap Singh, Professor, Sociology, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Rajesh Singh, Professor, Political Science, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Mahesh Kumar Sharan, Professor, Maghadh University, Bodhgaya (Bihar)

Ravi Shankar Singh, Professor, Physics, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

B.D. Pandey, Professor, Botany, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Vinod Kumar Singh, Professor, Defence & Strategic Studies, D.D.U. Gorakhpur University, Gorakhpur

Mrityunjay Kumar, Renowned Journalist

विमर्श

अन्तः अनुशासनात्मक शोध पत्रिका

वर्ष 14 • अंक 14 • आश्विन कृष्ण चतुर्थी, विक्रम सम्वत् 2077 • सितम्बर 2020

संपादक
प्रदीप कुमार राव

सह–संपादक
अविनाश प्रताप सिंह
सुबोध कुमार मिश्र
महेश नारायण त्रिगुणायत

महाराणा प्रताप स्नातकोत्तर महाविद्यालय
जंगल धूसड़, गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) 273014

की वार्षिक शोध पत्रिका

This Journal is a *Referral* Volume.

ISSN-0976-0849

Volume 14 • Number 14 • Aashwin Krishna Chaturthi, Vikram Samvat 2077 • September 2020

Vimarsh, an interdisciplinary *referred or peer reviewed* is an annual and bilingual journal of Maharana Pratap P.G. College Jungle Dhusan, Gorakhpur (UP).

Copyright of the published articles, including abstracts, vests in the Editors. The objective is to ensure full Copyright protection and to disseminate the articles, and the journal, to the widest possible readership. Authors may use the article elsewhere after obtaining prior permission from the editors.

Research Papers related to Interdisciplinary subjects are invited for publication in the journal. Research papers, book reviews, Subscription and other enquiries should be sent to - Maharana Pratap P.G. College Jungle Dhusan, Gorakhpur (UP)- 273014, Mob.:9794299451, 9452971570. You may also e-mail your contributions and correspondence at *vimarshmppg@gmail.com*.

Guidelines for Contributors given on the inner side of the back cover.

The Editors and the Publisher cannot be held responsible for errors and any consequences arising from the use of information contained in this journal. The views and opinions expressed do not necessarily reflect those of the editors and the publisher.

Designed & Printed at : Laxdeep Digital India Delhi (Bharat) 7838975278, 7703892262

Subscription Rates

	Individual		Institutional	
Annual	Rs. 100	US $ 5	Rs. 200	US $ 10
Five Years	Rs. 400	US $ 20	Rs. 800	US $ 40
Life (15 Years)	Rs. 1300	US $ 60	Rs. 2500	US $ 100

वन्दे भारतमातरम् !!

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद्भारत नाम भारती यत्र सन्ततिः॥ वायु पुराण
पृथ्वी का वह भाग जो समुद्र के उत्तर में तथा हिमालय के दक्षिण में स्थित है, भारतवर्ष है, जहाँ भारती प्रजा रहती है।

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्याः भोगभूमयः॥ वायु पुराण
इस जम्बू-द्वीप में भी, हे महामुने! भारतवर्ष श्रेष्ठ है, क्योंकि यह कर्मभूमि है और बाकी भोग-भूमियाँ ही हैं।

अत्र जन्म सहस्राणां सहस्रैरपि सत्तम।
कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसञ्चयात्॥ वायु पुराण
भारतवर्ष में जीव हजारों जन्मों के अनन्तर पुण्य जुटाने से कदाचित् मनुष्य जन्म प्राप्त करता है।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥ मनुस्मृति
इस देश में जन्म पाए हुए श्रेष्ठ जन्मा पुरुषों से पृथिवी के सारे मनुष्य अपने-अपने चरित्र की शिक्षा ग्रहण करें।

रत्नाकराधौतपदां हिमालयकिरीटिनीम्।
ब्रह्मराजर्षिरत्नाढ्यां वन्दे भारतमातरम्॥ मनुस्मृति
समुद्र जिसके पाँव पखार रहा है, हिमालय जिसका किरीट है और जो ब्रह्मर्षि-राजर्षिरूप रत्नों से समृद्ध हैं, ऐसी भारत-माता की मैं वन्दना करता हूँ।

भारतीय जीवन दृष्टि

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः।

देवा नो यथा सद्मिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे।। (ऋग्वेद १/४९/१)

कल्याणकारिणी, अप्रतारित, अप्रतिरुद्ध तथा अर्थसाधिका बुद्धियाँ हमारे पास सब ओर से आयें, जिससे निरलस एवं प्रतिदिन रक्षा करने वाले देव सर्वदा हमारी वृद्धि के लिए हों-

भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनुभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः।। (ऋग्वेद १/८/८)

हे देव! हम कानों से अच्छा सुनें। यजनीय देवगण! हम आँखों से अच्छा देखें। हम दृढ़ाङ्गशरीरों से तुम्हारी स्तुति करते हुए, देव-स्थापित आयु प्राप्त करें।

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।

बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽसि ओजो मयि धेहि।

महोऽसि महो मयि धेहि। सहोऽसि सहो मयि धेहि। (यजुर्वेद १९/९)

(हे परमात्मन्! तुम) तेज हो, मुझमें तेज स्थापित करो। पराक्रम हो, मुझमें पराक्रम स्थापित करो। बल हो, मुझमें बल स्थापित करो। ओज हो, मुझमें ओज स्थापित करो। मह हो, मुझमें मह स्थापित करो। सहिष्णु हो, मुझमें सहिष्णुता स्थापित करो।

भद्रं इच्छन्त ऋषयः स्वर्विदः, तपो दीक्षा उपसेदुः अग्रे।

ततो राष्ट्रं बल ओजश्च जात तदस्मै देवा उपसंनमन्तु।। (अथर्वद १९/४१/१)

आत्मज्ञानी ऋषियों ने जगत् का कल्याण करने की इच्छा से सृष्टि के आरम्भ में दीक्षा लेकर जो तप किया, उससे राष्ट्र-निर्माण हुआ, राष्ट्रीय बल और ओज भी हुआ। इसलिए सब विवुध इस राष्ट्र के सामने नम्र होकर इसकी सेवा करें।

आ ब्रह्मन्! ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्यः शूराविध्यतेऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनुः, वोढाऽनड्वान्, आशुः सप्तिः, पुरन्धिर्योषा, जिष्णुरथेष्ठाः, सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्। निकामे-निकामे पर्जन्यो वर्षतु। फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम्। योगक्षेमो नः कल्पताम्। (यजुर्वेद. २२/२२)

हे ब्रह्मन्! राष्ट्र में हमारे ब्राह्मण, ब्रह्म वर्चस्वी हों। हमारे राजन्य शूर, अस्त्र-शस्त्र में निपुण, रिपुदल के महासंहारक तथा महायोद्धा हों। हमारी गायें दुधारू हों, बैल हल आदि ढोने वाले हों, घोड़े वेग से दौड़ने वाले हों, स्त्रियाँ घर सँभालने वाली हों, योद्धा विजयशील हों, तथा युवक सभ्य एवं वीर हों। जब-जब हम चाहें बादल बरसें। हमारी फल-फूलवती खेतियाँ पकती रहें और हमारा योगक्षेम चलता रहे।

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।

तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

पुण्य-स्मृति

गोरक्षपीठ द्वारा संचालित
महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्
शिक्षा क्षेत्र की एक अग्रणी संस्था है।
पूर्वी उत्तर प्रदेश में गोरखपुर को केन्द्र बनाकर
प्राथमिक से उच्च शिक्षा तक लगभग चार दर्जन
शिक्षण संस्थानों का संचालन करने वाले
महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्
की स्थापना १९३२ ई. में
गोरक्षपीठाधीश्वर
महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज
ने की थी और इसे विशाल वटवृक्ष का रूप दिया
उनके शिष्य महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने।
महाराणा प्रताप स्नातकोत्तर महाविद्यालय
इसी महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्
जैसे वटवृक्ष की एक शाखा है।
युगद्रष्टा ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की ५१वीं एवं
राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की ६ठवीं पुण्यतिथि पर
सादर समर्पित है

विमर्श-२०२०

राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

जन्म-तिथि	:	18 मई 1919
जन्म स्थान	:	ग्राम- कांडी, जिला- गढ़वाल (उत्तरांचल)
पारिवारिक स्थिति	:	बाल ब्रह्मचारी
शिक्षा	:	शास्त्री, संस्कृत (वाराणसी एवं हरिद्वार में अध्ययन)
दीक्षा	:	08 फरवरी 1942
गोरक्षपीठाधीश्वर	:	29 सितम्बर 19694
राजनीतिक उपलब्धियाँ	:	**विधानसभा सदस्य**
	卐	1962 मानीराम, हिन्दू महासभा
	卐	1967 मानीराम, हिन्दू महासभा
	卐	1969 मानीराम, हिन्दू महासभा
	卐	1974 मानीराम, हिन्दू महासभा
	卐	1977 मानीराम, जनता पार्टी
		लोकसभा सदस्य
	卐	1970 गोरखपुर संसदीय क्षेत्र, हिन्दू महासभा
	卐	1989 गोरखपुर संसदीय क्षेत्र, हिन्दू महासभा
	卐	1991 गोरखपुर संसदीय क्षेत्र, भारतीय जनता पार्टी
	卐	1996 गोरखपुर संसदीय क्षेत्र, भारतीय जनता पार्टी
संसदीय दायित्व	:	1971 सदस्य, परामर्श समिति, गृह मंत्रालय (भारत सरकार)
		1989 सदस्य, परामर्श समिति, गृह मंत्रालय (भारत सरकार)
महत्त्वपूर्ण पद	:	महासचिव, महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्, गोरखपुर।
धार्मिक पद	:	गोरक्षपीठाधीश्वर, श्री गोरक्षनाथ पीठ, गोरखपुर।
		अध्यक्ष
	卐	श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति।
	卐	अखिल भारतवर्षीय अवधूत भेष बारहपंथ-योगी महासभा, हरिद्वार।
	卐	श्रीराम जन्मभूमि मन्दिर निर्माण उच्चाधिकार समिति।
	卐	गुरु गोरखनाथ सेवा संस्थान, गोरखनाथ, गोरखपुर।

चिकित्सा के क्षेत्र में : **अध्यक्ष**

卐 गुरु श्री गोरखनाथ चिकित्सालय, गोरखनाथ, गोरखपुर।

卐 महन्त दिग्विजयनाथ आयुर्वेद चिकित्सालय, गोरखनाथ, गोरखपुर।

卐 श्री माँ पाटेश्वरी सेवाश्रम चिकित्सालय, देवीपाटीन, तुलसीपुर, बलरामपुर।

卐 गुरु गोरखनाथ इन्स्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइन्सेज, सोनबरसा, मानीराम, गोरखपुर।

सामाजिक-सांस्कृतिक : श्रीराम जन्मभूमि-मुक्ति आन्दोलन के प्रणेता।

साहित्य एवं विज्ञान : विभिन्न मासिक पत्रिकाओं में योग और दर्शन पर लेख प्रकाशित। प्रबन्ध सम्पादक, मासिक पत्रिका 'योगवाणी'।

योग के क्षेत्र में : अध्यक्ष, महायोगी गुरु गोरखनाथ योग संस्थान, गोरखनाथ, गोरखपुर।

ब्रह्मलीन : 12 सितम्बर 2014

जनता दर्शन : 13 सितम्बर 2014

समाधि : 14 सितम्बर 2014

卐

चरैवेति! चरैवेति!

वैदिक ग्रन्थ 'ऐतरेय ब्राह्मण' के 'चरैवेति! चरैवेति!' शीर्षक मंत्र युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज एवं राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के जीवन में साक्षात् दिखता है। इन मंत्रों का मूल स्वरूप और सहज-सरल भावानुवाद यहाँ प्रस्तुत है-

नानाश्रान्ताय श्रीरस्ति इति रोहित शुश्रुम।
पापोनृषद्वरोजनइन्द्रइच्चरतःसखा॥ **चरैवेति! चरैवेति!**

भावार्थ : (हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहित को उपदेश करते हुए इन्द्र कहते हैं) हे रोहित! हम ऐसा सुनते हैं कि श्रम करने से जो नहीं थका है, ऐसे मनुष्य को श्री की अथवा ऐश्वर्य और वैभव की प्राप्ति होती है। बैठे हुए आलसी आदमी को पाप धर दबाता है। इन्द्र उसका ही मित्र है, जो बराबर चलता रहता है। इसलिए चलते रहो! चलते रहो!

पुष्पिण्यौ चरतो जंघे भूष्णुरात्मा फल ग्रहिः।
शेरेऽस्यसर्वेपाप्मानःश्रमेणप्रपथेहताः॥ **चरैवेति! चरैवेति!**

भावार्थ : जो मनुष्य चलता रहता है, उसकी जांघों में फूल फूलते हैं। उसकी आत्मा भूषित और शोभित होकर फल प्राप्त करती है। ऐसे चलने वाले परिश्रमी व्यक्ति के सारे पाप थककर सोये रहते हैं। इसलिए चलते रहो! चलते रहो!

आस्ते भग आसीनस्य ऊर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः।
शेतेनिपद्यमानस्यचरातिचरतोभगः॥ **चरैवेति! चरैवेति!**

भावार्थ : बैठे हुए का सौभाग्य बैठा रहता है और खड़े होने वाले का सौभाग्य उठकर खड़ा हो जाता है। पड़े रहने वाले का सौभाग्य सोता रहता है और उठकर चलने वाले का सौभाग्य चल पड़ता है। इसलिए चलते रहो! चलते रहो!

कलिः शयानो भवति संजिहानस्तुः द्वापरः।
उत्तिष्ठस्त्रेताभवतिकृतंसम्पद्यतेचरन्॥ **चरैवेति! चरैवेति!**

भावार्थ : सोने वाले का नाम कलियुग है, अंगड़ाई लेने वाला द्वापर है, उठकर खड़ा होने वाला त्रेता है और चलने वाला सतयुगी होता है। इसलिए चलते रहो! चलते रहो!

चरन्वै मधु विन्दति चरन्स्वादुमुदम्बरम्।
सूर्यस्यपश्यश्रेमाणंयोनतन्द्रयतेचरन्॥ **चरैवेति! चरैवेति!**

भावार्थ : चलता हुआ मनुष्य ही मधु (अमृत) प्राप्त करता है। चलता हुआ मनुष्य ही स्वादिष्ट फलों को चखता है। सूर्य के परिश्रम को देखो, जो नित्य चलता हुआ कभी आलस्य नहीं करता। इसलिए चलते रहो! चलते रहो!

卐

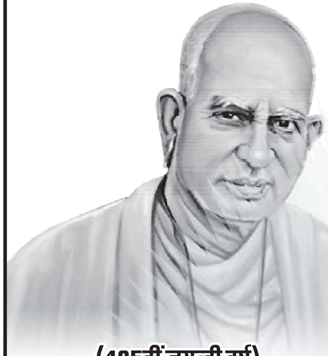

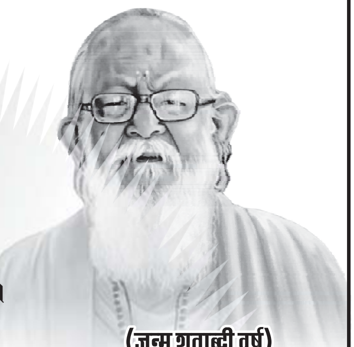

जननी जन्मभूमिश्च, स्वर्गादपि गरीयसी
जो हठि राखे धर्म को, तिहिं राखै करतार।।

(125वीं जयन्ती वर्ष)

(जन्म शताब्दी वर्ष)

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की 51वीं
एवं
राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के 6वें पुण्यतिथि

की पावन स्मृति में आयोजित

ऑनलाइन
साप्ताहिक व्याख्यान–माला

17 अगस्त से 23 अगस्त, 2019

उद्घाटन व्याख्यान

17 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता	:	**श्रीमती लीना मेहेंदले** सेवा. नि. मुख्य सूचना आयुक्त, गोवा (भारत सरकार)
विषय	:	राष्ट्रीय चेतना

18 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता	:	**मेजर जन. अजय चतुर्वेदी** से. नि. भारतीय सेना
विषय	:	राष्ट्रीय सुरक्षा

19 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता : **डॉ नचिकेता तिवारी**

आचार्य, आई. आई. टी. कानपुर

विषय : पाणिनीय शिक्षा शास्त्र में विज्ञान एवं गणित

20 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता : **वैद्य अजय दत्त शर्मा**

वरिष्ठ आयुर्वेदाचार्य

विषय : आयुर्वेद : एक ईश्वरीय वरदान

21 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता : **ले. जन. दुष्यन्त सिंह**

से. नि. भारतीय सेना

विषय : नेतृत्व क्षमता

22 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता : **डॉ. वी. रामानाथन**

आचार्य, आई. आई. टी. बी. एच. यू., बनारस

विषय : भारतीय काव्य परम्परा में स्त्रियों का योगदान

समापन व्याख्यान

23 अगस्त 2020, प्रातः 11.00 बजे

मुख्य वक्ता : **श्री सुशील पंडित**

भारतीय कश्मीरी मानवाधिकार कार्यकर्ता

विषय : कश्मीर : कल, आजकल और कल

Vimarsh

An Interdisciplinary Journal

Volume 14 • Number 14 • Aashwin Krishna Chaturthi, Vikram Samvat 2077 • September 2020

CONTENTS

Articles **Pages**

1. श्रीराममन्दिर आन्दोलन एवं महन्त अवेद्यनाथ
   अविनाश प्रताप सिंह.. 13
2. श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और गोरक्षपीठ
   सचिन राय..27
3. नाथपन्थ की प्राचीनता
   पद्मजा सिंह..43
4. भारतीय संस्कृति और सभ्यता
   शिप्रा सिंह 52
5. 21वीं सदी में नेतृत्व : सैन्य सेवा से सीख
   ले.ज. दुष्यन्त सिंह..66
6. राष्ट्रीय चेतना के आयाम
   लीना महेन्डले..72
7. आयुर्वेद : एक ईश्वरीय देन -गाँव की पगडण्डियों से निकलता है सभी के कल्याण का मार्ग
   वैद्य अजयदत्त शर्मा..78
8. गिरिव्रज राजगृह की ऐतिहासिकता
   सुबोध कुमार मिश्र..82
9. लोकतान्त्रिक सरकारें, सुशासन और मीडिया
   कृष्ण कुमार..92
10. Legal Protection of Right to Food in India
    Alok Kumar & T.N. Mishra..97
11. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवीय मूल्यों की प्रासंगिकता : एक दृष्टि
    मनीष कुमार..101
12. श्रीरामचरितमानस में संग-प्रभाव
    फूलचन्द प्रसाद गुप्त..107
13. Indo-Nepal Relation : A Need for Reboot
    Maj.Gen. A.K. Chaturvedi..114
14. A Brief Introduction of Surface Enhanced Raman Spectroscopy
    Manish Kumar Tripathi & Suresh Kumar Pandey..129
15. How do Insects Communicate?
    Kritika Rao..141

16. पूर्वांचल की आध्यात्मिक भूमि पर स्वामी विवेकानन्द का आध्यात्मिक भ्रमण
अश्विनी कुमार....................147
17. Women and their changing role in India's Present scenario
Pooja Singh....................168
18. योग और विज्ञान
बबिता सिंह....................176
19. माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य एवं महत्त्व
गिरीश चन्द्र पाठक....................180
20. A Practical understanding of job satisfaction in North Eastern Railway and...
Subhash Kumar Gupta....................193
21. नाथ साहित्य में प्रतीक विधान
सन्तोष कुमार सिंह....................203
22. नाथपन्थ का जीवन दर्शन
समीर कुमार पाण्डेय....................211
23. नाथपन्थ का लोककल्याणकारी हठयोग
सलिलकुमार पाण्डेय....................215
24. कला, कलाकार और व्यवसाय
दीप्ति गुप्ता, वेदप्रकाश मिश्र....................219
25. भारत में महिला सशक्तीकरण : दशा एवं दिशा
हनुमान प्रसाद उपाध्याय....................227
26. Internal and External Linkages of Naxalites : Threats to India's Internal Security
Praveen Kumar Singh....................232
27. Living at the Edge : National Security Implications of Climate Change for India
Abhishek Singh....................243
28. Interaction Energy Calculation For Selected Pyridine Molecules
Shailendar Kumar Thakur....................259
29. Sanskrit Women Poetesses : A Glimpse
V. Ramanathan....................271
30. Helicopter Money - A Fiscal Stimulus
Rahul Mishra....................281
31. नाथ साहित्य का भारतीय संस्कृति में योगदान
अंजना राय....................287
32. 'नाथ' शब्द का निहितार्थ
रामदरश राय....................294
33. नाथपन्थ का सामाजिक सरोकार
प्रदीप कुमार राव....................300

श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन एवं महन्त अवेद्यनाथ

अविनाश प्रताप सिंह*

सार-संक्षेप : श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का कार्य प्रारम्भ होने जा रहा है, ऐसे समय में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन की अथक यात्रा जिसका कुशल नेतृत्व गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने बहुत ही सफलता के साथ किया, जिसकी परिणति ही यह ऐतिहासिक निर्णय है। यहाँ एक बात और महत्त्वपूर्ण है कि महन्त अवेद्यनाथ जी की दृढ़ इच्छा हमेशा से रही है कि श्रीरामजन्मभूमि का समाधान शान्तिपूर्ण ढंग से ही सम्भव है और अब जबकि सर्वोच्च न्यायालय का इतना बड़ा ऐतिहासिक निर्णय करोड़ों हिन्दुओं की आस्था को गौरवान्वित करते हुए आ गया है और जिस सहजता के साथ आम जनमानस ने स्वीकार्य किया है। ऐसे में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और उसके कुशल नेतृत्वकर्ता गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की भूमिका का अध्ययन अपने आप में न केवल रोचक हो जाता है वरन् बेहद समीचीन भी है। यह सुखद संयोग है जब रामलला के पक्ष में फैसला आया तो उस निर्णय को लागू करने के लिए मुख्यमन्त्री के रूप में गोरखनाथ मन्दिर के पीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज मौजूद हैं। श्रीरामजन्मभूमि मामले में जब भी कोई महत्त्वपूर्ण घटना घटी, उसका नाता नाथपीठ से जरूर रहा। श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन से गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के जुड़ते ही यह जनान्दोलन का रूप लेने लगा। कारण स्पष्ट है क्योंकि गोरक्षपीठ की यह प्रकृति भी है और प्रवृत्ति भी। गोरक्षपीठ की साधना एवं सेवा प्रकल्पों में साधारण जन की अत्यन्त प्रतिष्ठा रही है, इस कारण गोरक्षपीठ द्वारा श्रीरामजन्मभूमि का नेतृत्व सँभालते ही आमजन का स्वाभाविक समर्थन आन्दोलन को प्राप्त होने लगा। दूसरी ओर स्वयं महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन को राष्ट्रीय पहचान मिले इसके लिए आवश्यक था कि आन्दोलन के लिए राष्ट्रीय चेतना जागृत किया जाय।

बीज शब्द : दिव्य कर्म संघर्ष, साधना, सेवा-प्रकल्प, राष्ट्रीय चेतना, रथयात्रा, मुक्ति यज्ञ समिति, शिलापूजन, कारसेवा, साम्प्रदायिकता, मण्डल कमीशन, इबादत, तुष्टीकरण, परिणामकारी संघर्ष, सामाजिक समरसता।

*विभागाध्यक्ष-राजनीतिशास्त्र, महाराणा प्रताप स्नातकोत्तर महाविद्यालय जंगल धूसड़, गोरखपुर

'श्रीरामजन्मभूमि एक शाश्वत सत्य है'[1], तत्कालीन गोरक्षपीठाधीश्वर एवं श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति के सर्वमान्य अध्यक्ष महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का एक छोटा-सा वाक्य वास्तव में कितना बड़ा ब्रह्मवाक्य है इसका अन्दाजा 9 नवम्बर 2019 को भारत के सर्वोच्च न्यायालय का श्रीरामजन्मभूमि पर आये ऐतिहासिक एवं बहुप्रतीक्षित निर्णय से लगाया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में लाखों श्रीरामभक्तों के दिव्य कर्म-संघर्ष का ही वास्तविक प्रतिफल है। वर्षों से विवादित और अनवरत आन्दोलन के उपरान्त अब जब श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का मार्ग प्रशस्त होने से प्रत्येक भारतवंशी रामभक्त आज गोरक्षपीठाधीश्वर ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी का पुण्य स्मरण कर रहा है। यहाँ एक बात और महत्त्वपूर्ण है कि महन्त अवेद्यनाथ जी की दृढ़ इच्छा हमेशा से रही है कि श्रीरामजन्मभूमि का समाधान शान्तिपूर्ण ढंग से ही सम्भव है और अब जबकि सर्वोच्च न्यायालय का इतना बड़ा ऐतिहासिक निर्णय करोड़ों हिन्दुओं की आस्था को गौरवान्वित करते हुए आ गया है और जिस सहजता के साथ आम जनमानस ने स्वीकार्य किया है, यह स्वीकार्यता भारत की लोकतान्त्रिक और संवैधानिक मूल्यों में अगाध आस्था को ही दर्शाता है।[2] इससे स्पष्ट है कि महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य श्रीराम मन्दिर को अपने जीवन-काल में आकार लेता देख रहे थे अब वह साकार होता दिख रहा है।

श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का कार्य प्रारम्भ होने जा रहा है, ऐसे समय में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन की अथक यात्रा जिसका कुशल नेतृत्व गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने बहुत ही सफलता के साथ किया, जिसकी परिणति ही यह ऐतिहासिक निर्णय है। ऐसे में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और उसके कुशल नेतृत्वकर्ता गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की भूमिका का अध्ययन अपने आप में न केवल रोचक हो जाता है वरन् बेहद समीचीन भी है।

अयोध्या में जन्मभूमि पर श्रीराम मन्दिर निर्माण को लेकर 500 वर्षों से चल रहे संघर्ष का सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक फैसले ने बड़ी खूबसूरती से समाधान कर दिया। यह सुखद संयोग है जब रामलला के पक्ष में फैसला आया तो उस निर्णय को लागू करने के लिए मुख्यमन्त्री के रूप में गोरखनाथ मन्दिर के पीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज मौजूद हैं। श्रीरामजन्मभूमि मामले में जब भी कोई महत्त्वपूर्ण घटना घटी, उसका नाता नाथपीठ से जरूर रहा।[3] शुरुआत 22-23 दिसम्बर 1949 से हुई जब विवादित ढाँचे में रामलला का प्रकटीकरण हुआ। उस समय तत्कालीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथ कुछ साधु-सन्तों के साथ वहाँ संकीर्तन कर रहे थे। तभी से श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण से सीधे रूप में गोरक्षपीठ का जुड़ाव प्रारम्भ हो गया। महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज ने सन्त-महात्माओं के साथ मिलकर संघर्ष प्रारम्भ किया।[4] वहीं से

धीरे-धीरे यह अभियान आन्दोलन का रूप लेने लगा। वास्तव में पूज्य महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज अयोध्या में श्रीरामजन्मभूमि पर श्रीराम की पूजा-अर्चना करने की अनुमति हेतु आन्दोलन के सूत्रधार बनकर उभरे। अखिल भारतीय रामायण महासभा मन्दिर निर्माण का नेतृत्व कर रहा था जिसकी कमान गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के हाथ में थी। धीरे-धीरे मन्दिर आन्दोलन का स्वरूप व्यापक होने लगा।[5] समय आगे बढ़ता रहा। महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के बाद श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन की बागडोर अब उनके शिष्य तत्कालीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के हाथों में आयी और यह नेतृत्व अत्यन्त ही निर्णायक रूप में सामने आयी।

श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन का विधिवत एवं परिणामकारी प्रारम्भ 21 जुलाई 1984 ई. को अयोध्या के वाल्मीकि भवन में तब हुई जब तत्कालीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज को श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति का सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुना गया।[6] सम्भवतः यहाँ से ही श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन भारत में एक प्रकार से सामाजिक एवं राजनीतिक क्रान्ति का बड़ा माध्यम बना। 1984 ई. से लेकर परलोकगमन तक महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति का नेतृत्व करते हुए मन्दिर निर्माण के संघर्ष को न केवल जीवन्त रखा, वरन् उसे परिणाम तक पहुँचने का मार्ग भी निर्धारित कर दिया था। सर्वोच्च न्यायालय की मन्दिर निर्माण के प्रति सहमति उसी मार्ग का प्रमुख पड़ाव है। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की श्रीरामजन्मभूमि के लिए एक बहुत लम्बी व प्रभावपूर्ण भूमिका से आमजन परिचित है। वास्तव में गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन के प्रणेता हैं जिनके कुशल नेतृत्व में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन प्रत्येक भारतीय का आन्दोलन बना और अन्ततः सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से भी आन्दोलन को विजयश्री प्राप्त हुई।

श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन से गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के जुड़ते ही यह जनान्दोलन का रूप लेने लगा। कारण स्पष्ट है क्योंकि गोरक्षपीठ की यह प्रकृति भी है और प्रवृत्ति भी। गोरक्षपीठ की साधना एवं सेवा प्रकल्पों में साधारण जन की अत्यन्त प्रतिष्ठा रही है, इस कारण गोरक्षपीठ द्वारा श्रीरामजन्मभूमि का नेतृत्व सँभालते ही आमजन का स्वाभाविक समर्थन आन्दोलन को प्राप्त होने लगा। दूसरी ओर स्वयं महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन को राष्ट्रीय पहचान मिले इसके लिए आवश्यक था कि आन्दोलन के लिए राष्ट्रीय चेतना जागृत किया जाय। इसके लिए पहला बड़ा प्रयास 6 अक्टूबर 1984 ई. को अयोध्या में विशाल जनसभा के साथ सम्पन्न रथयात्रा जो बिहार से चलकर अयोध्या के सरयूघाट पर सम्पन्न हुई थी।[7] श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन को सक्रिय करते हुए भारत के तमाम शहरों, कस्बों में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में व्यापक जनसभाओं, सम्मेलनों का आयोजन सम्पन्न होने लगा। प्रयागराज और लखनऊ की विशाल जनसभाएँ संख्या और संगठन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानी जाती

हैं। लखनऊ की जनसभा ऐतिहासिक थी क्योंकि पहली बार इतनी बड़ी संख्या में लोग एकत्र हुए थे। इस जनसभा की अध्यक्षता महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने की थी। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के कुशल नेतृत्व के कारण ही श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन ने राष्ट्रव्यापी रूप प्राप्त कर लिया। 22 दिसम्बर 1989 ई. को नयी दिल्ली में आयोजित विराट न्दिू सम्मेलन श्रीरामजन्मभूमि को धार देने वाला साबित हुआ। इस सम्मेलन की अध्यक्षता भी गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने की। इस सम्मेलन ने तीन महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया- पहला- श्रीरामजन्मभूमि हिन्दुओं का था और रहेगा; दूसरा- श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण हेतु 8 नवम्बर 1989 ई. को समारोहपूर्वक शिलान्यास कार्यक्रम; तीसरा- लोकसभा चुनाव में श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण के समर्थक प्रत्याशी एवं राजनीतिक दल का हिन्दू जनता का वोट करने का आह्वान। इस सम्मेलन में मुस्लिम समाज से अयोध्या, काशी, मथुरा के तीर्थस्थल को सहर्ष हिन्दू समाज को सौंपने का भी आह्वान किया गया।[8]

श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति तथा अन्य मंचों के माध्यम से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने एक तरफ देश के सन्त-महात्माओं को एक मंच पर ला दिया तो वहीं दूसरी ओर भारत की साधारण जनता में श्रीराम मन्दिर निर्माण के लिए विश्वास पैदा करने का अविरल अभियान प्रारम्भ किया। उनकी इसी संगठनात्मक क्षमता और परिणामकारी नेतृत्व के कारण ही भारत सरकार के तत्कालीन गृहमन्त्री श्री बूटा सिंह ने 20 सितम्बर 1989 ई. को महन्त अवेद्यनाथ जी से मुलाकात का आमन्त्रण दिया। क्योंकि श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन के माध्यम से मन्दिर निर्माण का दबाव लगातार सरकार पर बढ़ रहा था। लेकिन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने 22 सितम्बर 1989 ई. को दिल्ली के बोट-क्लब पर विराट हिन्दू सम्मेलन करने के बाद 25 सितम्बर 1989 ई. को मुलाकात की तिथि निर्धारित की। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज द्वारा निर्धारित तिथि पर दोनों लोगों के मध्य भेंट-वार्ता सम्पन्न हुई। गृहमन्त्री चाहते थे कि 9 नवम्बर 1989 ई को प्रस्तावित श्रीराम मन्दिर निर्माण का कार्यक्रम स्थगित कर दिया जाय लेकिन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने बहुत ही स्पष्ट शब्दों में कहा कि यह निर्णय किसी एक व्यक्ति या संगठन का नहीं है वरन् लाखों हिन्दुओं का निर्णय है। पुनः एक बार उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री नारायणदत्त तिवारी और श्री बूटा सिंह का आमन्त्रण महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज से वार्ता हेतु आया। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के साथ श्री अशोक सिंहल, महन्त नृत्यगोपालदास, श्री दाउदयाल खन्ना भी वार्ता में सम्मिलित हुए। इस भेंट-वार्ता में भी महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने बहुत ही दृढ़ता के साथ कहा कि मन्दिर निर्माण का निर्णय हिन्दू समाज की आस्था से सीधे जुड़ा हुआ है। अतः इसमें परिवर्तन कर पाना या बदल पाना सम्भव नहीं है।[9] श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति के तत्वावधान में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में देशभर में श्रीराम शिलापूजन का अभियान प्रारम्भ हो गया।

सम्पूर्ण भारतवर्ष में श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण की इच्छा के साथ गाँव-गाँव शिलापूजन का कार्यक्रम उत्सव का स्वरूप ग्रहण करने लगा। श्रीराम शिलापूजन कार्यक्रम के माध्यम से विराट हिन्दू समाज को जागृत करने की योजना के साथ महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज गाँव-गाँव, कस्बा-कस्बा, शहर-शहर सभा-सम्मेलन करते हुए विराट हिन्दू समाज को संगठित कर आन्दोलन को नयी दिशा दे रहे थे। अपनी सभाओं में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज स्पष्ट शब्दों में कहा करते थे कि राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की स्थापना के लिए गुफाओं की साधना और मठ-मन्दिर की आराधना से बाहर निकलकर धर्माचार्य देश को दिशा देने के लिए निकल पड़ें। बहुत ही बेबाकी से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने यह भी आह्वान किया कि श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का विरोध करने वाले राजनीतिक दलों का विरोध करने के लिए हिन्दू समाज अब घरों से बाहर निकले।[10] महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के कुशल नेतृत्व में विशाल हिन्दू समाज का जाग्रत होना, मुखर होना, बहुत सुखद अनुभूति थी। उन्होंने स्पष्ट विचार दिया कि बहुसंख्यक समाज के संगठित होने से ही साम्प्रदायिकता और विघटनकारी तत्त्वों को नियन्त्रित किया जा सकता है। स्पष्ट रूप से हमारी निष्ठा राष्ट्र और भारत की संस्कृति में है और इसके लिए निरन्तर प्रयास जारी रहेगा।[11]

श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन के लगातार बढ़ते प्रभाव के कारण तत्कालीन उत्तर प्रदेश की सरकार ने महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज से वार्ता करने हेतु विशेष विमान से 8 नवम्बर 1989 को आने के लिए लखनऊ आमन्त्रित किया। 9 नवम्बर को अयोध्या में श्रीराम मन्दिर निर्माण की तिथि पहले से घोषित थी जहाँ हजारों साधु-सन्त और रामभक्त इकट्ठा हो रहे थे अतः वार्ता के उपरान्त सरकार द्वारा उपलब्ध कराये गये विशेष विमान से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज को अयोध्या पहुँचाया गया।[12] पूर्व निर्धारित कार्य-योजना के अनुसार महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में रामभक्तों के गगनभेदी जयघोष के साथ सन्त-महात्माओं के मन्त्रोच्चारण के बीच श्रीरामजन्मभूमि मन्दिर का शिलान्यास कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ। यहाँ विशेष बात यह रही कि महन्त अवेद्यनाथ जी की इच्छा के अनुसार शिलान्यास की पहली शिला एक हरिजन रामभक्त से रखवाकर सामाजिक समरसता का ऐतिहासिक मिसाल प्रस्तुत किया गया। गोरक्षपीठ की सामाजिक समरसता के दृढ़ अभियान का यह व्यावहारिक अभिव्यक्तिकरण का एक उदाहरण था।[13]

श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन भारत में सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन एक नयी दिशा तय कर रही थी। इस बदलती परिस्थिति में लोकसभा चुनाव की घोषणा हो गयी। श्रीराम मन्दिर निर्माण का विरोध करने वाले राजनेताओं ने यह कहना प्रारम्भ कर दिया कि श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन से जुड़े प्रमुख सन्त-महात्माओं को आम जनता का समर्थन नहीं प्राप्त है, यदि वे जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हैं तो उन्हें चुनाव के द्वारा निर्वाचित होकर जनप्रतिनिधि के रूप में नेतृत्व करना चाहिए। सन्त-महात्माओं के आग्रह पर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने यह चुनौती

स्वीकार की। उन्होंने गोरखपुर से लोकसभा का पर्चा भरा। अपने चुनाव प्रचार में उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा- 'मैं राजनीति से अलग हट चुका था, लेकिन आज हिन्दू समाज के साथ अन्याय हो रहा है, हिन्दू समाज को शासन-सत्ता और उससे सम्बन्धित राजनीतिक दलों द्वारा अपमानित किया जा रहा है। वोट बैंक की राजनीति और हार-जीत के गणित के कारण राजनीतिज्ञ सच बोलने का साहस नहीं कर पा रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में सक्रिय रूप से राजनीति में आना हमारी मजबूरी है। हिन्दू समाज अपमान का घूँट अब नहीं पी सकता।[14] हिन्दू समाज को जागृत करने तथा संगठित करने के लिए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का सक्रिय राजनीति में आना भारतीय राजनीति में एक बड़े परिवर्तन का सूचक था।

उन्होंने कहा कि हिन्दू समाज पर हो रहे चौतरफा हमले तथा संसद में भारतीय संस्कृति को अपमानित करने वाले प्रस्तावों पर बहुसंख्यक समाज द्वारा चुन कर जाने वाले प्रतिनिधियों के मौन ने एक बार मुझे फिर मठ से बाहर राजनीति की धरती पर पैर रखने के लिए बाध्य कर दिया है।[15] वास्तव में महन्त अवेद्यनाथ जी का यह उद्‌गार युगपरिवर्तन का स्पष्ट सन्देश था जिसका साकार प्रस्फुटन भविष्य में होने का स्पष्ट संकेत दे रहा था। 12 दिसम्बर 1989 ई. में गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति के तत्वावधान में सरकार से माँग की गयी कि श्रीरामजन्मभूमि स्थान हमें सौंप दें।[16] लेकिन तत्कालीन सरकार द्वारा कोई सन्तोषजनक निर्णय न किये जाने के कारण सन्त सम्मेलन में 14 जनवरी 1990 से श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का कार्य आरम्भ करने का संकल्प लिया गया।[17] इस संकल्प को पूरा करने के लिए आन्दोलन को और सक्रिय करते हुए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की अध्यक्षता में 9 फरवरी 1990 ई. को नयी दिल्ली में श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति तथा विश्व हिन्दू परिषद् की ग्यारह सदस्यीय उच्चाधिकार समिति की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बैठक हुई। बैठक के उपरान्त संवाददाता सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि प्रधानमन्त्री विश्वनाथ प्रताप सिंह द्वारा श्रीरामजन्मभूमि का स्थायी समाधान के लिए चार माह का समय माँगा गया है। अत: चार माह के लिए मन्दिर निर्माण का कार्य स्थगित कर दिया है। समय दिये जाने के बाद भी तत्कालीन सरकार द्वारा कोई ठोस प्रयास मन्दिर निर्माण के लिए नहीं किया गया। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में विश्व हिन्दू परिषद् तथा साधु-सन्तों का एक प्रतिनिधिमण्डल प्रधानमन्त्री विश्वनाथ प्रताप सिंह से मिलकर सरकार के उपेक्षापूर्ण रवैये पर गहरी नाराजगी व्यक्त की। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि अब मन्दिर निर्माण की तिथि जो पुन: तय की जायेगी, वह किसी भी दशा में परिवर्तित नहीं की जायेगी तथा श्रीराम मन्दिर वहीं बनेगा जहाँ श्रीरामलला की पूजा होती है। जिन पाँच लाख गाँवों से श्रीराम शिलाएँ आयी थीं वहीं से अब पाँच लाख श्रीरामभक्त अयोध्या आयेंगे।[18] उन्होंने दो टूक कहा कि उस भवन का स्वरूप मस्जिद का है ही नहीं, वहाँ कोई नमाज भी नहीं पढ़ी जाती, वरन् वहाँ तो श्रीराम की पूजा-अर्चना

होती है। अतः वहाँ कोई नया मन्दिर नहीं बनने जा रहा है, बल्कि उसका जीर्णोद्धार करने जा रहे हैं। अब हिन्दू समाज अपने मान-सम्मान के लिए जेल जाने को तैयार है, गोली खाने को तैयार है। महन्त अवेद्यनाथ जी का यह विश्वास उनके नेतृत्व में लगातार जाग्रत एवं संगठित हो रहे विराट हिन्दू समाज के कारण प्रबल हो रहा था।

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के कुशल नेतृत्व और प्रबल इच्छा शक्ति के कारण श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन निरन्तर गतिमान हो रहा था। हरिद्वार के सन्त सम्मेलन में 30 अक्टूबर 1990 ई. को अयोध्या में श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण की तिथि तय कर दी गयी। 26 जुलाई को महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज लखनऊ पहुँचकर उत्तर प्रदेश सरकार को चेतावनी देते हुए कहा कि श्रीरामजन्मभूमि मन्दिर विरोधी सरकार ज्यादा दिन तक नहीं चल सकती। हिन्दुओं के धैर्य की सीमा समाप्त हो रही है। 30 अक्टूबर को हर हाल में मन्दिर निर्माण कार्य शुरू होगा। युवकों का बलिदानी जत्था अयोध्या जायेगा। यदि कारसेवा में सरकारी तन्त्र किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न करेगा तो अहिंसक गिरफ्तारी दी जायेगी और शासन की ओर से यदि गोली चलती है तो हम हर तरह की कुर्बानी देंगे।[19] उन्होंने आह्वान किया कि दीपावली के दीप श्रीरामज्योति से जलेंगे। अयोध्या में अरणीमन्थन से प्रज्वलित दीप से भगवान् श्रीराम की आरती कर श्रीरामज्योति विजयदशमी तक भारत के सभी अंचलों तक पहुँचा दिया जायेगा। सभी प्रमुख तीर्थस्थलों से श्रीरामज्योति यात्रा निकलेगी। गाँव-गाँव इस प्रकार का उत्सव मनाया जाय। वस्तुतः इस प्रकार की घोषणा से तत्कालीन प्रदेश सरकार तथा केन्द्र सरकार भयाक्रान्त हो रही थी। इसकी प्रतिक्रिया के रूप में प्रदेश एवं केन्द्र सरकारों द्वारा हिन्दू विरोध का एजेण्डा तेज कर दिया गया जिससे श्रीरामभक्त और भी उद्वेलित हो गये जिसका अनुमान तत्कालीन सरकार नहीं कर पायी। श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन की धार कम करने के लिए केन्द्र सरकार ने 'मण्डल कमीशन' का ब्रह्मास्त्र चला दिया, जिससे कि अभूतपूर्व रूप से संगठित हो रहे विराट हिन्दू समाज में विखण्डन पैदा हो जाय।

उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री मुलायम सिंह यादव अपने मुस्लिम तुष्टीकरण की प्रबल नीति का अनुपालन करते हुए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के अभियान का खुलकर विरोध करने लगे और उसे निष्प्रभावी करने के लिए सरकारी तन्त्र का भी खुलकर प्रयोग प्रारम्भ हो गया। जिस पर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने चेतावनी देते हुए कहा कि उत्तर प्रदेश साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलनों के नाम पर बहुसंख्यक हिन्दू समाज के विरुद्ध विषवमन करना छोड़ दे। वास्तव में प्रदेश सरकार साम्प्रदायिक दंगे कराने की पृष्ठभूमि तैयार कर रही है। देश भर में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में श्रीराम मन्दिर आन्दोलन को तेज करने की योजना प्रारम्भ हो गयी। जयपुर की एक सभा को सम्बोधित करते हुए महन्त जी ने कहा कि संसार की कोई ताकत श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण नहीं रोक सकती।[20] इसी बीच पूर्व सांसद अशफाक हुसैन के

एक पत्र का उत्तर देते हुए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने लिखा कि अयोध्या स्थित श्रीरामजन्मभूमि को हिन्दुओं को सौंपे बिना इस समस्या का दूसरा कोई विकल्प नहीं है। श्रीरामजन्मभूमि हिन्दुओं के आराध्यदेव भगवान् श्रीराम का जन्मस्थान है जिसका प्रामाणिक तथ्य असंदिग्ध है; अनेक मुस्लिम इतिहासकारों ने भी निर्विवाद रूप से इसे स्वीकार किया है। श्री अलीमियाँ नदनी के पिता ने अपने ग्रन्थ में स्पष्ट लिखा है कि देश में जिन अनेक मन्दिरों को तोड़कर मस्जिदें बनी हैं उनमें अयोध्या का श्रीरामजन्मभूमि मन्दिर भी है जिसे तोड़कर बाबरी मस्जिद बनायी गयी है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि पिछले पचीस वर्षों से मुसलमानों ने कोई इबादत भी नहीं की है।..... जिस प्रकार मोहम्मद साहब के स्थान के प्रति मुसलमानों की पवित्र भावना जुड़ी है, उसी प्रकार श्रीरामजन्मभूमि से सम्पूर्ण हिन्दू समाज की पवित्र भावनाएँ भी जुड़ी हुई हैं। हिन्दू समाज इसे गुलामी का प्रतीक भी मानता है। मन्दिर-मस्जिद का स्थान बदला जा सकता है किन्तु जन्मभूमि नहीं बदली जा सकती है।

इसी बीच उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा श्रीरामज्योति यात्रा को रोक दिया गया। प्रदेश सरकार के इस निर्णय के विरोध में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के आह्वान पर प्रदेश भर के दुर्गा प्रतिमाओं का विसर्जन हिन्दू समाज द्वारा रोक दिया गया। अन्ततः अत्यन्त दबाव में आकर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री को झुकना पड़ा। उन्होंने महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज से दूरभाष पर बात करके श्रीरामज्योति यात्रा पर रोक लगाने के अपने निर्णय को वापस लिया तब जाकर प्रदेश भर में दुर्गा प्रतिमाओं का विसर्जन हुआ। इस घटना ने एक बार फिर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की हिन्दू समाज में स्वीकार्यता को परिलक्षित कर दिया। हिन्दू समाज का इस प्रकार से जाग्रत और संगठित होना तत्कालीन सरकार की नींद हराम कर रहा था अतः प्रदेश सरकार द्वारा जगह-जगह साधु-सन्तों की गिरफ्तारी की जा रही थी। प्रदेश सरकार के इस प्रकार के कृत्य से नाराज महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज विश्व हिन्दू परिषद् के श्री अशोक सिंहल के साथ नयी दिल्ली में कहा कि उत्तर प्रदेश में साधु-सन्तों और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ताओं के पुलिस उत्पीड़न ने श्रीराममन्दिर निर्माण समस्या के समाधान हेतु बातचीत का माहौल बिगाड़ दिया है।[21] इसी बीच मुख्यमन्त्री मुलायम सिंह यादव का बहुचर्चित बयान आया कि 'अयोध्या में परिन्दा भी पर नहीं मार पायेगा।' दूसरी ओर श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति द्वारा 30 अक्टूबर को अयोध्या में घोषित कारसेवा हेतु महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज 26 अक्टूबर को दिल्ली से अयोध्या के लिए निकल पड़े। महन्त जी के प्रति हिन्दू जनता के असीम समर्थन से भयभीत प्रदेश सरकार ने उन्हें रोकने के लिए रास्ते में रेलवे स्टेशन पर गिरफ्तार करने की योजना बनायी लेकिन सभी स्टेशनों पर विराट हिन्दू समाज द्वारा कड़ा प्रतिकार किये जाने के कारण पनकी स्टेशन के समीप ट्रेन रुकवा कर गिरफ्तार किया गया तथा वहीं सर्किट हाउस में उन्हें कड़ी सुरक्षा व्यवस्था के बीच रखा गया। वहीं से महन्त जी ने हिन्दू जनता को सन्देश दिया कि हमारी गिरफ्तारी से श्रीरामजन्मभूमि का आन्दोलन

ठण्डा नहीं पड़ेगा, जो आग हर हिन्दू के सीने में धधक रही है उसे बुझा पाना सरकार की ताकत के परे है। गिरफ्तारियों से हिन्दुओं में मन्दिर निर्माण की इच्छा और दृढ़ हो रही है। हिन्दू जनता शान्ति और धैर्य के साथ प्रदेश सरकार के सारे नाकेबन्दी को असफल करते हुए योजनाबद्ध ढंग से अयोध्या की ओर कूच करें। यदि सरकार गिरफ्तार करती है तो शान्तिपूर्ण गिरफ्तारी दें।[22] महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की गिरफ्तारी पर सम्पूर्ण हिन्दू समाज में तीव्र प्रतिक्रिया हुई और बड़े पैमाने पर उसका विरोध प्रारम्भ हो गया। गोरखपुर में लगातार तीन दिन तक बाजार पूरी तौर पर बन्द रखे गये। 30 अक्टूबर को तत्कालीन मुख्यमन्त्री मुलायम सिंह यादव की इस घोषणा, कि अयोध्या में परिन्दा भी पर नहीं मार पायेगा', के दावे को धता बताते हुए लाखों रामभक्त कारसेवक अयोध्या पहुँच गये। हताश और घबरायी प्रदेश सरकार ने अयोध्या में दमनात्मक कार्यवाही करते हुए कारसेवकों पर अन्धाधुन्ध गोलियाँ बरसायी। कितने कारसेवक शहीद हुए न तो सरकार बता सकी और न ही किसी अन्य स्रोतों से इसकी पुष्टि हो पायी। सरकार के इस कुकृत्य पर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि रामभक्तों के खून का एक-एक कतरा हम पर कर्ज है। जिस प्रकार से सरकार द्वारा अभूतपूर्व नाकेबन्दी को रौंदकर कारसेवकों ने अयोध्या में कारसेवा शुभारम्भ किया और श्रीरामजन्मभूमि पर भगवाध्वज फहराया, हिन्दुस्तान और विराट हिन्दू समाज के लिए प्रेरणादायी है। सरकारी उत्तेजनात्मक कार्यवाहियों के बावजूद हिन्दू जनता का अहिंसक बने रहना राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को अक्षुण्ण बनाये रखने के प्रति उनकी निष्ठा का प्रतीक है।[23]

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने सरकार द्वारा निहत्थे एवं निर्दोष रामभक्तों के संहार पर कड़ी प्रतिक्रिया देते हुए 21 नवम्बर 1990 ई. को 'याचना नहीं अब रण होगा' के आह्वान के साथ हिन्दू समाज को संघर्ष के लिए अब तैयार रहने को कहा। यह पहला अवसर था जब महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने इतने कड़े शब्दों में तत्कालीन सरकार को चेतावनी दी। वह अयोध्या में निर्दोष कारसेवकों की प्रदेश सरकार द्वारा की गयी हत्या से बहुत ही आक्रोशित थे। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन को निर्णायक दौर में ले जाने की योजना बनायी गयी और 6 दिसम्बर 1992 को अयोध्या में कारसेवा के माध्यम से श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण की घोषणा कर दी गयी। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के कुशल नेतृत्व में पुन: एक बार सम्पूर्ण भारत में 6 दिसम्बर को अयोध्या में कारसेवा कार्यक्रम को पूर्णत: सफल बनाने के लिए सभा-सम्मेलनों का व्यापक स्तर पर आयोजन प्रारम्भ कर दिया गया। उसी क्रम में गोरखपुर की एक विशाल जनसभा को सम्बोधित करते हुए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि हिन्दू सर्वदा से सहनशील और शान्तिप्रिय रहा है, वह सामान्यत: आक्रामक नहीं होता। किन्तु वर्तमान युग में न्याय शान्तिपूर्ण ढंग से माँगने से नहीं, अपितु शक्ति संघर्ष से मिलने वाला है। श्रीरामजन्मभूमि पर वर्तमान सत्ता के सौदागर न्याय नहीं होने देना चाहते। हमें अपने आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की जन्मभूमि शक्ति और संघर्ष से ही प्राप्त करनी होगी। अत:

हर हिन्दू परिवार का एक व्यक्ति इस संघर्ष में अवश्य शामिल हो।[24] महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के शान्तिप्रिय एवं धैर्यपूर्ण स्वभाव से जो लोग परिचित होंगे वह भली-भाँति अनुमान लगा सकते हैं कि सरकार द्वारा कारसेवकों पर गोली चलवाने से वह कितना दुखी तथा अन्दर से उद्वेलित थे। महन्त अवेद्यनाथ जी के प्रत्येक हिन्दू परिवार की सहभागिता के आह्वान की योजना से विरोधियों के पाँव के नीचे से जमीन खिसकने लगी। श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन में अभूतपूर्व तेजी आ गयी। जिला मुख्यालय से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण के लिए प्रदर्शन-धरना वृहद रूप में प्रारम्भ हो गया। इसी बीच आसन्न लोकसभा चुनाव की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी। चुनाव में स्वाभाविक रूप से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का घोषित मुद्दा था, अतः चुनाव आचार संहिता का सन्दर्भ देते हुए निर्वाचन आयोग में उनके विरुद्ध शिकायत की गयी, निर्वाचन आयोग ने इसे आचार संहिता का उल्लंघन माना। जिस पर प्रतिक्रिया देते हुए महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने दो टूक कहा- श्रीरामजन्मभूमि पर हिन्दू समाज का हक माँगना और हिन्दू समाज पर हो रहे अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाना साम्प्रदायिकता नहीं है, किन्तु चुनाव आयुक्त इसे साम्प्रदायिक मानते हैं तो मुझे ऐसी साम्प्रदायिकता मंजूर है।[25] चुनाव में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज अपने स्पष्ट चुनावी घोषणा के आधार पर निर्वाचित होकर लोकसभा में प्रतिनिधित्व करने के लिए संसद में पहुँच गये। विराट हिन्दू समाज द्वारा ऐसी परिस्थिति में जहाँ मण्डल आयोग द्वारा हिन्दू समाज को विविध जातीय वर्गों में विभाजित कर दिया गया हो, इस प्रकार से समर्थन दिया जाना प्रत्येक भारतीय के लिए अनुकरणीय था और साधु-सन्तों को जनता का समर्थन न मिलने का भ्रम फैलाने का पर्दाफास हो गया था। वास्तव में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज को प्राप्त जनादेश अयोध्या में श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का प्रकारान्तर से जनता की प्रमाणित आवाज था। 30 अक्टूबर 1991 को अयोध्या में शौर्य दिवस के अवसर पर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर किसी की कृपा पर नहीं हिन्दू जनता के शौर्य से बनेगा।[26]

श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण के लिए सभा-सम्मेलन और योजना बनती रही, आन्दोलन और संगठित रूप में आगे बढ़ता रहा। उसी क्रम में तत्कालीन प्रधानमन्त्री पी.वी. नरसिम्हाराव से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की तीन बार भेंट हुई।[27] प्रधानमन्त्री द्वारा समस्या के समाधान के लिए तीन माह का समय माँगने पर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में समिति ने कारसेवा तीन माह के लिए स्थगित कर दिया। उन्होंने लोकसभा में भी कहा कि हम इस समस्या का समाधान बातचीत से चाहते हैं। इसके लिए प्रधानमन्त्री को चार माह का समय भी दे सकते हैं।[28] एक प्रेस-वार्ता में उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि यदि निर्धारित समय में सरकार श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का हल नहीं निकाल पाती तो हमारे लिए मन्दिर निर्माण का कार्य पुनः शुरू करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं रहेगा। यदि बातचीत में सहमति न बन पाने

के कारण सरकार मामले को जानबूझकर विशेष न्यायालय को सौंपती है तो यह मात्र उलझाने की मंशा का ही प्रतीक है। न्यायालय में सिर्फ एक विषय पर विचार किया जा सकता है कि श्रीरामजन्मभूमि स्थल पर, जिसे गर्भगृह कहा जाता है तथा जो विवादित ढाँचे के अन्दर है, वहाँ कभी मन्दिर था या नहीं, मन्दिर तोड़कर वहाँ मस्जिद बनायी गयी या नहीं।[29]

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में 30 अक्टूबर 1992 ई. को नयी दिल्ली में पाँचवें धर्मसंसद में निर्णय हुआ कि सरकार द्वारा लिये गये तीन माह का समय 26 अक्टूबर को समाप्त हो गया है अत: अब 6 दिसम्बर 1992 को मन्दिर निर्माण के लिए कारसेवा का पूर्व घोषित कार्यक्रम प्रारम्भ किया जाना सुनिश्चित हो गया है। कारसेवा का यह निर्णय अन्तिम और निर्णायक साबित होगा।[30] निर्धारित योजना के अनुसार भारत के कोने-कोने से लाखों कारसेवक अयोध्या कारसेवा के लिए पहुँचने लगे। हजारों सन्त-महात्मा और विभिन्न संगठनों के लोग भी इस हेतु अयोध्या पहुँच रहे थे। अयोध्या में गलियों में रामभक्तों का उत्साह देखने लायक था। यह मंजर दुनिया संचार माध्यमों से देख रही थी। देखते ही देखते श्रीरामजन्मभूमि पर विदेशी आक्रान्ता द्वारा जबरन बनवाया गया गुलामी का प्रतीक विवादित ढाँचा का गुम्बद उत्साहित रामभक्तों द्वारा तोड़कर मलवे में परिवर्तित कर दिया गया। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री कल्याण सिंह ने नैतिक आधार पर त्यागपत्र दे दिया, लेकिन मुस्लिम तुष्टीकरण के आधार पर कार्य करने वाली कांग्रेस की केन्द्र सरकार ने उत्तर प्रदेश सहित भारत के भारतीय जनता पार्टी शासित सभी प्रदेश सरकारों को भंग कर दिया। भारत के संवैधानिक इतिहास में यह अपने आप में अचम्भित करने वाला निर्णय था। साथ ही अयोध्या में श्रीरामलला के दर्शन एवं पूजन पर पूर्ण प्रतिबन्ध सरकार द्वारा लगा दिया गया। श्रीरामलला के दर्शन-पूजन पर प्रतिबन्ध लगाने से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज सहित सभी सन्त-महात्माओं ने तीव्र प्रतिक्रिया दी और सम्पूर्ण भारत में विरोध-प्रदर्शन आयोजित किया गया। अन्तत: तत्कालीन सरकार को अपना निर्णय वापस लेना पड़ा। इसी बीच इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने भी श्रीरामलला के दर्शन की अनुमति प्रदान कर दी। दूसरी तरफ तत्कालीन केन्द्र सरकार ने चाल चलते हुए स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती की अध्यक्षता में एक ट्रस्ट बनाकर मन्दिर निर्माण का कुचक्र रचकर संगठित हिन्दू समाज के आन्दोलन को कमजोर करने का प्रयास किया। इस पर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कड़ी प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि अयोध्या में मस्जिद का निर्माण दिवास्वप्न है।[31] मन्दिर निर्माण की अथक प्रतिज्ञा के साथ महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की अगुवाई में साधु-सन्तों, विश्व हिन्दू परिषद्, राजनीतिज्ञों का एक प्रतिनिधिमण्डल 9 करोड़ 77 लाख 3 हजार 7 सौ 53 लोगों का हस्ताक्षरयुक्त श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का प्रतिवेदन तत्कालीन राष्ट्रपति श्री शंकरदयाल शर्मा को सौंपा।[32] महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने कांग्रेस द्वारा आरोप लगाये जाने पर कि श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन का लाभ भारतीय जनता पार्टी को दिया जा रहा है, कहा कि यदि कांग्रेस श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का खुलकर समर्थन करे तो हिन्दू

समाज उसका भी समर्थन करेगा। भारतीय जनता पार्टी ने राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय स्वाभिमान के आधार पर इस आन्दोलन का समर्थन किया है। कांग्रेस का इतिहास हमेशा से बहुसंख्यक समाज को अपमानित करने वाला रहा है। कांग्रेस ने हिन्दू समाज का केवल राजनीतिक लाभ के लिए ही प्रयोग किया है। इसी कारण से कांग्रेस कभी भी सन्त-महात्माओं तथा धर्माचार्यों का समर्थन प्राप्त नहीं कर पायी।[33] इसी बीच श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की बढ़ती लोकप्रियता से भयभीत तत्कालीन सत्ताधारी दल द्वारा अनर्गल प्रलाप पर प्रतिक्रिया देते हुए महन्त जी ने कहा कि यदि सरकार संसद में श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण स्वयं कराने की घोषणा करे तो श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का अपना अनवरत आन्दोलन स्थगित कर दूँगा।[34] महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का यह तत्कालीन कांग्रेसी सरकार को स्पष्ट चुनौती थी। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का यह उद्घोष स्पष्ट करता है कि उनके लिए श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन आस्था के साथ जुड़ा मुद्दा था, कोई राजनीतिक लाभ के लिए चलाया जाने वाला आन्दोलन मात्र नहीं था। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के प्रति इसी पवित्र श्रद्धा और आस्था के कारण ही वर्षों से बिखरा हिन्दू समाज महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में संगठित होकर इतनी बड़ी ताकत बनकर भारत के धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक पटल पर उभरा।

यद्यपि शारीरिक अस्वस्थता के कारण 1998 के लोकसभा चुनाव में अपना उत्तराधिकारी योगी आदित्यनाथ जी महाराज को बनाकर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने घोषित किया कि राजनीतिक मोर्चा अब योगी जी सँभालेंगे तथा धर्म के मोर्चे पर वह स्वयं डटे रहेंगे। 2002 ई. में श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण को लेकर उन्होंने सन्त-महात्माओं का नेतृत्व करते हुए तत्कालीन केन्द्र सरकार को चुनौती दी। मार्च 2002 में परमहंस श्रीरामचन्द्र, श्री अशोक सिंहल के साथ संयुक्त प्रेस-वार्ता में कहा कि न तो यज्ञ रुकेगा और न मन्दिर निर्माण। अन्ततः प्रधानमन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी के विशेष प्रतिनिधि की उपस्थिति में शिलापूजन कार्य सम्पन्न हुआ। वास्तव में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के लिए श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण उनकी साधना का ही हिस्सा था। परलोकगमन करने से पूर्व शायद ही कोई श्रीराम मन्दिर से सम्बन्धित विषय रहा हो जिस पर महन्त जी का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष समर्थन न मिला हो। 'चौथी दुनिया' के एक संवाददाता से बात करते हुए उन्होंने भावुक स्वर में कहा- 'मेरा स्वास्थ्य लगातार गिर रहा है। मैं केवल श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का मार्ग प्रशस्त होते हुए देखने के लिए जी रहा हूँ। मेरी यही इच्छा है कि मैं जीते-जी श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का निर्णायक शुभारम्भ देख लूँ।' निःसन्देह महन्त अवेद्यनाथ जी की यह शाश्वत इच्छा उनके भौतिक रूप से रहते पूर्ण नहीं हो पायी। लेकिन यदि हम श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन में उनके योगदान का मूल्यांकन गहन दृष्टि से करें तो स्पष्ट है कि उन्होंने अपने भौतिक स्वरूप में रहते ही श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

की दिव्य दृष्टि और पवित्र इच्छा की अभिव्यक्ति है। श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि विराट हिन्दू समाज को इस प्रकार से संगठित करने की अपार क्षमता महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज में थी। इस बात से भी कोई इन्कार नहीं कर सकता कि उत्तर प्रदेश के वर्तमान मुख्यमन्त्री गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज अपने आराध्य गुरु महन्त अवेद्यनाथ जी के सपनों के श्रीराम मन्दिर का निर्माण कराने में किस प्रकार कृतसंकल्पित रहे हैं। अभी तक के मुख्यमन्त्रित्व काल में 18 से अधिक बार अयोध्या जाना अपने आप में इसको प्रमाणित कर देता है।[35] विभिन्न अवसरों पर सर्वोच्च न्यायालय के अन्तिम निर्णय से पहले तक लगभग सभी कार्यक्रमों में श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य श्रीराम मन्दिर के निर्माण की उनकी विराट इच्छा से सभी परिचित हैं। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का दिव्य नेतृत्व श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन के साथ इतिहास के पन्नों में स्वर्णिम अक्षरों में जुड़ गया है। जब-जब कभी भी श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और भव्य मन्दिर निर्माण की चर्चा की जायेगी, तब-तब ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का कुशल नेतृत्व और बिखरे हुए हिन्दू समाज को संगठित कर एक ताकत के रूप में आन्दोलन को निर्णायक दिशा देने के लिए श्रद्धा से याद किया जायेगा। उन्होंने श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन की जब एक बार बागडोर सँभाली उसके बाद कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।[36] महन्त अवेद्यनाथ जी के अथक एवं कुशल नेतृत्व में विगत बीस वर्षों के संघर्ष और सतत दृढ़ता के परिणाम के रूप में नवम्बर 2019 के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को देखा जा सकता है। महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज और सन्त-महात्मा, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठन के लाखों लोगों तथा लाखों रामभक्त कार्यकर्ताओं के प्रयास और साधना से सांस्कृतिक पहचान दिलाने वाला श्रीरामजन्मभूमि मामले में दिया गया सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय सबको गौरवान्वित करने वाला है। गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज जैसे दिव्य धर्मात्मा एवं विराट हिन्दू समाज के सर्वमान्य नेता जिनके नेतृत्व में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन का सक्रिय एवं परिणामकारी संघर्ष प्रारम्भ होकर आज भव्य मन्दिर निर्माण की परिणति तक पहुँचा है। ऐसे सन्त, धर्मात्मा, कुशल मार्गदर्शक एवं विराट हिन्दू समाज के अभिभावक गोरक्षपीठाधीश्वर ब्रह्मलीन राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के चरणों में हार्दिक श्रद्धांजलि।

सन्दर्भः

1. चौथी दुनिया, 1-7 अक्टूबर 1989 के अंक में प्रकाशित
2. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 15 नवम्बर 2019
3. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 10 नवम्बर 2019
4. योगवाणी, गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, दिसम्बर 1989
5. https:èkèkzeenews.india.comèkhindièkzee-hindustanèkramtemple-movement and-role-of-mahant-avedyanathèk594919

6. उपरोक्त
7. सिंह महातम, श्रीराम जन्मभूमि-मुक्ति के संघर्ष का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 508; राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महन्त अवेद्यनाथ, भाग-2, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली 2008
8. जनसत्ता, नयी दिल्ली, 24 सितम्बर 1989
9. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 2 अक्टूबर 1989
10. स्वतन्त्र चेतना, गोरखपुर, 4 अक्टूबर 1989
11. अमृत प्रभात, लखनऊ, 7 अक्टूबर 1989
12. स्वतन्त्र चेतना, गोरखपुर, 9 नवम्बर 1989
13. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 10 नवम्बर 1989
14. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 11 नवम्बर 1989
15. आज, गोरखपुर, 15 नवम्बर 1989
16. नव भारत टाइम्स, नयी दिल्ली, 15 दिसम्बर 1989
17. दैनिक जागरण, इलाहाबाद, 27 फरवरी 1990
18. सण्डे आब्जर्बर, नयी दिल्ली, 10 जून 1990
19. दैनिक जागरण, लखनऊ, 27 जुलाई 1990
20. राष्ट्रदूत, जयपुर, 15 सितम्बर 1990
21. आज, नयी दिल्ली, 15 अक्टूबर 1990
22. दैनिक जागरण, लखनऊ, 28 नवम्बर 1990
23. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 6 नवम्बर 1990
24. स्वतन्त्र चेतना, गोरखपुर, 28 फरवरी 1991
25. आज, गोरखपुर, 24 अप्रैल 1991
26. पाञ्चजन्य, नयी दिल्ली, 31 अक्टूबर 1991
27. जनसत्ता, नयी दिल्ली, 24 जुलाई 1992
28. दैनिक जागरण, नयी दिल्ली, 30 जुलाई 1992
29. आज, नयी दिल्ली, 1 अगस्त 1992
30. जनसत्ता, नयी दिल्ली, 31 अक्टूबर 1992
31. राष्ट्रीय सहारा, वाराणसी, 12 अप्रैल 1993
32. जनसत्ता, नयी दिल्ली, 9 मई 1993
33. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 30 जून 1993
34. आज, जोधपुर, 19 अक्टूबर 1994
35. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 10 नवम्बर 2019
36. दैनिक जागरण, गोरखपुर, 10 नवम्बर 2019

■

श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और गोरक्षपीठ

सचिन राय*

सार-संक्षेप : अयोध्या में श्रीरामजन्मभूमि पर श्रीराम मन्दिर निर्माण को लेकर 500 सालों से चल रहे संघर्ष का सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक फैसले ने बड़ी खूबसूरती से समाधान कर दिया है। संयोग है कि जब रामलला के पक्ष में फैसला आया है तो उस निर्णय को लागू करने के लिए मुख्यमन्त्री के रूप में गोरखनाथ मन्दिर के महन्त योगी आदित्यनाथ मौजूद हैं। गोरखनाथ मन्दिर से राम मन्दिर का यह रिश्ता नया नहीं बल्कि तीन पीढ़ी का है। मुख्यमन्त्री बनने के बाद से योगी आदित्यनाथ का अयोध्या के प्रति विशेष जुड़ाव दिखता आ रहा है। रामलला के दर्शन करने से लेकर दीपोत्सव के रूप में अयोध्या के गौरव को लौटाने का प्रयास और सैकड़ों करोड़ की विकास योजनाओं से यह साफ भी होता है। श्रीरामजन्मभूमि मामले में जब भी कोई महत्त्वपूर्ण घटना घटी, उसका नाता नाथपीठ से जरूर रहा। शुरुआत 22-23 दिसम्बर 1949 से करते हैं, जब विवादित ढाँचे में रामलला का प्रकटीकरण हुआ। उस समय तत्कालीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथ कुछ साधु-सन्तों के साथ वहाँ संकीर्तन कर रहे थे। महन्त अवेद्यनाथ ने 1984 में देश के सभी पन्थों के शैव-वैष्णव आदि धर्मचार्यों को एक मंच पर लाकर श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति का गठन किया। वह आजीवन अध्यक्ष चुने गये। महन्त जी के नेतृत्व में सात अक्टूबर 1984 को अयोध्या से लखनऊ के लिए धर्म यात्रा निकाली गई। लखनऊ के बेगम हजरत महल पार्क में ऐतिहासिक सम्मेलन हुआ, जिसमें 10 लाख लोगों ने हिस्सा लिया। 1986 में जब फैजाबाद के जिला जज ने हिन्दुओं को प्रार्थना करने के लिए विवादित मस्जिद के दरवाजे पर लगा ताला खोलने का आदेश दिया था तो ताला खोलने के लिए वहाँ पर गोरखनाथ मन्दिर के तत्कालीन महन्त अवेद्यनाथ मौजूद थे। 22 सितम्बर 1989 को अवेद्यनाथ की अध्यक्षता में दिल्ली में विराट हिन्दू सम्मेलन हुआ, जिसमें 9 नवम्बर 1989 को जन्मभूमि पर शिलान्यास कार्यक्रम घोषित किया गया। तय समय पर एक दलित से शिलान्यास कराकर महन्त ने आन्दोलन को सामाजिक समरसता से जोड़ा। हरिद्वार के सन्त सम्मेलन में तो उन्होंने 30 अक्टूबर 1990 को मन्दिर निर्माण की तिथि घोषित कर दी। निर्माण शुरू कराने के लिए जब वह 26 अक्टूबर को दिल्ली से अयोध्या के लिए रवाना हुए तो पनकी में गिरफ्तार कर लिए गए। 1980 में तमिलनाडु के मीनाक्षीपुरम् में बड़े पैमाने पर कराए गए धर्म परिवर्तन से व्यथित होकर महन्त अवेद्यनाथ ने राजनीति से संन्यास ले लिया, लेकिन मन्दिर निर्माण को लेकर उनका संघर्ष जारी रहा। 22 सितम्बर 1989 को हिन्दू सम्मेलन के दौरान जब

*पूर्व आर.सी.एच.आर. फेलो, इतिहास विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

मन्दिर निर्माण की तारीख घोषित कर दी गई तो तत्कालीन गृह मन्त्री बूटा सिंह ने इसे स्थगित करने के लिए उनसे मुलाकात की। अवेद्यनाथ ने कहा कि यह फैसला करोड़ों लोगों का है। इस पर बूटा सिंह ने उन्हें लोगों की बात कहने के लिए संसद में आने की चुनौती दी। अवेद्यनाथ ने राजनीति में वापसी की और फिर हिन्दू महासभा से गोरखपुर के सांसद बने।

बीज शब्द- प्रभु श्रीराम, गोरक्षपीठ, नाथपन्थ, श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन, अयोध्या की ऐतिहासिकता, महन्त दिग्विजयनाथजी, महन्त अवेद्यनाथजी, योगी आदित्यनाथ जी महाराज।

शोध विस्तार- हमारे देश को भारत कहने से बात पूरी नहीं होती इसे भारत माता कहा जाता है।[1] यह भरत की भूमि है, भूगोल की सीमा नहीं। बस इसी तरह है अयोध्या! यह केवल भूखण्ड या कोई नाम भर नहीं है! जिन्हें इस बात में कुछ सन्देह हो निश्चित ही वे ऐसे लोग होंगे जो यह नहीं जानते कि इस देश में बहुतांश लोग इस नगरी का नाम 'जी' प्रत्यय लगाए बिना नहीं पुकारते। अयोध्या नहीं, अयोध्या जी।[2] यहाँ भूगोल की आधुनिक रेखाओं से पुराना भारत और अयोध्या को 'अयोध्या जी' बनाने वाली छवि उभरती है! यह राम हैं। सबको दिशा-भरोसा देने वाले राम। निषाद के दाता राम। अहिल्या-शबरी के त्राता राम। सुग्रीव-भरत के सखा-भ्राता सब राम ही तो हैं।[3] श्रीरामचरित मानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसीलिए कहा-'कलियुग केवल राम अधारा, सुमिर-सुमिर नर उतरहिं पारा।।'[4]

हम भारतीयों के लिए जिस तरह अयोध्या सिर्फ अयोध्या नहीं है उसी तरह मानस केवल ग्रन्थ नहीं, जीवन की भटकन समाप्त करने वाला दिशासूचक है। जो समाज 'राम-राम' के परस्पर अभिवादन से लेकर किसी व्यक्ति के अन्तिम प्रयाण के समय भी 'राम नाम सत्य है' की टेक लगाता है उसके लिए यह असह्य था कि उससे 'राम' का ही प्रमाण माँगा जाए।

तुलसीदास के राम अयोध्या और अयोध्या की नदी सरयू को प्यार करते थे- विशेष प्यार करते थे। वाल्मीकि के राम ने जननी जन्मभूमि के समक्ष स्वर्णमयी लंका की उपेक्षा की थी तो तुलसी के राम ने अयोध्या को वैकुण्ठ से भी श्रेष्ठतर बताया।[5]

ऋग्वेद के चौथे मण्डल के तीसवें सूक्त की सतरहवीं-अठारहवीं में यदु और तुर्वश के द्वारा इनकी सहायता से नदी पार करके सरयूपार के क्षेत्र में अर्ण और चित्ररथ को परास्त करने अथवा वध करने की बात कही गयी है।[6]

यहाँ स्पष्ट रूप से सरयूपार क्षेत्र का उल्लेख है जहाँ के चित्ररथ और अर्ण को चन्द्रवंशी तुर्वश यदु क्षत्रियों ने परास्त किया था। अयोध्या प्राचीन नगरी है तथा धार्मिक व सांस्कृतिक है। प्रथम तीन वेदों में कोसल व उसकी राजधानी अयोध्या का उल्लेख नहीं आता किन्तु अथर्ववेद में नगरी को स्वयं देवताओं द्वारा निर्मित बताया गया है तथा इसको स्वर्ग की भाँति सम्पन्न कहा।[7]

प्राचीनकाल में अयोध्या के चारों ओर का प्रदेश कोसल के नाम से जाना जाता था जिसमें अयोध्या और कोसल दोनों का उल्लेख मिलता है। मत्स्य तथ वायु पुराण में इसे इक्ष्वाकु राजधानी तथा बृहत्संहिता में राम के पुत्र कुश द्वारा बसाए जाने का उल्लेख मिलता है। ....साकेत का उल्लेख करते समय उसके सात राजाओं तथा भवन सैनिकों द्वारा घेरे जाने का है। वायु पुराण में भी साकेत का उल्लेख है। शतपथ ब्राह्मण में कोसल को वैदिक आर्य कहा गया है। ऐतरेय ब्राह्मण तथा सांख्यायन श्रौतसूत्र में अयोध्या को एक ग्राम के रूप में किया गया है। प्राय: सभी पुराणों और दोनों महाकाव्यों में अयोध्या का उल्लेख बार-बार मिलता है।[8]

अयोध्या, जिसे लम्बे समय तक रामजन्म भूमि-बाबरी मस्जिद भूमि विवाद के लिए ही जाना जाता रहा है। क्या यह अयोध्या का सच है? क्या ये ही अयोध्या है? ऐसा नहीं, अयोध्या का सच-1992 में राम मन्दिर निर्माण के लिए किए गए आन्दोलन में ध्वस्त 'विवादित ढाँचे' तक सीमित नहीं है। बल्कि अयोध्या का सच उससे कहीं अधिक व्यापक है। यह सच भारत के गौरवशाली इतिहास, संस्कृति, परम्परा, विरासत और धार्मिक मूल्यों में गहराई तक विराजमान है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की नगरी अयोध्या करोड़ों धर्मावलम्बियों की आस्था और श्रद्धा ही नहीं बल्कि उनके उस विश्वास का प्रतीक भी है जिसमें उनका कहना है "भगवान श्रीराम का जन्म यहीं हुआ है। श्रीराम जो सम्पूर्ण भारत राष्ट्र के स्वाभिमान हैं और अयोध्या उनसे जुड़ा एक संकल्प है श्रीराम की प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर से हर कीमत पर जुड़े रहने का संकल्प। और यह संकल्प 'अजय' है। इसे अवध के नाम से भी जाना जाता है जिसका अर्थ है अ+वध। अवध किसी का अकारण वध नहीं करता है। राम जिनके नाम से यह जुड़ा है रा+म 'रा' का अर्थ राष्ट्र से है और 'म' का अर्थ मंगल अर्थात राष्ट्र केमंगल की संकल्पना करने वाले राम हैं। 'र' का अर्थ है राष्ट्र और 'म' का अर्थ है मर्यादा। इससे स्पष्ट है कि राष्ट्र के मर्यादा की रक्षा करने वाले राम हैं। रावण वध के बाद विभीषण जी ने भगवान् राम से कहा कि प्रभु अब आप लंका को अवध में मिलकर राज्य को संचालित करें। इस पर भगवान राम का जवाब था उसमें सनातन राष्ट्र राज्य की पूरी विचारधारा समाहित थी । भगवान् ने कहा कि लंका लंकावासियों की है और रहेगी। मेरा कार्य अधर्म का नाश करते ही पूरा हो गया।[9] मतलब भारत की राष्ट्र राज्य की सनातन संकल्पना उपनिवेशवादी नहीं रही है। अयोध्या अर्थात् जिसे शत्रु न जीत सके .. युद्ध का अर्थ हम जानते हैं, अयोध्या का अर्थ है जिससे युद्ध किया जा सके। मनुष्य उसी से युद्ध करता है जिससे उसे जीतने की सम्भावना होती है अत: योध्य का अर्थ हुआ जिससे युद्ध कर जीता जा सके। अयोध्या में अ: अक्षर सम्मिलित है अ: योध्य-तात्पर्य हुआ जिससे जीता न जा सके। यानी अयोध्या के मायने हैं, जिसे जीता न जा सके। स्कन्दपुराण के अनुसार अयोध्या शब्द 'अ'कार ब्रह्मा, 'य'कार विष्णु है तथा 'ध'कार रुद्र का स्वरूप है। इसलिए अयोध्या ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों का एकीकृत स्वरूप है। प्राचीन काल में अयोध्या के चारों ओर का प्रदेश कोसल के नाम से जाना जाता है।

अयोध्या को देवताओं की नगरी कहा गया है। यह आठ चक्र और नौ द्वारों से शोभित है तथा उसमें स्वर्ण के समान हिरण्यमय कोष है जो दिव्य ज्योति से घिरा है।[10] अयोध्या, मथुरा, माया, हरिद्वार, काशी, काँची, अवन्तिका (उज्जैन)। 'पुरी द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिका' में अयोध्या भारतवर्ष की मोक्षदायिनी पुरियों में सर्वमान्य है।[11] इसे महाराज मनु द्वारा पृथ्वी पर सृष्टि का प्रधान कार्यालय बनाने के लिये वैकुण्ठ से यहाँ लाया गया था। यह पुरी सभी वैकुण्ठों (ब्रह्मलोक, इन्द्रलोक, विष्णुलोक, गोलोक आदि सभी देवताओं का लोक वैकुण्ठ है) का मूल आधार है। इस पावन नगरी की गोद में साक्षात् भगवान ने स्वयं अवतार लिया।[12]

आज से लाखों वर्ष पूर्व अयोध्या में वैवस्तु राजा मनु ने इसे अपनी राजधानी बनायी। उस समय इसकी लम्बाई 120 कोस व चौड़ाई 48 कोस थी। भगवान् रामचन्द्रजी के काल में इसका घेरा 84 कोस में था। इसके चारों दिशाओं में चार पर्वत थे- पूर्व में श्रृंगराद्रि, पश्चिम में नीलाद्रिक उत्तर में मुक्तावद्रि, और दक्षिण में मणिकूट (मणिपर्वत) आज भी शोभायमान है।[13]

अब श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन और गोरक्षपीठ के सम्बन्ध में चर्चा करते हुए बात शुरू करते हैं गोरक्षपीठ के ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी से, जो शुरू से ही हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए देखे जा सकते हैं। सन् 1918 में जब वे कक्षा 9 के छात्र थे, उस समय गोरखनाथ मन्दिर के अहाते में ईसाई मत-प्रचारक कैम्प लगाकर अपने मत का प्रचार कर रहे थे। कई वर्षों से वे यह कार्य करते आ रहे थे। एक हिन्दू मन्दिर के प्रांगण में हिन्दू धर्म के ही विरुद्ध प्रचार किया जाए, इसे वे सहन न कर सके। विद्यार्थियों का एक विशाल समूह लेकर उन्होंने ईसाई मत प्रचारक कैम्पों पर आक्रमण कर दिया। कैम्प उजाड़ डाले गये। ईसाई धर्म की पुस्तकों को पोखरे में जल-समाधि दे दी गई। इसके बाद कभी किसी ईसाई प्रचारक का मन्दिर के पावन प्रांगण में जाने का साहस न हुआ। इस घटना से समस्त प्रशासकीय अधिकारी अप्रसन्न हो गये। उस समय स्थानीय कमिश्नर, कलेक्टर और एस.पी. सबके सब ईसाई धर्मावलम्बी थे। उन्होंने मुकदमा चलाना चाहा, किन्तु नगर के कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों के हस्तक्षेप के कारण यह कार्यवाही रुक गई।[14]

उन्होंने गोरक्षपीठ को प्रसिद्ध सांस्कष्टतिक केन्द्र बना दिया। शिवावतार महायोगी गुरुश्री गोरक्षनाथ की पूजा तो यहाँ नित्य होती ही थी। राम और कृष्ण के नामोच्चारणों से भी मन्दिर का प्रांगण गुंजित होने लगा। ब्रिटिश शासन काल में इस मन्दिर ने हिन्दू धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए निरन्तर संघर्ष किया। अनेक विप्लवों के समय महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज ने परिस्थितियों का डटकर सामना किया अन्यथा इस क्षेत्र में आज हिन्दू जाति का रूप कुछ दूसरा ही होता। महन्त जी हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए अयोध्या में राममन्दिर का निर्माण हो इसके लिए प्रारम्भ से ही सक्रिय देखे जा सकते हैं। देश के गुलामी के समय भी 1934 में उनकी सक्रियता देखी जा सकती है।[15] गोरखनाथ मठ के महन्त दिग्विजयनाथ उन चन्द लोगों में थे जिन्होंने शुरुआती

तौर पर बाबरी मस्जिद को मन्दिर में बदलने की कल्पना की थी। 22 दिसम्बर 1949 को जब रामलला की प्रतिमा रखवायी गयी थी उस समय हिन्दू महासभा के बी.बी. सावरकर के साथ महन्त जी ही थे जिनके हाथ में इस आन्दोलन का कमान था। जब प्रतिमा रखी गयी ये दोनों लोग अखिल भारतीय रामायण महासभा के सदस्य थे।

सन् 1935 में गोरक्षनाथ मन्दिर के पीठाधीश्वर के पद पर अभिषिक्त होने के पश्चात् महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के व्यक्तित्व को बहुमुखी प्रसार का अवसर मिला। सन् 1969 में महासमाधि लेने के समय तक वे विभिन्न क्षेत्रों में अनवरत गति से कार्य करते रहे। उन्होंने समसामयिक समाज को सुधारने का प्रयास किया। विभिन्न शिक्षा संस्थाओं तथा सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना करके नवयुवक वर्ग को नयी दिशा प्रदान की, साधु समाज की परम्परागत ऐकान्तिकता और निष्क्रियता को दूर कर, उन्हें सच्चे समाज-धर्म से अवगत कराया और सक्रिय राजनीति में भाग लेकर राजनयिकों की अवधानता दूर करने का प्रयास किया। राष्ट्र की बदलती हुई परिस्थितियों ने उन्हें हिन्दू धर्म और संस्कृति का सजग प्रहरी बना दिया।[16] उन्होंने अपने व्यक्तित्व में विभिन्न विरोधाभासों को समन्वित कर लिया था। वे साधु होते हुए भी समाज से दूर न थे। विभिन्न संस्थाओं के संस्थापक होते हुए भी उनमें सर्वथा आसक्त न थे। राजनीति में रहते हुए भी कथनी-करनी में अन्तर उपस्थित करने वाले आज के राजनीतिक छल-छद्म से उनका लगाव न था। समाज सुधारक के रूप में निरन्तर कार्य करते हुए भी अपनी वैयक्तिक प्रभुता का उन्हें मोह न था। वे योगी होते हुए भी पूरे सामाजिक थे। उनके संग्रह में सेवा और त्याग का महान योग अन्तर्निहित था। वस्तुतः इस संग्रह और त्याग के सामंजस्य ने ही उनको महान से महानतम बना दिया था।

हिन्दू जाति और धर्म के प्रति महन्त जी का संस्कारगत प्रेम था। उनके शरीर में सिसोदिया वंश का रक्त प्रवाहित हो रहा था। राणा सांगा और महाराणा प्रताप की आन और मान रक्षा की भावना उन्हें वंशानुगत रूप में प्राप्त हुई थी। महायोगी भगवान् गोरक्षनाथ के मन्दिर की पवित्रता और आध्यात्मिक गरिमा ने मान, रक्षा तथा हिन्दूत्व प्रेम के साथ ही हिन्दू संस्कृति की रक्षा की भावना को और भी दृढ़ कर दिया। देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों ने भी उनके सांस्कृतिक भावों को सुदृढ़ किया। राष्ट्र और संस्कृति की रक्षा के लिए ही सन् 1934 ई. तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सिद्धान्तों को स्वीकार कर उन्होंने कार्य किया। किन्तु कांग्रेस की मुस्लिम-तुष्टीकरण की नीति से असंतुष्ट होकर उन्होंने उसे छोड़ दिया। सन् 1939 ई. में अमरवीर वी.डी. सावरकर काले पानी की सजा भुगत कर अण्डमान से कलकत्ता आए। वहाँ अपने स्वागत में आयोजित एक विशाल सभा को उन्होंने सम्बोधित किया। उस अवसर पर भाई परमानन्द और अमरवीर सावरकर के भाषणों को सुनकर महन्तजी अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने उसी समय हिन्दू महासभा की सदस्यता स्वीकार कर ली। हिन्दू महासभा में रहते हुए नेहरू सरकार द्वारा रामलला के प्रकटीकरण

के समय मूर्तियाँ न हटें इसके लिए महन्त जी ने उस समय गोपाल सिंह विशारद जो हिन्दू महासभा के अध्यक्ष थे एवं रामचन्द्र परमहंस जी जो हिन्दू महासभा के नगर अध्यक्ष थे, को न्यायालय में भेजना प्रारम्भ किया। कानूनी खर्चा उपलब्ध कराने का कार्य दिग्विजयनाथ जी महाराज ही सहयोग से करवाते थे।[17]

गोरक्षपीठ हिन्दू समाज की विकृतियों के खिलाफ जन-जागरूकता एवं हिन्दू समाज को सामाजिक-राजनीतिक-आध्यात्मिक नेतृत्व देने के लिए ही सदा से प्रतिष्ठित रहा है।[18] नाथपन्थ का अभ्युदय ही हिन्दू तन्त्र-साधना में पंचमकार के शमन के साथ दिखाई देता है।[19] तथापि बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक से गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के नेतृत्व में गोरक्षपीठ ने सामाजिक परिवर्तन की जो मशाल प्रज्वलित की वह महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज द्वारा देश भर में चलाये गये छूआछूत विरोधी अभियानों से पूर्णत: देदीप्यमान हो गयी। कोई मंच हो, कोई विषय हो; किन्तु महाराज जी के उद्‌बोधन में हिन्दू समाज की एकता और छुआछूत समाप्त करने की अपील किसी न किसी रूप में आ ही जाती थी। यद्यपि कि महन्त जी द्वारा छुआछूत विरोधी एवं हिन्दू समाज में सामाजिक समरसता का प्रयास तो गोरक्षपीठ से प्राप्त वैचारिक उत्तराधिकार के रूप में प्रारम्भ से ही चलता रहा, किन्तु 1980 ई. में मीनाक्षीपुरम् और उसके आस-पास के क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर कराये गये धर्म परिवर्तन ने महाराज जी को अन्दर से हिला दिया। वे व्यथित हुए और मात्र दु:खी होकर पीड़ा सहकर चुप बैठने के बजाय राजनीति से संन्यास लेकर हिन्दू समाज की एकता और सामाजिक समरसता के यज्ञाभिमान पर निकल पड़े।

महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज को जिस राष्ट्र विरोधी एवं गैर संवैधानिक सामूहिक धर्मान्तरण ने विचलित कर दिया वह 19 फरवरी, 1980 को घटित मीनाक्षीपुरम् की घटना है। मीनाक्षीपुरम् का नाम बदलकर 'रहमतनगर' कर दिया गया। बड़े धूम-धाम से आयोजित इस धर्मान्तरण समारोह में आस-पास के तेनाक्षी, कडयनल्लुर, वदकरी व वनगरम् आदि गाँवों के मुसलमान अपने-अपने परिवारों के साथ सम्मिलित हुए। कडयनल्लुर के विधायक श्री सहुल हमीद ने भी सक्रिय भागीदारी निभायी। इस समारोह में एक सौ अस्सी हिन्दू परिवारों (हरिजन) को धर्मान्तरित कर उस दिन एक बजे, साढ़े चार बजे, साढ़े छ: बजे जुहर, अझर एवं मकुआरिब हुआ और साथ ही सारा समुदाय कलमा पढ़ता रहा।

मीनाक्षीपुरम् के धर्मान्तरण समारोह से प्रारम्भ यह धर्मान्तरण अभियान आस-पास के क्षेत्रों में लगभग एक वर्ष तक चलता रहा, किन्तु मीनाक्षीपुरम् धर्मान्तरण का पूरे देश में विरोध शुरू हो गया। पूज्य महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने धर्मान्तरण के विरोध में अत्यन्त कठोर शब्दों में अपनी आपत्ति दर्ज कराते हुए दुहराया कि यह धर्मान्तरण नहीं राष्ट्रान्तरण के अभियान की शुरुआत है। किन्तु महन्त जी मात्र अपनी आपत्ति दर्ज कराकर चुप नहीं हुए।[20]

उन्होंने कहा – "मैं गाँव-गाँव जाकर छुआछूत के विरुद्ध अभियान छेड़ने का निश्चय लेकर निकल पड़ा। इसी समय मेरे मन में यह बात आयी कि मेरे इस सामाजिक समरसता अभियान पर लोग यह न सोचें कि यह साधु वोट के लिए ऐसा कर रहा है, मैंने राजनीति को तिलांजलि दे दी और चुनाव न लड़ने का निर्णय घोषित कर दिया।"

नये युग का शुभारम्भ हुआ। हिन्दू समाज के विविध पन्थों के धर्माचार्य एक साथ एक मंच पर आये। यह युग भारत में हिन्दू एकता के लिए तो जाना ही जायेगा साथ ही महात्मा गाँधी की इस उक्ति को झुठलाने के लिए भी प्रामाणिक होगा कि हिन्दू कायर होता है। श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन की सफलता के तमाम महत्त्वपूर्ण कारणों में एक महत्त्वपूर्ण कारण गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का नेतृत्व सभी पन्थों के धर्माचार्यों द्वारा सर्वस्वीकार्य होना भी था। भारत के इतिहास में जब भी श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति आन्दोलन पर चर्चा होगी, वह चर्चा महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के बगैर अधूरी मानी जायेगी।[21]

महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने अपने जीवन का उत्तरार्द्ध पूर्णत: सामाजिक समरसता, हिन्दू समाज के पुनर्जागरण और श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति अभियान को समर्पित कर दिया। उन्होंने 1980 के बाद से ही हिन्दू समाज से अस्पृश्यता उन्मूलन एवं श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण को अपने जीवन का मिशन बना लिया और जीवन के अन्त तक महाराजजी के बातचीत के केन्द्रबिन्दु यही दो मुद्दे रहे। आधुनिक भारत में क्षेत्र और जनसहभागिता के आधारपर 1857 और आपातकाल के विरुद्ध हुए जनान्दोलनों से भी बड़ा या यह कहें कि अब तक के सबसे बड़े उस जनान्दोलन का, जिसने भारत की दिशा बदल दी, नेतृत्व गोरक्षपीठाधीश्वर ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने ही किया। पान्थिक विविधता और मतभिन्नता से युक्त हिन्दू समाज के धर्माचार्यों में जिस एक नाम पर सहमति थी वह गोरक्षपीठाधीश्वर का ही नाम था।[22] शैव, वैष्णव, शाक्त, बौद्ध, जैन, सिख, विविध अखाड़ों सहित बड़ी संख्या में मतावलम्बी धर्माचार्य महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के प्रति समान श्रद्धा एवं निष्ठा रखते हैं। हिन्दू समाज में अस्पृश्यता एवं ऊँच-नीच जैसी कुप्रथाओं के खिलाफ देश भर में जन-जागरण अभियान पर निकलकर गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने सर्वप्रथम धर्माचार्यों के बीच अपने-अपने मत-श्रेष्ठतावाद का खण्डन किया और भारत के लगभग सभी शैव-वैष्णव इत्यादि धर्माचार्यों को एक मंच पर खड़ा किया था। परिणामत: जब श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति यज्ञ-समिति का गठन हुआ तो 21 जुलाई, 1984 को अयोध्या के वाल्मीकि भवन में सर्वसम्मति से महन्त जी को अध्यक्ष चुना गया। तब से आजीवन श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति के महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज अध्यक्ष रहे और उनके नेतृत्व में भारत में ऐसे जनान्दोलन का उदय हुआ जिसने भारत में सामाजिक-राजनीतिक क्रान्ति का सूत्रपात किया।[23] विकृत धर्मनिरपेक्षता एवं मुस्लिम तुष्टीकरण की राजनीति का काला चेहरा उजागर हुआ। हिन्दुत्व

पर नये सिरे से दुनियाभर में बहस शुरू हुई। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की आन्तरिक ताकत का एहसास हुआ। भारत सहित दुनिया के इतिहास में श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन और उसके प्रभाव एवं परिणाम का अध्याय महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज का उल्लेख हुए बिना अधूरा रहेगा।

स्वयं योगी आदित्यनाथजी महाराज का कहना है कि श्रीराम जन्मभूमि से मेरा जुड़ाव दो प्रकार से है। एक, गोरक्षपीठ के नाते और दूसरा मुख्यमन्त्री के नाते। गोरक्षपीठ के नाते मेरा जुड़ाव तीसरी पीढ़ी से है। मेरे दादा गुरु ब्रह्मलीन महन्त श्री दिग्विजयनाथ जी महाराज इस आन्दोलन से 1934 से जुड़े थे और 1949 में जब अयोध्या में श्रीराम जन्मभूमि पर रामलला का प्रकटीकरण हुआ तो वे स्वयं वहाँ मौजूद थे और उन्होंने पूरे अभियान का नेतृत्व किया था।[24] इसके बाद मेरा सौभाग्य है कि मेरे पूज्य गुरुदेव 1983 से, प्रत्यक्ष जुड़े। यद्यपि 1949 में भी जब उस समय की नेहरू-कांग्रेस सरकार ने मूर्तियाँ हटाने का आदेश दिया था, तब मेरे दादा गुरु महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज, मेरे पूज्य गुरुदेव गोरक्षपीठ के सैकड़ों संन्यासियों के साथ स्वयं अयोध्या में मौजूद थे और किसी भी अप्रिय स्थिति का जोरदार प्रतिकार कर रहे थे। गोरक्षपीठ की दूसरी पीढ़ी का इस आन्दोलन के साथ प्रत्यक्ष जुड़ाव है। मेरे पूज्य गुरुदेव महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति समिति के अध्यक्ष रूप में सामने आते हैं।[25]

यह पूरा अभियान जिस रूप में चला, वह देश की आजादी के बाद का सबसे बड़ा सांस्कृतिक आन्दोलन है। मैं मानता हूँ कि इस आन्दोलन ने समाज को जोड़ने में बहुत बड़ी भूमिका का निर्वहन किया। जो राजनीतिक साजिशें हुईं, जात-पात, मत-मजहब के आधार पर समाज को बाँटने की जो साजिशें हुईं, इस आन्दोलन ने उन्हें एकदम कोने में फेंक दिया। उत्तर हो या दक्षिण, पूर्व हो या पश्चिम, हर-जाति, हर मत, हर पन्थ के अनुयायी एक साथ इस सांस्कृतिक आन्दोलन से जुड़े और एक भारत, श्रेष्ठ भारत की परिकल्पना की नींव रखी जो अब साकार होने की ओर अग्रसर है।[26]

स्वयं आदित्यनाथ जी महाराज का कहना है कि जिनके लिए गोरक्षपीठ गौण, श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन महत्त्वपूर्ण हो गया। श्री रामजन्मभूमि आन्दोलन को परिणति तक पहुँचाने में किसी एक व्यक्ति का नहीं अपितु पूरे समाज और कई पीढ़ियों का योगदान रहा है। लेकिन एक शिल्पकार, संयोजक, संघटक एवं श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति समिति के अध्यक्ष के नाते गोरक्षपीठ के महन्त अवेद्यनाथ जी की भूमिका महती रही।[27]

धर्म की रक्षा के लिए राजनीति महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज को अपने गुरुदेव से विरासत में प्राप्त हुई। महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के साथ-साथ ही शिष्य रूप में ही महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज राजनीतिक मंच पर भी सक्रिय हो चुके थे। 1962 में उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में मानीराम विधानसभा से विजयी होकर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज पहली बार विधानसभा के

सदस्य बने और लगातार 1977 ई. तक के विधानसभा चुनाव तक मानीराम विधानसभा से चुनाव में विजयी होते रहे। 1980 ई. में मीनाक्षीपुरम् में हुए 'धर्म परिवर्तन' की घटना से विचलित महन्तजी राजनीति से संन्यास लेकर हिन्दू समाज की सामाजिक विषमता के विरुद्ध जन-जागरण के अभियान पर चल पड़े।

लोकसभा चुनाव में पहली बार महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के ब्रह्मलीन होने पर 1969 ई. के उपचुनाव में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज को गोरखपुर की जनता ने ससम्मान संसद में भेज दिया। पुनः 1989 ई. में श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन जब अपने उत्कर्ष पर था, तथाकथित सेकुलर राजनीतिक दल यह चुनौती देने लगे कि इस आन्दोलन को जनता का समर्थन प्राप्त नहीं है। इन परिस्थितियों में अयोध्या में हुए धर्म संसद में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज से लोकसभा चुनाव जीतकर सेकुलर दलों को जवाब देने का प्रस्ताव पास हुआ और महन्त जी हिन्दू महासभा से 1989 ई. के लोकसभा चुनाव में श्रीराम जन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण के मुद्दे पर सम्पूर्ण हिन्दू सन्त-महात्माओं के समर्थन से चुनावी जंग में कूदे और विजयी हुए। इस चुनाव में भारतीय जनता पार्टी और श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व वाले जनता दल के गठबन्धन का प्रत्याशी भी चुनाव मैदान में था। तत्पश्चात् लोकसभा के 1991 के मध्यावधि चुनाव तथा 1996 के लोकसभा चुनाव में महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज विजयी होते रहे।

महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने इससे पूर्व श्रीराम जन्मभूमि पर बनने वाले भव्यतम मन्दिर का शिलान्यास हिन्दू समाज में घोषित किसी अछूत से कराने का प्रस्ताव कर दुनिया को यह सन्देश दे दिया कि हिन्दू धर्माचार्य और हिन्दू समाज अपनी सामाजिक विकृतियों को समाप्त करने हेतु संकल्पबद्ध हो रहा है। परिणामतः दुनिया ने देखा कि मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की जन्मभूमि पर बनने वाले पवित्र एवं विशाल मन्दिर की पहली ईंट एक दलित ने रखी।[28] महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के प्रयास से श्रीराम जन्मभूमि मन्दिर का शिलान्यास लाखों श्रीरामभक्त हिन्दू जनता तथा परम्परा और रूढ़ियों को तोड़ने हेतु कृतसंकल्पित भारत के विभिन्न हिस्सों से आये विविध पन्थों के सन्त-महात्माओं की उपस्थिति में एक तथाकथित अस्पृश्य द्वारा किया जाना भारत के सामाजिक-धार्मिक इतिहास में सामाजिक परिवर्तन की क्रान्ति का सूत्रपात था। श्रीराम जन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का प्रश्न हिन्दू समाज और भारतीयता की प्रतिष्ठा का प्रश्न था ही, इस मुद्दे ने भारत की राजनीतिक सत्ता के उथल-पुथल का जो दृश्य प्रस्तुत किया उस पर सारी दुनिया की निगाहें टिकी थीं।[29] ऐसे महत्त्वपूर्ण आयोजन पर हिन्दू समाज में व्याप्त अस्पृश्यता जैसे कोढ़ के खिलाफ यह प्रतीकात्मक पहल दुनिया को सन्देश देने के साथ-साथ हिन्दू समाज को यह सन्देश देने का माध्यम बना कि छुआछूत न तो शास्त्र-सम्मत है, न ही धर्म सम्मत। यह एक विकृति है, रूढ़ि है जिसे धर्माचार्यों, सन्त-महात्माओं एवं हिन्दू समाज ने पूर्णतः खारिज कर दिया है।[30]

जब सम्पूर्ण पूर्वी उत्तर प्रदेश जेहाद, धर्मान्तरण, नक्सली व माओवादी हिंसा, भ्रष्टाचार तथा अपराध की अराजकता में जकड़ा था उसी समय माघ शुक्ल 5 संवत् 2050 तदनुसार 15 फरवरी सन् 1994 की शुभ तिथि पर गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने अपने उत्तराधिकारी योगी आदित्यनाथ जी का दीक्षाभिषेक सम्पन्न किया। अपनी पीठ की परम्परा के अनुसार आपने पूर्वी उत्तर प्रदेश में व्यापक जनजागरण का अभियान चलाया। सहभोज के माध्यम से छुआछूत और अस्पृश्यता की भेदभावकारी रूढ़ियों पर जमकर प्रहार किया। वृहद् हिन्दू समाज को संगठित कर राष्ट्रवादी शक्ति के माध्यम से हजारों मतान्तरित हिन्दुओं की ससम्मान घर वापसी का कार्य किया। गोसेवा के लिए आम जनमानस को जागरूक करके गोवंशों का संरक्षण एवं सम्वर्धन करवाया। पूर्वी उत्तर प्रदेश में सक्रिय समाज विरोधी एवं राष्ट्रविरोधी गतिविधियों पर भी प्रभावी अंकुश लगाने में आपने सफलता प्राप्त की। आपके हिन्दू पुनर्जागरण अभियान से प्रभावित होकर गाँव, देहात, शहर एवं अट्टालिकाओं में बैठे युवाओं ने इस अभियान में स्वयं को पूर्णतया समर्पित कर दिया। बहुआयामी प्रतिभा के धनी योगी जी, धर्म के साथ-साथ सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से राष्ट्र की सेवा में रत हो गये।[31] अपने पूज्य गुरुदेव के आदेश एवं गोरखपुर संसदीय क्षेत्र की जनता की माँग पर आपने वर्ष 1998 में लोकसभा चुनाव लड़ा और मात्र 26 वर्ष की आयु में भारतीय संसद के सबसे युवा सांसद बने। जनता के बीच दैनिक उपस्थिति, संसदीय क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले लगभग 1500 ग्रामसभाओं में प्रतिवर्ष भ्रमण तथा हिन्दुत्व और विकास के कार्यक्रमों के कारण गोरखपुर संसदीय क्षेत्र की जनता ने आपको वर्ष 1999, 2004 और 2009, 2014 के चुनाव में निरन्तर बढ़ते हुए मतों के अन्तर से विजयी बनाकर पाँच बार लोकसभा का सदस्य बनाया। उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव में भाजपा को भारी बहुमत मिलने के बाद 19 मार्च 2017 को महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज उत्तर प्रदेश के यशस्वी मुख्यमन्त्री बने।

हिन्दुत्व के प्रति अगाध प्रेम तथा मन, वचन और कर्म से हिन्दुत्व के प्रहरी योगी जी को विश्व हिन्दू महासंघ जैसी हिन्दुओं की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ने अन्तर्राष्ट्रीय उपाध्यक्ष तथा भारत इकाई के अध्यक्ष का महत्त्वपूर्ण दायित्व दिया, जिसका सफलतापूर्वक निर्वहन करते हुए आपने वर्ष 1997, 2003, 2006 में गोरखपुर में और 2008 में तुलसीपुर (बलरामपुर) में विश्व हिन्दू महासंघ के अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशन को सम्पन्न कराया। सम्प्रति आपके प्रभामण्डल से सम्पूर्ण विश्व परिचित हुआ। योगी आदित्यनाथ जी महाराज एक खुली किताब हैं जिन्हें कोई भी कभी भी पढ़ सकता है। उनका जीवन एक योगी का जीवन है, सन्त का जीवन है। पीड़ित, गरीब, असहाय के प्रति करुणा, किसी के भी प्रति अन्याय एवं भ्रष्टाचार के विरुद्ध तनकर खड़ा हो जाने का निर्भीक मन, विचारधारा एवं सिद्धान्त के प्रति अटल, लाभ-हानि, मान-सम्मान की चिन्ता किये बगैर साहस के

साथ किसी भी सीमा तक जाकर धर्म एवं संस्कृति की रक्षा का प्रयास उनकी पहचान है। योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने स्पष्ट रूप से कहा कि राममन्दिर गोरक्षपीठ के लिए कभी राजनीतिक मुद्दा नहीं रहा। यह मेरे लिए जीवन का मिशन है।[32]

पूज्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज को निकट से जानने वाला हर कोई यह जानता है कि वे उपर्युक्त अवधारणा को साक्षात् जीते हैं। वरना जहाँ सुबह से शाम तक हजारों सिर उनके चरणों में झुकते हों, जहाँ भौतिक सुख और वैभव के सभी साधन एक इशारे पर उपलब्ध हो जायं, जहाँ मोक्ष प्राप्त करने के सभी साधन एवं साधना उपलब्ध हों, ऐसे जीवन का प्रशस्त मार्ग तजकर मान-सम्मान की चिन्ता किये बगैर, यदा-कदा अपमान का हलाहल पीते हुए इस कंटकाकीर्ण मार्ग का वे अनुसरण क्यों करते? महायोगी गोरक्षनाथ ने भारत की जातिवादी-रूढ़िवादिता के विरुद्ध जो उद्घोष किया, उसे इस पीठ ने अनवरत जारी रखा।[33] गोरक्षपीठाधीश्वर परमपूज्य महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के पद-चिह्नों पर चलते हुए पूज्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने भी हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों, जातिवाद, क्षेत्रवाद, नारी-पुरुष, अमीर-गरीब आदि विषमताओं, भेदभाव एवं छुआछूत पर कठोर प्रहार करते हुए, इसके विरुद्ध अनवरत अभियान जारी रखा है। गाँव-गाँव में सहभोज के माध्यम से 'एक साथ बैठें-एक साथ खाएँ' मन्त्र का उन्होंने उद्घोष किया।

योगी जी के भ्रष्टाचार-विरोधी तेवर के हम सभी साक्षी हैं। अस्सी के दशक में गुटीय संघर्ष एवं अपराधियों की शरणगाह होने की गोरखपुर की छवि योगी जी के कारण बदली। अपराधियों के विरुद्ध आम जनता एवं व्यापारियों के साथ खड़ा होने के कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश में अपराधियों के मनोबल टूटे। पूर्वी उत्तर प्रदेश में योगी जी के संघर्षों का ही प्रभाव था कि माओवादी-जेहादी आतंकवादी इस क्षेत्र में अपने पाँव नहीं पसार पाए। नेपाल सीमा पर राष्ट्र विरोधी शक्तियों की प्रतिरोधक शक्ति के रूप में 'हिन्दु युवा वाहिनी' सफल रही है। आज उनका यही स्वरूप माननीय मुख्यमन्त्री के रूप में सबके सामने है। प्रदेश भ्रष्टाचार-आतंक एवं अपराध मुक्त होने की राह पर तेजी से बढ़ चला है।

श्रीराम जन्मभूमि पर फैसला आने के बाद पाञ्चजन्य को दिए गए साक्षात्कार में श्री योगी आदित्यनाथ जी महाराज से सम्पादकमण्डल ने प्रश्न पूछा कि इस आन्दोलन से आपका जुड़ाव कब से है? इस प्रश्न के जवाब में योगी आदित्यनाथ जी महाराज का कहना है, "मैं शुरू से गोरक्षपीठ से जुड़ा था तो स्वाभाविक रूप से आन्दोलन के साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा रहा हूँ। वर्ष 1985-86 के आस-पास से महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के साथ आना-जाना, उनके सान्निध्य में रहना, आन्दोलन से जुड़ी बैठकों में उनके साथ पीछे बैठकर उनकी सेवा में सब कार्यक्रमों को पास से देखना एवं उन कार्यक्रमों में सम्मिलित रहने का क्रम चलता रहा। 1992 में भी हम लोग सारे घटनाक्रम के साक्षी रहे हैं। सारी चीजों को करीब से देखा है। लेकिन इस

पूरे समय में मैंने जो देखा वह यह कि पूज्य गुरुदेव कभी भी कितने तनाव में रहे हों लेकिन उन्होंने धैर्य नहीं खोया।[34] इसी तरह महन्त रामचंद्रदास परमहंस जी महाराज भी थे। वह कभी-कभी रुष्ट होते थे लेकिन आन्दोलन के दौरान कभी धैर्य नहीं खोते थे। 30 अक्टूबर, 1990 और 2 नवम्बर, 1990 को जब अयोध्या में कारसेवकों का कत्लेआम हो रहा था तब भी मैंने देखा कि यह दोनों सन्त रामभक्तों को बचा रहे थे और घायल कारसेवकों की मरहम-पट्टी करने में योगदान दे रहे थे। यही है राम की मर्यादा और उनकी सीख कि किसी भी स्थिति में धैर्य नहीं खोना। सम-विषम परिस्थिति में यह अभियान आगे बढ़ा। गुरुदेव एक बात बार-बार कहते थे कि नीयत साफ होनी चाहिए। नियन्ता अपने आप मार्ग प्रशस्त कर देगा। हमें इस बात की प्रसन्नता है कि देर से ही सही लेकिन यह फैसला सर्वसम्मति से आया और पूरे देश और दुनिया ने इसको स्वीकारा। लेकिन यह भी है कि जिन पूज्य सन्तों और जिन महापुरुषों ने इस पूरे आन्दोलन की रीढ़ बनकर इसे आगे बढ़ाया, वे लोग अपनी आँखों के सामने इस दृश्य को नहीं देख पाए।[35]

फैसला सुनते ही मेरे दिमाग-मन में वे सभी चेहरे सामने आने लगे जो इस पूरे आन्दोलन की रीढ़ थे। ये सभी लोग सम-विषम परिस्थिति में जूझते थे, लगते थे और कभी किसी बात की चिन्ता नहीं करते थे। इन महापुरुषों को कभी यह चिन्ता नहीं रहती थी कि हम कहाँ हैं, कैसे हैं, किस हालत में हैं। इनका एक-एक पल और क्षण रामकाज के लिए समर्पित था। इनके मन में एक ही धुन थी-जयश्रीराम और दृढसंकल्प था श्रीरामलला के जन्मस्थान पर भव्य मन्दिर के निर्माण का।[36]

1990 के पहले और 1992 के बाद जब आन्दोलन का स्वर थोड़ा शिथिल होता हुआ दिखाई दिया तो मैंने अशोक जी के साथ बैठकर इससे जुड़ी योजना-रचना तैयार करने में अपना योगदान दिया। इसी तरह 1996-97 के बाद आन्दोलन को लेकर शान्ति थी, कहीं कुछ दिखाई नहीं दे रहा था, आन्दोलन थोड़ा शिथिल पड़ा था। सवाल यह था कि आन्दोलन आगे कैसे बढ़े? आगे का कार्य कैसे होगा? ऐसे मौके पर जनचेतना को जागृत करने के लिए, आन्दोलन की लौ को तेज प्रदान करने के लिए मुझे 'हिन्दू युवा वाहिनी' का गठन करना पड़ा था।[37] यह दो कारणों से आवश्यक था। एक तो भारत-नेपाल की सीमा सुरक्षा की दृष्टि से। क्योंकि दुर्भाग्य से 1990 के बाद जो सेकुलर सरकारें देश के अन्दर आईं और 2004 के बाद से 2014 तक रहीं, उनके मन में राष्ट्रीय सुरक्षा का कोई भाव नहीं था। दूसरा, श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन, जो कि अनुष्ठान रूप में था तो स्वाभाविक था कि इससे जुड़े सन्त-महन्त और महापुरुषों के इर्द-गिर्द मारीच-ताड़का और सुबाहु जैसे राक्षस आतंक मचाने के लिए तैयार थे। मुझे इन सभी चीजों का अहसास हो रहा था। यह भी देख रहा था कि कई चीजें घटित हो रही हैं लेकिन शासन-सत्ता मौन साधे हुए है। इन सब स्थितियों में श्रद्धेय अशोक जी से चर्चा हुई कि क्या किया जाना चाहिए? उन्होंने कहा,

हमें चुप नहीं बैठना चाहिए। आज कोई राजा–महाराजा नहीं हैं जो राक्षसों का संहार करने के लिए राम–लक्ष्मण दे देंगे। हमें इसी समाज से राम–लक्ष्मण निकालने होंगे। इसके बाद मैंने उस अभियान को अपने हाथों में लिया और सफलतापूर्वक इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाया। जब भी अयोध्या में कोई आन्दोलन होता था तो अशोक जी के आह्वान पर हजारों की तादाद में रामभक्त अपना झण्डा–डण्डा लेकर पहुँचते थे। इसी तरह कार्यक्रम चलते रहे, आगे बढ़ते रहे।[38] आजादी के बाद से अयोध्या की उपेक्षा लगभग सभी सरकारों ने की। इस कालखण्ड में भाजपा की सरकारों को बहुत कम समय मिला, लेकिन शेष सरकारों को भरपूर समय मिलने के बावजूद उनके द्वारा उपेक्षा की गई।[39]

मेरे द्वारा किये गये कार्यों में पहली बार अयोध्या की दीपावली, दीपोत्सव रूप में लोगों के सामने थी, जिसे काफी सराहना मिली। अगले वर्ष हमने उसके साथ कोरिया को जोड़ा। इस साल फिजी को जोड़ा। यह सब बहुत अच्छे एवं सफल आयोजन रहे।[40] विभिन्न देशों की रामलीलाओं को हमने इसमें बुलाया। देखिए, राम तो विशाल भारत का हिस्सा रहे। लेकिन राम की संस्कृति दुनिया के अन्दर कहाँ–कहाँ नहीं गई है। राम भारत के अन्दर एक दैवीय विभूति एवं विग्रह तो हैं ही, लेकिन मानवीय चरित्र का कोई ऐसा पक्ष नहीं, जो भगवान् के उस आदर्श रूप में, जीवन चरित्र में न हो। सम्पूर्ण मानव जीवन में घटित होने वाली हर घटना और चुनौती का समाधान अगर कहीं है तो वह भगवान् राम के चरित्र में है। एक साक्षात्कार में योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने कहा है, 'हमारे लिए राम और रोटी, दोनों महत्त्वपूर्ण हैं।' इसमें उनकी देश के प्रति प्रतिबद्धता झलकती है।[41]

श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन कई अर्थों में अनूठा रहा है। यह देश का पहला आन्दोलन था जो किसी के विरोध में नहीं, बल्कि राष्ट्र की पहचान, गौरव और सनातन संस्कृति की प्राप्ति के लिए था। इस आन्दोलन ने विविध मान्यताओं और विश्वासों का पालन करने वाले भारतीय जनमानस को संस्कृति के एक सूत्र में पिरोया। समाज के विविध वर्गों, विशेषकर वनवासी और वंचितों का सम्मान और राष्ट्र के सांस्कृतिक उन्नयन की मुख्यधारा में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए प्रभु श्रीराम समर्पित रहे। यह इस आन्दोलन का भी मुख्य हेतु था। समाज में चेतना का संचार करने वाली तमाम घटनाओं और विभिन्न समाजों–समूहों के समर्पण के सूत्रों को जिस तरह से इस आन्दोलन में पिरोया गया, वैसा अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। भारत के वीर सपूतों ने भीषण विषम परिस्थितियों में लाखों अवरोधों के पश्चात् भी राष्ट्र की चेतना को जागृत रखा, बलिदान और संयम का 'न भूतो न भविष्यति' इतिहास रचा। श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन इसी चेतना और पहचान को बचाये रखने का प्रतीक बना। इस आन्दोलन में गोरक्षपीठ आजादी के पहले से जुड़ा रहा और भगवान् राम की कृपा से संयोग ऐसा बना कि इसका जब फैसला आया

गोरक्षपीठाधीश्वर योगी आदित्यनाथ जी महाराज के हाथों में, उत्तर प्रदेश सरकार की बागडोर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं व्याख्या :

1. पण्डित दीनदयाल उपाध्याय विशेषांक, उत्तर प्रदेश सन्देश, सितम्बर (1991), सूचना एवं सम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ।
2. सम्पादकीय आलेख, राम का नाम लो और आगे बढ़ो! हितेश शंकर, पाञ्चजन्य अंक. 24 नवम्बर 2019.
3. वही.
4. उत्तरकाण्ड, श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस, गोरखपुर।
5. जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना।।
   अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ।।
6. उत व्या तुर्वशायदू अस्नातारा श्चीपति:।
   इन्द्रो विद्धां अपरायत् ।।7।।
   उत व्या सद्य आर्या सरयोरिन्द्र पारत:।
   अर्णो चित्रस्थवधी: ।।8।।
7. अथर्ववेद-सप्तम् स्कन्द, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।
8. भविष्य पुराण प्रतिसर्ग में यह उल्लेख मिलता है-
   अयोध्या मथुरा माया काशी कांची ह्यवंतिका।
   पुरी द्वारावती तेन राज्ञा व पुनरुद्धृता: (4/23, 26 बी-30, अ)
9. रामायण सीरियल, रामानन्द सागर कृत, संवाद लेखक राही मासूम रजा।
10. अष्टाचक्र नवद्वारा देवानां पूरयोध्या।
    तस्यां हिरव्यय: कोश: स्वर्गो ज्योतिषावृत:।। अथर्ववेद-इसको जगद्गुरु रामभद्राचार्य जी के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष भगवान् राम की ऐतिहासिकता को स्पष्ट करने के लिए साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया गया था।
11. अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
    पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिका:।। स्कन्दपुराण
12. अथर्ववेद-वही.
13. अथर्ववेद-वही.
14. डॉ. कल्याणी मल्लिक: नाथ सम्प्रदाय का इतिहास दर्शन और साधना प्रणाली कलकत्ता वि.वि. ।
15. पाञ्चजन्य-आलेख, 'महन्त अवेद्यनाथ' लेखक योगी आदित्यनाथ जी महाराज अंक 24 नवम्बर, 2019.
16. यू.पी. सिंह, लेख, भारतीय राष्ट्रीयता एवं महन्त दिग्विजयनाथ, 'विमर्श' सितम्बर 2017.
17. पाञ्चजन्य-आलेख, 'महन्त अवेद्यनाथ' लेखक योगी आदित्यनाथ जी महाराज अंक 24 नवम्बर, 2019.
18. हजारी प्रसाद द्विवेदी : 'नाथ-सम्प्रदाय' हिन्दुस्तानी एकेडमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद।
19. वही.
20. उन्होंने कहा कि ''मुझे यह लगा कि उस मूल कारण पर चोट होनी चाहिए कि जिससे हमारे ही बन्धु-बान्धव हजारों वर्षों की अपनी परम्परा, धर्म और उपासना पद्धति बदलने के लिए तैयार हो जा रहे हैं और मैंने महसूस किया कि जब तक हिन्दू समाज में अस्पृश्यता का कोढ़ बना रहेगा, अपने ही समाजमें उपेक्षित और तिरस्कृत

बन्धुओं को कोई भी गुमराह कर धर्मान्तरण हेतु प्रोत्साहित और प्रेरित कर सकता है।

21. पाञ्चजन्य-आलेख, 'महन्त अवेद्यनाथ' लेखक योगी आदित्यनाथ जी महाराज अंक 24 नवम्बर, 2019.
22. वही.
23. वही.
24. पाञ्चजन्य-आलेख, 'महन्त अवेद्यनाथ' लेखक योगी आदित्यनाथ जी महाराज अंक 24 नवम्बर, 2019.
25. वही.
26. वही.
27. पाञ्चजन्य-आलेख, 'महन्त अवेद्यनाथ' लेखक योगी आदित्यनाथ जी महाराज अंक 24 नवम्बर, 2019.

28. पाञ्चजन्य-आलेख, 'महन्त अवेद्यनाथ' लेखक योगी आदित्यनाथ जी महाराज अंक 24 नवम्बर, 2019.
29. अयोध्या : राममन्दिर आन्दोलन से क्या है योगी आदित्यनाथ के मठ का कनेक्शन - न्यूज 18 हिन्दी।
30. हिन्दुत्व साधना के शिखर सन्त अवेद्यनाथ आलेख लेखक, स्वामी चिन्मयानन्द सरस्वती 'विमर्श' सितम्बर 2017.
31. पाञ्चजन्य में योगी आदित्यनाथ का साक्षात्कार, अंक-24 नवम्बर 2019. योगी आदित्यनाथ महाराज का कहना है कि गोरक्षपीठ गत तीन पीढ़ी से श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन के केन्द्र में रही है। रामजन्मभूमि के लिए भावनात्मक जुड़ाव रखने वाले आन्दोलनकारी का आनन्द उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री योगी आदित्यनाथ के चेहरे पर दिखाई देता है और प्रशासक के तौर पर अयोध्या के विकास की प्रतिबद्धता उनकी बातों में झलकती है। साथ ही आन्दोलन का नेतृत्व करने वाले अपने गुरु महन्त अवेद्यनाथ की भूमिका पर पाञ्चजन्य के लिए एक विशेष आलेख लिखा।
32. 'जाति-पाँति पूछे नहिं कोई-हरि को भजै सो हरि का होई' गोरक्षपीठ का मन्त्र रहा है।
33. योगी आदित्यनाथ ने अयोध्या पर सर्वोच्च न्यायालय का फैसला आने के बाद पाञ्चजन्य के सम्पादक हितेश शंकर और वरिष्ठ संवाददाता अश्वनी मिश्र के साथ विशेष बातचीत की। अंक-24 नवम्बर 2019.
34. वही.
35. योगी आदित्यनाथ जी महाराज का कहना है कि मुझे इस अभियान और ऐसे महापुरुषों को बहुत नजदीक से देखने, सुनने और आन्दोलन के स्वर्णिम क्षणों का साक्षी बनने का सुअवसर प्राप्त हुआ। देखिए, यह आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन था जिसने पूरे देश को अपने साथ जोड़ा। सुखद स्थिति यह होती अगर यह फैसला जल्दी आ जाता तो इस आन्दोलन के शिल्पी इन क्षणों को देख और महसूस कर पाते।
36. योगी आदित्यनाथ ने अयोध्या पर सर्वोच्च न्यायालय का फैसला आने के बाद पाञ्चजन्य के सम्पादक हितेश शंकर और वरिष्ठ संवाददाता अश्वनी मिश्र के साथ विशेष बातचीत की। अंक-24 नवम्बर 2019.
37. वही.
38. वहीं.
39. योगी आदित्यनाथ जी महाराज का कहना है कि निश्चित रूप से मैं अयोध्या को उसकी पहचान दिलाने के लिए कृतसंकल्पित हूँ। यह पहचान मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के जन्मस्थान के रूप में तो अयोध्या को मिलनी ही चाहिए अपितु मानवता के कल्याण की प्रथम भूमि होने के कारण भी मिलनी चाहिए।
40. एक मुख्यमन्त्री के तौर पर अयोध्या को लेकर योगी आदित्यनाथ की प्राथमिकतााएँ एकदम स्पष्ट हैं- अयोध्या को आध्यात्मिकता से सराबोर विश्व स्तर की नगरी बनाना। वे बताते हैं कि वहाँ श्रद्धा और विकास का संगम

होगा और विश्वभर से आने वाले श्रद्धालुओं को संतुष्टि मिलेगी। मुख्यमन्त्री ने राममन्दिर के लिए देशवासियों में छाए उत्साह को नमन करते हुए कहा कि अयोध्या में इतने बड़े पैमाने पर विकास कार्य और निवेश होगा जो न केवल रोजगार बढ़ाएगा, बल्कि अर्थव्यवस्था में भी योगदान करेगा।

41. पाञ्चजन्य-आर्गनाइजर द्वारा आयोजित बेबिनार, 24 मई 2020, पाञ्चजन्य अंक-7 जून 2020 में योगी आदित्यनाथ जी महाराज के उद्बोधन का अंश।

■

नाथपन्थ की प्राचीनता

पद्मजा सिंह *

सार-संक्षेप : भारतीय धर्म दर्शन में नाथपन्थ अत्यन्त प्राचीन एवं सम्प्रदाय माना जाता है। यह सम्प्रदाय इतना प्रचीन है कि इसके प्रवर्तक गोरखनाथ का काल निर्धारण कर पाना अत्यन्त दुश्कर है। नाथपन्थ परम्परा में गोरखनाथ को अमरकाय एवं अयोनिज माना गया है। नाथपन्थ की परम्परा में गोरखनाथ को चारों युगों में उपस्थित होने सम्बन्धी अनेक कथाएँ प्रचलित हैं(किन्तु नाथपन्थ परम्परा का यह मत आस्था एवं विश्वास का मत है, इससे अधिक इस सन्दर्भ में कुछ नहीं कहा जा सकता। जोधपुर नरेश मानसिंह द्वारा संगृहीत पुस्तक 'नाथचरित्र' में उल्लेख मिलता है कि एक बार मत्स्येन्द्रनाथ भ्रमण में निकले हुए थे। भ्रमण के दौरान उन्होंने एक राजा के मृत शरीर में 'परकाया प्रवेश' विद्या के बल पर प्रवेश किया। इस प्रकार राजा के शरीर में रहकर मत्स्येन्द्रनाथ ने भोग-विलास का आनन्द लिया। मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ के द्वारा मत्स्येन्द्रनाथ पुन: अपने योगी शरीर में वापस आये। इसी ग्रन्थ में एक और कथा मिलती है कि एक बार मत्स्येन्द्रनाथ कामरूप देश में जाकर तप करने लगे। कामरूप नरेश के मृत शरीर में प्रवेश कर उसकी मंगला नामक रानी के साथ विहार किया। इस दौरान इनके पुत्र भी उत्पन्न हुए। कालान्तर में गोरखनाथ यहाँ पहुँचे और अपने गुरु मत्स्येन्द्रनाथ को वहाँ से मुक्त कराया।

बीज शब्द : अमरकाय, अयोनिज, परकाया प्रवेश, कानफा, तंत्रालोक, क्षीरसागर, कामरूप, कौलज्ञान, कंथड़ी, महास्नान।

नाथपन्थ का मूल उत्स अत्यन्त प्राचीन है। नाथपन्थ के प्रवर्तक श्री मत्स्येन्द्रनाथ और गुरु श्री गोरखनाथ के कालखण्ड पर विद्वानों में मतैक्यता का अभाव है। नाथपन्थ परम्परा में गोरखनाथ को अमरकाय एवं अयोनिज माना गया है। नाथपन्थ की परम्परा में गोरखनाथ को चारों युगों में उपस्थित होने सम्बन्धी अनेक कथाएँ प्रचलित हैं; किन्तु नाथपन्थ परम्परा का यह मत आस्था एवं विश्वास का मत है, इससे अधिक इस सन्दर्भ में कुछ नहीं कहा जा सकता। विभिन्न विद्वानों के श्री गोरखनाथ के काल के सन्दर्भ में मत निम्नवत हैं[1]-

1. कोल ब्रुक – 800 ई. से लेकर 900 ई. के बीच
2. टेलर – 900 ई.

*असिस्टेण्ट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

3. हांगसन - 800 ई.
4. विल्सन - 800 से 900 ई. के बीच
5. मैकेन्जी - 500 ई.
6. मैक्समूलर - 788 ई.
7. कृष्णस्वामी - 788 ई.
8. बालगंगाधर तिलक - 688 ई.
9. राजेन्द्रनाथ घोष - 686 ई.।

विभिन्न विद्वानों द्वारा गोरखनाथ के सन्दर्भ में प्रस्तुत उपर्युक्त मतों के सम्बन्ध में हमें प्राप्त विभिन्न स्रोतों का विश्लेषण करना होगा। इस दिशा में प्रथमतः नाथपन्थ परम्परा में प्रचलित मत्स्येन्द्रनाथ एवं गोरखनाथ सम्बन्धी लोकप्रचलित कथानकों का उल्लेख समीचीन होगा।

मत्स्येन्द्रनाथ सम्बन्धी लोक कथानक

फैजुल्लाह कृत 'गोरक्ष-मीन चेतन' के अनुसार यह उल्लेख मिलता है कि आद्य और आद्या ने पहले देवताओं की सृष्टि की, बाद में चार सिद्धों -मीननाथ, गोरखनाथ, हाड़िफा (जालन्धरनाथ) और कानफा (कृष्णपाद) की उत्पत्ति हुई तथा एक कन्या भी उत्पन्न हुई जिसका नाम गौरी रखा गया। गौरी का शिव से विवाह हुआ। गौरी ने शिव के गले में मुण्डमाला देखकर उसके बारे में पूछा। शिव के यह बताने पर कि वे सभी मुण्ड गौरी के ही हैं, यह रहस्य समझ में आया कि शिव अमर हैं और गौरी की मृत्यु होती रहती है। इसका कारण जानने हेतु आग्रह करने पर शिव ने इस गुप्त रहस्य को बताने हेतु क्षीरसागर को चुना। उपर्युक्त चार सिद्धों में से मीननाथ मछली बनकर शिव द्वारा गौरी को बताये जा रहे गुप्त रहस्य को सुनने लगे। शिव द्वारा बताये जा रहे महाज्ञान को सुनते-सुनते गौरी को नींद आ गयी और मत्स्यरूपी मीननाथ हुँकारी भरते रहे और इस प्रकार शिव द्वारा दिया गया महाज्ञान मत्स्येन्द्रनाथ ने प्राप्त किया।[2]

जोधपुर नरेश मानसिंह द्वारा संगृहीत पुस्तक 'नाथचरित्र' में उल्लेख मिलता है कि एक बार मत्स्येन्द्रनाथ भ्रमण में निकले हुए थे। भ्रमण के दौरान उन्होंने एक राजा के मृत शरीर में 'परकाया प्रवेश' विद्या के बल पर प्रवेश किया। इस प्रकार राजा के शरीर में रहकर मत्स्येन्द्रनाथ ने भोग-विलास का आनन्द लिया। मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ के द्वारा मत्स्येन्द्रनाथ पुनः अपने योगी शरीर में वापस आये। इसी ग्रन्थ में एक और कथा मिलती है कि एक बार मत्स्येन्द्रनाथ कामरूप देश में जाकर तप करने लगे। कामरूप नरेश के मृत शरीर में प्रवेश कर उसकी मंगला नामक रानी के साथ विहार किया। इस दौरान इनके पुत्र भी उत्पन्न हुए। कालान्तर में गोरखनाथ यहाँ पहुँचे और अपने गुरु मत्स्येन्द्रनाथ को वहाँ से मुक्त कराया।

उपर्युक्त कथानकों के आधार पर हजारीप्रसाद द्विवेदी निम्न निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।[3]

1. सर्वप्रथम मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा लिखित 'कौलज्ञान निर्णय' ग्रन्थ का लिपिकाल निश्चित रूप से सिद्ध कर देता है कि मत्स्येन्द्रनाथ ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती हैं।

2. सुप्रसिद्ध कश्मीरी आचार्य अभिनव गुप्त ने अपने 'तंत्रालोक' में मच्छंदविभु को नमस्कार किया है। ये मच्छन्दविभु मत्स्येन्द्रनाथ ही हैं, यह भी निश्चित है। अभिनव गुप्त का समय निश्चित रूप से ज्ञात है। उन्होंने 'ईश्वर प्रत्यभिज्ञा की वृहतीवृत्ति' सन् 1015 ई. में लिखी थी और 'क्रमस्तोत्र' की रचना सन् 991 ई. में की थी। इस प्रकार अभिनव गुप्त सन् ईस्वी की दसवीं शताब्दी के अन्त में ग्यारहवीं शताब्दी के आदि में वर्तमान थे।[4] मत्स्येन्द्रनाथ इससे पूर्व ही आविर्भूत हुए होंगे।

3. पं. राहुल सांकृत्यायन ने 'गंगा के पुरातत्त्वांक' में 84 वज्रयानी सिद्धों की सूची प्रकाशित करायी है। इसे देखने से मालूम होता है कि मीनपा नामक सिद्ध जिन्हें तिब्बती परम्परा में मत्स्येन्द्रनाथ का पिता कहा गया है पर जो वस्तुतः मत्स्येन्द्रनाथ से अभिन्न है, राजा देवपाल के राज्य में हुए थे। राजा देवपाल 809-49 ई. तक राज्य करते रहे (चतुराशीति सिद्ध प्रवृत्ति, तनजूर 86/11 कार्डियर, पृ. 247)। इससे यह सिद्ध होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ नवीं शताब्दी के मध्य भाग में और अधिक से अधिक अन्त्य भाग तक वर्तमान थे।

4. गोविन्दचन्द्र या गोपीचन्द्र का सम्बन्ध जालन्धरपाद से बताया जाता है। वे कानफा के शिष्य होने से जालन्धरपाद की तीसरी पुश्त में पड़ते हैं। इधर तिरूमलय की शैललिपि से यह तथ्य उद्धृत किया जा सका है कि दक्षिण के राजा राजेन्द्र चोल ने माणिकचन्द्र के पुत्र गोविन्दचन्द्र को पराजित किया था। बंगला में 'गोविन्दचन्द्र रे गान' नाम से जो पोथी उपलब्ध हुई है उनके अनुसार भी गोविन्दचन्द्र का किसी दाक्षिणात्य राजा का युद्ध वर्णित है। राजेन्द्र चोल का समय 1063 ई.-1112 ई. है।[5] इससे अनुमान किया जा सकता है कि गोविन्दचन्द्र ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य भाग में वर्तमान थे। यदि जालन्धरपाद उनसे सौ वर्ष पूर्ववर्ती हों तो भी उनका समय दसवीं शताब्दी के मध्यभाग में निश्चित होता है। मत्स्येन्द्रनाथ का समय और भी पहले निश्चित हो चुका है। जालन्धरपाद उनके समसामयिक थे। इस प्रकार उनकी परिकल्पना के बाद भी इस बात से पूर्ववर्ती प्रमाणों की अच्छी संगति नहीं बैठती।

5. वज्रयानी सिद्ध कण्हपा ने स्वयं अपने गानों में जालन्धरपाद का नाम लिया है। तिब्बती परम्परा के अनुसार ये भी राजा देवपाल (809-849 ई.) के समकालीन थे।[6] इस प्रकार जालन्धरपाद का समय इससे कुछ पूर्व ही ठहरता है।

6. गोरखनाथ का सम्बन्ध कन्थड़ी नामक एक सिद्ध के साथ भी ज्ञात होता है। 'प्रबन्ध चिन्तामणि'

में चौलुक्य राजा मूलराज का कंथड़ी नामक शैव सिद्ध से भेंट का उल्लेख मिलता है। इस कथा में कंथड़ी नामक शैव सिद्ध के सभी लक्षण नाथपन्थ के योगी के हैं। अतः प्रबन्ध चिन्तामणि में उल्लिखित कंथड़ी ही गोरखनाथ के शिष्य रहे होंगे। प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार चौलुक्यराज या मूलराज ने संवत् 993 की आषाढ़ पूर्णिमा को राज्यभार ग्रहण किया था। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर हजारीप्रसाद द्विवेदी महायोगी गोरखनाथ एवं उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ का काल नवीं शताब्दी का मध्यभाग मानते हैं।

गोरखनाथ सम्बन्धी लोक कथानक

(1) **महाराजा भर्तृहरि को योगोपदेश**- अवन्तिका के अधिपति महाराजा भर्तृहरि को महायोगी गोरखनाथ ने योगोपदेश प्रदान कर अपने द्वारा प्रवर्तित वैराग्य पन्थ में सम्मिलित कर लिया था। नाथ-सम्प्रदाय में उन्हें नवनाथों में परिगणित किया गया है और नवयोगेश्वरों में योगेश्वर हरिनारायण का ही भर्तृहरि को अवतार कहा गया है। उनकी राजधानी उज्जयिनी थी, वे चक्रवर्ती नरेश थे।

(2) **बप्पा रावल को वरदान**- राजस्थान तथा विशेष रूप से मेवाड़ के विशाल भू-भाग महायोगी गोरखनाथ तथा नाथ-सम्प्रदाय के सिद्धों, अवधूतों और योगियों के आशीष और चरणधूलि से परम पवित्र और गौरवान्वित होते चले आ रहे हैं। इस विशाल क्षेत्र में प्रायः सभी नगरों और महत्त्व के स्थानों में नाथयोगियों के तपःस्थल और मठादि पाये जाते हैं। महायोगी गोरखनाथ के आशीर्वाद और वरदान से मेवाड़ राज्य के संस्थापक बप्पा रावल का ऐतिहासिक वृत्तान्त अमिट महिमान्वित है। उसके स्थापना काल से ही मेवाड़ के महाराणा महायोगी गोरखनाथ जी तथा नाथयोगियों को गुरुपद पर प्रतिष्ठित कर उनके चरणदेश में असाधारण निष्ठा और श्रद्धा व्यक्त करते आ रहे हैं। गोरखनाथ जी द्वारा स्थापित भगवान् एकलिंग शिव को ही बप्पा रावल के वंशज मेवाड़ के महाराणा मेवाड़ राज्य का वास्तविक अधिपति कहते हैं और अपने आप को भगवान् एकलिंग का दीवान समझते हैं।

(3) **नेपाल और उसके राजवंश का संरक्षण**- नेपाल और उसके राजवंश को योगीन्द्र मत्स्येन्द्रनाथ और शिवगोरक्ष महायोगी गोरखनाथ की प्राचीन काल से ही कृपादृष्टि और संरक्षण प्राप्त होता रहा है और आज भी उस विशाल भू-भाग में मृगस्थली आदि क्षेत्रों में मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ के प्रति यथेष्ट श्रद्धा और पूज्यभाव दर्शनीय है। नेपाल के मूर्धन्य विद्वानों, शास्त्रज्ञों और योगियों ने अपनी संस्कृत और नेपाली रचनाओं में मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ तथा अनेक नाथसिद्धों का जो स्तवन तथा वृत्तान्त वर्णन किया है, उससे समग्र नेपाल पर उनके यथेष्ट प्रभाव का पता चलता है।

मत्स्येन्द्र-यात्रा-उत्सव नेपाली जन-जीवन की परम्परा का एक विशिष्ट पर्व है। नेपाल का

गोरखा राज्य योगेश्वर मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ के प्रति श्रद्धा का प्रतीक है। नेपाल नरेश नरेन्द्रदेव ने योगीन्द्र मत्स्येन्द्रनाथ के कामरूप पीठ से आकर नेपाल को अपार जल-वृष्टि से सम्पन्न कर अकाल से मुक्त करने की स्मृति में उनकी यात्रा का संयोजन किया था। नरेन्द्रदेव ने रथयात्रा, महास्नान-यात्रा-उत्सव से मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ के प्रति चिरकृतज्ञता की पवित्र स्मृति को नेपाली जनजीवन की सांस्कृतिक सम्पत्ति बना लिया था।

मत्स्येन्द्रनाथ सम्बन्धी मुद्राओं पर 'श्रीश्रीलोकनाथाय', 'श्रीश्रीलोकनाथ' तथा 'श्री करुणामय' शब्द अंकित हैं। इसी तरह नेपाल के शाह राजवंश ने गोरखनाथ से सम्बन्धित सिक्कों पर 'श्रीश्री गोरखनाथ' शब्द अंकित करवाकर तथा उनकी चरणपादुकाओं के चिह्न अंकित करवाकर उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की है। शाहवंश के राजाओं का राजतिलक गोरखनाथ की तपोभूमि मृगस्थली के महन्त द्वारा सम्पन्न होता है। महायोगी गोरखनाथ नेपाल के राष्ट्रगुरु के रूप में परम पूज्य हैं।

(4) **गुरु गोरखनाथ और गोगा पीर**- गोगा चौहान क्षत्रिय थे। ऐसी जनश्रुति है कि उनकी उत्पत्ति अथवा जन्म गोरखनाथ जी की कृपा से हुआ था। राजस्थान के लोकमानस में गोगा पीर की योगसाधना, योग-चमत्कार और महायोगी गोरखनाथ जी की उन पर कृपादृष्टि की गाथा एक ऐतिहासिक धरोहर के रूप में सुरक्षित है। गोगा पीर भारतीय इतिहास के मध्यकाल के पहले और दूसरे चरण में राजस्थान के बीकानेर राज्य के अन्तर्गत बागड़ क्षेत्र के शहर देढरा, शीशमढ़ी के राजा जेवर के पुत्र थे। गोगा ने अपने जीवन में त्याग-बलिदान, योगसाधना, युद्धस्थल में स्वधर्म, स्वदेश तथा स्वत्व-रक्षा के लिए पराक्रम आदि जो कुछ भी चरितार्थ किया उसके मूल में महायोगी गुरु गोरखनाथ का उनके प्रति स्नेह और अनुग्रह ही परिलक्षित है। गोगा को भारत के अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान का समकालीन भी कहा जाता है। इतिहासकार टॉड का कथन है कि महमूद गजनवी से युद्ध करते समय उन्होंने प्राण त्याग किया था। ऐसा भी कहा जाता है कि 1193 ई. में मुहम्मद गोरी के साथ युद्ध में उनका प्राणान्त हुआ था।

(5) **गुरु गोरखनाथ और योगी रांझा**-पंजाब के लोकमानस और नाथ-सम्प्रदाय में ही नहीं, हिन्दी तथा अन्यान्य भारतीय साहित्य में भी रांझा और हीर का प्रेम-वृत्तान्त अमिट है। मध्यकाल में रांझा ने हीर के असह्य विरह से विदग्ध होकर महायोगी गोरखनाथ जी के शरणागत होकर तथा उनसे योगदीक्षा प्राप्तकर अपना जीवन अमर कर लिया। नाथयोगी रांझा की प्रेमकथा विश्व साहित्य में एक प्राणमयी अमृतगाथा के रूप में चिरस्मरणीय है। रांझा नाथ-सम्प्रदाय की नटेश्वरी शाखा से सम्बन्धित थे। उनकी प्रेम-योग साधना ने असंख्य प्राणियों को पवित्र प्रेम के पथ पर चलने की प्रेरणा दी। सूफी साधक वारिश शाह ने इस कथा से अपनी लेखनी को अमर कर दिया।

(6) **गुरु गोरखनाथ और आल्हा**- 'पृथ्वीराज रासो' के रचयिता महाकवि चन्दवरदायी के

समकालीन कवि जगनिक ने वीरकाव्य 'आल्हाखण्ड' की रचना की थी। यह बात स्पष्ट होती है कि सम्राट पृथ्वीराज चौहान से चन्देल राजवंश के परमर्दिदेव की प्रतिद्वन्द्विता चलती रहती थी और पृथ्वीराज से युद्धक्षेत्र में लोहा लेने वाले आल्हा-उदल की भूमिका बड़ी सशक्त थी। जगनिक के 'आल्हाखण्ड' में उल्लेख है कि चन्देल राजवंश के राजा परमर्दि (परमाल) के गुरु का नाम अमरा (मत्स्येन्द्रनाथ) था। वीर आल्हा को गोरखनाथ जी ने योग दीक्षा देकर अपना शिष्य बनाया था।

(7) **गोरखतलैया**- विक्रमीय पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी के मध्यकालीन इतिहास का एक आकर्षक प्रसंग है। उस समय सन्त कबीर ने गोरखपुर जनपद के नवाब बिजली खाँ के अनुनय-विनय से जनपद के विशाल क्षेत्र में बारह साल से चले आ रहे अकाल से संत्रस्त और पीड़ित जनों को त्राण देने के लिए मुक्ति की महानगरी काशी का परित्याग कर मगहर में पदार्पण किया और यह सिद्ध किया कि जिस तरह काशी में मोक्ष की प्राप्ति सहज-सुलभ है, उसी तरह मगहर जैसे ऊसर क्षेत्र में परमात्मा की कृपा और उपासना से जीवात्मा भवसागर से पार उतरकर मुक्ति प्राप्त करने में समर्थ है।

मगहर ऐतिहासिक स्थान है, वह आमी नदी के तट पर स्थित पवित्र आध्यात्मिक तीर्थ है। आमी नदी के पूर्वी तट के सन्निकट स्थित ग्राम में सन्त कबीर द्वारा नवाब बिजली खाँ की प्रेरणा से एक विशाल सन्त-महात्माओं के भण्डारे का आयोजन हुआ। कई सन्त-महात्माओं के साथ भगवती राप्ती के तट पर स्थित शिवगोरक्ष महायोगी गोरखनाथ जी विशेष रूप से इस सन्त-सम्मेलन को अपने उपदेशामृत और आशीष से सिक्त करने के लिए श्रद्धापूर्वक आमन्त्रित थे। चूँकि आमी नदी प्राय: सूख गयी थी, थोड़ा बहुत जो जल सुलभ था, उससे इस विशाल आयोजन में आगन्तुकों का स्वागत-सत्कार हो पाना असम्भव था, सन्त कबीर ने गोरखनाथ जी के सम्मुख उपस्थित होकर निवेदन किया- 'महाराज! आप हमें चिन्तामुक्त कीजिए। आप निरंजन हैं, निराकार होकर भी साकार हैं, सिद्धों द्वारा वन्द्य हैं, अगम्य हैं, अगोचर होकर भी प्रकट होते रहते हैं। मेरी सुदृढ़ मान्यता है कि आप महादेवजी और सिद्ध और नाथ अभिन्न स्वरूप हैं।'

गोरख सोइ ग्यान गमि गहै।
महादेव सोइ मन की लहै॥
सिध सोइ जो साधै इति

नाथ सोइ जो त्रिभुवन जती॥ (कबीर ग्रन्थावली, पद-327)

सन्त कबीर के निवेदन पर गोरखनाथ जी ने दाहिने चरण के अँगूठे से पृथ्वी को दबाया और उनके भार से लोगों के देखते ही देखते विशाल जलस्रोत गोरखनाथ जी के अनुग्रहस्वरूप पृथ्वी के अतल तल से प्रवाहित हो उठा। समस्त वातावरण 'अलख निरंजन', 'महायोगी गोरखनाथ की

जय' से प्रतिध्वनित हो उठा। सन्त कबीर की यह ऐतिहासिक तपस्थली, सन्तमण्डली की सम्मति से यह जलस्रोत गोरखतलैया के रूप में लोकमानस में चिरस्मरणीय हो उठा।

डब्ल्यू.डब्ल्यू. जार्ज ब्रिग्स ने गोरखनाथ से सम्बन्धित दन्तकथाओं को मुख्यत: चार भागों में बाँटकर उनका काल-निर्धारण करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार कबीर, नानक आदि के साथ गोरखनाथ का संवाद हुआ था। इस आधार पर बहुत से विद्वानों ने गोरखनाथ का काल लगभग 14वीं शताब्दी ई. में माना है। गूगा की कहानी पश्चिमी नाथों की अनुश्रुतियाँ, बंगाल की शैव परम्परा और धर्म-पूजा का सम्प्रदाय, दक्षिण के पुरातत्त्व के प्रमाण, ज्ञानेश्वर की परम्परा आदि के आधार पर गोरखनाथ का कालखण्ड 12वीं शताब्दी ईस्वी के आसपास दिखायी देता है। यद्यपि कि तेरहवीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश में स्थित गोरखपुर का प्रतिष्ठित मठ ढहा दिया गया था जिसके ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध हैं। अत: गोरखनाथ निश्चित रूप से 1200 ई. के पूर्व उत्पन्न हो चुके थे। नेपाल की शैव-परम्परा के राजा नरेन्द्रदेव, उदयपुर के बप्पा रावल, उत्तर पश्चिम के रसालू और होदी, नेपाल के पूर्व में शंकराचार्य से भेंट जैसे उल्लेख गोरखनाथ को आठवीं शताब्दी ईस्वी से लेकर नवीं शताब्दी ई. के बीच होने का संकेत करते हैं। कुछ परम्पराएँ इससे भी पूर्ववर्ती तिथि की ओर संकेत करती हैं। उपर्युक्त के आधार पर ब्रिग्स गोरखनाथ को ग्यारहवीं शताब्दी के आरम्भ का मानना अधिक उचित मानते हैं।

आज तक के अनुसन्धानों से अभी तक मत्स्येन्द्रनाथ एवं गोरखनाथ की कोई ऐसी तिथि निर्धारित नहीं की जा सकी है जो निर्विवाद हों। नाथपन्थ के साहित्य में गोरखनाथ को अमरकाय मानने के कारण किसी स्पष्ट तिथि का उल्लेख नहीं प्राप्त है। आदि शंकराचार्य के समकालीन होने के आधार पर शंकराचार्य की तिथि को ही कुछ विद्वानों ने गोरखनाथ की तिथि-निर्धारण में सहयोगी माना है। शांकरभाष्य के सबसे प्राचीन भामती टीकाकार श्री वाचस्पति मिश्र ने न्यायसूचि निबन्ध नाम के अपने ग्रन्थ में 898 संवत् की रचना का उल्लेख किया है। अनुमान किया जाता है कि यह संवत् विक्रम का होगा। इस आधार पर 841 ई. मानी जानी चाहिए। अत: आदिशंकराचार्य का आविर्भाव काल नवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध होगा।[7] बलदेव उपाध्याय आगे भर्तृहरि, कुमारिल तथा शंकराचार्य को क्रमश: सातवीं शताब्दी के आरम्भ, मध्य तथा अन्त में रखते हैं। बलदेव उपाध्याय के यदि इस कालक्रम को स्वीकार किया जाय तो गोरखनाथ का काल एक शताब्दी पूर्व प्रतीत होता है, क्योंकि भर्तृहरि गोरखनाथ के शिष्य थे। गोरखनाथ द्वारा बप्पा रावल को तलवार भेंट करने की घटना को आधार मानने वाले बप्पा रावल के समकालीन गोरखनाथ को मानते हैं।[8] बप्पा रावल की विस्तृत चर्चा जेम्स कर्नल टॉड ने अपनी पुस्तक में की है।[9] उल्लेख्य है कि मेवाड़ में विक्रम संवत् 1028 से पूर्व बप्पा रावल का शासन हो चुका था क्योंकि एकलिंग के प्राप्त शिलालेख में बप्पा रावल को गुहिलवंशियों ने चन्द्रमा के समान माना है। कुछ विद्वान बप्पा रावल का समय विविध

पुरातात्त्विक स्रोतों के आधार पर 728 ई. स्वीकार करते हैं।[10]

राजा भर्तृहरि के सन्दर्भ में भी अनेक मत प्रचलित हैं तथापि सर्वाधिक स्वीकार्य मत इन्हें महाराजा विक्रमादित्य का भाई होना है। इस आधार पर भर्तृहरि को सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ का माना जाता है। भर्तृहरि गोरखनाथ के शिष्य थे और इस आधार पर भी गोरखनाथ का काल सातवीं शताब्दी ईस्वी का पूर्वार्द्ध प्रतीत होता है।[11] राहुल सांकृत्यायन ने चौरासी सिद्धों में ही गोरखनाथ का उल्लेख किया है। इन चौरासी सिद्धों का काल 750 से 1175 ई. मानते हैं।[12] श्री ज्ञानेश्वर ने अपनी गुरु-परम्परा का उल्लेख करते हुए गोरखनाथ का निम्नलिखित क्रम में उल्लेख किया है- आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, गहनीनाथ, निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर। रांगेय राघव गोरखनाथ को नवीं शताब्दी ईस्वी में स्वीकार करते हैं।[13] नागेन्द्रनाथ उपाध्याय ने गोरखनाथ के काल के सम्बन्ध में प्रचलित अनेक मतों की समीक्षा करते हुए गोरखनाथ को नवीं शताब्दी ईस्वी का मानते हैं।[14] रूसी विद्वान बेसीलिफि ने तिब्बती ग्रन्थमाला के प्रमाण में गोरखनाथ का काल आठवीं शताब्दी ईस्वी माना है।

नेपाल से सम्बन्धित मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ का अकाल के सम्बन्ध में उल्लेख भी काल-निर्धारण के बारे में किंचित् संकेत करता है। हडसन नेपाल में दुर्भिक्ष का काल पाँचवीं शताब्दी ईस्वी मानते हैं। चीनी पर्यटक ह्वेनसांग ने भावविवेक और मत्स्येन्द्रनाथ को समकालीन माना है। भावविवेक का समय 550 ई. है जबकि लेवी का कहना है कि मत्स्येन्द्रनाथ 657 ई. में नेपाल के राजा नरेन्द्रदेव के निमंत्रण पर वहाँ गये थे।

उपर्युक्त ऐतिहासिक स्रोतों और विभिन्न विद्वानों के मतों से स्पष्ट है कि नाथपन्थ के प्रवर्तक मत्स्येन्द्रनाथ एवं गोरखनाथ के काल-निर्धारण पर मतैक्यता नहीं है। उन विद्वानों के मतों का उल्लेख बहुत स्पष्ट प्रामाणिक साक्ष्य न होने के कारण नहीं किया गया है जिनमें से कुछ ने ईसापूर्व की शताब्दी में तथा कुछ ने बारहवीं शताब्दी के बाद गोरखनाथ को रखने का मत प्रतिपादित किया है। वर्तमान ऐतिहासिक स्रोतों के परिप्रेक्ष्य में पाँचवीं शताब्दी ई. से लेकर दसवीं शताब्दी ई. के मध्य महायोगी गोरखनाथ का आविर्भाव सत्य के निकट प्रतीत होता है। अभी तक उपलब्ध ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर यह निष्कर्ष उपयुक्त होगा कि गोरखनाथ का आविर्भाव काल सातवीं शताब्दी ईस्वी है।

सन्दर्भ:

1. उपाध्याय, बलदेव - 'श्री शंकराचार्य', पृ. 35;
   सिंह, अनुज प्रताप - 'गोरक्षनाथ और नाथसिद्ध', पृ. 8-9
2. सेन, सुकुमार - 'बंगला साहित्य का इतिहास', पृ. 937;
   द्विवेदी, हजारीप्रसाद - 'नाथ सम्प्रदाय', पृ. 43-44
3. द्विवेदी, हजारीप्रसाद - 'नाथ सम्प्रदाय', पृ. 50-52

4. एस.के.डे. - 'संस्कृत पोएटिक्स', जिल्द-1, पृ. 105
5. सेन, दिनेशचन्द्र - 'बंगभाषा ओ साहित्य'
6. गंगा पुरातत्त्वांक, पृ. 254
7. उपाध्याय, बलदेव - 'श्री शंकराचार्य', पृ. 35-38
8. सिंह, सुखवीर - 'राजस्थान का इतिहास', पृ. 3
9. टॉड जेम्स कर्नल - 'राजस्थान', पृ. 121-144
10. सिंह, अनुज प्रताप - 'गोरक्षनाथ और नाथसिद्ध', पृ. 11-13
11. बनर्जी, अक्षयकुमार - 'नाथयोग', पृ. 7
12. पुरातत्त्व निबन्धावलि, पृ. 120 तथा हिन्दी काव्यधारा, पृ. 156
13. राघव, रांगेय - 'गोरखनाथ और उनका युग', पृ. 29
14. उपाध्याय, नागेन्द्रनाथ - 'गोरक्षनाथ' (नाथ-सम्प्रदाय के परिप्रेक्ष्य में), पृ. 100

■

भारतीय संस्कृति और सभ्यता

शिप्रा सिंह*

सार-संक्षेप : समाज-जीवन तक पहुँचने वाले मानव ने अपने लिए आचार-व्यवहार की आवश्यकतानुसार क्रमशः अनेक नियम बनाए। उसने एक सभ्य मानव संसार की रचना की। सभ्य मानव बनने की इस प्रक्रिया में 'संस्कृति और सभ्यता' ने स्वरूप ग्रहण किया। अलग-अलग भू-भागों पर जीवन-यापन करने वाले अलग-अलग मानव समाज ने अपनी-अपनी आवश्यकता, वैचारिक क्षमता, बौद्धिक प्रयत्न से अपने-अपने जीवन-मूल्य विकसित किए, अपनी संस्कृति का विकास किया और सभ्यता के रूप में उसे मूर्त रूप प्रदान किया। वस्तुतः अपने उद्‌भव से लेकर अब तक मानव-समाज द्वारा निरन्तर जीवन-मूल्यों, परम्पराओं, सामाजिक विधि-विधानों का विकास होता जा रहा है। उसकी इसी सामाजिक विकास-यात्रा ने उस समाज की संस्कृति के रूप में पहचान बनायी।

बीज शब्द : संस्कृति एवं सभ्यता, बौद्धिक चिन्तन, राष्ट्र-समाज, इक्ष्वाकु, दिवोदास, तुष्टीकरण, गोपथ, ब्रह्मवैवर्त, उपाख्यान, दिव्यावदान, स्मृतिविवेक, चार्वाक।

विधाता की सृष्टि-रचना में उच्चता-श्रेष्ठता जैसे भाव का होना सम्भव नहीं। धरती-आकाश और जड़ पदार्थ हों अथवा पेड़-पौधे एवं जीव-जन्तु जैसे चेतन तत्त्व हों, सृष्टिकर्ता ने तो सभी को अपनी-अपनी विशिष्टता एवं सौन्दर्य के साथ एक भाव से ही बनाया है। सृष्टि के सौन्दर्य में ये सभी एक समान महत्त्व रखते हैं, उतना ही जितना मानव का महत्त्व है। सृष्टि के सभी तत्त्वों में सन्तुलन-समन्वय और सामंजस्य सृष्टि के बने रहने एवं उसके सौन्दर्य की आवश्यक शर्त है। सम्भवतः सृष्टि में मानव की उत्पत्ति सृष्टि के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए हुई। उसके इसी दायित्व निर्वहन हेतु अन्य प्राणियों से अलग विशिष्ट शरीर संरचना के साथ 'बुद्धि', उसका विकास और उसके उपयोग का उपहार मानव ने प्राप्त किया। परिणामतः मनुष्य को सृष्टि-रचना में अपनी मौलिक सृजन के साथ सृष्टिकर्ता की श्रेष्ठतम कृति माना जाने लगा।

मनुष्य अनुभव, ज्ञान एवं विज्ञान का साधक बना। उसने जीवन को प्रकृति-निर्भरता के दायरे से निकालकर अपनी आवश्यकताओं का स्वयं निर्माता बनकर स्व-निर्भर बनाया। आग की खोज, पहिए की खोज, पाषाणोपकरण, काष्ठोपकरण के साथ-साथ कृषि एवं धातुओं के ज्ञान से

*विभागाध्यक्ष-बी.एड्., महाराणा प्रताप पी.जी. कॉलेज, जंगल धूसड़, गोरखपुर(उ.प्र.)

मनुष्य ने अपनी विकास-यात्रा प्रारम्भ की। उसकी इस विकास-यात्रा ने उसे सामूहिक जीवन का अभ्यास कराया। सामूहिक जीवन से सामुदायिक जीवन की यात्रा करते हुए मनुष्य ने समाज-जीवन तक की यात्रा पूर्ण की। समाज-जीवन तक पहुँचने वाले मानव ने अपने लिए आचार-व्यवहार की आवश्यकतानुसार क्रमशः अनेक नियम बनाए। उसने एक सभ्य मानव संसार की रचना की। सभ्य मानव बनने की इस प्रक्रिया में 'संस्कृति और सभ्यता' ने स्वरूप ग्रहण किया। अलग-अलग भू-भागों पर जीवन-यापन करने वाले अलग-अलग मानव समाज ने अपनी-अपनी आवश्यकता, वैचारिक क्षमता, बौद्धिक प्रयत्न से अपने-अपने जीवन-मूल्य विकसित किए, अपनी संस्कृति का विकास किया और सभ्यता के रूप में उसे मूर्त रूप प्रदान किया। वस्तुतः अपने उद्भव से लेकर अब तक मानव-समाज द्वारा निरन्तर जीवन-मूल्यों, परम्पराओं, सामाजिक विधि-विधानों का विकास होता जा रहा है। उसकी इसी सामाजिक विकास-यात्रा ने उस समाज की संस्कृति के रूप में पहचान बनायी।

संस्कृति और सभ्यता के अर्थ एवं परिभाषा को लेकर दुनिया भर के विद्वानों में मतैक्यता नहीं है। कुछ विद्वान संस्कृति और सभ्यता को पर्यायवाची मानते हैं तो कुछ इसे अलग-अलग अर्थ प्रदान करते हैं। ई. टाइटलर (प्रिमिटिव कल्चर, भाग 71, जॉन मरे, लन्दन, चतुर्थ संस्करण, 1903), ब्रानिसला मैलिनाउस्की (एन्साइक्लोपीडिया ऑफ द सोशल सायन्सेज, भाग-4, पृ्ठ 621), हुमायूँ कबीर (ऑवर हैरिटेज, द नेशनल इन्फार्मेशन एण्ड पब्लिकेशन्स लि., मुम्मई, दूसरा मुद्रण, 1947, पृष्ठ 6); मैकाइवर (सोशल काज़ेशन, अध्याय-10, मैकमिलन 1949, पृष्ठ...); एम.जे. हर्सकोविट्स (मैन ऐण्ड हिज वर्क्स, अल्फ्रेड ए. नाफ, 1949, पृष्ठ 17); आर्नल्ड जे. टायनबी (ए स्टडी ऑव हिस्ट्री, डी.सी. सामरवेल कृत संक्षेप, ज्याफेर कम्बरलेज, लन्दन, तीसरा मुद्रण, 1949, पृष्ठ 196); ओस्वाल स्पेंगलर (श्री पी.ए. सॅरोकिन द्वारा सोशल फिलासफीज ऑव ऐन एज आफ क्राइसिस, एडेम एण्ड चार्ल्स ब्लैक, लन्दन, 1952, पृष्ठ 77-78 पर उद्धृत); लिंटन लाबी, हर्सकोविट्स (ए.एल. क्रेबर, एन्थ्रापॉलॉजी, नया संस्करण, जार्ज जी. हैरेप ऐण्ड क. लि., लन्दन 1948, पृष्ठ 252); रूथ बेनिडिक्ट (पैटर्न्स ऑव कल्चर, मैण्टर बुक्स, द न्यू अमेरिकन लायब्रेरी, 1948, पृष्ठ 1); टी.एस. इलियट (नोट्स टुवर्ड द डैफिनिशन ऑफ कल्चर, फेबर एण्ड फेबर, लन्दन, 1948, पृष्ठ 21); जे. आर्टीगा वाई गैसेट (द रिवोल्ट ऑव द मासेज, मैण्टर बुक्स, 1951, पृष्ठ 52) जैसे विदेशी विद्वानों के संस्कृति-सभ्यता के मत पढ़कर हम एक ऐसे ज्ञानजाल में फँसकर विभ्रमित होंगे, जैसे कि लगेगा संस्कृति और सभ्यता एक कठिन तथा आसानी से न जानने वाली सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया है। किन्तु इन विद्वानों को पढ़कर यह स्पष्ट हो जाता है कि विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र में विकसित समाज-राष्ट्र की संस्कृति और सभ्यता का विकास उस समाज-राष्ट्र की भौगोलिक परिस्थितियों, उनके सामाजिक चिन्तन से अलग-अलग विशिष्टताओं के साथ होता है। स्पष्ट है कि भारत के सन्दर्भ में संस्कृति एवं सभ्यता के विकास-क्रम को समझने के लिए भारतीय मानस, चित्त एवं भारत के भौगोलिक-सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश की समझ

आवश्यक होगी। भारतीय दृष्टि से संस्कृति और सभ्यता का मूल्यांकन ही भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का वास्तविक स्वरूप प्रस्तुत कर सकता है। भारत को केन्द्र में रखकर ही हम यहाँ संस्कृति एवं सभ्यता एवं उसके विकास-क्रम को समझने का प्रयत्न करेंगे, जिससे कि भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की विशिष्टताएँ हम समझ सकें।

संस्कृति एवं सभ्यता पर्यायवाची नहीं हैं, किन्तु पूरक अवश्य हैं। संस्कृति एवं सभ्यता के बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। संस्कृति को समझने में सभ्यता सहायक है तो सभ्यता का निर्माण-तत्त्व संस्कृति ही है। वस्तुतः यदि किसी राष्ट्र-समाज-सभ्यता की आत्मा संस्कृति है, सभ्यता दृश्य भौतिक उपलब्धियाँ है, वह जीवनोपयोगी संसाधन प्राप्त करने की योग्यता है तो संस्कृति का सम्बन्ध सभ्यता के निर्माण में प्रयुक्त विचार, दर्शन, परिकल्पना एवं बौद्धिक चिन्तन है। सभ्यता समाज-जीवन का भौतिक जगत् है तो संस्कृति का सम्बन्ध मनुष्य के आध्यात्मिक, मानसिक तथा चिन्तन जगत् से है। संस्कृति मनुष्य के मन, मस्तिष्क और आत्मा का प्रतिनिधित्व करती है। कहा जा सकता है कि सभ्यता मनुष्य के विकास की कहानी है तो संस्कृति उसके जीवन की अर्थपूर्ण व्याख्या। सभ्यता तथा संस्कृति का सम्बन्ध इतना घनिष्ठ है कि उन्हें एक दूसरे से अलग करना असम्भव सा है। अतः संस्कृति और उसकी विशेषताएँ ही तत्सम्बन्धी राष्ट्र-समाज की सभ्यता का सृजन करती है। संस्कृति की विवेचना एवं समझ में सभ्यता की विवेचना एवं समझ समाहित है।

संस्कृति मानव-जीवन एवं उस मानव-समाज जीवन की विशिष्टता है। संस्कृति का निर्माण मनुष्य के अनुभवजन्य एवं मन-विज्ञान-परम्परा के प्रयत्नों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी निरन्तर विकसित आचार-विचारयुक्त जीवन-मूल्य के रूप में होता रहता है। किसी राष्ट्र-समाज की संस्कृति के परम्परा-प्रगति दो पग हैं। संस्कृति प्रवहमान जीवन-यात्रा है। अनवरत विकसित होता जीवन-मूल्य है। मानव जीवन का प्रकृति के साथ समन्वय एवं सम्बन्ध का सूत्र है। संस्कृति स्रष्टा और सृष्टि को जानने-समझने और उसके साथ जड़-चेतन के सम्बन्धों को समझने और तदनुरूप जीवन-मूल्य विकसित करने की प्रक्रिया है। संस्कृति पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश तत्त्व के साथ मानव-सम्बन्ध को समझने का दर्शन है। प्रकृति के तत्त्वों पर विजय पाने के प्रयत्न में तथा मानवानुभूति की कल्पना में मानव जिस जीवन-दृष्टि की रचना करता है, वह उसकी संस्कृति है। संस्कृति सदैव गतिशील होती है। नदी के जल के प्रवाह की भाँति निरन्तर गतिशील होते हुए प्रत्येक संस्कृति अपनी निजी विशेषताएँ रखती है। यही विशिष्टताएँ उस संस्कृति के सृजनकर्ता समाज-राष्ट्र के संस्कारों में, साहित्य, कला, दर्शन, स्मृति, शास्त्र, समाज-रचना, इतिहास एवं सभ्यता के विभिन्न अंगों में व्यक्त होती है। वस्तुतः संस्कृति का निर्माण एक लम्बी अनवरत सामाजिक-प्रक्रिया में होता है। दीनदयाल उपाध्याय ने संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखा है कि किसी निश्चित भू-भाग में निवास करने वाला मानव समुदाय जब इस भूमि के साथ तादात्म्य का अनुभव करने लगता है

तथा जीवन के विशिष्ट गुणों को आचरित करता हुआ समान परम्परा और महत्त्वाकाँक्षाओं से युक्त होता है, सुख-दु:ख की समान स्मृतियाँ और शत्रु-मित्र की समान अनुभूतियाँ प्राप्त कर परस्पर हित-सम्बन्धों में ग्रन्थित होता है, संगठित होकर अपने श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों की स्थापना के लिए सचेष्ट होता है, और इस परम्परा का निर्वाह करने वाले तथा उसे अधिकाधिक तेजस्वी बनाने के लिए महान तप, त्याग, परिश्रम करने वाले महापुरुषों की श्रृंखला का निर्माण होता है, तब पृथ्वी के अन्य मानव समुदायों से भिन्न एक सांस्कृतिक जीवन प्रकट होता है।

छान्दोग्योपनिषद् में कहा गया है कि किसी देश या समाज के विभिन्न जीवन-व्यापारों में या सामाजिक सम्बन्धों में मानवता की दृष्टि से प्रेरणा प्रदान करने वाले आदर्शों की समष्टि को संस्कृति समझना चाहिए। समस्त सामाजिक जीवन का परमोत्कर्ष संस्कृति में ही होता है। विभिन्न सभ्यताओं का उत्कर्ष तथा अपकर्ष संस्कृति द्वारा ही मापा जाता है। यथा-

> कस्यापि देशस्य समाजस्य वा विभिन्न जीवनव्यापारेषु
> सामाजिक सम्बन्धेषु वा मानवीयत्वदृष्टया प्रेरणाप्रदानां
> तत्तदादर्शानां समष्टिरेव संस्कृति....। वस्तुतस्तस्यामेव
> सर्वस्यापि सामाजिकजीवनस्योत्कर्ष: पर्यवस्यति। तथैव तुलया
> विभिन्न सभ्यतानामुत्कर्षायकर्षौ भीयते। (छान्दोग्योपनिषद् 8.4.1)

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन लिखते हैं कि संस्कृति अपने सदस्यों को विपरीत दिशाओं में क्रियाशील बलों को अत्यन्त सूक्ष्म सन्तुलन के फलस्वरूप उत्पन्न सन्तुलन और दृढ़ता प्रदान करती है। वे आगे कहते हैं कि सभ्यता का कठोर हो जाना ही संस्कृति है। गोविन्दचन्द पाण्डेय संस्कृति को मानव-समाज जीवन का विशिष्ट दृष्टिकोण मानते हैं। उनका मानना है कि विचार, भावना और आचरण के विभिन्न प्रसारों में संस्कृति की सिद्धि है। इस दृष्टिस्वरूपा संस्कृति की सिद्धि के बाह्य विस्तार निरन्तर बदलते रहते हैं, किन्तु उनकी प्रभावात्मक दृष्टि और प्रेरणा का अनुस्यूत, बृहत्तर और गम्भीरतर सत्ता के रूप में बना रहता है और किसी भी समाज के जीवन में चेतना का यह गहरा और अदृष्ट अनुबन्ध ही संस्कृति का सार है।

मानव जीवन की लम्बी विकास-यात्रा में भारतीय मनीषियों के निर्देशन में भारतीय संस्कृति का निरन्तर विकास होता रहा। भारतीय ऋषियों ने मानव जीवन का लक्ष्य, तदनुरूप जीवन पद्धति का विकास किया। हिन्दुकुश एवं हिमालय की पर्वत- श्रृंखलाओं से घिरे समुद्रपर्यन्त भारतीय भू-भाग में एक विशिष्ट संस्कृति विकसित हुई। इस संस्कृति को हिन्दू संस्कृति या भारतीय संस्कृति नाम से पहचान मिली। हिन्दू संस्कृति ने एक श्रेष्ठतम जीवन-दर्शन दिया। हिन्दू संस्कृति ने सुख-शान्ति के साथ जीवन-यापन करता हुआ मानव अपने चरमोत्कर्ष को छूता हुआ परम-लक्ष्य पा सके, वह मार्ग दिखाया। हिन्दू संस्कृति अर्थात् भारतीय संस्कृति की विशिष्टताओं को रेखांकित

करते हुए श्री अरविन्द ने लिखा है कि भारतीय संस्कृति का मूल तत्त्व एवं सारभूत भाव असाधारण रूप से उच्च, महत्त्वाकाँक्षापूर्ण और श्रेष्ठ था, सच पूछो तो वह एक उच्चतम तत्त्व और भाव था, जिसकी मानव आत्मा कल्पना कर सकती है। जीवन के विषय में उससे महान विचार और क्या हो सकता है जो इसे मानवात्मा के अत्यन्त विशाल रहस्य तथा उसकी उच्च सम्भावनाओं तक होने वाले उसके एक विकास का रूप दे देता है। उससे महान संस्कृति और क्या हो सकती है जो जीवन को काल में कालातीत की, व्यक्ति में विराट की, सान्त में अनन्त की एवं मनुष्य में भगवान् की क्रिया समझती है, अथवा जो यह मानती है कि मनुष्य सनातन और अनन्त को केवल जान ही नहीं सकता बल्कि उसकी शक्ति में निवास भी कर सकता है और आत्मज्ञान के द्वारा अपने आपको विश्वमय, आध्यात्मिक और दिव्य भी बना सकता है। मनुष्य के जीवन के लिए इससे बढ़कर महान लक्ष्य और क्या हो सकता है कि वह आन्तर और बाह्य अनुभव के द्वारा अपना तब तक विकास-साधन करे जब तक कि वह परमेश्वर में निवास करने, अपनी अध्यात्म-सत्ता को अनुभव करने, अपनी उच्चतम सत्ता के ज्ञान, संकल्प और आनन्द में पहुँचकर दिव्य बनने में समर्थ न हो जाय। वास्तव में भारतीय संस्कृति के प्रयास का सम्पूर्ण आशय यही है।

भारतीय संस्कृति अर्थात् हिन्दू संस्कृति एवं उसकी विशेषताएँ हिन्दू समाज के दीर्घकालिक विकास-यात्रा का प्रतिफल है। विश्व में विकसित सभी संस्कृतियों एवं सभ्यताओं में केवल भारत और चीन की संस्कृति और सभ्यता ही अपने उद्भव से लेकर अब तक की निरन्तरता को समेटे हुए अपना मौलिक अस्तित्व बनाए रख सकीं। भारतीय संस्कृति की सहस्राब्दियों तक की अनवरत यात्रा उसकी एक बड़ी विशिष्टता है। यह समझने के लिए कि हिन्दू संस्कृति में वह कौन सी शक्ति है जो उसे सनातन बनाती है, भारतीय संस्कृति-सभ्यता के निर्माताओं, उनके मौलिक विचारों, जीवन-मूल्यों, परम्पराओं एवं विशेषताओं को समझना होगा।

भारतीय संस्कृति के निर्माता

संस्कृति एवं सभ्यता का निर्माता मानव है। किसी राष्ट्र-देश-समाज में विकसित संस्कृति एवं सभ्यता का निर्माण उस भू-क्षेत्र के निवासी करते हैं। भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को भारतीयों ने ही विकसित किया। भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का सबसे प्राचीनतम स्रोत वेद एवं हड़प्पा सभ्यता के पुरावशेष हैं। तदनन्तर वेदांग, उपनिषदों, महाकाव्यों, ब्राह्मण ग्रन्थों, स्मृतियों, बौद्ध साहित्य, अष्टाध्यायी, पतंजलि का महाभाष्य, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, तमिल साहित्य, कालिदास, बाणभट्ट, कल्हण, विल्हण, आद्यशंकराचार्य, महायोगी गोरखनाथ इत्यादि की रचनाओं, भक्तियुगीन सन्तों-कवियों की रचनाओं, दयानन्द सरस्वती-स्वामी विवेकानन्द के ग्रन्थ, श्री अरविन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर, बालगंगाधर तिलक, महात्मा गाँधी, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन इत्यादि द्वारा लिखित विपुल सामग्री भारतीय संस्कृति एवं उसके क्रमिक विकास के साहित्यिक स्रोत हैं। भारत भर में प्राप्त

मन्दिर एवं गुहा के माध्यम से भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता वास्तु-स्थापत्य तथा मूर्तिकला में अपनी पूरी भव्यता, गरिमा, कुशलता के साथ उपस्थित है। ग्रन्थों के रचयिता एवं कलाकृतियों के निर्माता एवं उनका समाज ही भारतीय संस्कृति का निर्माता है, और वे हिन्दू हैं। स्वाभाविक है भारतीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति ही है।

भारतीय संस्कृति और उसके निर्माता का प्रश्न यद्यपि कि बहुत स्पष्ट और सरल है, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है। किन्तु 1947 ई. में भारत की आजादी के साथ पूर्ण रूप से वैचारिक-मानसिक आजादी न प्राप्त होने के कारण भारतीय शिक्षा-व्यवस्था, विशेषकर भारतीय इतिहास लेखन ने इस सहज और सरल प्रश्न को भ्रमजाल फैलाकर जटिल बनाकर उलझा दिया था। उस अप्रासंगिक हो चुके भ्रमजाल की चर्चा अनावश्यक है।

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के निर्माता ऋग्वैदिक युग तक आते-आते दो वर्गों में विभाजित हो गए- आर्य और दास। प्रो. शिवाजी सिंह का मानना है कि वैदिक विचारधारा के उदय से एक सामाजिक अस्मिता उत्पन्न हुई। इसी की परिणति समाज के आर्य-दास विभाजन में हुई। आर्य वे थे जो वैदिक विचारधारा को स्वीकार करते थे और दास वे थे जो इसे स्वीकार नहीं करते थे। ऋग्वेद (1.104.2; 2.12.4; 3.34.9) में तत्कालीन जनों के बीच हुए इस द्विविभाजन को दो 'वर्णों' अर्थात् व्यवस्थाओं के नाम से अभिव्यक्त किया गया है। परन्तु प्रारम्भिक ऋग्वैदिक काल में आर्य और दास का वैचारिक द्विदलन नहीं था। वैदिक विचारधारा के उद्भव और उसके फलस्वरूप आर्य सामाजिक अस्मिता के जन्म के बीच एक अन्तराल था। उस समय 'दास' का वर्तमान अर्थ गुलाम या सेवक नहीं था। यदि ऐसा होता तो भरतवंशी दिवोदास और सुदास जैसे आर्यशासक दासान्त नाम ग्रहण नहीं करते। विश्वम्भशरण पाठक ने स्पष्ट किया है कि 'दास' शब्द का अर्थ मूलतः 'मनुष्य' था। दिवोदास का अर्थ दिव्य-पुरुष था। बाद में इस शब्द का अर्थ परिवर्तन हुआ और यह शब्द गैर, शत्रु, दानव और अन्त में गुलाम, सेवक, भृत्य का सूचक बन गया। इसी प्रकार ऋग्वैदिक काल में असुर एक आदरणीय शब्द था। स्वामी के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग एक विरुद के रूप में कई ऋग्वैदिक देवताओं जैसे अग्नि, सवितृ, मित्र, वरुण, रुद्र और पूषण के लिए हुआ है। किन्तु परवर्ती ऋग्वैदिक काल में 'असुर' शब्द का अर्थ बदलकर 'दानव' हो गया (विस्तार के लिए द्रष्टव्य - प्रो. शिवाजी सिंह, ऋग्वैदिक आर्य और सरस्वती सिन्धु सभ्यता, प्रथम संस्करण, 2004)। अतः ऋग्वैदिक युग तक भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के वाहक भारतीय भूमि में उत्पन्न आर्य और दास थे। आर्य-दास की वंश-परम्परा ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता को अपनी विकास-यात्रा के साथ-साथ विकसित करती गयी। यही आर्य-दास आगे चलकर हिन्दू कहलाए। हम सभी उसी मूल भारतीयों की सन्तान हैं, जो युगानुसार क्रमशः आर्य-दास; ब्रह्म, क्षत्र, विश; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र जैसे स्व-निर्मित सामाजिक वर्गीकरणों में वर्गीकृत होते आज सैकड़ों जातियों-उपजातियों

में विभाजित हैं। इसी मूल भारतवंशीय समाज में आवश्यकतानुसार वैष्णव, शैव, शाक्त, बौद्ध, जैन, सिख जैसे अनेक पन्थों-उपासना पद्धतियों का विकास हुआ। किन्तु भारत-भूमि में उत्पन्न हर भारतीय हिन्दू ही कहलाया।

भारतीयों के लिए 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग औपनिषदिक युग के बाद भारतीय संस्कृति के अनेक धर्मग्रन्थों में हुआ है। भक्तिकाल तक आते-आते भारतीयों के लिए 'हिन्दू' नाम पूर्णतः प्रचलित एवं सर्वमान्य हो गया। यद्यपि कि हिन्दू शब्द की स्पष्ट व्याख्या विनायक दामोदर सावरकर ने 'हिन्दुत्व' नामक पुस्तिका में की। सावरकर ने लिखा है कि हिन्दू धर्म किसी एक विशिष्ट धर्म का नाम न होकर वैदिक, शैव, शाक्त, वैष्णव, बौद्ध, जैन, सिख, आर्य समाज, ब्रह्म समाज जैसी सभी उपासना पद्धतियों का सामूहिक नाम है। 'हिन्दुत्व' राष्ट्रीयत्व का पर्यायवाची है। वे मानते हैं कि आसेतु हिमाचल भारतभूमि को अपनी पितृभूमि और पुण्यभूमि मानने वाले सभी हिन्दू हैं। उन्होंने लिखा-

आ सिन्धु सिन्धु पर्यंता यस्य भारत भूमिका।
पितृभूः पुण्यभूश्चैव सर्वे हिन्दू रितिस्मृतः।।

सावरकर ने 'हिन्दू' नाम की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि ईरानियों द्वारा 'सप्त सिन्धु' शब्द का उच्चारण 'हप्त हिन्दू' के रूप में किया जाता था और वे भारत के निवासियों को हिन्दू पुकारते थे। चीनी बौद्ध यात्रियों ने भी हमारे पूर्वजों को शिन्तु या हिन्दू ही कहा। यह 'हिन्दू' शब्द प्राचीन काल से चली आ रही हमारी अविच्छिन्न परम्परा का प्रतीक बन गया।

हिमगिरि के धवल शैल-श्रृंगों से महोदधि की उत्ताल तरंगों तक विस्तृत इस भूखण्ड को अपनी मातृभूमि-पितृभूमि मानने वाला हर व्यक्ति हिन्दू है। हर वह व्यक्ति हिन्दू है जो रक्त-सम्बन्ध की दृष्टि से उसी महान जाति का वंशज है जिसका प्रथम उद्भव वैदिक सप्तसिन्धवों में हुआ था और जो निरन्तर अग्रगामी होता हुआ अन्तर्भूत को पचाती तथा महनीय रूप प्रदान करती हिन्दू जाति के नाम से सुख्यात हुई है। जो उत्तराधिकार की दृष्टि से अपने आपको उसी जाति का स्वीकार करता है तथा इस जाति की उस संस्कृति को अपनी संस्कृति के रूप में मान्यता देता है जो संस्कृत भाषा में संचित है। जिसकी अभिव्यक्ति इस जाति के इतिहास, साहित्य, कला, धर्मशास्त्र, व्यवहारशास्त्र, राजनीति, विधि संस्कार और पर्वों के माध्यम से हुई है। महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज ने भी हिन्दु एवं हिन्दुत्व की यही अवधारणा स्वीकार करते हुए कहा कि हिन्दुत्व ही भारत की राष्ट्रीयता है। वे मानते हैं कि भारतीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति है और उसके निर्माता हिन्दू। डॉ. कर्ण सिंह (हिन्दू दर्शन, एक समकालीन दृष्टि) ने लिखा है कि 'हिन्दू धर्म' स्वयं एक भौगोलिक शब्द है- जो भारत के उत्तरी सीमा-प्रान्त पर बहने वाली विशाल नदी सिन्धु नदी के संस्कृत नाम पर आधारित है। इस नदी के उस पार रहने वाले लोग-सिन्धु नदी के दक्षिण-पूर्व का समूचा क्षेत्र-

जिसे यूनानी इंदस कहते थे, वह हिन्दुओं की भूमि मानी जाने लगी- विश्वास और आस्थाओं के तमाम बिन्दु, जो यहाँ फले-फूले, उन्हें हिन्दू धर्म के नाम से स्वीकृति मिलती गयी। हिन्दू धर्म स्वयं को सनातन धर्म, शाश्वत विश्वास मानता है क्योंकि इसका स्रोत एक गुरु की शिक्षा नहीं बल्कि भारतीय सभ्यता के प्रारम्भ से ही ऋषियों एवं मनीषियों का सामूहिक विवेक और प्रेरणा है।

आजाद भारत में राजनीतिक सत्ता-सामाजिक सत्ता पर भारी पड़ती गयी। लोकतान्त्रिक प्रणाली की सौ खूबियों पर किसी प्रकार सत्ता प्राप्त करने की ललक ने 'वोट बैंक' की राजनीति के लिए 'तुष्टीकरण की राजनीति' अर्थात् तथाकथित धर्मनिरपेक्षता की राजनीति का दोष भारी पड़ गया। हम 'हिन्दू' 'हिन्दू संस्कृति' कहने में संकोच करने लगे। किसी वर्ग का कोई मतदाता नाराज न हो जाय हमने अपनी सांस्कृतिक विरासत पर गर्व करने, उसकी विशिष्टताओं को सार्वजनिक रूप से अंगीकार करने तथा उसे युगानुकूल परिवर्तित-परिवर्धित कर लागू करने में हिचकने लगे। स्वामी विवेकानन्द का यह कथन भी शीर्ष पर बैठे राजनीतिकों एवं तथाकथित बुद्धिजीवियों को याद नहीं रहा- 'जब कोई मनुष्य अपने पूर्वजों के बारे में लज्जित होने लगे तो समझिए उसका अन्त आ गया। मैं यद्यपि हिन्दू जाति का नगण्य घटक हूँ किन्तु मुझे अपनी जाति पर गर्व है, अपने पूर्वजों पर गर्व है। हम उन महान ऋषियों के वंशज हैं जो संसार में अद्वितीय रहे हैं।'

हिन्दू संस्कृति एवं सभ्यता का क्रमिक विकास हुआ है। हिन्दू अथवा भारतीय संस्कृति समय के सातत्य की प्रतिध्वनि है। देश-काल पस्थितियों के अनुसार इस संस्कृति के निर्माताओं ने सदैव इसे परिवर्तित-परिवर्धित किया और यह संस्कृति युगानुकूल होती गयी। इस प्रकार हिन्दू संस्कृति एवं सभ्यता का क्रमिक विकास एवं अनेक मौलिक विचार-दर्शन को समझने-जानने के लिए इस संस्कृति-सभ्यता के गर्भ से निकले ग्रन्थों-विचार दर्शनों एवं महापुरुषों, स्वयं उनकी परम्परा का अध्ययन एवं उनकी सम्यक् समीक्षा एक अनिवार्य शर्त है। चार वेद-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद-भारतीय संस्कृति अर्थात् हिन्दू संस्कृति के आधार-स्तम्भ हैं। ब्राह्मण ग्रन्थ वेद के विस्तार हैं। वैदिक संहिता के साथ एक या अनेक ब्राह्मण ग्रन्थों का घनिष्ठ सम्बन्ध माना जाता है। उदाहरणार्थ ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण आदि, यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण आदि, सामवेद के ताण्ड्य ब्राह्मण आदि अनेक ब्राह्मण ग्रन्थ हैं। अथर्ववेद का गोपथ एकमात्र ब्राह्मण ग्रन्थ है। ब्राह्मण ग्रन्थ गद्यात्मक हैं। संस्कृत भाषा की गद्यात्मक शैली के विकास की दृष्टि से भी इन ब्राह्मण ग्रन्थों का महत्त्व प्रतिपाद्य है। औपनिषदिक धारा के उदय के पूर्व भारत के सामाजिक-धार्मिक इत्यादि दृष्टियों से वैदिक धारा का प्रतिष्ठित रूप इन्हीं ब्राह्मण ग्रन्थों में उपलब्ध है।

शिक्षा, छन्द, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और कल्प-ये छः वेदांग कहलाते हैं। भारतीय ऋषियों ने परिवर्तित वातावरण एवं बदलते युग में वेदों के उच्चारण की रक्षा, वेदों के अध्ययन की सुविधा और वैदिक आचार-विचार तथा कर्म-काण्ड की परम्परा की सुरक्षा के लिए उक्त छः

वेदांगों की रचना की। भारतीय ऋषियों द्वारा रचे गए उपनिषद् वैदिकयुगीन सामाजिक-धार्मिक रचना के क्रमशः विकसित होते प्रतिमान हैं। यदि हमारे वेद-वेदांग अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं के 'हिमालय' हैं। तो उपनिषद् आकाश से देखने पर चमकने वाली हिमालय की उच्च चोटियाँ हैं। उपनिषदों को वेदान्त भी कहा जाता है, क्योंकि कालक्रम में वे वैदिकयुगीन ऋषियों-मनीषियों की प्रतिभा और दार्शनिक चरमोत्कर्ष को प्रतिबिम्बित करते हैं। सर्वव्यापी ब्रह्म, समस्त जीवों में विराजमान आत्मा, विविधता के साथ एकता के रूप में गठित परिवार के सदस्य के रूप में सम्पूर्ण मानवजाति की परिकल्पना, एक ही लक्ष्य के विभिन्न मार्ग के रूप में तत्त्वतः सभी मत-मजहब-धर्म को समझना और स्वयं के लिए नहीं अपितु समूची सृष्टि के कल्याण के लिए कार्य करना जैसे विचार-दर्शन के प्रणेता उपनिषद् भारतीय संस्कृति-सभ्यता के प्रकाशमान स्तम्भ हैं।

भारतीय संस्कृति-सभ्यता को प्रतिबिम्बित करने वाले ग्रन्थों के विकासक्रम में अगला पड़ाव पुराणों का है। पुराणों में 18 महापुराण और 18 उपपुराण गिने जाते हैं। अट्ठारह पुराण- ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त्त, वराह, लिङ्ग, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़ और ब्रह्माण्ड पुराण। अट्ठारह उपपुराणों की सूची में सनत्कुमार, नरसिंह, नन्द, शिवधर्म, दुर्वासा, नारदीय, कपिल, वामन, उशनस, मानव, वरुण, कलि, महेश्वर, साम्ब, सौर, पराशर, मारीच और भार्गव की गणना की जाती है। इन पुराणों को समष्टि रूप से अपने युग में हिन्दुत्त्व का धार्मिक, दार्शनिक, ऐतिहासिक, वैयक्तिक, सामाजिक और राजनीतिक संस्कृति का लोकसम्मत विश्वकोश समझना चाहिए।

स्मृतियों, टीकाओं एवं भाष्यों में भी भारतीय संस्कृति-सभ्यता के तत्त्व उपलब्ध हैं। वर्ण, जाति, आश्रम, पुरुषार्थ, विवाह, परिवार इत्यादि विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक विचार-दर्शन इन स्मृतियों-टीकाओं-भाष्यों में पढ़े-समझे जा सकते हैं। पद्मपुराण के अनुसार स्मृतियों की संख्या 36 हैं। कुछ स्रोतों में इनकी संख्या 56-57 तक प्राप्त होती है। स्मृतियों में मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति, बृहस्पतिस्मृति, कात्यायन स्मृति इत्यादि प्राचीन हैं।

भारत के जन-जन के जीवन में सदियों से व्याप्त दो महाकाव्य रामायण और महाभारत में भारतीय संस्कृति-सभ्यता को पढ़ा जा सकता है। इन महाकाव्यों में तत्कालीन भारत की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन के समग्र झाँकी देखी जा सकती है। आदि काव्य रामायण के रचनाकार वाल्मीकि थे तो पन्द्रहवीं शताब्दी में सन्त तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना की। रामायण पर आधारित श्रीरामकथा भारत के लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में स्थानीय रचनाकार-मनीषियों द्वारा रचा गया। महाभारत का प्रणयन महर्षि व्यास ने किया। इस ग्रन्थ के जय, भारत और महाभारत नामक तीन संस्करण हुए। इस महाग्रन्थ में इतिहास, उपाख्यान, उपदेश, दर्शन इत्यादि का समग्र संकलन है। ये दोनों महाकाव्य भारत की प्राचीन सामाजिक व्यवस्थाओं, धार्मिक-सांस्कृतिक

अनुष्ठानों, राज्य और उसके नीति-निर्देशक तत्त्वों की विस्तृत जानकारी के स्रोत हैं।

भारत के ऐतिहासिक युग के विभिन्न अन्य साहित्यिक स्रोतों में भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की विकास-यात्रा परिलक्षित है। इनमें बौद्ध-जैन साहित्य का विशिष्ट स्थान है। बौद्ध साहित्य में जातक कथाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जातकों में बुद्ध के पूर्वजन्मों की कथाएँ विवृत हैं। जातकों की संख्या लगभग 549 है। त्रिपिटक-सुत्तपिटक, अभिधम्मपिटक एवं विनयपिटक बौद्ध मत का आधार-भूत साहित्य है। महात्मा बुद्ध के धर्म-समाज सम्बन्धी निर्देश, वचन और सिद्धान्त त्रिपिटक में संगृहीत हैं। सुत्तपिटक में पाँच निकाय हैं- दीघनिकाय, मज्झिमनिकाय, संयुक्तनिकाय, अंगुत्तरनिकाय और खुद्दनिकाय। श्रीलंका की पालि भाषा में रचित महावंश और दीपवंश बौद्ध साहित्य के दो ऐसे महाकाव्य हैं, जिनमें समकालीन भारतीय समाज और धर्म चित्रित है। मिलन्दपञ्हों, महावस्तु, ललितविस्तर, बुद्धचरितम्, दिव्यावदान, मंजूश्रीमूलकल्प, चुल्लवग्ग, महावग्ग, पातिमोक्ख, सुत्तविभंग और परिवर नामक बौद्ध-ग्रन्थ भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की अमूल्य धरोहर हैं।

जैन मतावलम्बियों के ग्रन्थ भी जैन आचार-धर्म के साथ-साथ तत्कालीन भारतीय समाज को रेखांकित करते हैं। जैनाचार्य हेमचन्द्र के ग्रन्थ परिशिष्टपर्वन, त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरित, द्वयाश्रय महाकाव्य, महावीरचरित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ तत्कालीन समाज के विविध आयामों पर प्रकाश डालते हैं। भद्रबाहुचरित, वसुदेवहिण्डी, बृहत्कल्पसूत्रभाष्य, आचारांगसूत्र, आवश्यकचूर्णि, ज्ञाता धर्मकथा, समराइच्चकहा, कथाकोष, लोकविभाग, पुण्याश्रमकथाकोष, त्रिलोकप्रज्ञप्ति, भगवतीसूत्र, कालिकापुराण जैसे विपुल जैन-साहित्य में तत्कालीन भारतीय धर्म-समाज का विवरण उपलब्ध है। मेरुतुंग के प्रबन्धचिन्तामणि, सोमेश्वर कृत रासमाला और कीर्तिकौमुदी, राजशेखर के प्रबन्धकोश, बालरामायण और काव्यमीमांसा, उदयप्रभा रचित सुकृतिकीर्तिकल्लोलिनी भारत के सांस्कृतिक जीवन की यथासम्भव झाँकी प्रस्तुत करते हैं।

भारतीय संस्कृति के कालसातत्य के साथ-साथ अपने-अपने युग में भारतीय मनीषियों की रचनाएँ समाज का मार्गदर्शक रही हैं। विविध विधाओं की साहित्य-रचना की एक लम्बी परम्परा है। इनमें से मुख्य साहित्यिक रचनाएँ, जो भारतीय समाज के जीवन के विविध पक्षों का दर्शन कराती हैं, उनका उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। निबन्ध साहित्य में दक्षिण के देवण्ण भट्ट की स्मृतिचन्द्रिका, हेमाद्रि की चतुर्वर्ग चिन्तामणि और माध्वाचार्य की पराशरमाधव नामक कृतियाँ धर्मशास्त्र के इतिहास में अमर हैं। मिथिला के निबन्धकारों में श्रीदत्त उपाध्याय का आचारादर्श, चण्डेश्वर का स्मृतिरत्नाकर और वाचस्पति मिश्र का विवादचिन्तामणि महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं। बंगाल के जीमूतवाहन कृत दायभाग, शूलपाणिकृत स्मृतिविवेक, रघुनन्दन कृत स्मृतितत्त्व से तत्कालीन सामाजिक जीवन के इतिहास ज्ञात हैं। बल्लालसेन की रचनाएँ आचारसागर, अद्‌भुतसागर, दानसागर और प्रतिष्ठासागर सामाजिक-धार्मिक पद्धतियों की पर्याप्त सूचनाएँ देती हैं।

मौर्ययुगीन भारतीय सामाजिक और आर्थिक जीवन का प्रामाणिक इतिहास कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में प्राप्त होता है। संस्कृत के महान कवि कालिदास के कुमारसम्भव, शाकुन्तलम, मालविकाग्निमित्र जैसे अद्वितीय साहित्य से गुप्तयुगीन समाज और धर्म का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। भारत के धर्मात्मा शासक हर्ष की रत्नावली, नागानन्द और प्रियदर्शिका, शूद्रक कृत मृच्छकटिक, विशाखदत्त कृत मुद्राराक्षस और देवीचन्द्रगुप्तम् ऐसी साहित्यिक रचनाएँ हैं, जिनमें हमारे तत्कालीन भारतीय संस्कृति के विविध पक्ष समाहित हैं। गुणाढ्य की बृहत्कथा, बुद्धस्वामी की बृहत्कथा, क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामंजरी, सोमदेव की कथासरितसागर नामक कृतियाँ अपने-अपने समय के समाज और संस्कृति को विवृत करती हैं। दक्षिण के तमिलसाहित्य मणिमेखलै, शिलप्पदिकारम्, तिरक्कुरलम्, नन्दिक्कालम्बकम्, जीवकचिन्तामणि जैसे प्रसिद्ध ग्रन्थों में सुदूर दक्षिण-भारत के सांस्कृतिक जीवन की झाँकी सुरक्षित है।

भारत के रचना-संसार में इतिहास-केन्द्रित रचनाएँ भी अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। कश्मीर के कवि कल्हण की राजतरंगिणी प्रसिद्ध ऐतिहासिक रचना मानी जाती है। महाकवि बाणभट्ट की रचना हर्षचरित चरित्रप्रधान इतिवृत्तात्मक ग्रन्थ है। प्राकृत काव्य गौडवहो की रचना वाक्पतिराज ने की है। पद्मगुप्त रचित नवसाहसांकचरित में परमार शासकों का इतिहास सुरक्षित है। विल्हण द्वारा रचित विक्रमांकदेवचरित में चालुक्य राजवंश का विवरण है। सन्ध्याकार नान्दी कृत रामचरित में बंगाल के पाल राजवंश के राज्य-समाज-धर्म का प्रतिबिम्ब है। राजस्थान के चाहमान राजवंश के इतिहास का जयानक रचित पृथ्वीराजविजय महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। आनन्दभट्ट का बल्लालचरित, हेमचन्द्र का द्वयाश्रयमहाकाव्य, चन्द्रप्रभसूरिकृत प्रभावकचरित्, गंगादेवी का कम्परामचरित, सोमेश्वर का चतुर्विंशतिप्रबन्ध, बल्ला का भोजप्रबन्ध, जयसिंहसूरि का हम्मीर महाकाव्य, गंगाधर पंडित का मण्डलीक महाकाव्य, राजनाथ का अच्युतराजाभ्युदयकाल तथा मूसकवंशम् जैसे इतिवृत्तात्मक ग्रन्थों में भारतीय संस्कृति के बिखरे तत्त्व संगृहीत हैं।

भारतीय संस्कृति के धार्मिक-आध्यात्मिक-सामाजिक जीवन को मध्ययुगीन भक्त-कवियों ने अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत है। आधुनिक युग के मनीषियों ने भी भारत की सांस्कृतिक विशिष्टताओं के युगानुकूल परिभाषित किया है। विशेष रूप से स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर, बालगंगाधर तिलक, महात्मा गाँधी, सावरकर, राधाकृष्णन इत्यादि आधुनिक विद्वानों की रचनाएँ भारतीय संस्कृति-सभ्यता को समझने में सहायक हैं। संस्था के रूप में गीताप्रेस से प्रकाशित विपुल साहित्य भारतीय संस्कृति-सभ्यता को जानने-समझने का सहज-सरल स्रोत हैं। विशेष रूप से कल्याण के विशेषांक इस दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को प्रतीक रूप में समझने के दो और आधार हैं-

(1) विचार-दर्शन (2) महापुरुष।

भारतीय विचार-दर्शन में नास्तिक दर्शन, चार्वाक सिद्धान्त या लोकायत दर्शन, बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन, आस्तिक दर्शन, वैशेषिक, न्याय, सांख्य, योग, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा, अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, अचिन्त्यभेदाभेदवाद, शैवदर्शन, गोरक्षदर्शन, पाशुपतदर्शन, प्रत्यभिज्ञादर्शन, शिवाद्वैत, लकुलीश पाशुपत-दर्शन, शक्ति-दर्शन इत्यादि महत्त्वपूर्ण हैं। महापुरुषों की परम्परा में व्यास, वसिष्ठ, मनु, याज्ञवल्क्य, विश्वामित्र, वाल्मीकि, दधीचि, महर्षि कणाद, गौतम, पतञ्जलि, जैमिनि, महाराज इक्ष्वाकु, कुकुस्थ, सम्राट मान्धाता, राजर्षि भरत, सम्राट भरत, महाराजा रन्तिदेव, महाराजा जनक, महाराजा श्रीराम, श्रीकृष्ण, भीष्म, धर्मराज युधिष्ठिर, महारथी अर्जुन, अभिमन्यु, विदुर, संजय, सती सावित्री, सती अनसूया, सती दमयन्ती, जगज्जननी सीता, द्रोपदी, सम्राट अशोक, सम्राट हर्षवर्धन, महाराजा छत्रसाल, महाराणा सांगा, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरुगोविन्दसिंह, सती पद्मिनी, महारानी लक्ष्मीबाई, महाराजा रणजीत सिंह, बन्दाबैरागी सहित सन्त-महात्माओं में श्री शंकराचार्य, श्री गोरखनाथ, कुमारिल भट्ट, श्रीरामानुजाचार्य, श्रीमध्वाचार्य, श्री निम्बकाचार्य, श्री वल्लभाचार्य, चैतन्य महाप्रभु, समर्थ गुरु रामदास, सन्त तुकाराम, सन्त ज्ञानेश्वर, सन्त एकनाथ, श्री नामदेव, सन्त कबीर, गुरु नानकदेव, श्री सूरदास, गोस्वामी तुलसीदास, रहीम, रसखान, भक्त नरसी मेहता, श्री नाभादास, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द इत्यादि सन्त महापुरुष और उनका जीवन-दर्शन भारतीय संस्कृति के प्रतिमान हैं। महापुरुषों की परम्परा में आधुनिक युग के श्री अरविन्द, महामना मदन मोहन मालवीय, महात्मा गाँधी, वीर सावरकर, नेता जी सुभाष चन्द्र बोस, भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के समस्त क्रान्तिकारी, महन्त दिग्विजयनाथ, राममनोहर लोहिया, लोकनायक जयप्रकाश, महन्त अवेद्यनाथ के जीवन-चरित भी भारतीय संस्कृति-सभ्यता को परिभाषित करते हैं। वर्तमान में श्री नरेन्द्र दामोदरदास मोदी, महन्त योगी आदित्यनाथ और योगगुरु बाबा रामदेव का जीवन भारतीय संस्कृति-सभ्यता का यत्किंचित साक्षात् स्वरूप है।

भारतीय संस्कृति-सभ्यता की विशिष्टताओं के बहुत सारे तत्त्व वर्णनातीत हैं। वे शब्द की सीमा में नहीं बाँधे जा सकते हैं। अनुभव एवं महसूस किए जाने वाले उन तत्त्वों को भारतीय संस्कृति-सभ्यता में पला-बढ़ा निर्मित 'चित्र एवं मानस' समझ सकता है। तथापि हिन्दू संस्कृति-सभ्यता की विशिष्टता के रूप में प्रतिष्ठित इतिहासकार डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा कल्याण के चौबीसवें वर्ष के विशेषांक हिन्दू-संस्कृति-अंक में दिए गए हिन्दू संस्कृति के संक्षिप्त सूत्र को रेखांकित किया जा सकता है।

1 हिन्दू की दृष्टि में धर्म, संस्कृति, जीवन-तीनों क्षेत्रों का विस्तार समान है। एक को हटाकर एक नहीं रहता।

2 हिन्दू संस्कृति का दृष्टिकोण समन्वय प्रधान है। समन्वय हिन्दुत्व की सबसे बड़ी विशेषता है।

विश्व के साथ अविरोध-भाव प्राप्त करने की पद्धति समन्वय है।

3 'बहुधा' भाव की स्वीकृति से सहिष्णुता का जन्म होता है। हिन्दू धर्म सहिष्णुता की प्राणवायु से जीवित है।

4 बहुधा में एकत्व की पहचान हिन्दू संस्कृति का प्रयत्न रहा है। एकत्व का आग्रह बहुत्व का नाश करके हिन्दू संस्कृति को इष्ट नहीं है। बहुधा से ही एक को महिमा प्राप्त होती है-

'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।' -यह हिन्दू विचारों का अन्तर्यामी सूत्र है।

5 अनेक संघर्षों के बीच से समन्वय की प्राप्ति हिन्दू संस्कृति के इतिहास का राजमार्ग रहा है।

6 धार्मिक स्वातन्त्र्य, सामाजिक स्वातन्त्र्य, व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य हिन्दू संस्कृति को इष्ट है, किन्तु इनका उपभोग सत्यदर्शन के लिये होना चाहिये।

7 जड़ और चेतन का आपेक्षिक मूल्यांकन हिन्दू संस्कृति की विशेषता है।

8 चैतन्य ही महान्, नित्य, रस परिपूर्ण और प्राप्त करने योग्य तत्त्व है। इस प्रकार का सचेष्ट प्रयत्न और तीव्र विश्वास हिन्दू संस्कृति के प्रत्येक युग में प्रकट होता रहा है।

9 संसार और उसके उपभोग अल्प, सीमित, तुच्छ और जीतने योग्य हैं-यह दृढ़ प्रतीति हिन्दू मन में सदा ऊँची प्रतिष्ठा की पात्र बनी रही।

10 सांसारिक जीवन का उचित मूल्य तो आँक लिया गया, किन्तु उसकी उपेक्षा या अवहेलना करना हिन्दू संस्कृति को इष्ट नहीं। जो जड़ की उलझन को नहीं समझ सका, वह चैतन्य कैसे समझ सकता है? निःश्रेयस के साथ अभ्युदय की प्राप्ति पर भी हिन्दू दृष्टिकोण ने बहुत बल दिया है। लोक और परलोक का समन्वय, जड़ और चेतन का समन्वय प्राप्त करने की प्रवृत्ति हिन्दू धर्म को मान्य है।

11 इसी दृष्टिकोण से हिन्दू संस्कृति में साहित्य, कला, सौन्दर्य और सँवारे हुए जीवन के अनेक वरदानों को प्रतिष्ठित स्थान दिया गया।

12 धर्म और जीवन का मेल हिन्दू संस्कृति के आग्रह का विषय है। धर्म धारणात्मक नियमों की समुदित संज्ञा थी। 'धारणात् धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयति प्रजाः।' (व्यास)

सम्प्रदाय या मत-मतान्तर के लिये भी 'धर्म' शब्द का प्रयोग हुआ। परन्तु नित्य धर्म-तत्त्व इन सबके ऊपर और बड़ा है। धर्म और सर्वोपरि चैतन्य का धरातल एक है।

13 ऋत्, सत्य धर्म, ब्रह्म, चैतन्य अभिन्न और सर्वोपरि हैं। इनकी अखण्ड निष्ठा हिन्दू संस्कृति की महान युग-युगव्यापी श्रद्धा का विषय रहा है।

14 हिन्दू संस्कृति चैतन्य पर आश्रित होने के कारण व्यक्ति को बाँधकर नहीं रखना चाहती। हिन्दू समाज के बन्धन स्थिति के पोषक हैं, अर्थात् अपने केन्द्र से दाहिने-बायें, आगे-पीछे भटकने

को व्यक्ति के लिये अनावश्यक विघ्न माना गया है। किन्तु ऊर्ध्वगति या अपने केन्द्र से मानस जगत् में ऊँचे उठना प्रत्येक के लिये प्रत्येक स्थिति में बहुत आवश्यक माना गया है।

15 ऊर्ध्व गति ही अध्यात्म का कल्याण है। अध्यात्म की साधना हिन्दू संस्कृति के आग्रह का विषय है।

16 कर्म पर हिन्दू संस्कृति में पूरा जोर दिया गया है, किन्तु कर्म बिना धर्म के अधूरा है। जिस कर्म में ज्ञान का भाव नहीं, वह कर्म स्वार्थ में सना हुआ होने से व्यक्ति और समाज के जीवन को और भी उलझन में डाल देता है।

17 हिन्दू धर्म की दृष्टि में कर्म जीवन का आवश्यक लक्षण है। कर्म के बिना जीवन की स्थिति असम्भव है। ठीक विधि से किये जाने वाले कर्म को योग की पदवी दी गयी है।

18 हिन्दू संस्कृति लौकिक विजय से उतनी तृप्त नहीं होती, जितनी आध्यात्मिक विजय से। आज भी हिन्दू का मन अध्यात्म से प्रफुल्लित, रसतृप्त और आकर्षित होता है। लौकिक विजय के भीतर लोभ, स्वार्थ, हिंसा छिपी रह सकती है, किन्तु अध्यात्म की जय केवल धर्मपर टिकी रहती है और चार खूँट जागीरी या सार्वजनिक स्वागत प्राप्त करती है।

19 हिन्दूओं ने राजनीति और दण्डनीति का आविष्कार तो किया किन्तु सर्वापहारी राजसत्ता उनको कभी नहीं रुची। जीवन का अधिक-से-अधिक क्षेत्र राजसत्ता से किस प्रकार बचा रह सकता है, इसका उपाय हिन्दू सामाजिक जीवन और पारिवारिक जीवन की पद्धति में पाया जाता है। जीवन के अनेक समझौतों के बीच में राज्य भी एक समझौता है, उसे सबका स्थान छीनकर जीवन पर छा जानेका अधिकार हिन्दू संस्कृति में नहीं पाया जाता। हिन्दू जीवन का अधिकतर क्षेत्र बाह्य नियन्त्रण से जान-बूझकर अछूता रखा गया है। हिन्दुओं के संस्कार जन्म से मृत्यु पर्यन्त जीवन का नियमन करने के लिये पर्याप्त हैं, वे मनुष्य आपसी प्रबन्ध के बल से प्रचलित और विकसित होते रहे हैं। बहुविधता उनकी विशेषता है, जो देशकाल कृत भेदों को स्वीकार करती है।

20 हिन्दू मन हिन्दू संस्कृति का ही एक टुकड़ा है। वह मन उदार, सहिष्णु, नूतन भावों का जागरूकता से स्वागत करने वाला है। अनुशासन या अंकुश की अपेक्षा वह उच्च आदर्श, त्याग की भावना, स्वागत कर्म-प्रेरणा से अधिक द्रवित होता है। उस मन को दृढ़ता से लोकहित में बाँधने के लिये, उसमें उदास भावों को भरने के लिये त्याग, तप या यज्ञ का धरातल ही एकमात्र उपाय है। त्याग की भावना को सामाजिक स्तर पर जो उतार सकता है, वही हिन्दू संस्कृति की छिपी हुई मानस निधि तक पहुँच पाता है। अन्यथा भारतीय मन समाज की ओर से अपने तन्तु समेटे हुए पड़ा रहता है।

■

२१वीं सदी में नेतृत्व : सैन्य सेवा से सीख

ले.ज. दुष्यन्त सिंह*

सार-संक्षेप : अलग-अलग व्यक्तियों को एकसाथ लेकर उन सभी के साझा उद्देश्य की तरफ ले जाना ही एक अच्छे नेता की सही पहचान होती है। साधारण तौर पर समाज और सिविल सोसाइटी में नेतृत्व का अर्थ होता है एक ऐसा व्यक्ति तो एक समूह को उसके साझा उद्देश्य की तरफ ले जाए या फिर वह जिस संस्था में काम कर रहा है सभी व्यक्ति उस संस्था के उद्देश्य के लिए काम करें। सामान्य तौर पर नेतृत्व को हम दो तरह से समझ सकते हैं। पहला तरीका इसको समझने का है, एक अच्छे नेता की क्षमताओं या व्यक्तित्व से और दूसरा तरीका है नेतृत्व को एक प्रक्रिया समझने का। प्रक्रिया से अर्थ होता है कि किस तरह एक समूह में एक व्यक्ति किसी चुनौती भरी परिस्थिति में नेता बनकर उभरता है। नेतृत्व के बारे में एक और सवाल उठता है कि क्या यह पैदाइशी होता है या फिर इसे सीखा जा सकता है। इस प्रश्न पर मिली-जुली राय है। पर अक्सर लोग इसे पैदाइशी मानते हैं।

बीज शब्द : नेतृत्व, डिजिटल गाँव, असहिष्णुता, आत्मनिर्भर भारत, लीडरशिप, आत्मसमझ, आत्मप्रबन्धन, कार्पोरेट, आर्गनाइजेशन।

भूमिका

आज के परिप्रेक्ष्य में अक्सर सभी अपने आपको नेतृत्व में कुशल समझते हैं लेकिन ऐसा है नहीं। यह उतना ही कठिन है जितना कि हमें दुश्मन से दो-दो हाथ करने में होती है। यह एक ऐसा काम है जिसमें कुशलता हासिल करने के लिए ट्रेनिंग से ज्यादा व्यक्तित्व महत्त्व रखता है। यह व्यक्तित्व अक्सर जन्म से ही पाया जाता है। इसका यह मतलब बिल्कुल नहीं कि हम इसे निखार नहीं सकते। आज हम आने वाले समय में समाज, सरकार, सेना और सिविल संस्थानों में नेतृत्व की चुनौतियों का संज्ञान लेंगे और सैन्य सेवा के नेतृत्व के सिद्धान्तों से क्या सीख ले सकते हैं, उस पर चर्चा करेंगे।

चर्चा के मुख्य बिन्दुः

मैं यह चर्चा मुख्यतः निम्नलिखित बिन्दुओं पर करूँगा-

*PVSM-AVSM (सेवानिवृत्त, भारतीय सेना) युगपुरूष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की 51वीं एवं राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की 6ठवीं पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित सप्त दिवसीय व्याख्यान माला के पांचवें दिन (21 अगस्त 2020) दिया गया व्याख्यान

1. संसार, देश और समाज में हो रहे बदलाव
2. नेतृत्व की परिभाषा
3. नेता कैसे उभरते हैं
4. नेतृत्व के मुख्य बिन्दु
5. सैन्य सेवा से हम क्या सीख सकते हैं
6. अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य

समाज का भविष्य किस प्रकार का होगा?

अभी तक संसार एक डिजिटल गाँव में बदलता जा रहा था, सभी एक दूसरे से जुड़ने को प्रयासरत थे और अभी भी हैं। इस प्रक्रिया में कोविड-19 के कारण बाधा उत्पन्न हुई है। अब हमें अपने ही बलबूते पर आगे बढ़ना होगा। जहाँ तक विश्व में अलग-अलग देशों की प्रमुखता की बात है तो यूएसए अभी भी सबसे शक्तिशाली है पर यूरोपियन यूनियन में काफी कमजोरी आयी है, जर्मनी को छोड़कर। लेकिन चीन और रूस काफी तेजी से अपनी प्रभुता बढ़ा रहे हैं। इसके कारण चारों तरफ क्षेत्रीय युद्ध हो रहे हैं जिसके कारण वैश्विक शक्तियों का भी सक्रिय हस्तक्षेप उजागर हो रहा है। इस सन्दर्भ में यह भी जाहिर हो रहा है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका कमजोर पड़ती जा रही है। यदि हम अपने चारों तरफ दृष्टि घुमाएँ तो पाएँगे कि बढ़ती जा रही धार्मिक असहिष्णुता के कारण आतंकवाद जोर पकड़ता जा रहा है मुख्य तौर पर इस्लामिक आतंकवाद। लेकिन भारत में वामपन्थी आतंकवाद भी काफी सक्रिय है। लेकिन विश्व पटल पर कोविड आपदा के कारण काफी बदलाव भी आये हैं। पहला प्रमुख बदलाव विश्व में ध्रुवीकरण का है, जो कि चीन के प्रतिकूल या फिर अनुकूल देखने को मिल रहा है। दूसरा, सारे देश आत्मनिर्भरता की बात कर रहे हैं। तीसरा, संयुक्त राष्ट्र संघ भी हो सकता है बड़े स्तर पर परिवर्तन देखे।

भारत पर प्रभाव:

भारत इस समय एक कठिनाई के दौर से जरूर गुजर रहा है पर यह एक सुनहरा अवसर भी है। हमारे राष्ट्र पर जो बाहरी चुनौतियाँ आएँगी वह इस प्रकार होंगी:

1. हम आजतक एक बैलेंसिंग पावर के रूप में काम करते रहे हैं, इस नीति में हमें परिवर्तन लाना पड़ेगा।
2. प्रधानमन्त्री के आह्वान पर देश ने अपना ध्यान आत्मनिर्भर भारत की तरफ बढ़ाया है, पर इसमें हमें इस बात का ध्यान रखना है कि हम लोकल की तरफ कदम बढ़ाते-बढ़ाते दुनिया

से अलग-थलग न हो जाएँ।

3. क्योंकि संयुक्त राष्ट्र संघ काफी सीमा तक कमजोर होता जा रहा है इसलिए हमें जो नयी भूमिका मिली है उसमें हमें एक महत्त्वपूर्ण कार्य करना है ताकि यह संगठन और मजबूत बने। ध्यान रहे कि अब हमें डब्ल्यूएचओ का भी नेतृत्व करने का मौका मिला है और साथ ही युनाइटेड सिक्योरिटी काउंसिल में भी एक नॉन-परमानेण्ट मेम्बर का स्थान मिला है। यह एक बड़ी भूमिका है और हमें बहुत ही जिम्मेदारी से काम करना होगा।

4. इन सब बातों को संज्ञान में लेते हुए एक नेता के लिए एक काबिलियत बहुत जरूरी है वह है टेक्नोलॉजी में महारत हासिल करना।

कुछ आन्तरिक चुनौतियाँ जो हमारे सामने आ सकती हैं, वे निम्नवत हैं-

1. कोविड-19 की चुनौतियों को किस तरह से सुलझाएँ।
2. राष्ट्रीय सुरक्षा और भी गम्भीर रूप ले सकती है।
3. अपनी अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाना एक बहुत महत्त्वपूर्ण चुनौती होगी।
4. माइग्रेंट लेबर की समस्या को ध्यान में रखते हुए हमें बिजनेस को भी परिवर्तित करना होगा।
5. साथ ही देश और दुनिया में बढ़ते हुए टेक्नॉलॉजी के महत्त्व को भी समझना होगा और अपने वर्कफोर्स को इसके प्रति ढालना होगा।
6. क्यांकि बहुत सारे माइग्रेंट लेबर गाँव की ओर प्रस्थान कर चुके हैं, उनके लिए कृषि क्षेत्र को मजबूत करना होगा और रोजगार के साधन गाँव में भी बढ़ाने होंगे।

इन चुनौतियों से फायदा उठाने की शर्त सिर्फ यह है कि हम इनका समझदारी और हिम्मत से सामना करें। जिसके लिए अच्छे लीडर और लीडरशिप की जरूरत पड़ती है।

नेतृत्व की परिभाषा:

1. स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा है कि अलग-अलग व्यक्तियों को एकसाथ लेकर उन सभी के साझा उद्देश्य की तरफ ले जाना ही एक अच्छे नेता की सही पहचान होती है। साधारण तौर पर समाज और सिविल सोसाइटी में नेतृत्व का अर्थ होता है एक ऐसा व्यक्ति तो एक समूह को उसके साझा उद्देश्य की तरफ ले जाए या फिर वह जिस संस्था में काम कर रहा है सभी व्यक्ति उस संस्था के उद्देश्य के लिए काम करें। सामान्य तौर पर नेतृत्व को हम दो तरह से समझ सकते हैं। पहला तरीका इसको समझने का है, एक अच्छे नेता की क्षमताओं या व्यक्तित्व से और दूसरा तरीका है नेतृत्व को एक प्रक्रिया समझने का। प्रक्रिया

से अर्थ होता है कि किस तरह एक समूह में एक व्यक्ति किसी चुनौती भरी परिस्थिति में नेता बनकर उभरता है। नेतृत्व के बारे में एक और सवाल उठता है कि क्या यह पैदाइशी होता है या फिर इसे सीखा जा सकता है। इस प्रश्न पर मिली-जुली राय है। पर अक्सर लोग इसे पैदाइशी मानते हैं। हालाँकि ट्रेनिंग द्वारा इसको और पैना और मजबूत किया जा सकता है। खास तौर पर सेना के अन्दर हम ज्यादा ध्यान देते हैं कि वह ट्रेनिंग द्वारा अपने नेतृत्व की क्षमता को और बढ़ा सके।

2. जहाँ तक एक सैन्य नेतृत्व का सवाल है इसमें आगे बढ़कर भरपूर जोश से अपने जवानों में विश्वास और उनको भविष्य में होने वाले किसी भी युद्ध की पूरी तैयारी करके ले जाना यह जानते हुए कि इस कार्य में उसकी जान भी जा सकती है, एक सैन्य नेता की सही परिभाषा है।

3. इन दोनों परिभाषाओं में एक चीज जो सामने उभरकर आती है, वह है कि एक सैन्य नेता को अपने जवानों से वह बलिदान देने को कहता है जो उसके लिए सबसे अमूल्य है, खुद को राष्ट्र के ऊपर न्योछावर करना।

नेता किस तरह उभरते हैं

नेतृत्व पब्लिक या सिविल लाइफ में; विवेकानन्द जी का मानना है कि एक जन्म काफी नहीं है एक नेता को बनाने के लिए। इसलिए वह समझते थे कि नेता पैदाइशी होता है। अलग-अलग परिस्थितियों में एक नेता किसी समूह से उभरकर निकलता है जैसे कि अगर हम पब्लिक लाइफ में देखें तो समाज में कई तरह की कठिनाइयाँ होती हैं। इन कठिनाइयों का जो सफलतापूर्वक समाधान करता है वह अपने आप ही एक नेता के रूप में देखा जाने लगता है। किसी भी समस्या को सुलझाने के लिए जरूरी नहीं कि उस नेता में सारी कुशलता विद्यमान हो, लेकिन वह अपने व्यक्तित्व द्वारा लोगों से या फिर किसी और माध्यम से उस समस्या को सुलझाता है। यही तरीका एक पब्लिक सर्वेण्ट भी करता जैसे कि जिले का डीएम उस जिले की किसी समस्या का हल करता है। लेकिन हम उसको लीडर इसलिए नहीं कहते क्योंकि वह एक तन्त्र के तहत काम करता है जिसमें उसे कोई बड़ी चुनौतियाँ नहीं आती हैं। लेकिन अगर वही काम किसी विपदा या किसी बहुत भारी समस्याओं में एक डीएम करता है वह धीरे-धीरे एक लीडर के रूप में पहचाना जा सकता है। लीडर, प्रबन्धक या मैनेजर के बीच में यही एक फर्क है। लीडर को अथॉरिटी की जरूरत नहीं पड़ती है वहीं एक मैनेजर को अथॉरिटी की जरूरत पड़ती है अपने काम को पूरा करने के लिए।

अब हम देखेंगे कि आर्मी लाइफ में नेतृत्व किस प्रकार किया जाता है। सबसे पहले तो

मैं यह बता दूँ कि आर्मी में भी अथॉरिटी दी जाती है एक ऑफिसर को नेतृत्व करने के लिए। उसे कुछ कानूनी पावर भी दिये जाते हैं जिससे कि वह अपना काम आसानी से कर सके। कानून और जोर से किसी को अपनी जान का बलिदान करने के लिए मोटिवेट नहीं किया जा सकता। इसके लिए एक कमाण्डर को खुद उदाहरण देना पड़ता है। उसे एक कमाण्डर से ऊपर उठकर एक लीडर बनना पड़ता है। उसकी यूनिट में जो जवान हैं उन्हें एकजुट करके उनकी सहमति से लड़ाई जैसी विषम परिस्थिति में ले जाने के लिए तैयार करना होता है। यह एक बहुत ही बड़ा अन्तर है एक मिलिट्री और सिविल लीडर में। वहीं अगर हम कार्पोरेट जगत् की बात करें तो यहाँ पर भी प्रबन्धक और लीडर होते हैं। एक मैनेजर दिये हुए रिसोर्सेज से बताया हुआ काम करवाता है। लेकिन एक लीडर रिसोर्सेज कम होने के बावजूद हजार कठिनाइयों के बाद भी बिजनेस को चलाता है। टाटा को हम सही माने में बिजनेस लीडर मान सकते हैं। लेकिन मैं यहाँ यह भी बताना चाहूँगा कि बिजनेस लीडर भी हर स्तर पर हो सकते हैं, एक बिजनेस आर्गनाइजेशन के अन्दर। यही लोग आगे चलकर उस बिजनेस के बड़े लीडर बन सकते हैं।

सेना की सर्विस से लीडरशिप की सीख

तो अगर हम अभी तक की चर्चा पर ध्यान करें तो उससे यह बात साफ निकल कर आती है कि लीडर हमेशा एक विषम स्थिति में ही उभरते हैं। ऐसी परिस्थिति की चार विशेषताएँ हैं- पहली, वल्नरेबल यानी कि नाजुक; दूसरी, अनसर्टेन यानी कि कुछ कहा नहीं जा सकता; तीसरी, कॉम्प्लेक्स यानी कि जिसके कई पहलू होते हैं जिसको समझना कठिन होता है। चौथी, ऐम्बिगयुअस् यानी की स्थिति साफ नहीं होती। ऐसे हालात में एक लीडर की भूमिका अहम हो जाती है लेकिन साथ ही साथ हमें एक अच्छे फॉलोअर्स की जरूरत होती है इन परिस्थितियों में आगे बढ़ने के लिए। एक लीडर को VUCA जैसी स्थिति का सामना VUCA से ही करना पड़ता है। यहाँ पर VUCA से मेरा तात्पर्य है विजन अण्डरस्टैण्डिंग, क्लेरिटी और एजिलिटी। हिन्दी में अगर इसे कहें तो दूरदृष्टि, समझदारी, स्पष्टता और मानसिकता एवं फुर्तीलापन। लेकिन हमें इन चार क्षमताओं को हासिल करने के लिए एक मिलिट्री लीडर के अन्दर जो जरूरी विशेषताएँ होनी चाहिए वह इस प्रकार हैं- पहला- करेज यानी बहादुरी, विंस्टन चर्चिल ने कहा है कि बहादुरी हर लीडरशिप क्वालिटी की गारण्टी करती है; दूसरी जो बड़ी विशेषता एक लीडर में होनी चाहिए वह है सेल्फ-डिस्सिप्लिन या आत्म-अनुशासन। तीसरी बड़ी विशेषता है मोरल्स और एथिक्स यानी कि नैतिकता और आचार-विचार। चौथी विशेषता है हर हाल में निर्णय लेने की क्षमता। पाँचवीं बात है जीत की ललक। छठीं बात है टीम बिल्डिंग बिना अच्छी टीम के कोई भी लीडर सफलता हासिल नहीं कर सकता। सातवीं विशेषता है अथक प्रयास या पर्सीवियरेन्स। और अन्त में इमोशनल इन्टेलिजेन्स या भावनात्मक बुद्धिमत्ता। इसमें चार बातें महत्त्वपूर्ण हैं - आत्मसमझ, दूसरों की समझ,

आत्मप्रबन्धन, दूसरों का प्रबन्धन। दूसरों को मैनेज करने के लिए एम्पथी का होना सबसे महत्त्वपूर्ण है।

लीडरशिप एक ऐसी कला है जो हर क्षेत्र के लिए आवश्यक है। यह गाड़ी के इंजन के समान है। जिस तरह इंजन में जोश व ताकत होती है सभी को खींचकर ले चलने की, उसी तरह एक लीडर का काम भी होता है। सेना में वो सारे अवसर मिलते हैं जहाँ कर्मठ, ईमानदार, कुछ भी कर गुजरने का माद्दा, सही गलत में अन्तर समझने की क्षमता का ज्ञान, बहादुरी, खास तौर पर मनोबल और मैं यहाँ तक कहूँगा कि चतुराई वाले व्यक्तित्व के बिना काम सफल नहीं हो सकता है। अगर मैं कहूँ कि सैन्य सेवा लीडरशिप की पाठशाला है तो गलत नहीं होगा। जयहिन्द!

■

राष्ट्रीय चेतना के आयाम

लीना महेन्डले*

सार-संक्षेप : देश व राष्ट्र क्या हैं? राष्ट्र शब्द में ही वैभव, समृद्धि इत्यादि अर्थ अन्तर्भूत हैं। यह सत्य की अन्वेषणा, ज्ञान, श्रद्धा, पुरुषार्थ व साझेदारी से बनता है। राष्ट्र के संस्कार प्रत्येक देश में अलग होंगे। भारतवर्ष के संस्कार यहाँ उपजी राष्ट्र-चेतना से बने। वह चेतना आने वाली हजारों पीढ़ियों के लिए चिरन्तन अविरल बनी रहे इसके लिए असिधाराव्रत चला सकें ऐसे नागरिक चाहिए। यह गरज तब भी थी जब राष्ट्र-चेतना उदित हो रही थी और आज भी है। आइये, इस असिधारा को समझकर उसके व्रती बनें और हम यह न भूलें कि हमारी भाषाओं व उनकी शब्दावलियों के माध्यम से ही हम राष्ट्र-चेतना को समझ सकते हैं तथा उसमें दृढ़ हो सकते हैं। भाषाएँ बिसरा देने पर हमारी राष्ट्र-चेतना पर भयंकर संकट होगा।

बीज शब्द : राष्ट्र-चेतना, पुरुषार्थ, समष्टिगत, अमृतयात्रा, असिधाराव्रत, अधिष्ठान, आत्मबल, राष्ट्र-वैभव, स्वधा, अन्तःशुद्धि।

ॐ असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

सहनाववतु सहनौभुनक्तु सहवीर्यकरवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तुमाविद्विषावहै।।

मातृदेवोभव, पितृदेवोभव, आचार्यदेवोभव, अतिथिदेवोभव, राष्ट्रदेवोभव।।

गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवोमहेश्वरः।
गुरुः साक्षात्परब्रह्मतस्मैश्रीगुरुवेनमः।।

ईशावास्यमिदंसर्वंयत्किंचजगत्याजगत्।
तेनत्यक्तेनभुञ्जीथः मागृधः कस्यस्विद्धनम्।।

उत्तिष्ठत, जाग्रतप्राप्यवरान्निबोधत।

*मुख्य सूचना आयुक्त (सेवानिवृत्त), गोवा, युगपुरूष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की 51वीं एवं राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की 6ठवीं पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित सप्त दिवसीय व्याख्यान माला के पांचवें दिन (21 अगस्त 2020) दिया गया व्याख्यान माला के उदघाटन अवसर (17 अगस्त 2020) पर दिया गया भाषण

क्षुरस्यधारा निशितादुरत्यया दुर्गंपथस्तत्कवयोवदन्ति।।

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः।।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

राष्ट्र की चेतना क्या होती है। यह जो कुछ श्लोक मैंने उद्धृत किये हैं उनका उपयोग पूर्वकाल में भारत राष्ट्र की चेतना बनाने में और व्याख्यायित करने में हुआ है ऐसा मैं मानती हूँ। तो आइए, पहले समझते हैं कि राष्ट्र क्या है, राष्ट्र-चेतना क्या है और उससे क्या नियमित होता है। लेकिन पहले ये समझते हैं कि भारत देश क्या है। वर्तमान में यह लगभग 140 करोड़ जैसी प्रचण्ड जनशक्ति रखने वाला लगभग 33 लाख वर्गकिलोमीटर में फैला हुआ भू-भाग है जो सप्त महापर्वत और सप्त महानदियों से अलंकृत है। विश्व की सर्वाधिक जनसंख्या रखने वाला चीन हमसे केवल 10 करोड़ से आगे है और विश्व में तीसरा स्थान रखने वाले अमेरिका की जनसंख्या 35 करोड़ अर्थात् हमसे एक चौथाई ही है। पूरे विश्व में 97 भाषाओं की जनसंख्या 1 करोड़ से अधिक है और इनमें से 16 भाषाएँ भारत की हैं। बोलियाँ, जो कि स्थानीय ज्ञानसंग्रह का आधार हैं, उनकी संख्या तो 5000 से अधिक है। विश्व की सर्वाधिक वनस्पति प्रजातियाँ और प्राणि प्रजातियाँ हमारे देश में हैं। सर्वाधिक सौर ऊर्जा प्राप्त करने वाला हमारा ही देश है।

एक देश को, उसकी जनसंख्या को जब पुरुषार्थ से ज्ञान और बौद्धिक विकास की प्राप्ति होती है, तब देश की संज्ञा से आगे राष्ट्र की संज्ञा की ओर यात्रा का आरम्भ होता है। जब ज्ञान एवं संस्कार साझे किये जाते हैं, साझा पुरुषार्थ होता है, तब राष्ट्र बनता है। 'राजते इतिराष्ट्रः' अर्थात् जो हर प्रकार से शोभायमान है, प्रभामय है, वैभवशाली है, वह देश राष्ट्र है। ऐसा राष्ट्र सर्वदा समष्टिगत (साझेदारी से प्राप्त) एवं पुरुषार्थसिद्ध ही रहेगा।

ज्ञानी व्यक्ति विचारते हैं कि हमें अपनी भावी पीढ़ियाँ कैसी चाहिए - उनके अस्तित्व का अधिष्ठान क्या हो? फिर वैसी व्यवस्था बनाने के लिए जो साझा पुरुषार्थ प्रकट होता है उसे राष्ट्र चेतना कहते हैं। हमारे मनीषियों ने चार पुरुषार्थ बताये- धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष। तो यह स्फटिक मणि के समान स्वच्छ है कि किसी देश में ज्ञान का विस्तार और उसकी साझेदारी जिस प्रकार अग्रेसर रहेगी और उसी प्रकार उसकी राष्ट्र-चेतना होगी।

ज्ञान का आदिमूल है असत् और सत् को जानना। उस पर परमात्मा के अस्तित्व का बोध जो सृष्टि के पहले भी था, सृष्टि के दौरान भी होगा और सृष्टि के लय के बाद भी होगा, वह सत् है और प्रकारान्तर से वही सत्य है। असत् का अर्थ है वह बोध न होना। तो अबोधता से बोध

की ओर, असत्य से सत्य की ओर, अज्ञान के अन्धेरे से प्रकाश की ओर ले चलने की प्रार्थना हम करते हैं। इसी क्रम में ज्ञान के प्रकाश से हम अमृत की ओर चलते हैं जो शान्तिदायक भी है। यह प्रार्थना भारत की सांस्कृतिक चेतना की परिचायक है। यह सहस्रों वर्ष पुरातन है, सनातन है। सत्य, ज्ञान व अमृतत्व की अन्वेषणा ही भारत राष्ट्र की पहचान व अधिष्ठान है और इस पहचान की अनुभूति ही राष्ट्र-चेतना है।

जब हम भारत देश से अलग भारत राष्ट्र की बात करते हैं तो क्यों? क्या अन्तर है दोनों में? यह जो चेतना है, ज्ञान की व सत्य की अन्वेषणा से उत्पन्न होने वाली यह चेतना जब जनजीवन की साझा अन्वेषणा बनती है तब देश से राष्ट्र का निर्माण होता है। ऐसा राष्ट्र हमारे देश में सहस्रों वर्ष पूर्व उदित हुआ। वह ज्ञान की पिपासा, वह खोज जो इस प्रार्थना में एक व्यक्ति की थी, वह जब सम्पूर्ण जन-गण की अन्वेषणा का विषय बनी तब राष्ट्र उदय हुआ। लेकिन यह प्रवास सरल नहीं था। व्यक्ति व समष्टि दोनों की अन्वेषणा सत्य और ज्ञान के साथ जुड़े इसके लिए कई अनिवार्यताएँ होती हैं।

इसका पहला तत्त्व है साझेदारी का। इसी कारण हमारी यह प्रार्थना सहनाववतु कहती है- आओ, हम दोनों साथ-साथ खाएँ, साथ-साथ उपभोग लें, साथ रहकर अपना शौर्य और वीरता दिखायें, बुलन्दियों को छुएँ और सबसे महत्त्वपूर्ण कि यह करते हुए हमारे मन में एक दूसरे के प्रति विद्वेष उत्पन्न न हो। कितनी कठिन शर्त है यह। जब भी दो क्षमतावान व्यक्ति किसी ध्येय को पहुँच रहे होते हैं, तो उनमें आगे-पीछे उन्नीस-बीस होना अत्यन्त स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में दूसरा व्यक्ति मुझसे आगे निकल जाये और फिर भी मेरे मन में जलन, ईर्ष्या, मत्सर, कुढ़न, या विद्वेष उत्पन्न न हो यह तभी सम्भव है जब तीन तत्त्वों का अभ्यास मुझे हो। पहला कि मुझमें सत्ता-लालसा न हो। दूसरा मुझे सर्वदा भान रहे कि मैं समष्टि की ध्येय-पूर्ति के लिए समर्पित हूँ। तीसरा कि मैं अपने आप में इतना सन्तोषी रहूँ कि दूसरे के यश से मुझे ईर्ष्या-विद्वेष न हो, वरन् प्रसन्नता हो। यही है राष्ट्र-चेतना का चरित्र।

यह समष्टि भाव जागृत हो सके इसके लिए हमारे मनीषियों ने कई पथ्यापथ्य बताये। इनमें से एक पथ्य है कृतज्ञता के साथ आदर की भावना जिसमें माता, पिता, आचार्य, अतिथि तथा राष्ट्र को सदैव देवता रूप बताया गया। इनका सम्मान करेंगे तभी पूरे राष्ट्र का विकास होगा। यहाँ अतिथि देवो भव एवं राष्ट्रदेवो भव का विशेष चिन्तन आवश्यक है। गुरुमहिमा को हमारे मनीषियों ने अति प्राचीन काल से ही जाना था। गुरु में ही हमारे ब्रह्मा-विष्णु-महेश वास करते हैं। सद्‌गुरु ही हमें अमृत की राह दिखा सकता है क्योंकि वह अमृतयात्रा अनुभूतिजन्य यात्रा है जिसके साक्षात्कार के गुर बताने हेतु गुरु आवश्यक है। गुरु द्वारा दिये गये ऐसे ज्ञान को अधोक्षज ज्ञान की संज्ञा है। यह श्रद्धा के बिना प्राप्त नहीं हो सकता। राष्ट्र-उत्थान की दिशा में सबका योगदान भी होता है और

सबका उत्थान भी। लेकिन जहाँ नवनिर्माण के लिए सत्य के ज्ञान की आवश्यकता है, वहीं संरक्षण हेतु अचौर्य का अस्तेय का बोध आवश्यक है। हमारे प्रथम उपनिषद् की प्रथम पंक्तियाँ हैं 'ईशावास्यमिदंसर्वं......।' चराचर को ईश्वर ने व्याप्त कर रखा है। उसमें वह वास करता है। तुम उसे भोगो, उसका उपभोग करो - भुञ्जीथः। लेकिन कैसे? अपने परिश्रम से। दूसरे के धन को मत ग्रहण करो। क्योंकि उपभोग के लिए जो परिश्रम तुमने किया वही तुम्हारा ईश्वर से साक्षात्कार भी करवायेगा। उस परिश्रम के बिना, कोई साक्षात्कार सम्भव नहीं है। वह परिश्रम और वह कौशल्य है तभी योग है, तभी साक्षात्कार है। उसे पाने के लिए उठो, जागो। वरं क्या है, श्रेष्ठ क्या है, उसे जानो और उसे पाने के लिए श्रम भी करो। लेकिन वह क्षुरस्यधारा है- तलवार की धार पर चलने के समान, कठिन है वह रास्ता। लेकिन राष्ट्र भावना है तो उसी कठिन पथ पर चलना है।

हमारे मनीषियों ने राष्ट्रपुरुष की एक उदात्त कल्पना की है। अन्वेषणा, संरक्षण, समृद्धि और गति ये चार अंग हैं राष्ट्रपुरुष के। समाज में जो मेधा का धनी है उसे अन्वेषणा, अध्ययन व अध्यापन का काम देकर कहा गया कि आपको अपरिग्रह रखना है अर्थात् भोगों का त्याग। हमारे ऋषियों ने इस बात को समझा कि अन्वेषणा के लिए आवश्यक तीव्र मेधा रखने वाला व्यक्ति यदि धन संचय और भोग में प्रवृत्त हो जाये तो उसका ज्ञान समष्टि उपयोगी नहीं रहेगा, वह राष्ट्रोत्थान से पहले अपने धन की सोचेगा। मानव मेधा रखते हुए भी अपरिग्रही होना उस छुरे की धार पर चलने जैसा है। इस व्रत को असिधाराव्रत कहा गया है।

जो समाज का संरक्षण करता है उसे हमारे मनीषियों ने सत्ता का अधिकार व दण्ड देने का अधिकार दिया। लेकिन बहुत बड़ा भार भी दिया न्याय करने का और प्रजा के हर नागरिक को खुश रखने का। रामराज्य का वर्णन करते हुए राम का कथन है कि एक भी नागरिक दुखी हो और अन्यायग्रस्त हो तो राजा को अपना पद त्याग देना चाहिए। यह असिधाराव्रत है। जो उत्तम व्यवस्थापन अर्थात् पाचन से पोषण कर सके वह राष्ट्रपुरुष का उदर है और समष्टि का वैश्य है। वह कृषि, गोपालन और व्यापार करे और इस प्रकार राष्ट्र को समृद्ध करे। उस पर भी एक उत्तरदायित्व है कि हर स्थिति में वह अपरिग्रही ब्राह्मण के योगक्षेम की व्यवस्था अपनी ओर से बिना अपेक्षा के करता रहे। इस प्रकार असिधाराव्रत उसके लिए भी है। इन तीनों समूहों के कार्यों को सुचारु रूप से चलाने में जो जो सहायक है वही राष्ट्रपुरुष को गति देते हैं। वे कुशल कारीगरी सीखकर हर प्रकार की सेवा देते हैं। वे सको आदर सम्मान दें और उनके कार्यों में सहायक बनें यही उनका असिधाराव्रत है। इस प्रकार जिसके पास जो गुण है उसी के माध्यम से वह ऊँचाई तक पहुँचे और असिधाराव्रत निभाते हुए अपना पुरुषार्थ प्रकट करे और राष्ट्रपुरुष को वैभवशाली बनाये।

एक साक्षात्कार की कथा हमारे भृगोपनिषद् में आती है। अपने पिता व गुरु से मार्गदर्शित भृगु ने ब्रह्म जानने के हेतु तपस्या की और जाना कि अन्न ब्रह्म है। फिर क्रमशः अपने तप को

अधिकाधिक बढ़ाते हुए जाना कि प्राण ब्रह्म है, मन ब्रह्म है, विज्ञान ब्रह्म है और आनन्द ब्रह्म है। यह आनन्द ब्रह्म समाज के हर व्यक्ति तक पहुँचाना है। तब भृगु ने समाज का प्रबोधन किया- 'अन्नंननिंद्यात्, नपरिचक्षीत। अन्नंबहुकुर्यात्, बहुप्राप्नुयात्। औरन कञ्चनवसतौप्रत्याचक्षीत।' अर्थात् बहुत अन्न उपजाओ, उसका अच्छा भण्डारण करो और घर आये किसी को भरपेट भोजन से विमुख न रखो। इस प्रकार समाज के प्रत्येक व्यक्ति का भरण-पोषण होने से उनके शरीर की रक्षा, पर्यावरण की शुद्धता से प्राणों की रक्षा, अन्तःशुद्धि से मन की रक्षा, विवेकयुक्त बुद्धि से विज्ञान की रक्षा होती रहे तो मनुष्य और समाज स्थैर्य, समृद्धि व आनन्द को प्राप्त होते हैं।

समाज या देश बनता है उसके नागरिकों से और यह आवश्यक नहीं कि हर नागरिक असिधाराव्रत का पालन करे। समाज में ऐसे भी व्यक्ति होंगे जो स्वयं को समष्टि से ऊपर माने। यदि उनके पास ज्ञान है या बल है या धन है तो उसका प्रयोग उनके स्वयं के उपभोग के लिए करना चाहेंगे। ऐसे व्यक्ति उन्नति की ओर बढ़ते हुए शीघ्र ही सत्ता की ओर चलेंगे। इस पूरी शृंखला को आसुरी सम्पत्ति कहा गया है। दैवी सम्पदा की रक्षा और आसुरी प्रवृत्ति का विनाश बारम्बार होता रहा तो राष्ट्र-चेतना अविरल रहेगी। इसके हेतु ही पुरुषार्थपूर्वक असिधाराव्रत निभाने के लिए हमारे मनीषियों ने कहा - 'उत्तिष्ठत, जाग्रत।'

ऐसे व्रतीजनों के सम्बलस्वरूप जगदम्बा का आह्वान किया गया है। इस विश्व को चलाने वाली विभिन्न आयामों में प्रकट होने वाली वरदायिनी देवी का महत्त्व राष्ट्र-चेतना में कैसे अलक्षित रह सकता है? वह जो देवी है, जो विष्णुमाया है, वही हमें अपने चारों ओर दृग्गोचर हो रही है। यह सारा उसी का प्रकटन है। वह पूरी सृष्टि में और चेतना में अलग-अलग रूपों में संस्थित है और प्रकट होती रहती है। कभी वह विद्या है तो कभी क्षुधा, कभी निद्रा है तो कभी तुष्टि, कभी कीर्ति है तो कभी लक्ष्मी, कभी दया है तो कभी बुद्धि, कभी तृष्णा है तो कभी स्वधा (आपूर्ति), कभी तृप्ति है तो कभी शान्ति। यों कहें कि राष्ट्र-वैभव में जिन गुणों की आवश्यकता है वे सारे जगदम्बा के ही प्रकटन हैं और उस जगदम्बा को उपासना से जानना ही राष्ट्र-चेतना है।

जब यह भारत राष्ट्र विराजेगा तब वह सर्वोच्च प्रार्थना भी सिद्ध होगी- 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।' इस प्रार्थना के माध्यम से भारतीय मनीषियों ने कामना की है एक सर्वमान्य और सबके हृदयंगम प्रणाली की जो चिरन्तन और शाश्वत रूप से सबके उत्थान का कारण बने। सबको मोक्षदायी हो।

इस प्रकार, राष्ट्र तेज की वृद्धि कर सके ऐसे कुछ नियमों को मैंने सबके सम्मुख रखा। ये पुरातन काल से हमारे जन-मन व संस्कृति में उतर चुके हैं। इन सहस्रों वर्षों में हमने एक विशाल चिन्तन किया, उसके आदान-प्रदान हेतु हमारी भाषाएँ व शब्दावलियाँ बनीं। उनसे परिचित रहेंगे तभी वह चिन्तन हमारी अगली सैकड़ों पीढ़ियों के लिए पथदर्शक बनेगा।

यह उदाहरण समझो कि एक बार व्यक्ति कार चलाने में माहिर हो जाये तो वह बिना सायास ही कार चला लेता है। उसे प्रति पल बहुत सोचना-विचारना नहीं पड़ता क्योंकि उसका संस्कार गढ़ चुका है। वैसे ही हमारी चिर-परिचित शब्दावलियों के कारण अपने पूर्वजों के गहन चिन्तन से हम परिचित होते हैं और बिना सायास ही हम उनका पालन करते आ रहे हैं।

भाषाओं व शब्दावलियों का महत्त्व विश्व प्रसिद्ध लेखक जॉर्ज ऑरवेल के उपन्यास 1984 में वर्णित है। उपन्यास की पार्श्वभूमि आरम्भ में ही बतायी जाती है। एक पुरातन परम्परा से चलने वाला देश जिसमें रक्तरंजित क्रान्ति हो जाती है और जो नया शासक आता है उसका नाम है बिग ब्रदर। बिग ब्रदर को अब यह चिन्ता है कि देश में दुबारा क्रान्ति न हो और उसका कोई विरोध न करे। वह एनालिसिस करता है - क्रान्ति के लिए सबसे पहले भाव और विचार चाहिए। लेकिन जबतक वे किसी व्यक्ति के दिमाग के अन्दर ही रहेंगे तब तक कोई संकट नहीं है। जब भावों को और विचारों को शब्द मिलते हैं तब वे अभिव्यक्त होते हैं। दूसरे व्यक्तियों तक अभिव्यक्ति पहुँचती है तो उनके मन में भी उसी प्रकार के भाव और विचार जगते हैं। इस प्रकार जब कई लोगों के विचार मिलते हैं तो क्रान्ति की सम्भावना बनती है। अर्थात् यदि देश में क्रान्ति को रोकना है तो देश में शब्दों को रोकना होगा। शब्द संख्या जितनी कम, क्रान्ति की सम्भावना भी उतनी ही कम। अतः बिग ब्रदर के आदेश पर सारी डिक्शनरियाँ जला दी जाती हैं और शब्दों की संख्या कम करने का आदेश निकलता है। अब इस आदेश के अनुसार good शब्द तो रहेगा लेकिन उसकी जो विभिन्न छटाएँ अन्य शब्दों से व्यक्त होती हैं जैसे better, best, awesome, excellent, superb, sublime या bad, awful, ये शब्द उपयोग में नहीं लाये जायेंगे। उनकी जगह good plus या good plus plus या good minus या good minus minus कहना होगा। इस प्रकार उस देश में जनसामान्य के पास बोलने के लिए केवल 2000 शब्दों के उपयोग की ही अनुमति है। अन्य शब्द बोलने पर या सीखने का प्रयास करने पर भारी दण्ड की सजा दी जायेगी।

हमारे आत्मचिन्तन में यह कथा सटीक लागू होती है। आज एक फैशन सी बन गयी है जिसमें ये संस्कार और उनके लिए नियमों का पालन दकियानूसी कहलाने लगा है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन संकल्पनाओं को हम फिर से समझें। हम जानें कि भारत राष्ट्र का अधिष्ठान क्या है? किस प्रकार का समाज हम अपने लिए, अपने बच्चों के लिए, उनकी कई एक अगली पीढ़ियों के लिए चाहते हैं? उसके निर्माण हेतु हमारे लिए नियत असिधाराव्रत क्या है और जिस आत्मबल के आधार से हम उसे निभा सकते हैं उस आत्मबल को, उस पुरुषार्थ को हम कैसे प्राप्त करें।

■

आयुर्वेद : एक ईश्वरीय देन

गाँव की पगडण्डियों से निकलता है सभी के कल्याण का मार्ग

वैद्य अजयदत्त शर्मा*

सार-संक्षेप : आइए आज हम इस लेख के माध्यम से आज की दुनिया में इन जड़ी-बूटियों के व्यापार पर विचार करें। आज स्थिति यह है कि यह व्यापार दुनिया में बड़ा स्वरूप ले चुका है। पिछले कुछ सालों में भारत सरकार और विभिन्न प्रदेश सरकारों ने इस ओर ध्यान देना शुरू किया है। आपको यह सुखद जानकारी देते हुए हर्ष हो रहा है कि लगभग 15000 जैव विविधता के पौधे भारत की धरती पर मौजूद हैं। भारत की औषधि प्रणालियाँ जिन्हें आज आयुर्वेद के नाम से जाना जाता है बाद में कुछ दूसरी दवा प्रणालियाँ लिस्ट में जुड़ती चली गयीं। भारत सरकार के सर्वे के अनुसार लगभग 3000 जड़ी-बूटियों के पौधों का इन प्रणालियों की औषधि में प्रयोग किया जा रहा है।

बीज शब्द : आयुर्वेद, व्याधि-वेदना, चरक-संहिता, विषाणु, मानकीकरण, आयुष, हर्बल।

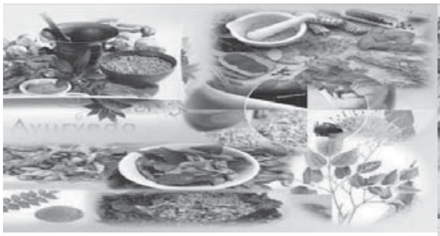

प्रस्तावना

'सर्वे भवन्तु सुखिनः', यह हमारा रास्ता है जिसके लिए हम युगों से काम कर रहे हैं। इसकी प्राप्ति के लिए हमने व्याधि-वेदना रहित दुनिया के लिए काम किया। हमारे जीवन में प्रारम्भ से ही संघर्ष रहे। उन संघर्षों में हमें चोट भी लगी, वेदना भी हुई, बीमार भी हुए। चिन्तित लोगों ने इन कष्टों के निवारण के लिए भी कार्य किया। समय-समय पर छोटी-बड़ी घटनाएँ हुईं और उन घटनाओं का निवारण विद्वानों ने किया। और इन घटनाओं के निराकरण का इतिहास ही आयुर्वेद का इतिहास है। इसकी जानकारी हमें जगह-जगह दुनिया की पहली पुस्तक वेद में मिलती है। चरक, सुश्रुत, कश्यप आदि मान्य आयुर्वेद के विद्वानों ने बड़े उपयोग की जानकारी दी, जिन्हें हम 'चरक-संहिता', 'सुश्रुत-संहिता', 'काश्यप-संहिता', 'अष्टांग हृदय', 'अष्टांग-संग्रह' आदि के नाम

*अध्यक्ष-आयुर्वेद परिषद्, अवध क्षेत्र, लखनऊ, युगपुरूष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की 51वीं एवं राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की 6ठवीं पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित सप्त दिवसीय व्याख्यान माला के चौथे दिन (20 अगस्त 2020) दिया गया व्याख्यान

से जानते हैं। इन ग्रन्थों में सैकड़ों-हजारों जड़ी-बूटियों के बारे में विवरण मिलता है। इन ग्रन्थों में यह जानकारी भी मिलती है कि ये जड़ी-बूटियाँ कहाँ उपलब्ध हैं (कहाँ से मतलब स्थान-भौगोलिक स्थान से है)। इनके क्या उपयोग हैं? चिकित्सा में यह कैसे प्रयोग की जाती हैं? उनके रस, गुण, वीर्य विपाक के बारे में जानकारी मिलती है। लेकिन दुनिया में एक कटु सच भी है कि विधाओं को जिन्दा रहने के लिए उनके साथ आर्थिक पक्ष जुड़ जाता है, हमारी सभ्यता नदियों के किनारे बसे नगरों के समानान्तर चलती रही। वहीं आयुर्वेद चिकित्सक और विद्वानों ने अपना डेरा डाला और चिकित्सा द्वारा धीरे-धीरे लोगों की वेदना को दूर करने के लिए, स्वस्थ बनाए रखने के लिए, जड़ी-बूटियों का व्यापार प्रारम्भ हो गया और आज वह व्यापार सारी दुनिया में भारी-भरकम व्यापार के रूप में स्थान प्राप्त कर चुका है।

धीरे-धीरे इनका उपयोग, औषधियों की उपलब्धता, उनके स्थान पर संदिग्ध रोगियों का प्रयोग किया जाने लगा। विश्वप्रसिद्ध आयुर्वेद रसायन 'च्यवनप्राश' में उपयोग होने वाले 58, द्रव्य में 8 जड़ी-बूटी उपलब्ध नहीं है। उनके स्थान पर संदिग्ध द्रव्य प्रयोग किए जाते हैं। धीरे-धीरे च्यवनप्राश अपनी चमक खोता चला गया। मेरा कहने का आशय यह है कि हमें अब इस दिशा में बहुत काम करने की जरूरत है। उपलब्ध रिपोर्ट के आधार पर 2014-15 में कच्ची हर्बल दवाओं के निर्यात की अनुमानित माँग 512000 मेट्रिक टन थी। दूसरी ओर घरेलू उपयोग 195000 मेट्रिक टन रही।

वर्तमान समय में आयुर्वेद में 800 वानस्पतिक प्रजातियों का उपयोग होने का सन्दर्भ मिल रहा है, लगभग इतनी ही औषधियों की प्रजातियों का उपयोग तमिलनाडु की चिकित्सा प्रणाली में किए जाने का संदर्भ मिल रहा है। यूनानी मे 700 प्रजातियों के प्रयोग के संदर्भ मिल रहे हैं, नेपाल के पहाड़ों में प्रयोग की जाने वाली आमची विधा में 300 प्रजातियों के प्रयोग का संदर्भ मिल रहा है।

भारतीय जड़ी-वूटी दुनिया के जन कल्याण का रास्ता खोलती है । इसके संग्रह और उत्पादन और किसान की आर्थिक स्थिति में सुधार की ओर निहारती संभावना। ग्रामीण अंचलों में इन परिवारों के द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली लगभग 1280 पौधों की प्रजातियों के उपयोग की जानकारी मिलती रही है, कुछ महत्वपूर्ण हर्बल अनुमानित वार्षिक महान भारत में चिकित्सा पद्धतियों में प्रयुक्त होने के लिए कच्ची औषधि के रूप में लगभग 10000 metric ton Giloy रास ना 3000 एमटी आमला अश्वगंधा शतावरी मंडूक पर ने गूगल सोनू मुखी हल्दी, काल मेघ, एलोवेरा आज बड़ी मात्रा में वार्षिक माँग होती है। ग्रामीण अंचलों में - वनांचलों में ग्रामीण परिवारों में परंपरागत रूप से जन स्वास्थ्य के लिए जानवरों की चिकित्सा के लिए उपयोग किया जाता है।

लेकिन हमारे भारतीय निर्यात में एक बाधा भी आ रही है और वह बाधा है दुनिया में तय किए गए पैमानों पर विषाक्तता की जाँच। इस ओर हमारे देश में अब तक कम ध्यान दिया गया है। अब दुनिया चाहती है तो उसको किए गए निर्यात में सर्टिफिकेशन हो, जड़ी-बूटियों को बताया

जा सके कि विषाक्तता-मुक्त है, इनका लीवर, किडनी, हृदय, फेफड़े, मस्तिष्क, नर्वस सिस्टम, स्किन आदि में कोई विषाक्त प्रभाव तो नहीं है और इसके लिए भारत का आयुष विभाग भारत के तमाम वैज्ञानिक संस्थान इस दिशा में अब कार्य कर रहे हैं। अकेले लखनऊ में ही सी-मैप राष्ट्रीय वनस्पति उद्यान, सीडीआरआई, आइटीआरसी जैसे तमाम संस्थान कार्य कर रहे हैं। अब सैकड़ों की संख्या में भारत में इस तरह के संस्थान कार्य कर रहे हैं।

भारत का औपचारिक बाजार लगभग 70 परसेण्ट डिमाण्ड पैदा करता है, भारत के लगभग 10 लाख आयुष चिकित्सक और इतने ही अनौपचारिक परम्परागत क्षेत्रों में कार्य करने वाले चिकित्सक पारम्परिक रूप से कार्य कर रहे हैं। डिमाण्ड क्रिएट कर रहे हैं। उनका आकलन औपचारिक रूप से भारत सरकार के पास उपलब्ध नहीं है। यह सब मिलकर इन औषधियों के उपयोगकर्ता के रूप में कार्य कर रहे हैं, हजारों औषधि निर्माण कम्पनियाँ जिनमें लगभग 800 कम्पनियाँ भारत सरकार द्वारा निर्धारित मापदण्ड, जीएमपी अधिसूचना का पालन करते हुए बड़ी मात्रा में औषधियाँ बना रहे हैं। बाजार के निर्माण में बड़ा बाजार देते हैं। एक बड़ा हिस्सा लगभग 20 प्रतिशत दुनिया में पर्सनैलिटी क्षेत्र के मार्केटिंग में अपना हिस्सा बनाता है। इस क्षेत्र में मोटे होने, पतले होने, काले होने, गोरे होने के ब्यूटी प्रोडक्ट का भी मार्केट है। इधर श्रीश्री रविशंकर, योगाचार्य स्वामी रामदेव आदि अनेक महान योगियों ने अपने लाखों शिष्यों के बीच में इन औषधि और हर्बल माँग को देखकर ही आप सबने बड़ी मात्रा में इन औषधियों को भारत के बाहर भी निर्यात किया है। कुछ जड़ी-बूटियों के बारे में उनके प्रेगनेंट मदर्स पर, दुनिया में आने वाले बच्चों पर प्रभाव जानने की जरूरत है।

इसको समझने के लिए एक उदाहरण काफी रहेगा। दुनिया ने बहुत पहले गन्ने का स्वाद चखा बाद में इसे तात्कालिक थकान में उपयोगी पाया और लोगों ने गन्ने को चूसना प्रारम्भ किया। गन्ने के रस की खीर बनाई गई। रस को सुरक्षित रखने के लिए तमाम प्रयोग किए गए। उसमें गुड़ का बनाया जाना, उसका पाउडर बनाया जाना जिससे अब कच्ची चीनी के नाम पर उसका गाढ़ा शीरा बनाया जाना और बाद में शुगर फैक्ट्री लगी। उन्होंने चीनी बनाई, अल्कोहल बनाया। लेकिन मनुष्य की इच्छा बाकी रह गई। कितना उपयोगी होने के बाद भी गन्ने के रस को गन्ने के रस के तौर पर कैसे सुरक्षित किया जाए। कारण यह था कि मीठा होने के कारण यह प्रकृति के तमाम विषाणु बैक्टीरिया वायरस और फंगस को भी अपनी और आकर्षित करता है। उस स्थिति में इसका उपयोग लाभ देने के बजाय नुकसान करने लगता था। दुनिया में पिछले सैकड़ों सालों से इस पर प्रयोग करने के बाद भी सफलता नहीं मिल पा रही थी लेकिन अनुसन्धान का परिणाम है कि दौराला शुगर मिल मेरठ में अपने अनुसन्धान से कुछ ऐसा प्रजववेटिव तैयार किया है और वह अब इसकी गन्ने के रस के रूप में मार्केटिंग भी कर रहे हैं। दुनिया जानती है जॉन्डिस में गन्ने का रस बहुत उपयोगी है, थकान में बहुत उपयोगी है, बहुत बड़ा मार्केट इसका इंतजार कर रहा था।

आयुर्वेदिक फार्मेसी में एक कच्चे द्रव्य का बड़ा भाग जंगल से प्राप्त होता था लगभग 80 परसेंट होता था। इन्हें बीड्स कहते थे। आज जंगलों के कट जाने के बाद उनकी प्राप्ति के सामने एक बड़ा संकट पैदा हो गया है। भारत के फॉरेस्ट डिपार्टमेण्ट को भारत के आयुष विभाग के साथ सामंजस्य जैसा बैठा कर इस आपूर्ति को दुनिया में करने के लिए बड़े स्तर पर कार्य करना होगा। इस दिशा में आज वैज्ञानिक अनुसन्धान करने के बाद और उसके साथ, आज के सन्दर्भ में नए साहित्य सृजन की भी आवश्यकता है। इस दिशा में आयुष विभाग को और भारत के औद्योगिक घरानों को आगे आना होगा। एक बड़ा व्यापार और बड़े व्यापारिक सम्भावनाओं की दुनिया अभी बन्द पड़ी है जिसका दरवाजा खोलना पड़ेगा। अभी चीन इस मामले में बहुत बहुत आगे है। उसके पास बड़ा ग्लोबल मार्केट है। आज जब चीन के और सभी लोग संशय की निगाह से देख रहे हैं और व्यापारिक बहिष्कार करने की बात सोच रहे हैं और यह लक्षण भी लग रहा है इस दिशा में भारत के सामने ग्लोबल मार्केट में आधिपत्य स्थापित करने का एक सुनहरा मौका है। इस दृष्टि से इस मौके को हमें देखना चाहिए।

इन जड़ी-बूटियों की औषधियों में ठीक प्रयोग के लिए भारत सरकार ने जीएमपी एक्ट बनाया जिसे अब लागू कर दिया गया है। इस एक्ट के अन्तर्गत औषधि निर्माण के सन्दर्भ में प्रयोग में आने वाली औषधियों की क्वालिटी जो फार्माकोग्नॉसी लैब के द्वारा निर्धारित की जाती है औषधि निर्माण हेतु वैद्य की आवश्यकता, औषधियों को रखने और रखरखाव के निश्चित मापदण्ड औषधि बनने के बाद उनकी पैकिंग, उनके रखरखाव के स्तर, उनकी एक्सपायरी डेट और मैन्युफैक्चरिंग डेट, मूल्य निर्धारण के नियम और उसके हर पैकिंग पर लिखे जाने की व्यवस्था को लागू किया गया। कहने का मतलब यह है कि धीरे-धीरे आयुर्वेदिक औषधियों के मानकीकरण की प्रक्रिया की ओर हम लोग आगे बढ़ रहे हैं और इस का प्रारम्भ होता है औषधि पौधों की खेती की परम्परा से। आज हमें अधिक उत्पादन के लिए भारत सरकार द्वारा दी गई सुविधाओं का फायदा उठाना है और इसके लिए किसान सहकारी समितियों के अधिक मात्रा में कार्य करने की आवश्यकता है। एक सुखद सूचना है कि उत्तर प्रदेश में इसका बड़े पैमाने पर कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है। लगभग 15000 सक्रिय किसान अलग-अलग किसान कम्पनियों के द्वारा जड़ी-बूटी औषधियों का उत्पादन कर रहे हैं। अभी ऐसी व्यावहारिक समस्या आ रही है इन उत्पादनों के ठीक से संग्रह की और उनके विपणन की। उत्तर प्रदेश सरकार का नियोजन भवन में स्थापित बोर्ड इस दिशा में अपना सक्रिय सहयोग किसानों को दे रहा है। इस सब के बाद भी जड़ी-बूटियों के उपयोग से होने वाली उनमें पाए जाने वाले हेवी मेटल की जानकारी, निराकरण के बारे में कार्य करने की जरूरत है। जड़ी-बूटियों के मानकीकरण और विस्ताररहित सर्टिफिकेशन के बाद अरबों रुपये के निर्यात व्यापार की सम्भावना बहुत दूर की बात नही हैं। ■

गिरिव्रज राजगृह की ऐतिहासिकता

सुबोध कुमार मिश्र*

सार-संक्षेप : राजगीर वर्षों से अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य, मनोरम पहाड़ीशृंखलाओं, गरम झरनों के जलस्रोत तथा अनेक बौद्ध एवं जैन विहारों के कारण विदेशी पर्यटकों का आकर्षण केन्द्र रहा है। पाँच पहाड़ों के बीच बसी यह नगरी सर्वधर्म समन्वय का अद्भुत उदाहरण रहा है। 'अहिंसा परमो धर्मः' की वाणी यहीं से प्रस्फुटित हुई थी। गरम जल की अबाधित धाराएँ राजगीर की प्राकृतिक सम्पदा है। पर्यटन की दृष्टि से यह एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति स्थल है जहाँ वर्षपर्यन्त देशी-विदेशी पर्यटक आते रहते हैं। पर्यटन आकर्षण की नयी-नयी कृतियाँ यहाँ स्थापित हैं जिनमें विश्व शान्ति स्तूप, रज्जु मार्ग एवं जापानी मन्दिर प्रसिद्ध हैं। हमें मालूम है कि राजगीर हमारे भारत राष्ट्र का एक सुन्दर, दर्शनीय स्थान है जो प्राकृतिक सौन्दर्य की सम्पदा से चित्र की भाँति शोभा-सम्पन्न है। प्राकृतिक सौन्दर्य के अतिरिक्त यह स्थान ऐतिहासिक तथ्यों तथा प्राचीन स्थापत्य और कला के नमूनों का आधार स्वरूप है।

बीज शब्द : राजगीर, गिरिव्रज, पंचभौतिक, ऋष्यश्रृंगकुण्ड, जरासन्ध, बिम्बिसार, धर्मचक्रप्रवर्तन, वेणुवन, राजप्रासाद, नवप्राचीन नगर, अजातशत्रु, परकोटा।

दक्षिण बिहार की पार्वत्य भूमि में गिरिव्रज राजगृह जिसे हमारे धर्मग्रन्थों में पंचशैल, ऋषभपुर, कुशाग्रपुर, क्षिति प्रतिष्ठ, वसुमती, चणकपुर, विपुल गिरि, रत्नगिरि, सोनगिरि, वैभारगिरि, गृद्धकूट, राजगीर आदि नामों से जाना जाता है, की जलवायु अति स्वास्थ्यकर है। यहाँ के प्रपातों एवं कुण्डों का उष्ण जल सुखद एवं गुणदहै। हमारे देश के विभिन्न प्राचीन ग्रन्थों में इस मनोरम पावनपुरी को पवित्र तीर्थ की संज्ञा देकर इसे भव-भय-हारी बतलाया गया है तथा इस पंचभौतिक शरीर के लिए प्रत्यक्ष रूप में यह स्थाना नारा रोगहारी एवं बलकारी अवश्य है। इन्हीं कारणों से विशेषकर शरद, हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में देश और विदेश से आने वाले पर्यटकों की भीड़ यहाँ अधिक होती है। इनमें से अधिकांश स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से और अनेक इस रमणीक भूभाग के मनोहर प्राकृतिक माधुर्य का आस्वादन करने तथा मन बहलाव के लिए आते हैं। तीर्थयात्रियों की संख्या भी राजगीर में पर्याप्त रहती है। जाड़े के समय में यह स्थान बहुधा बड़े-बड़े अध्यात्म

*शोध छात्र, प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर(उ.प्र.)

चिन्तनरत आत्मज्ञानी साधु-संन्यासियों का आवास बन जाता है जिससे यहाँ के जनसाधारण को उनके सत्संग का सुअवसर प्राय: प्राप्त होता रहता है। इस पंचपर्वत परिवेष्ठित पावन नगर का कमनीयकान्त कानन अनन्त काल से अनेक पूज्य पवित्र एवं वीतराग तपस्वियों की तपस्या और साधना की पुण्य भूमि बनने का सौभाग्य प्राप्त करता रहा है। जैन एवं बौद्ध धर्मों का विकास एवं प्रसार इसी नगर से हुआ था। यहाँ के स्वतन्त्रचेता व्रात्यों का विचार धर्म के विषय में उदार, विस्तृत एवं प्रशस्त था। अत: यहाँ पर वैदिक धर्म के साथ-साथ अन्यान्य मत - बौद्ध, जैन आदि को भी जनता के बीच पनपने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। यही कारण है कि यह नगर हिन्दू, जैन और बौद्ध तीनों का पवित्र तीर्थस्थान है। मुसलमान सन्त श्री मखेदूमशाह शर्फुद्दीन ने लगभग 1234 ई. में राजगीर के विपुल पर्वत की तलहटी में ऋष्यश्रृंगकुण्ड (अब मखदूम कुण्ड) के निकट करीब बारह वर्षों तक तपस्या की थी। अत: बाद में चलकर यह नगर मुसलमानों का भी तीर्थ बन गया।

आधुनिक राजगीर बिहार राज्य की राजधानी पटना से लगभग 64 मील की दूरी पर पूरब और दक्षिण दिशा में स्थित है। पूर्व में यह नगर पटना जिला के बिहारशरीफ अनुमण्डल में था पर नालन्दा जिला के बन जाने पर अब यह नालन्दा जिला के अन्तर्गत आ गया। पूर्व में पटना-मोकामा रेलखण्ड के बख्तियारपुर जंक्शन से छोटी लाइन से राजगीर पहुँचा जाता था पर अब बख्तियारपुर से राजगीर के लिए बड़ी लाइन का निर्माण हो जाने पर अब बख्तियारपुर में यात्रियों को रेलगाड़ी नहीं बदलनी पड़ती है बल्कि पटना से राजगीर का सम्पर्क रेल के माध्यम से हो गया है। अभी हाल के वर्षों में गया-किउल रेलखण्ड के हिसुआ स्टेशन से भी राजगीर के लिए रेलवे लाइन का निर्माण हो गया है और बोधगया आनेवाले पर्यटकों के लिए गया से राजगीर पहुँचना अब आसान हो गया है। उन्हें पटना और बख्तियारपुर की लम्बी यात्रा से सुगम और समय की बचत इस रेलमार्ग से हो गयी है।

राजगीर वर्षों से अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य, मनोरम पहाड़ी श्रृंखलाओं, गरम झरनों के जलस्रोत तथा अनेक बौद्ध एवं जैन विहारों के कारण विदेशी पर्यटकों का आकर्षण केन्द्र रहा है। पाँच पहाड़ों के बीच बसी यह नगरी सर्वधर्म समन्वय का अद्‌भुत उदाहरण रही है। 'अहिंसा परमो धर्म:' की वाणी यहीं से प्रस्फुटित हुई थी। गरम जल की अबाधित धाराएँ राजगीर की प्राकृतिक सम्पदा है। पर्यटन की दृष्टि से यह एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति स्थल है जहाँ वर्षपर्यन्त देशी-विदेशी पर्यटक आते रहते हैं। पर्यटन आकर्षण की नयी-नयी कृतियाँ यहाँ स्थापित हैं जिनमें विश्व शान्ति स्तूप, रज्जु मार्ग एवं जापानी मन्दिर प्रसिद्ध हैं। हमें मालूम है कि राजगीर हमारे भारत राष्ट्र का एक सुन्दर, दर्शनीय स्थान है जो प्राकृतिक सौन्दर्य की सम्पदा से चित्र की भाँति शोभा-सम्पन्न है। प्राकृतिक सौन्दर्य के अतिरिक्त यह स्थान ऐतिहासिक तथ्यों तथा प्राचीन स्थापत्य और कला के नमूनों का आधार स्वरूप है।

प्रागैतिहासिक पाषाण युग से लेकर ऐतिहासिक काल में राजगीर को सदियों तक मगध की राजधानी का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसी नगर के सिंहासन से अति प्राचीन काल में ब्रह्म-पुत्र कुश तनय वसु से लेकर महाभारत युग के आरम्भ में महापराक्रमी जरासन्ध तथा उसके बाद उसके प्रतापी वंशज एवं ऐतिहासिक युग की उषा वेला में हर्यंक वंशीय विजयी वीर बिम्बिसार तथा अजातशत्रु ने अपने विशाल साम्राज्य का शासन किया था। उस समय मगध सम्पूर्ण भारत में अपना एक विशिष्ट स्थान कालान्तर में राजतान्त्रिक शासन व्यवस्था में सुविधा, साम्राज्य-प्रसार नीति की सफलता, जलमार्ग के द्वारा यातायात में सुगमता तथा पड़ोसी प्रभावशाली गणतान्त्रिक राज्य वैशाली से सैद्धान्तिक मतभेद के कारण उसे छिन्न-भिन्न एवं नष्ट करने के उद्देश्य से राजगीर (गिरिव्रज) के टक्कर की दूसरी राजधानी गंगा के किनारे पाटलिग्राम (वर्तमान पटना) में बिम्बिसार के वंशज उदयन के शासनकाल (ईसापूर्व 459 से ईसापूर्व 443 तक) में राजगीर से इस नवीन राजधानी पाटलिग्राम में शासन का स्थानान्तरण हुआ। अत: इससे राजगीर की राजकीय महत्ता कुछ कम हुई अवश्य पर शताब्दियों पीछे तक भी यह नगर भुलाया नहीं जा सका।

इतिहास साक्षी है कि राजकीय शासन के केन्द्रबिन्दु न होते हुए भी मौर्य सम्राट अशोक (ईसापूर्व 272-236 या 233 ईसापूर्व) ने अपने शासनकाल में राजगीर में एक विशाल स्तूप बनवाया था। इसके अतिरिक्त भी अशोक ने एक पाषाण-स्तम्भ भी यहाँ स्थापित किया था जिसकी पुष्टि हमें ह्वेनसांग के यात्रा-विवरण से प्राप्त होती है। अत: इन दोनों साक्ष्यों के आलोक में हम कह सकते हैं कि उदयन द्वारा राजगीर से राजधानी के स्थानान्तरित किये जाने के लगभग दो सौ वर्ष बाद भी मगध साम्राज्य में राजगीर का स्थान महत्त्वपूर्ण एवं उच्च समझा जाता था।

गिरिव्रज राजगृह का वर्णन हमें वाल्मीकिकृत रामायण से मिलता है। इसे राजा वसु ने बसाया था। अत: राजगीर के कई नामों में वसुमती भी है। यह गिरिव्रज पाँच शैल-शिखरों के बीच शोभायमान है। यहाँ समागधी नाम की नदी बहती है जिसे यहाँ के लोग मागध नदी के नाम से पुकारते हैं। यह राजगीर नगरी पाँच पर्वतों के बीच में माता के समान मनोहर है। हे राम! यह वसु महात्मा की वही मागधी है जो हरे-भरे शस्यों से युक्त खेतों वाली है[1]-

चक्रे पुरवरं राजा वसुर्नाम गिरिव्रजम।
एषा वसुमती नाम वसोस्तस्य महात्मन:।
एते शैलवरा: पञ्च प्रकाशन्ते समन्तत:।।
सुमागधा नदी रम्या मागधान्विश्रुता यया।
पञ्चानां शैलमुख्यानां मध्ये मालेव शोभते।।
सैषा हि मागधी राम! वसोस्तस्य महात्मन:।
पूर्वाभिचारिता राम! सुक्षेत्रा शस्यमालिनी।।

महाभारत काल में राजगीर का राजा बृहद्रथ था जो इसी वसु वंश का था। महाभारत के सभापर्व में राजगीर का अत्यन्त सुन्दर वर्णन हमें मिलता है। इसके अनुसार जरासन्ध इसी ब्रहद्रथ का पुत्र था। वह बड़ा ही पराक्रमी राजा हुआ जिसने कृष्ण को हराकर मथुरा से द्वारका भाग जाने के लिए विवश किया था। जरासन्ध के राज्य की सीमा मथुरा तक थी और मथुरा का राजा कंस इसका जामाता था। जरासन्ध के शासन काल में मगध सर्वशक्तिमान सम्पन्न हो गया था। मगध में एकराट राज्य की नींव देने वाला जरासन्ध प्रथम सम्राट था। महाभारत में राजगृह का वर्णन जो कृष्ण ने किया है वह अत्यन्त मनोरम और पठनीय है। इसमें पंच पर्वतों, गौतम ऋषि, उनके वंश तथा प्रताप एवं नागों से गिरिव्रज की रक्षा किस तरह होती है, आदि का वर्णन है[2]–

एष पार्थ महान् भाति पशुमान्नित्यमम्बुमान्।
निरामयः सुवेश्माद्यो निवेशो मागधः शुभः।।
वैहारो विपुलः शैलो वराहो वृषभस्तथा।
तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यक पञ्चमाः।।
एते पञ्च महा शृङ्गाः पर्वताः शीतलद्रुमाः।
रक्षन्तीवाभिसंहत्य संहताङ्गा गिरिव्रजम्।।

जैन साहित्य में राजगृह के कई नाम हैं। पञ्चशैलपुर (राजगृह) में रमणीय नाना प्रकार के वृक्षों से व्याप्त देव और दानवों से वन्दित और सभी पर्वतों में उत्तम ऐसे विपुलाचल पर्वत के ऊपर भगवान् महावीर ने भव्य जीवों को उपदेश दिया। धर्मचक्रप्रवर्तन और धर्मतीर्थ की स्थापना स्वयं भगवान् महावीर ने यहाँ की थी। विपुल गिरि पर एक ऐसे दिगम्बर जिन बिम्ब का वर्णन मिलता है जो बारह योजन तक दिखलाई देता था। षट्खण्डागम में ऐसा लिखा हुआ है–

पंचसेलपुरे रम्मे विडले पञ्च हुत्तमे
णाणा दुम समाइण्णे देव दानव वंदिदे।
महावीरेणरथो कहिओ भविष्य लोयस्स।
सिक्ते सत्सरितो अम्बुभिः शिखरिणः सम्पूज्य देशेवरे
सानन्द विपुलस्य शुद्ध ह्रयेरित्येव भव्येः स्थितेः
निग्रन्थं परमार्हतो यदमलं विम्ब दरीदृश्यते।
यावद् द्वादश्योजनामि तदिददिग्वासंसा शासनम्।

राजगीर के पर्वतों की चर्चा बौद्ध ग्रन्थों में भी सर्वत्र देखने को मिलती है। यहाँ भी वनपङ्क्तियों और शस्य परिपूर्ण खेतों की चर्चा भी बौद्ध साहित्य में भरी पड़ी है। भगवान् बुद्ध ने मगध के पंक्तिबद्ध खेतों को दिखाते हुए आनन्द से चीवर बनाने को कहा था[3]–

"दिस्वान आपस्मन्तं आनन्दं आभन्तेसि-पस्ससि नु खो त्वं आनन्द मगधखेत्तं अच्चिबन्धं पालिबन्धं मरियादबन्धं सिङ्घाटक बन्धति। एवं भन्ते! पस्सहसि त्वं आनन्दं भिक्खूनं एव रूपानि चीवरानि संविदहिंतुति" (महावग्गो 1/4/2/15)

भगवान् बुद्ध धर्मचक्रप्रवर्तन करके राजगृह में आये और सारिपुत्र मौद्गल्यायन के साथ संजय के 250 शिष्य इनके पास जाकर प्रव्रजित हो गये तब राजगृह में कुहराम मच गया। अब इनके प्रभाव से गृहस्थ के लड़के भी घर-द्वार छोड़कर सिर मुड़ाने लगे थे। इससे राजगृह के निवासी बहुत ही परेशान हो गये। लोग इधर-उधर बोलने लगे- यह गौतम कपूत बनाने के लिए उतरा है, विधवा बनाने के लिए आया है, कुल का नाश करने के लिए पहुँचा है[4]- अपुत्त कटाय पटिपन्नो समणो गोतमो, वेध न्याय पटिपण्णे समणो गोतमो, कुलूपछेदाय पटिपन्नो समणो गोतमो।

धर्मचक्रप्रवर्तन के पूर्व सिद्धार्थ गौतम का सत्य की खोज में घूमते-घूमते जब प्रथम बार राजगृह में आगमन हुआ तो बिम्बिसार स्वयं सिद्धार्थ गौतम से मिला था। सिद्धार्थ गौतम के कुल-गोत्र के गौरव की बात जानकर बिम्बिसार ने अपनी सेना में एक अच्छा पद देना चाहा था पर सिद्धार्थ गौतम ने राजा बिम्बिसार के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। बिम्बिसार के प्रश्न का उत्तर सिद्धार्थगौतम ने इस शब्दों में दिया था[5]-

उजुं जानपदो राजा, हिमवन्तस्स पस्सतो।
द्यनदिरियेन सम्पन्नो, कोसलेसु निकेतिनो।।
आदिच्चा नाम गोत्रैन, साकिया नाम जातिया।
तम्हा कुला पब्बजितो (म्हिराज) न कामे अभिवत्थयं।।
(सुत्तनिपात 27, 18-19)

अर्थात् हिमालय के पार्श्वभाग में कोसल देश है, वहाँ धनवीर्य से सम्पन्न कोमल स्वभाव का जानपद राजा है जिसका गोत्र आदित्य है और जाति शाक्य है। मैं उसी कुल से प्रव्रजित हुआ हूँ। मुझे किसी वस्तु की अभिलाषा नहीं है। मुझे न वस्तु कामना है, न भोग की इच्छा है। मैं ज्ञान के लिए प्रव्रजित हुआ हूँ, मैं बुद्ध होऊँगा।

सिद्धार्थ गौतम की बातों को सुनकर राजा बिम्बिसार ने कहा, 'अच्छा महाराज! जाओ। मगर जब बुद्ध होओगे तब मुझसे मिलना।' सिद्धार्थ ने उत्तर में कहा- 'जरूर मिलूँगा।' इसके बाद सिद्धार्थ गौतम जब बुद्धत्व प्राप्ति के बाद पुनः राजगीर गये तो राजा बिम्बिसार ने समारोहपूर्वक उनका सत्कार किया। बिम्बिसार ने बुद्ध संघ के निवास के लिए अपना वेणुवन दान-स्वरूप भगवान् बुद्ध को समर्पित कर दिया। तपस्वियों और श्रमणों के प्रति बिम्बिसार की ऐसी उदार नीति की कीर्ति सर्वत्र विश्रुत थी। राजगीर के कौन-कौन स्थान ऋषियों की तपस्या से पवित्र हो गये थे और भगवान्

बुद्ध से पहले यहाँ कितने तपस्वी निवास कर चुके थे- इसकी एक लम्बी तालिका मझ्झि निकाय के इसिगिलिसुत्तंत में मिलती है।[6] इसमें भगवान् बुद्ध ने अपने पूर्व के ऋषि-मुनियों के नाम गिनाये हैं। इसके अतिरिक्त बुद्धकाल में भी तपस्वी, ऋषि, श्रमण-संघ तथा अनेक सम्प्रदायों का जमावड़ा वहाँ लगा रहता था। इन सारी बातों से मगध की राजधानी गिरिव्रज की विशेषताएँ स्पष्ट हैं। स्वयं भगवान् बुद्ध ने राजगृह की महिमा इन शब्दों में की है[7]-

'रमणीयं आनन्द राजगहं, रमणीयो गिज्झकूटो पब्बतो, रमणीयो गोतमनिग्रोधो, रमणीयो चोरपपातो, रमणीया बेब्भारपस्से सत्तपण्णिगुहा, रमणीया इसिगिलिपस्से कालसिला, रमणीयो सीतवने सप्पसोण्डिक पब्भारो, रमणीयो तपोदारामो, रमणीयो बेलुवने कलन्दकनिवापो, रमणीयं जीवकाबवनं, रमणीयो मद्दकुक्षिस्मिं मृगदायो।'

राजगृह के सम्बन्ध में बौद्ध एवं जैन ग्रन्थों से हमें जो जानकारी मिलती है उनके अनुसार नगर की आबादी बहुत घनी थी। पुष्पलता सुशोभित उद्यानयुक्त अनेक सुघड़, सुन्दर, रमणीक, गगनचुम्बी अट्टालिकाओं का यहाँ बाहुल्य था। अलग-अलग अनेक प्रवेशद्वारों के साथ बने परकोटों के मध्य श्रीसम्पन्न वणिकों तथा नगर के धनकुबेरों के गृह थे। यह नगर वाणिज्य और व्यवसाय का केन्द्र था। राजगीर के वणिक वर्ग सुदूर देशों के साथ व्यापार करने के लिए प्रायः समुद्र-यात्रा भी करते थे।

सुदृढ़ पाषाण प्रकार के परिवेष्टित एवं सुरक्षित गिरिव्रज राजगृह एक नदी तथा नहरों से घिरा था। सन्ध्या काल में नगर-द्वार यदि एक बार बन्द हो जाता था तो वह निर्धारित समय के पूर्व राजा के लिए भी नहीं खुलता था। ऐसा कहा जाता है कि एक बार राजा बिम्बिसार को तपोदा स्नान करते-करते विलम्ब हो गया। सन्ध्या हो गयी। नियमानुसार नगर के सभी प्रवेशद्वार बन्द कर दिये गये। स्नान कर लौटते समय राजा को इसका भान हुआ। नगर के उत्तरी द्वार से उन्हें लौटना था- वे वहाँ तक आये पर द्वार बन्द पाया गया। उन्हें लौटकर वेणवन जाना पड़ा और वहाँ ही रात बितानी पड़ी थी।

बुद्धघोष के अनुसार नगर-द्वारों की संख्या 96 थी। इनमें बड़े द्वार 32 थे तथा छोटे द्वार 64। इस नगर के उत्तर द्वार से राजपथ नालन्दा, पाटलिग्राम तथा गंगा के उत्तर वैशाली आदि स्थानों तक जाता था। अंगदेश (भागलपुर) के चम्पा और राजगृह के पूरब दूसरे-दूसरे स्थानों तक पहुँचने के लिए भी इसी मार्ग से जाना पड़ता था। राजगृह और नालन्दा के बीच रवनुमाता और आम्रयष्टिका (अम्बलट्टिका) गाँव थे। राजगीर के बाद यही पहली चट्टी यात्रियों के विश्राम के लिए थी। इस अम्बलट्टिका में बिम्बिसार का एक सुरम्य उद्यान-भवन था।

पुनः बुद्धघोष के वर्णन से हमें यह जानकारी मिलती है कि राजगृह नगर दो भागों में

विभक्त था। उन दोनों में से एक अन्तःनगर के नाम से प्रसिद्ध था दूसरा बाह्यनगर कहलाता था। लेकिन उनके कथन से यह स्पष्ट नहीं होता कि उनका यह कहना सम्पूर्ण पर्वत परिवेष्टित गिरिव्रज के विषय में है अथवा और कुछ। डॉ. बी.सी. लॉ के अनुमान में बुद्धघोष के अन्तःनगर पर्वत परिवेष्टित[8] गिरिव्रज नगर है तथा बाह्यनगर से उन्होंने पाषाण प्राकार से बाहर पड़ोस के नगर वर्तमान राजगीर के अजातशत्रु का किला का अंचल समझा है। पर, डॉ. आर.सी. मजूमदार का मानना कुछ और है, उसकी पुष्टि ह्वेनसांग के वृतान्त से होती है। इनके मतानुसार पार्वत्यनगर गिरिव्रज राजगृह के दक्षिणी भाग में राजप्रासाद सचिवालय आदि थे। इसके उत्तरी भाग में शेष नगरवासी रहते थे। दोनों के बीच एक ऊँची दीवार थी। हो सकता है दक्षिण के राजभवन वाले भाग को बुद्धघोष ने अन्तरनगर की संज्ञा दी हो और उसके बाहर उत्तर के शेष भाग को बाह्यनगर की। प्राचीन गिरिव्रज को ह्वेनसांग ने कहीं पर राजप्रासाद नगर और कहीं पर पार्वत्यनगर कहकर वर्णन किया है। भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण ने दोनों वर्णन को एक ही माना है। पर यह ठीक नहीं प्रतीत होता है। डॉ. मजूमदार ने ऐसा कहा है कि ह्वेनसांग के अन्तरनगर से प्राचीन गिरिव्रज के दक्षिणी भाग का बोध होता है और पार्वत्यनगर से उसके उत्तरी भाग का जहाँ जनसाधारण का निवास-स्थान रहा होगा। अपनी यात्रा के समय ह्वेनसांग को यह मालूम हुआ कि पर्वत-परिवेष्टित भाग (पुराना किला) गिरिव्रज और उससे उत्तर का भाग राजगृह कहलाता था। ह्वेनसांग के पूर्व एक और चीनी यात्री फाह्यान भारत आया था। उसने भी प्राचीन और अर्वाचीन नगरों का पृथक-पृथक वर्णन किया है। उसे पता चला था कि नया नगर जिसे अजातशत्रु ने बनवाया और बसाया था पर ह्वेनसांग को कुछ लोगों ने बिम्बिसार का और कुछ लोगों ने अजातशत्रु का बनवाया और बसाया हुआ बतलाया। सदियों के बाद ये दोनों चीनी यात्री राजगृह आये थे। अनुश्रुति की स्मृति भी जन-मस्तिष्क में इतनी अवधि के बाद ठीक नहीं रह सकी होगी। इसी से उपर्युक्त अन्तर हुआ होगा। फाह्यान पहले आया था और ह्वेनसांग बाद में। इससे स्पष्ट होता है कि जो बातें स्थानीय जनता के द्वारा मालूम हुईं वे ही मान्य हैं। इस विषय में उपर्युक्त दोनों चीनी यात्रियों के कथन में थोड़ा अन्तर होने का दूसरा भी कारण हो सकता है। ये दोनों ही बिम्बिसार और अजातशत्रु के शासनकाल से कई शताब्दी पीछे क्रमशः मगध और राजगृह आये। उन दोनों के ही यात्राकाल में गिरिव्रज उजाड़ हो चुका था। इसके पूर्व कई बार मगध की राजधानी पाटलिपुत्र गयी और वहाँ से लौटकर पुनः राजगीर आई। राजधानी परिवर्तन के पश्चात् जहाँ राजा का आवास होता था वह राजगृह कहलाता था। जनता में भी भ्रम का यह एक कारण हो सकता है। डॉ. लॉ के अनुसार राजगृह का नये किले का क्षेत्र प्राचीन राजगृह (गिरिव्रज) से संलग्न इसके अति निकट पड़ोस में था। इसके पश्चिम भाग में प्रस्तर निर्मित प्राचीर अब भी विद्यमान है। अनुमानतः नये राजगीर में राजकीय आवास इसी प्राचीर के अन्दर था। पूरब में मिट्टी की सुदृढ़ दीवार शहर पनाह से घिरा भाग जनसाधारण का निवास स्थान रहा होगा, ऐसा मालूम पड़ता है। पर यह भी स्मरणीय है कि प्राचीन बौद्ध साहित्य में नये राजगीर का अलग नाम

नहीं मिलता है। ह्वेनसांग द्वारा सुनी गयी जनश्रुति के आधार पर सहज में अनुमान किया जा सकता है कि यह नया नगर और किला या तो बिम्बिसार के शासनकाल के अन्तिम भाग में प्रस्तुत किये गये अथवा ये अजातशत्रु के राज्यकाल में बने। इस नये नगर के निर्माण के अनेक कारण हो सकते हैं। पहले कहा जा चुका है कि बिम्बिसार का उत्तर के पड़ोसी लिच्छवियों के वैशाली गणतन्त्र से वर्षों तक संघर्ष चला। इस संघर्ष के मूल कारण अजातशत्रु के समय में भी विद्यमान थे। हो सकता है उनके आक्रमण के आतंक से ही रक्षा मोर्चे को सुदृढ़ और सुरक्षित करने के लिए उक्त नवीन नगर एवं कोर्ट का निर्माण हुआ हो। पर्वतवेष्ठित प्राचीन गिरिव्रज नगर में बारम्बार अग्निभय अथवा महामारी आदि का प्रकोप भी नगर के सन्निकट नया वास के कारण हो सकते हैं।

इन ऐतिहासिक तथा पुरातत्त्व के केन्द्रों में पत्थर की दीवार के अतिरिक्त जो कि नगर के चारों ओर निर्मित थी, निम्नलिखित दर्शनीय स्थान आज भी अपने अस्तित्व को बचाये हुए हैं जिनमें वेणुवन, मनियार मठ, पिप्पल नामक पत्थर का महल या पहरा देने का भवन जिसे स्थानीय लोग मचान भी कहते हैं। साथ ही वैभारगिरि के दक्खिनी किनारे पर सोनभद्र गुफा, पिप्पल भवन के समीप जरासन्ध की बैठक, वैभारगिरि की पूर्वी ढाल पर पत्थरों से निर्मित स्थान जो गरम पानी के झरनों से थोड़ी दूर ऊँचाई पर स्थित है और सप्तपर्णी गुफा जिसे प्रथम बौद्ध संगीति का अधिवेशन हुआ था और जिसे इतिहासकारों ने उन सात गुफाओं के अन्तर्गत बताया है जो आदिनाथ के विशाल जैन मन्दिर के नीचे वैभारगिरि की पथरीली ढाल पर अवस्थित है, दर्शनीय है। राजगृह प्राचीन जैन तीर्थ भी है। इस नगर का सम्बन्ध भगवान् आदिनाथ के समय से रहा है। जैन हरिवंश पुराण के 156वें अध्याय के अनुसार आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ की धर्मसभा यहाँ हुई थी अतः राजगृह श्रमण संस्कृति का प्रधान केन्द्र था। जैन साहित्य में प्रसिद्ध मगध सम्राट बिम्बिसार श्रेणिक के नाम से स्मरण किया जाता है। पहले वह बौद्ध धर्मानुयायी था पर राजा चेटक की सबसे छोटी पुत्री चेनला बिम्बिसार की महारानी थी अतः चेनला के ही प्रयास से राजा बिम्बिसार की गणना भगवान् महावीर की धर्मोपदेश सभा के मुख्य श्रोता के रूप में होती है।

हमें मालूम है कि वैभारगिरि पर ही महादेव मन्दिर के निकट एक प्राचीन जैन मन्दिर है। मन्दिर की योजना में एक गर्भगृह ही अभी विद्यमान है जो पूर्वाभिमुख है। मन्दिर के चारों ओर कोठरियों का निर्माण किया गया है जिनमें मूर्तियों के रखने के लिए ताखे बने हुए हैं। ऐसे ताखे गर्भगृह के दीवार में भी बने हैं। जैन धर्म के बीसवें तीर्थंकर भगवान् मुनि सुव्रतनाथ की जन्मभूमि राजगृह थी। यहाँ जैन साधु एवं साध्वियों का निरन्तर आगमन होता रहा। भगवान् महावीर ने राजगृह के विपुलाचल पर ही अपना प्रथम उपदेश दिया था। जैन धर्म के तीन महान केवली गौतमगणधर, सुधर्मास्वामी, जानूस्वामी की भी निर्वाण भूमि राजगृह का विपुलाचल ही है।

वर्तमान राजगीर

पालि भाष्यकार बुद्धघोष ने गिरिव्रज के संस्थापक मान्धाता को बतलाया है। मान्धाता ब्रह्मपुत्र थे। कुश भी ब्रह्मपुत्र थे। यदि ये मान्धाता वही मान्धाता हैं तो गिरिव्रज का अस्तित्व अवश्यमेव प्राचीनतम अनुमानित होगा। बौद्ध-ग्रन्थों में राजगृह की सड़कों, भवनों, उद्यानों, नगर प्राकार आदि की निर्माण-योजना महागोविन्द नामक शिल्पी द्वारा प्रस्तुत बतलायी गयी है। सम्भवतः इस निर्माण योजना का सम्बन्ध अजातशत्रु के नये राजगृह से है। वर्तमान राजगीर एक छोटा-सा गाँव और बाजार है। यह अजातशत्रु द्वारा बसाये गये 'नव प्राचीन नगर' के एक अंश पर बसा है। बाजार में दर्शनीय दिगम्बर जैन मन्दिर, लक्ष्मी-नारायण मन्दिर, बड़ी संगत मन्दिर तथा श्वेताम्बर जैन मन्दिर हैं। यह श्वेताम्बर जैन मन्दिर गुप्तकालीन मन्दिर-निर्माण कला का अनुसरण करते हुए बनाया गया है।

नवप्राचीन राजगीर

ऊपर उल्लेख है कि बिम्बिसार के पुत्र राजा अजातशत्रु ने गिरिव्रज राजगृह से पृथक 'नया राजगृह' नगर बसाया था। यह नया प्राचीन राजगृह दो भागों में विभक्त था- पहला था राजप्रासाद अंचल तथा दूसरा जनसाधारण का निवास स्थान। राजगीर की वर्तमान बस्ती तथा बाजार 'नया प्राचीन राजगृह' के दूसरे भाग के एक अंश पर बसा है। यह दूसरा भाग राजप्रासाद अंचल से सटा पूरब और थोड़ा उत्तर में है। यह जनसाधारण के निवास वाला भाग भी मिट्टी के सुदृढ़ चौड़ा तथा ऊँचा परकोटा (शहरपनाह) से घिरा था। इस नगर परकोटा की ऊपरी दीवारें पत्थर के टुकड़े बैठाकर सुदृढ़ बनायी गयी थीं। शहरपनाह में चारों ओर द्वार थे। नगर का आकार-प्रकार कुछ टेढ़ा-मेढ़ा पंचभूज-सा प्रतीत होता है। उपर्युक्त रक्षा दीवारें समय के प्रभाव से नष्ट हो चुकी हैं पर इनके अवशेष अब भी यत्र-तत्र दृष्टिगत होते हैं।

राजगीर बाजार से सप्तधारा की ओर बढ़ने वाली सड़क रामकृष्ण मठ से आगे सड़क के पश्चिम 'नया राजगीर' के राजप्रासाद क्षेत्र के आगे बुर्जों सहित दुर्ग-प्राचीर का दर्शन होता है। पश्चिमी प्राचीर मिट्टी का बना पर्याप्त चौड़ा एवं ऊँचा है। इसमें द्वार के दोनों ओर पत्थर के बड़े-बड़े टुकड़े लगे हैं। ऐसे स्थानों पर नीचे की सतह में भी पाषाण-खण्ड बैठाये गये हैं। शेष तीनों ओर के प्राचीर वृहत् प्रस्तर खण्डों से, एक के ऊपर एक को रखकर, बिना गारा के सुरखी चिनाई पर प्रस्तुत किये गये हैं। इस दुर्ग प्राचीर में चारों ओर कई स्थानों पर रिक्त जगहें हैं। इन रिक्त स्थानों पर पुरा काल में द्वार थे, ऐसा प्रतीत होता है। पर निश्चय रूप में यह बतलाना कठिन है कि दुर्ग का मुख्य प्रवेश द्वार कौन था। प्राचीर में स्थान-स्थान पर अर्द्धवृत्ताकार गरगज एवं बुर्जे भी बने थे जिनके अवशेष आज भी दृष्टिगत होते हैं।

अपने उत्कर्ष के दिनों में यह राजगीर विविध राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक

उथल-पुथल की क्रीड़ा-स्थली रहा है।

सन्दर्भः

1. वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, अ. 32, श्लोक 7-15
2. महाभारत, सभापर्व, अ. 21, श्लोक9-10
3. महावग्गो, चीवरवन्धको दुत्तियं विसाखा भागवारं 6.11
4. महावग्गो, 1/4/2/15
5. सुत्तनिपात, 27, 18-19
6. मज्झिम निकाय, 2.3.9
7. दीघनिकाय राजगृह महिमा, 6.31.43
8. बी.सी.लॉ, लाइफ एण्ड वर्क ऑफ बुद्धघोष

■

लोकतान्त्रिक सरकारें, सुशासन और मीडिया
(लोककल्याणकारी राज्य तथा विकास के विशेष सन्दर्भ में)

कृष्ण कुमार*

सामान्य सारांश: आज मीडिया आम आदमी की अभिव्यक्ति की आजादी का सहारा लेकर हर तरह के बन्धनों को तोड़ने के लिए तैयार है। वह उन आदर्शों तथा मूल्यों को मानने को भी तैयार नहीं जिनकी बाँह पकड़कर उसने समाज में अपनी विश्वसनीयता बनायी है। जो मीडिया सरकारी नियन्त्रण का सख्त विरोधी है वह स्वयं किसी आत्म-नियन्त्रण के लिए तैयार नहीं है। ऐसे में समाज की भूमिका अपरिहार्य हो जाती है कि वह बाजारवाद मीडिया नीति को राजनीतिक मुद्दा बनाए और मीडिया की सामाजिक जवाबदेही सुनिश्चित करें। मीडिया को भी इन तमाम नकारात्मक पक्षों को त्यागना होगा तथा लोकहित में ही अपने कार्यों का सम्पादन करना होगा तभी सुशासन की स्थापना हो सकती है।

महत्त्वपूर्ण शब्दावली: सुशासन, अनुक्रियात्मकता, पारदर्शिता, जनोन्मुखी, फोर्थ स्टेट, तटस्थता, प्रतिबद्धता, सक्षमता, समावेशी।

सुशासन एक सार्वकालिक, सार्वभौमिक, आदर्शात्मक एवं नागरिक केन्द्रित अवधारणा है। किसी भी देश, काल व परिस्थितियों में यदि सरकार जनकेन्द्रित, समता उन्मुखी एवं संवेदनशील है तो उसके शासन को 'सुशासन' कहा जाता है। वास्तव में यह कहा जा सकता है कि 'सुशासन' शब्द से ही इसका अर्थ स्पष्ट हो जाता है। हाँ, इसकी कल्पना में भिन्नता हो सकती है किन्तु मूल कल्पना में यह शत-प्रतिशत लोकहित को समर्पित एक ऐसी विचारधारा है, जिसमें किसी भी लोकतन्त्र के अधिक अर्थवान व समृद्ध होने की प्रबल सम्भावना होती है। आवश्यकता सिर्फ इस बात की है कि इसके लिए हर वह कदम उठाया जाए, जो सरकार व प्रशासन की क्षमताएँ बढ़ाकर सुशासन की स्थापना करने में सहायक सिद्ध हो। मीडिया में सुशासन के निहितार्थों को वास्तविकता में बदलने की पर्याप्त क्षमता है।

मीडिया, प्रशिक्षित विशेषज्ञों द्वारा वृहद् जन-समूह को विभिन्न सूचनाओं से अवगत कराने का माध्यम है, जिसमें राष्ट्रीय समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ, रेडियो, न्यूज चैनल, सोशल साइटें आदि शामिल हैं। अधिकतर लोग लगभग सभी सूचनाएँ मीडिया से ही प्राप्त करते हैं। सतत् व सफल

*असि. प्रोफेसर, राजनीतिशास्त्र, महाराणा प्रताप पी.जी. कॉलेज, जंगल धूसड़, गोरखपुर

लोकतन्त्र के लिए स्वच्छ व निष्पक्ष चुनावों, स्वतन्त्र न्यायपालिका, सशक्त लोकतान्त्रिक संस्थाओं के साथ-साथ स्वतन्त्र गतिशील व बहुआयामी मीडिया भी नितान्त आवश्यक है। सुशासन के प्रमुख तत्त्वों, विभिन्न मुद्दों व संस्थाओं के बारे में लोगों के विचारों को प्रभावित करके एक आम राय बनाने में मीडिया अग्रणी भूमिका का निर्वहन करता है।[1]

सुशासन के प्रमुख तत्त्व हैं- सक्षमता एवं प्रभावशीलता, पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, जन-सहभागिता, अनुक्रियात्मकता, आम सहमति, समावेशी तथा विधि का शासन। इन सभी तत्त्वों के निहितार्थों को वास्तविकता में बदलने की मीडिया में पर्याप्त क्षमता है। साथ ही इन सभी तत्त्वों को जनोन्मुखी बनाने तथा लोकतान्त्रिक स्वरूप प्रदान करने में मीडिया की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

सक्षमता व प्रभावशीलता, सुशासन का अहम तत्त्व है। मीडिया शासन के कार्यों, योजनाओं व कार्यक्रमों को सरल, स्पष्ट एवं सामान्य व्यक्तियों की समझ में आने वाली भाषा में विश्लेषित करता है। किसी भी योजना व कार्यक्रमों की सार्थकता इस बात पर निर्भर करती है कि वह सभी व्यक्तियों की समझ में आए। व्यक्तियों के समर्थन तथा स्वीकार्यता से शासन की वैधानिकता व सक्षमता में वृद्धि होती है।[2]

मीडिया द्वारा की गई रिपोर्टिंग के आधार पर किसी भी योजना या कार्यक्रम की जनता द्वारा स्वीकार्यता, सभी लोगों तक पहुँच, सफलता, असफलता तथा बाधाओं का पता लगाकर उनमें सुधार किया जा सकता है ताकि उस योजना व कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया जा सके।

पारदर्शिता को सुशासन का पर्याय माना जा सकता है। विभिन्न प्रशासनिक प्रक्रियाओं को लोगों के सामने लाना, लोकसेवाओं हेतु लिए जा रहे शुल्क की जानकारी प्रसारित करना, योजनाओं-परियोजनाओं को समझने में आमजन को सक्षम बनाना इत्यादि कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण योगदानों द्वारा मीडिया पारदर्शिता को सुनिश्चित करता है। हाल ही में सजग पत्रकारिता की बदौलत ही करोड़ों रुपयों के घोटालों को उजागर किया जा सका है।[3]

वर्ष 2005 में 'सूचना का अधिकार अधिनियम' पारित होने के बाद अब लोगों को सशक्त माध्यम मिल गया है। सूचना के अधिकार को विभिन्न रूपों में कार्यान्वित करने के मुद्दे को 'पब्लिक एजेण्डा' में शामिल करने का मुद्दा मीडिया ने ही उठाया है। अतः सूचना का अधिकार अन्य नागरिक अधिकारों की प्राप्ति सुनिश्चित कर रहा है जो सुशासन की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम है।

उत्तरदायित्व के बिना सुशासन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। इसके निर्धारण में मीडिया का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। जन पहरेदार के रूप में कार्य करते हुए मीडिया राजनीतिज्ञों व प्रशासकों द्वारा शक्ति के दुरुपयोग की सम्भावना को नियन्त्रण में रखता है। सरकारी नीतियों को जनहित के दृष्टिकोण से अन्वेषित व विश्लेषित करके पर्याप्त छानबीन द्वारा उनकी सार्थकता को

उजागर करने का अहम कार्य भी मीडिया द्वारा ही किया जाता है। मीडिया सरकारी कर्मचारियों के कार्य-निष्पादन एवं उन्हें प्रदान की गयी शक्तियों के प्रयोग के ढंग का सन्तोषजनक लेखा-जोखा जनता के सामने प्रस्तुत करके गलत और मनमाने प्रशासनिक कार्यों को रोकता है। विभिन्न प्रशासनिक गतिविधियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करके प्रशासन को उत्तरदायित्वपूर्ण बनाने का कार्य भी मीडिया सहजता से करता है।[4]

सुशासन मूलतः एक नागरिक केन्द्रित संकल्पना है तथा जन-सहभागिता इसका सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। मीडिया अपने विभिन्न स्वरूपों के साथ देश के विभिन्न भागों में विकास कार्यों में जन-सहभागिता सुनिश्चित करने हेतु निरन्तर प्रयासरत है। मीडिया आम आदमी की सरकारी क्रियाओं, योजनाओं व कार्यक्रमों से सम्बन्धित समझ बढ़ाता है। सुशासन का अर्थ है- 'लोगों के लिए शासन के स्थान पर लोगों के साथ शासन सुनिश्चित करना, जिसमें लोग स्वविकास प्राप्ति हेतु विकास की रणनीति स्वयं निर्धारित कर सकें।' इस दिशा में देश में 73वाँ एवं 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया गया है। ग्रामीण गणतन्त्र व सहगामी लोकतन्त्र की उम्मीद के साथ पारित इन अधिनियमों को वास्तविकता के धरातल पर उतारने में मीडिया एक सक्रिय माध्यम साबित हो रहा है।

शासन व विकास की प्रक्रिया में नागरिक समाज, गैर-सरकारी संगठनों, निजी क्षेत्र, आम आदमी व बुद्धिजीवियों की सहभागिता अति आवश्यक है। वह मीडिया ही है जो सुशासन के लिए सकारात्मक वातावरण का निर्माण करके सभी भागीदारों को शासन की निर्णय-निर्माण-प्रक्रिया में शामिल करवाता है।[5]

अनुक्रियात्मकता, सुशासन की अवधारणा का महत्त्वपूर्ण अवयव है। निष्पक्ष व सचेष्ट मीडिया द्वारा की गयी जनहितकारी रिपोर्टिंग के चलते सरकार तक नागरिकों की सहज पहुँच सुनिश्चित होती है। मीडिया के निरन्तर दखल से न केवल नागरिकों व सरकार के बीच दूरी कम हो रही है बल्कि नागरिकों व सरकार के मध्य अन्तर्क्रिया भी बढ़ रही है। मीडिया द्वारा उठाए गए लोक महत्त्व के मुद्दों पर राजनीतिज्ञों व लोगों का ध्यान आकर्षित होता है। इस प्रकार मीडिया द्वारा बने जन-दबाव के चलते शासन द्वारा उन मुद्दों पर त्वरित प्रतिक्रिया जतायी जाती है। मीडिया द्वारा विभिन्न समस्याओं को सामने लाकर सरकार को शीघ्र प्रतिक्रिया व उपयुक्त समाधान के लिए प्रेरित किया जाता है।

सुशासन की अन्य महत्त्वपूर्ण पहलों में आम सहमति, समावेशी तथा विधि का शासन स्थापित करना शामिल है। सुशासन की इन सभी पहलों को मीडिया द्वारा सकारात्मक रूप से प्रभावित किया जाता है। निष्पक्ष व तटस्थ पत्रकारिता, सटीक सूचना व जन-संवाद की स्थापना, विभिन्न लोकहितकारी मुद्दों से सम्बन्धित कार्यक्रम, विभिन्न भागीदारों की बैठकों व सेमिनारों, नीति

व सलाहकारी विश्लेषणात्मक वार्तालाप, नागरिक पत्रकारिता, सामुदायिक रेडियो, कॉल इन प्रोग्राम, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग जैसे प्लेटफॉर्म उपलब्ध करवाकर मीडिया समतावादी व समावेशी शासन की स्थापना में अपना योगदान देता है। मूलभूत सुविधाओं यथा- शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास व बिजली-पानी से सम्बन्धित मुद्दों को अपनी सुर्खियाँ बनाने वाला मीडिया अपवादों के समय लाइफ लाइन कार्यक्रमों का संचालन करके राष्ट्र निर्माण में अपनी अहम भूमिका निभाता है।[6]

सरकारी नीतियों पर नियन्त्रण व सन्तुलन के साथ-साथ विधिक व नीतिगत सुधारों के द्वारा नागरिक अधिकारों की रक्षा करना भी मीडिया के सकारात्मक प्रयासों का हिस्सा है। 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम', 'घरेलू हिंसा रोकथाम अधिनियम' इत्यादि के निर्माण तथा फास्ट ट्रैक अदालतों, लोक अदालतों व ग्राम न्यायालयों की स्थापना में मीडिया का योगदान सराहनीय रहा है। स्थानीय विकास में लोगों की भागीदारी तथा लोगों की राजनीति में दिलचस्पी बढ़ाने तथा स्थानीय नीति-निर्णय में भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु आम जन को सक्षम बनाने में मीडिया की भूमिका अविस्मरणीय रही है।

मीडिया के इनत माम योगदानों के कारण एडमण्ड बुर्के ने इसे 'फोर्थ स्टेट' अर्थात् लोकतन्त्र का 'चतुर्थ स्तम्भ' की संज्ञा दी है। मीडिया को 'राजनीति की तन्त्रिका' भी कहा जाता है, क्योंकि यह चुनावों के समय अहम मुद्दों का सकारात्मक एवं नकारात्मक विश्लेषण करने, आम जन को जागरूक बनाने, लोक संवाद को बढ़ावा देकर लोगों की राय का निर्माण करने के साथ-साथ चुनावों के मॉनीटरिंग द्वारा लोकतान्त्रिक संस्कृति का पोषण करने का कार्य भी करता है। वर्तमान में फेसबुक एवं ट्विटर जैसे सोशल मीडिया के जरिए दो-तरफा संवाद द्वारा जन-नीतियों के निर्माण व क्रियान्वयन में जनता की भागीदारी तेजी से बढ़ी है।

इस प्रकार सुशासन में मीडिया का योगदान सराहनीय एवं महत्त्वपूर्ण है परन्तु इसके साथ ही उसके कुछ नकारात्मक पक्ष भी शामिल हैं। मीडिया का यह पक्ष सिक्के का दूसरा पहलू है। इसमें पेड न्यूज, सनसनीखेज, राज्य-नियन्त्रित खबरें, राजनीतिक पूर्वाग्रहयुक्त खबरें और लाभ की प्रवृत्ति जैसी बहुत सी कमियाँ शामिल हैं।[7]

विगत दशकों में भूमण्डलीकरण की तेजी से चली आ रही प्रक्रिया में भारतीय मीडिया के स्वरूप और चरित्र में गुणात्मक बदलाव आया है। जो मीडिया पहले देशी सरोकारों तथा राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत थी वह अब विदेशी पूँजी तथा लाभ के लोभ में सारी मर्यादाएँ तोड़ देने को उद्यत है। इसके साथ मीडिया विज्ञापनबाजी से प्रभावित हो रहा है। इसका उद्देश्य दर्शकों-पाठकों के एक बड़े समूह को प्रभावित कर विज्ञापनदाता कम्पनियों के अनुकूल बना देना है।[8]

जाने-माने पत्रकार पी. साईनथ ने अपने एक व्याख्यान में बताया कि, ''जब मुम्बई में 'लैक्मे फैशन वीक' में कपास से बने सूती वस्त्रों का प्रदर्शन किया जा रहा था, लगभग उसी समय

विदर्भ में किसानों की आत्महत्या का दौर चला था। इन दोनों घटनाओं की सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि फैशन वीक का कवरेज करने के लिए जहाँ 512 मान्यता प्राप्त पत्रकार पूरे हफ्ते मुम्बई में डटे रहे, वहीं किसानों की आत्महत्या की घटना को कवर करने के लिए बमुश्किल पत्रकार ही पूरे देश से वहाँ पहुँच पाए।'' यह घटना मीडिया के गैर-जिम्मेदाराना व्यवहार तथा संवेदनहीनता को दर्शाती है।

आज मीडिया आम आदमी की अभिव्यक्ति की आजादी का सहारा लेकर हर तरह के बन्धनों को तोड़ने के लिए तैयार है। वह उन आदर्शों तथा मूल्यों को मानने को भी तैयार नहीं जिनकी बाँह पकड़कर उसने समाज में अपनी विश्वसनीयता बनायी है। जो मीडिया सरकारी नियन्त्रण का सख्त विरोधी है वह स्वयं किसी आत्म-नियन्त्रण के लिए तैयार नहीं है। ऐसे में समाज की भूमिका अपरिहार्य हो जाती है कि वह बाजारवाद मीडिया नीति को राजनीतिक मुद्दा बनाए और मीडिया की सामाजिक जवाबदेही सुनिश्चित करे। मीडिया को भी इन तमाम नकारात्मक पक्षों को त्यागना होगा तथा लोकहित में ही अपने कार्यों का सम्पादन करना होगा तभी सुशासन की स्थापना हो सकती है।

इस प्रकार सभी नकारात्मक पक्षों से दूर रहकर स्वतन्त्र, निष्पक्ष, तटस्थ व बहु-आयामी मीडिया को जनहित में कार्य करते हुए पारदर्शिता व उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करके, सहभागिता व कानून के शासन को बढ़ावा देकर तथा सामाजिक असमानता तथा बुराइयों के खिलाफ समर्थन जुटाकर सुशासन की स्थापना में अपनी अहम भूमिका अदा करनी होगी। राष्ट्र निर्माण में निर्णायक भूमिका अदा करने के लिए मीडिया को स्वयं की आचार-संहिता का निर्माण व पालन करके संगठित व सामूहिक प्रयास द्वारा सतत व समावेशी विकास को सुशासन द्वारा प्राप्त करने का प्रयास करना होगा। तभी स्वस्थ, सशक्त और खुशहाल राष्ट्र का निर्माण सुनिश्चित होगा।

सन्दर्भ-स्रोतः

1. खान, रशीउद्दीन, 'लोकतन्त्र', एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली, 2000
2. लक्ष्मीकान्त, एम., 'भारतीय राजव्यवस्था', पंचम संस्करण, 2017
3. इकॉनॉमिक पॉलिटिकल वीकली
4. 'योजना', मासिक पत्रिका, प्रकाशन विभाग
5. राष्ट्रीय सहारा, साप्ताहिक 'हस्तक्षेप'
6. इण्डिया टुडे साप्ताहिक
7. इण्डिया टुडे, पाक्षिक पत्रिका, हिन्दी
8. फ्रण्ट लाइन, पाक्षिक पत्रिका, अंग्रेजी

Legal Protection of Right to Food in India

Alok Kumar & T.N. Mishra*

Abstract: India has been Ranked 102 of 117 countries in the Global hunger index 2019, behind its neighbours Nepal, Pakistan and Bangladesh. Seventeen countries, including Belarus, Ukraine, Turkey ,Cuba and Kuwait, shared the top rank with Global hunger index score of less than five, the website of the Global hunger index that track hunger and malnutrition said. The report prepared jointly by Irish and agency concern worldwide and German organisation welt hunger hilfe turned the level of Hunger in India "serious". Neighbouring countries like Nepal (73), Srilanka (66), Bangladesh (88), Myanmar (69) and Pakistan (94) also in the serious hunger category but have fared better at feeding its citizens then India according to the report.

Keywords: GHI- Global hunger index, Undernutrition, Starvation, Undernourishment, The world food summit 1996, Contract labour (Regulation and Abolition) Act 1970.

Introduction

While extreme hunger is always there in India, Natural disasters, such as floods and droughts bring more hunger because so many of the people are vulnerable living at the age of hunger all the time. Like many other developing countries India has a wide variety of feeding programs, food subsidies and other sorts of scheme to alleviate hunger but somehow this programs are never quite enough.

According to GHI 2019 India has been ranked 102 of 117 countries'. The GHI score is calculated on four indicators under nourishment, child wasting the share children under the age of five who are wasted (that is who have low weight for their weight reflecting a equate undernutrition) child stunting children under age of their age reflecting chronic undernutrition and child morality the morality rate of children under the age of five.[1]

In the comparison, however India has shown improvement in other indicators such as the under five motality rate, prevalence of stunting among children and prevalance of undernourishment, owing to inadequate food the report said. The international understanding of what Constitutes food security is elaborated in the plan of action of the world food summit (1996), which states that "food security at the individual household national, regional and global level is achieved when all people at all times have physical and economic access to

*Assistant professor-Deptt. Of Law, DDU Gorakhpur University, Gorakhpur.

sufficient safe and nutritious food to meet there dietary needs and food preference for an active and healthy life".

The council of food and agricultural organisation (FAO) of the United Nations, where India is also a signatory nation define the right to food as "the right of everyone to have physical and economic access at all times to adequate food or means for its procurments".

Over the past decade, a series of event in India have brought the question of food security into the sharp focus. Vast famine- affected areas versus surplus production and stock of grains, The impact of globalisation and World Trade organisation laws on agriculture and farmers, the media's spotlight on starvation deaths and finally the Supreme Court of India's strong reaction to the plight of the hungry all make a case for recognising the right to food.

Accordingly in 1950 India adopted a very progressive Constitution aimed at insuring all its citizens social economic and political justice equality and dignity therefore any law to be valid in Indian territory must be within the Constitutional framework like in many countries of the world the right to food in Indian Constitution is not recognised as a fundamental rights therefore there is no Constitutional mandate to have a claim over it.

Regarding right to food one has to look for relevance in article 21 of the Constitution in titled "protection of life and personal liberty"[2] and Article 47 "duty of the state to raise the level of nutrition and the standard of living …"[3] as well as in judicial intervention of the supreme court and various Acts ,which have comulatively strengthened the right to food in India. Knowing the constitutional and legislative framework in India regarding the right to food is crucial for identifying right to food violations and supporting victim in realising their right to food.

Position in India

The relevant articles of the Constitution all as follows:

Article 21: No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law.

Article 39(a): The state shall… direct its policy towards securing that the citizen men and women equality have the right to an adequate means of livelihood.

Article 47: The state shall regard the raising of the level of nutrition and the standard of living of its people and the improvement of public health as among its primary duties.

Fifty percent of the world's Hunger live in India with 200 million food insecure people in 2008 according to the FAO.[4]

In 2001 India's Constitutional court recognised the right to food transforming policy

choices into enforceable rights.[5] The case started with written petition submitted to the Supreme Court in April 2001 by the people's union for civil Liberties Rajasthan leading to prolonged public interest litigation. Moreover a larger public right to food campaign in founded.[6]

In 2011 the national food security Bill 2011 popularly known as right to food bill was proposed. In 2013 national food security Act 2013 was passed by the Indian parliament. The Act guarantees subsidised food to 50% of the urban population and 75% of the rural population. The proposed legislation would provide of rice wheat and coarse grain at very low prices to priority households similar to below poverty line families. Distribution will be through the current public distribution system, a government run ration and fair price shops.[7]

The role of judiciary in enforcing the right to food

In India the right to food has been seen as an implication of the fundamental right to life in Article 21 of the Indian Constitution. The Supreme Court has explicitly stated (several times) that the right to life should be interpreted as a right to live with human dignity, which includes the right to food and other basic necessities.

In Chameli Singh vs State of U.P.[8] the supreme court held that right to life guaranteed in any civilized society Implies the right to food, water ,disant environment, education, medical care and shelter.

In Badhua Mukti morcha vs union of India,[9] the supreme court held that right to life with human dignity must include protection of health.

In Kishan Patnaik vs State of Orissa,[10] petitioner wrote a letter to the supreme court bringing to its notice the extreme poverty as the people of Kalahandi were hundred dying due to starvation and several people were forced to sell their children the right to food in on outcome of PIL.

In Air India statutory corporation etc. v. United labour union and others[11]- the supreme court held that the enforcement of the provisions to establish canteen in every establishment under section 16 of Contract Labour (Regulation and Abolition) Act 1970 is to supply food to the work- -man at the subsidized rates as it is right to food a basic human right.

In Shantistar builders v. Narayan khimalal Totame[12] - the supreme court held that the basic needs of man have traditionally been accepted to be three- food, clothing and shelter.

In April 2001 of writ petition was filled in the supreme court of India by the people union for civil liberties[13] to seek legal enforcement of the right to force this case popularly known as the right to food case has since become a rallying point for trade unions, activists, grassroots organisation and NGOs to make the right to food a justiciable right here a primary problem was Maladministration:the court found that about half of the food subsidy was being spent on holding excess stocks.

Conclusion

The study about this right shows that the root cause of the world hunger is poverty apart from other causes so it is indeed very essential that to eliminate hunger poverty should be addressed at the first place because even if the level availability of food grain is sufficient then also due to lack of purchasing power poor people cannot access to food. The major problem relates to economic access to food self sufficiency has increased at the national level but not at the household level.

In order to protect the country from hunger and malnutrition to human rights the government has taken a major step by implementing the food security Act 2013. This is a welcome initiative but there are many such questions which the government has no answer. One big question is how to protect the nutritional security of food safety to protect human rights. This law provides for roughly 67% of the population of the country at an affordable rate of wheat, rice and coarse grains.

Today the right to food is Indeed justiciable and can be adjudicated by a court of law but notwithstanding these encouraging development at the national and international levels a great deal remains to be done to ensure the justiciability of the right to food.

References

1. Global Hunger Index 2019.
2. Constitution of India, Article 21.
3. Constitution of India, Article 47.
4. Food and Agricultural Organisation, Baski 2012.
5. Right to food campaign, 2012.
6. Special rapporteur on the Right to food, 2010a.
7. Special Rapporteur on the Right to food, 2008, para 67.
8. (1996) 2 SCC 549.
9. AIR 1984 SC 802.
10. AIR 1989 SC 677.
11. (1992) 1 SCC 695.
12. AIR 1990 SC 630.
13. PUCL V. Union of India Air 2001.

■

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवीय मूल्यों की प्रासंगिकताः एक दृष्टि

मनीष कुमार*

सारांशः- आज मानव-जीवन के लिए आवश्यक मूल्यों का ह्रास हो रहा है और मूल्यों का स्थान मानव-जीवन से गिर रहा है। वर्तमान समय में शिक्षा में ऐसे परिवर्तन की जरूरत है जिससे सामाजिक और नैतिक मूल्यों के विकास में शिक्षा एक सशक्त साधन बन सके।

किसी भी राष्ट्र का निर्माण उसके नागरिक के मानवीय मूल्य पर निर्भर करता है। मानव मूल्य एक ऐसी आचरण-संहिता या सद्गुण समूह है, जिसे अपने संस्कारों एवं पर्यावरण के माध्यम से अपनाकर मनुष्य अपने निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपनी जीवन पद्धति का निर्माण करता है और इसके साथ अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। इसमें मनुष्य की धारणाएँ, विचार, विश्वास, मनोवृत्ति, आस्था आदि समेकित होते हैं। उपर्युक्त मानव मूल्य रूपी अलंकरण से लिप्त नागरिक एक स्वस्थ एवं सुदृढ़-शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। एक ऐसा राष्ट्र जो आत्मबल से भरपूर, विश्व को मार्ग प्रदर्शित करने में समर्थवान सिद्ध हो सकेगा।

हमारा समाज सांस्कृतिक रूप से बहुआयामी है, इसलिए शिक्षा के द्वारा उन सार्वजनिक और शाश्वत मूल्यों का विकास होना चाहिए जो हमारे लोगों को एकता की ओर ले जा सकें। इन मूल्यों से धार्मिक अन्धविश्वास, कट्टरता, असहिष्णुता, हिंसा और भाग्यवाद का अन्त करने में सहायता मिले। वैज्ञानिक दृष्टिकोण, समानता, पर्यावरण संरक्षण, प्रजातन्त्र, स्वतन्त्रता, बन्धुत्व, समाजवाद तथा धर्मनिरपेक्षता आदि मूल्यों की शिक्षा सभी स्तरों के लिए आवश्यक है।

बीज शब्दः मूल्य, ध्यान, धर्म, संस्कृति, समाज, कला एवं प्रतिबद्धता।

मनुष्य जीवनपर्यन्त सीखता रहता है तथा उसके अनुभवों में निरन्तर अभिवृद्धि होती रहती है। जैसे-जैसे वह अधिकाधिक सीखता जाता है तथा परिपक्व होता है वह ऐसे अनुभव भी प्राप्त करता है जो उसके व्यवहार को दिशा निर्देशित करते हैं। ये निर्देशक जीवन को दिशा प्रदान करते हैं तथा उसके अनुभवों में वृद्धि करते हैं। इन्हें मूल्य कहा जा सकता है। मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता प्रकट करता है। यह एक आदर्श या इच्छा है जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता है।

*सहायक आचार्य, वाणिज्य विभाग, बहादुर यादव मेमोरियल पी.जी. कालेज, देवरिया

सी.वी. गुड के अनुसार "मूल्य वह चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व सौन्दर्य बोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है।"[१] लगभग सभी विचारक मूल्यों मे अभीष्ट चरित्र को स्वीकार करते है। विभा सिंह पटेल के अनुसार "कुछ निश्चित जीवन आदर्शों को मानदण्ड के रूप में लिया जाता है और इन्ही मानदण्डों या कसौटी को हम मानव-मूल्य कहते हैं।"

मानवीय मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में कुछ प्रमुख विचारकों के दृष्टिकोण

मानव-जीवन आज विकास और विनाश की जिन सम्भावनाओं व आशंकाओं से गर्भित है, उससे यह स्पष्ट है कि आगामी शताब्दियों में मानव अन्तरिक्षभेदी अतिमानव के रूप में विकास भी कर सकता है और अपनी बनायी विनाशकारी शक्तियों का ग्रास बन कर फिर से वास्तविक जीवन-वृत्ति की ओर लौटने पर विवश भी हो सकता है।" इस प्रकार यह सम्भव है कि विकास के रास्ते पर चलते हुए इस विकास की आड़ में मानव पतन के रास्ते पर अग्रसर है। इस भटकाव से मानव को सिर्फ एक ही चीज बचा सकती है वह मानव-मूल्य है।[2]

* **विवेकानन्द** "शिक्षा मनुष्य के अन्दर सन्निहित पूर्णता का प्रदर्शन है।" यहाँ स्वामी विवेकानन्द का यह विचार है कि ज्ञान मनुष्य के भीतर ही है, जिसे वह शिक्षा के माध्यम से प्राप्त करता है।

* **डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन** का यह विचार है कि "शिक्षा को मनुष्य और समाज का निर्माण करना चाहिए।" इस प्रकार शिक्षा ऐसी होना चाहिए जो (एक राष्ट्र के सन्दर्भ में) सर्वप्रथम एक स्वस्थ नागरिक (मनुष्य) का निर्माण करे और उसके बाद एक राष्ट्र (समाज) का। "शिक्षा का उद्देश्य पूर्ण मानव का विकास है।"

* पाश्चात्य विचारक **पेंथर** के कहे गये शब्द के अन्तर्गत में दृढ़ इच्छा-शक्ति को जागृत करता है, परन्तु यह इच्छा-शक्ति राष्ट्र-निर्माण हेतु सकारात्मक तभी सिद्ध हो सकती है जब मानव मूल्यों के महत्त्व को समझे।

* महान् मनीषी एवं विचारक **ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ महाराज** ने मानवीय मूल्यों पर विशेष बल दिया। इस मनीषी ने शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में धर्म के सार्वभौम सिद्धान्तों एवं आध्यात्मिक आदर्शों को विशेष स्थान दिलाने का भी विशेष आग्रह किया। उनका कहना था कि शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में निर्धारित पुस्तकों में धर्म के सार्वभौम सिद्धान्तों, मानव जीवन के आध्यात्मिक आदर्शों तथा विशेष रूप से भारतवर्ष के सभी धर्मों के सच्चे सन्त-महात्माओं के जीवन और शिक्षाओं से सम्बद्ध पाठ समाविष्ट होने चाहिए। सभी स्तर की शैक्षणिक संस्थाओं में अध्ययन करने वाले अध्यापक छात्र-छात्राओं के व्यक्तित्व में नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास पर बल दिया।[3]

* **राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ** जी महाराज का मानवीय मूल्यों के सम्बन्ध में कार्य सराहनीय रहा है। इन्होंने राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में अतुलनीय गति देने का कार्य किया है। इनके द्वारा स्थापित शिक्षण-संस्थानों में मूल्य आधारित शिक्षा की झलक देखने को मिलती है।[4]

मूल्यों का सापेक्षिक महत्त्वः

मूल्य संविधान के किसी नियम द्वारा विकसित नहीं किये जा सकते। सरकार द्वारा कठोर निर्णय लेकर मूल्य विकसित करना सम्भव नहीं है। प्रत्येक समाज एवं राष्ट्र के विकास में शिक्षा का विशेष महत्त्व है। इसलिए प्रत्येक देश मानवीय संसाधन को श्रेष्ठ, योग्य एवं प्रशिक्षित बनाने के लिए शिक्षा पर आश्रित होता है। सही शिक्षा का अर्थ केवल साक्षरता या योग्यता लेना नहीं है बल्कि अहम् का विनाश, मानवतावादी बनना, सत्य को पाना और ईश्वर को लक्ष्य मानकर जीवन में आगे बढ़ना है। शिक्षा का क्षेत्र इतना व्यापक है कि जीवन का प्रत्येक पहलू कहीं न कहीं इससे जुड़ता हुआ प्रतीत होता है। शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर जब चर्चा होती है तो अनेक मंचों से एक स्वर मुखरित होता है जिसमें मूल्य-शिक्षा या मूल्यों की बात की जाती है। हालाँकि इस पर नजरिये अलग-अलग हैं परन्तु एक बात पर तो सभी सहमत हैं कि हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मानवीय तथा संवैधानिक मूल्यों को यथास्थान दिए जाने की आवश्यकता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति से समाज और समाज से व्यक्ति का अस्तित्व जुड़ा हुआ है। व्यक्ति के आदर्शों, मूल्यों में बदलाव से समाज प्रभावित होता है। वहीं दूसरी ओर समाज के अन्दर मूल्यों के परिवर्तन से व्यक्ति के मूल्यों में भी परिवर्तन आ जाते हैं। ज्ञानार्जन प्रक्रिया में कुछ ऐसे ज्ञान तत्त्व की कमी रह जाती है जिसका सीधा सम्बन्ध व्यक्तित्व विकास के साथ-साथ सम्पूर्ण मानव समाज से जुड़ा होता है। आज मनुष्य को विशिष्ट दिशा में अग्रसर करने में सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली अप्रासंगिक, दिशाहीन एवं निरर्थक सिद्ध हो रही है। ज्ञान का स्थान सूचना एवं शिक्षा का स्थान परीक्षा ने ले लिया है। परिणामस्वरूप, आज विश्व अत्यधिक ज्ञान-विस्तार से पीड़ित है। केवल विषयों के ज्ञान से शिक्षा का लक्ष्य पूरा नहीं हो सकता है। ज्ञान के विस्तार के अनुपात में हमारे समाज में जीवन-मूल्य विकसित नहीं हो पाए हैं और वर्तमान व्यवस्था में यही दुख का मूल कारण है। शिक्षा और मानवीय मूल्यों में परस्पर सम्बद्धता का अभाव दिखाई पड़ रहा है।

जीवन-मूल्यों के विश्वव्यापी क्षरण के संकट में हमें निश्चित रूप से मानवीय मूल्यों की शिक्षा की सोद्देश्यता को स्वीकार करना ही होगा क्योंकि शिक्षा स्वयं में एक मूल्य है। शिक्षा संस्कार के लिए है। "विद्या ददाति विनयम्" या "श्रद्धावान लभते ज्ञानम्" ये उक्तियाँ सुसंस्कृत और सुशिक्षित मनुष्य की पहचान है। इस सन्दर्भ में सर्वप्रथम 'मूल्य' शब्द में निहित अर्थ को स्पष्ट करना आवश्यक होगा। मूल्य मूलतः नैतिक प्रत्यय है। यह ऐसा आधार है जो हमें उचित एवं

अनुचित का बोध कराते हैं। मूल्य को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि मूल्य नियामक मानदण्ड हैं जिनके आधार पर मानव की चुनाव प्रक्रिया प्रभावित होती है तथा वे अपने प्रत्यक्षीकरण के अनुरूप विभिन्न क्रियाओं का चुनाव करते हैं।

सहज शब्दों में, मूल्य कोई नई वस्तु या विचार नहीं है बल्कि सुदृढ़ आत्मिक इच्छाशक्ति है। हम जिसे सम्मान देते हैं, चाहते हैं या महत्त्वपूर्ण समझते हैं, वही मूल्य है। यह मानवीय संरचना की अभिप्रेरणात्मक विधा है। यह हमारे व्यवहार के लिए प्रेरणास्रोत है। व्यक्ति का सम्मान और उसकी सामाजिक उपयोगिता तथा समाज की प्रगति में व्यक्ति की सक्रियता और सार्थक योगदान को 'मूल्य' ही निश्चित करते हैं। यह शिक्षा का केन्द्रीय मर्म है। आज इसका लोप हो रहा है। मूल्यों के अभाव में शिक्षण कार्य की रोचकता समाप्त हो रही है। परिणामस्वरूप, शिक्षार्थी दिग्भ्रमित और अध्यापक असमंजस में दिखाई पड़ रहे हैं।[5]

आज की शिक्षा मनुष्य को मनुष्य होने से ही वंचित कर रही है। वह व्यक्ति को वे तमाम चीजें सिखाती है जो मनुष्यता के लिए घातक हैं; जैसे- प्रतियोगिता, तुलना, महत्त्वाकाँक्षा, अहंकार, परिग्रह, स्वार्थपरता आदि। ऐसा मालूम पड़ता है कि मनुष्य की बेहतरी के लिए किया जाने वाला उपक्रम ही उसे बदतर बनाये जा रहा है। भारतीय समाज और शिक्षा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रभाव और दबाव में जकड़ती जा रही है। हमें पुनः नवउपनिवेशवादी एवं नवसाम्राज्यवादी प्रवृत्तियों के घेरे की ओर बढ़कर वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में वैसी मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता है जो नागरिकता की स्वधारणा का बोध कराते हुए विश्व-बन्धुत्व की भावना से ओत-प्रोत विश्वव्यापी शान्तिपूर्ण संस्कृति के विकास में सहायक हो। क्षत-विक्षत होती सभ्यता की रक्षा के लिए भी मानवीय मूल्यों की आवश्यकता है।[6] आज आध्यात्मिक और मानवतावादी मूल्यों से सिंचित समाज ही उसकी रक्षा कर सकता है। शिक्षा के सामाजिक दायित्वों की पूर्ति तभी सम्भव होगी जब वह व्यक्ति में मानवीय मूल्यों और सामाजिक कार्यों को करने के लिए प्रतिबद्धता विकसित करे। वर्तमान विश्व की समस्याओं के समाधान की दृष्टि से शिक्षा को मूल्यों से जोड़ा जाना आवश्यक है।

निष्कर्ष:

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान परिदृश्य में जो मानवीय मूल्यों का ह्रास हो रहा है, उसका मुख्य कारण शिक्षा है। आज जो हम शिक्षा प्रदान कर रहे हैं उससे हम केवल किताबी कीड़ा ही बना रहे हैं। मूल्यों की तरफ हम ध्यान नहीं दे रहे हैं। जिसका प्रभाव पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय, नैतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यामिक मूल्यों पर पड़ रहा है। इन पर प्रभाव पड़ने के कारण ही मानव के अन्दर अहंकार, वैनमस्यता, भ्रष्टाचार, बालात्कार, छिनैती जैसी घटनाएँ बढ़ रह रही हैं। हम यदि मानवीय मूल्यों की प्रासंगिकता को रफ्तार

देना चाहते हैं तो पाठ्यक्रमों में मूल्यपरक शिक्षा को सम्मिलित किया जाय जिससे विद्यार्थियों में गुणात्मक विकास हो सके।

सुझावः

1. शिक्षा में 'धर्मसापेक्षता' का सिद्धान्त लागू होना चाहिए। इसमें हर विद्यार्थी को हर धर्म को समझने का मौका मिलेगा, जिससे समाज में शक्ति और सहिष्णुता जैसे मूल्यों का विकास होगा।
2. सभी उच्च शिक्षण संस्थानों की कैंटीन्स में जंक फूड और कार्बोनेट वाले शीतल पेय एकदम निषेध होना चाहिए।
3. उच्च शिक्षण संस्थानों में राष्ट्रगान, राष्ट्रगीत, सरस्वती वन्दना एवं प्रार्थना होनी चाहिए, तत्पश्चात् श्रीमद्भगवद्गीता की कुछ पंक्तियाँ पढ़कर ही दिनचर्या शुरू करनी चाहिए।
4. कक्षा में पढ़ाने के समय ही कभी-कभी 2-3 मिनट देश, समाज, संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों पर बात करनी चाहिए।
5. देश के महापुरुषों की पुण्यतिथि के अवसर पर प्रार्थना के बाद इनके योगदान पर 5-10 मिनट का संक्षिप्त व्याख्यान होना चाहिए।
6. विद्यार्थियों को शिक्षा के साथ 3 महीने में कम-से-कम एक बार गाँव के भ्रमण पर ले जायें जिससे उनके अन्दर भावनात्मक एवं संस्कृति का विकास हो सके।
7. उच्च शिक्षण-संस्थानों में 6 महीने का 'जीवन-मूल्य' पाठ्यक्रम निःशुल्क संचालित किया जाना चाहिए।
8. कालेजों की विविध गतिविधियों में विद्यार्थियों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए।
9. उच्च शिक्षण संस्थानों में भी वर्ष में कम से कम 2 बार पी.टी.एम. होनी चाहिए।
10. विद्यार्थियों को केवल किताबी कीड़ा न बनाकर देश एवं समाज के अनुकूल मूल्य आधारित शिक्षा भी दी जाय।
11. इन शिक्षण संस्थानों में छोटे-स्तर पर भी भ्रष्टाचार हो तो उन्हें रोकने का पूर्ण प्रयास किया जाय।
12. प्राध्यापक, प्राचार्य/कुलपति विद्यार्थियों के लिए मॉडल बनें।
13. हर प्राध्यापक कम-से-कम 5 विद्यार्थियों को गोद लेकर उनका सार्वांगीण विकास करे।
14. इन उच्च शिक्षण संस्थानों को आस-पास के गाँव को गोद लेकर सरकार की विविध योजनाओं से परिचित कराना चाहिए साथ-ही-साथ स्वच्छता, स्वास्थ्य एवं शिक्षा की महत्ता से अभिप्रेरित

करना चाहिए।

15. समय-समय पर समसमायिक विषयों पर विशिष्ट व्याख्यान आयोजित कराना चाहिए।

16. वर्तमान समय मे सामाजिक परिवर्तन को देखते हुए उच्च शिक्षा में गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए केवल पुस्तक ज्ञान का माध्यम न बनाकर भारतीय समाज, अन्तर्राष्ट्रीय जगत् की सुख-शक्ति और समृद्धि को माध्यम तथा साधन बनाया जाना चाहिए।

संदर्भ-ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, आर.ए., 2008, मानव मूल्य एवं शिक्षा, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
2. तथैव
3. महन्त अवेद्यनाथ, 2014, भारतीय शिक्षा पद्धति और महन्त दिग्विजयनाथ, विमर्श, अंक 8
4. स्वामी धर्मेन्द्र, 2016, राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज, विमर्श, अंक 10
5. कुमार अनुज, 2016, वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्यपरकता की आवश्यकता: भारतीय आधुनिक शिक्षा अंक 01
6. सिन्हा, पवन, 2016, मूल्यपरक शिक्षा-एक विमर्श, भारतीय आधुनिक शिक्षा, अंक 4

■

श्रीरामचरितमानस में संग-प्रभाव

फूलचन्द प्रसाद गुप्त*

सार-संक्षेप : गोस्वामी तुलसीदास द्वारा प्रणीत महाकाव्य श्रीरामचरितमानस मानव के जीवन-पथ का दिग्दर्शक है। परिवार, समाज, राष्ट्र के प्रति मानव-कर्तव्यों का निर्धारण इस महाकाव्य में किया गया है। इसी क्रम में मानव पर पड़ने वाले सुसंग-कुसंग का प्रभावी वर्णन भी इसमें किया गया है। सुसंग मोक्ष-द्वार तक ले जाता है एवं कुसंग नरक में पहुँचा देता है। लेखक ने श्रीरामचरितमानस में इनके प्रभाव को रेखांकित कर मानव को सुसंग में रहने की प्रेरणा दी है।

बीज शब्द : तुलसीदास, रामचरितमानस, धर्म, कर्तव्य, साहचर्य, सत्संग, आत्मोन्नति, मोक्ष, भगवद्-साक्षात्कार, सद्गति।

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा विरचित श्रीरामचरितमानस मानव-कर्तव्यबोधक महाकाव्य है। यद्यपि भगवान् श्रीराम के शील, सौन्दर्य और शक्ति को उद्भासित करना गोस्वामी जी का अभीष्ट है परन्तु इन गुणों के प्राकट्य के क्रम में उन्होंने परिवार, समाज और देश के प्रति मानव-कर्तव्य का निर्धारण भी किया हैं श्रीरामचरितमानस में कर्तव्य-निर्धारण के क्रम में संग-प्रभाव का वर्णन बहुत ही प्रभविष्णु है। गोस्वामी जी कहते हैं कि पदार्थ अपनी पूर्वावस्था या प्रथमावस्था में शुद्ध होता है परन्तु संग-प्रभाव से भूषित और दूषित होता है। शिशु रूप में मानव भगवान् का रूप होता है। उसमें सम-दृष्टि होती है। प्रेम-रूप वही बालक संग-प्रभाव से उच्चता और नीचता को प्राप्त होता है। देवर्षि नारद की संगति प्राप्त कर बालक ध्रुव भगवान् विष्णु का प्रियभाजन बना और उन्हीं की संगति के प्रभाव से प्रह्लाद भगवान् विष्णु की भक्ति का अधिकारी हुआ। सत्य ही है- "सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।" परन्तु नीच की संगति व्यक्ति को अधोगामी बना देती है। संसर्ग से ही गुण-दोष उत्पन्न होते हैं- "संसर्गजा गुण दोषाः भवन्ति।" स्वाति-नक्षत्र की एक बूँद केले के पत्ते पर पड़ने पर 'कपूर', सीप में पड़ने पर 'मोती' और सर्प के मुख में पड़ने पर 'विष' बन जाती है। संगति के पूर्व वह शुद्धावस्था में होती है। गोस्वामी जी कहते हैं-

"ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग॥" बालकाण्ड-७(क)

---

*सम्पादक-योगवाणी, श्रीगोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर

अर्थात् ग्रह, ओषधि, जल, वायु और वस्त्र - ये सब भी कुसंग और सुसंग पाकर संसार में बुरे और भले पदार्थ हो जाते हैं। विचारशील पुरुष ही इस बात को जान पाते हैं। इसके पूर्व ही गोस्वामी जी ने इस बात को सूदाहरण के द्वारा स्पष्ट कर दिया है-

"गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा। कीचहिं मिलइ नीच जल संगा॥
साधु असाधु सदन सुक सारी। सुमिरिहिं राम देहिं गनि गारी॥"

(बालकाण्ड-६/५)

पवन के संग से धूल आकाश पर चढ़ जाती है और वही नीचे की ओर बहने वाले जल के संग से कीचड़ में मिल जाती है। साधु के घर के तोता-मैना राम-राम उच्चारते हैं और असाधु के घर के तोता-मैना गालियाँ देते हैं। गोस्वामी जी आगे कहते हैं कि कुसंग के कारण धुआँ कालिख कहलाता है, वही धुआँ सुसंग से सुन्दर स्याही होकर पुराण लिखने के काम आता है और वही धुआँ जल, अग्नि और पवन के संग से बादल होकर जगत् को जीवन देने वाला बन जाता है।

"धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई॥
सोइ जल अनल अनिल संघाता। होइ जलद जग जीवन दाता॥"

(बालकाण्ड-६/६)

सुसंग-कुसंग का जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् का सद्प्रेरक प्रवचन ध्यातव्य है जिसमें उन्होंने तीनों गुणों की संगति के प्रभाव का वर्णन किया है। भगवान् कहते हैं कि सत्त्वगुण के संग से देवयोनि में एवं रजोगुण के संग से मनुष्ययोनि में और तमोगुण के संग से पशु आदि नीच योनियों में जन्म होता है।

"पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान्।
कारणं गुण सङ्गोऽस्य सदसद्योनि जन्मसु॥"

(श्रीमद्भगवद्गीता-१३/२१)

अर्थात् प्रकृति में स्थित ही पुरुष प्रकृति से उत्पन्न त्रिगुणात्मक पदार्थों को भोगता है और इन गुणों का संग ही इस जीवात्मा के अच्छी-बुरी योनियों में जन्म लेने का कारण है।

"सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च॥"

(श्रीमद्भगवद्गीता-१४/१७)

सत्त्वगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है और रजोगुण से निस्सन्देह लोभ तथा तमोगुण से प्रमाद और मोह उत्पन्न होते हैं और अज्ञान भी होता है। निस्सन्देह सुसंग के प्रभाव से व्यक्ति ऊर्ध्वगामी और कुसंग से अधोगामी होता है। गोस्वामी जी कहते हैं-

"जलु पय सरस बिकाइ, देखउ प्रीति कि रीति भलि।
बिलग होइ रस जाइ, कपट खटाई परत पुनि।।"

बालकाण्ड-५७(ख)

जल भी दूध के साथ मिलकर दूध के समान भाव बिकता है परन्तु खटाई का संग पाकर दूध फट जाता है और स्वादहीन हो जाता है। 'दोहावली' में भी गोस्वामी जी ने संग-प्रभाव को रेखांकित किया है।

"संत संग अपबर्ग कर कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कबि कोबिद श्रुति पुरान सदग्रंथ।।"

(दोहावली-३४०)

सन्तों का संग मोक्ष का और विषयी पुरुषों का संग संसारबन्धन में पड़ने का मार्ग है। इस बात को सन्त, कवि, ज्ञानी और वेद-पुराणादि सद्ग्रन्थ सभी कहते हैं। संग-प्रभाव को स्पष्ट करते हुए गोस्वामी जी कहते हैं कि सुसंग से मनुष्य अच्छा और कुसंग से बुरा हो जाता है। जो लोहा नाव में लगने से सबको पार उतारने वाला और सितार में लगने से मधुर संगीत सुनाकर सुख देने वाला बन जाता है, वही तलवार और तीर में लगने से जीवों का प्राणघातक हो जाता है।

"तुलसी भलो सुसंग तें पोच कुसंगति सोइ।
नाउ किंनरी तीर असि लोह बिलोकहु लोइ।।"

(दोहावली-३५८)

गोस्वामी जी कहते हैं कि बड़ों की संगति से मनुष्य बड़ा और छोटों की संगति से उसी का नाम छोटा हो जाता है। धर्म, अर्थ और मोक्ष के साथ रहने से 'काम' की भी गिनती चार पदार्थों में होती है।

"गुरु संगति गुरु होइ सो लघु संगति लघु नाम।
चार पदारथ में गनैं नरक द्वारहू काम।।"

(दोहावली-३५९)

सुसंग में रहकर मनुष्य मोक्ष का अधिकारी बन जाता है वहीं कुसंग प्राप्त कर नरक का भागी बनता है। मनुष्य को सत्संगति में रहना चाहिए। जीवन-लक्ष्य की प्राप्ति में सुसंग का विशेष महत्त्व है। अच्छी संगति मनुष्य को उच्चासन प्रदान करती है। "पुष्प का आश्रय पाकर अबल-अपरबल लघुजीव पिपीलिका भी शिव-शिखर पर आरूढ़ चन्द्रमा का स्पर्श पा लेती है।" "शिलाखण्डों के बीच दबी दूब प्रकृति का आश्रय पाकर हरी हो उठती है।" (सम्भवामि युगे युगे-प्रो. रामदरश राय)

गोस्वामी जी ने कुसंग को भयानक बुरा रास्ता कहा है- **"कठिन कुसंग कुपंथ कराला।"**

(बालकाण्ड-३७/४) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'मित्रता' नामक निबन्ध में कुसंग को भयानक ज्वर कहा है। "कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि का भी क्षय करता है।" श्रीरामकथा क्रम में कैकेयी को शुद्धमति दर्शाया गया है। वही शुद्धमति कैकेयी मन्थरा का कुसंग पाकर अपनी बुद्धि का क्षय कर लेती है। गोस्वामी जी कहते हैं- **"को न कुसंगति पाइ नसाई। रहइ न नीच मते चतुराई।।"** (अयोध्याकाण्ड-२३/४) बादल का जल धूल से मिलते ही गन्दा हो जाता है- **"भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी।।"** (किष्किन्धाकाण्ड-१३/३) कुसंग प्राप्त कर ज्ञान नष्ट हो जाता है और सुसंग पाकर उत्पन्न हो जाता है-

"कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि पाइ कुसंग सुसंग।।"

किष्किन्धाकाण्ड-१५(ख)

अतः दुष्ट की संगति दुखदायी होती है और मनुष्य को उसके जीवन-लक्ष्य में बाधा बनती है। एक प्रसंग में भगवान् श्रीराम विभीषण से कहते हैं- **"बरु भल बास नरक कर त्राता। दुष्ट संग जनि देइ बिधाता।।"** (सुन्दरकाण्ड ४५/४) हे तात! नरक में रहना अच्छा है, परन्तु विधाता दुष्ट का संग कभी न दे। दुष्टों का संग सदा दुःख देने वाला होता है। जैसे हरहाई गाय कपिला गाय को अपने संग से नष्ट कर देती है। भगवान् श्रीराम जी ने कुसंग के प्रभाव को भरत जी को समझाते हुए यह बात कही- **"तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालइ हरहाई।।"** (उत्तरकाण्ड-३८-१) दुष्टों के संग से किसी को सुबुद्धि उत्पन्न नहीं हुई। काकभुशुण्डि जी ने गरुड़ जी से कहा- **"काहू सुमति कि खल सँग जामी।"** (उत्तरकाण्ड-१११ ख-२) गोस्वामी जी ने श्रीरामचरितमानस में कुसंग के प्रभाव का प्रसंगवश भी और उपदेशात्मक वर्णन किया है।

कुसंग में पड़कर मनुष्य अपना सर्वनाश कर डालता हे। उसका धन और स्वास्थ्य तो नष्ट होता ही है साथ ही वह कुमार्ग पर चलकर आत्मोन्नति से हाथ धो बैठता है। उसके मानस में अनीति और अशुभ प्रवृत्तियाँ जागृत हो जाती हैं। विचार-शक्ति के क्षीण हो जाने के कारण वह उचित मार्ग से भ्रष्ट होकर पतनोन्मुख हो जाता है। एक बार पतन के गर्त में गिरने के बाद वह उससे उबर नहीं पाता। अतः व्यक्ति को कुसंग से बचना चाहिए।

गोस्वामी जी ने सत्संगति की महिमा का भी गान किया है। उन्होंने सत्संगति को आनन्द और कल्याण की जड़ कहा है- **"सतसंगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।।"** (बालकाण्ड २/४) इसके पूर्व ही गोस्वामी जी ने सत्संग के परिणाम की महत्ता बतायी है-

"मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।"

(बालकाण्ड-२/३)

जिसने जहाँ कहीं भी जिस किसी ने यत्न से बुद्धि, कीर्ति, सद्गति ऐश्वर्य और भलाई पायी है, सो सब सत्संग का प्रभाव है। वेदों में और लोक में इनकी प्राप्ति का कोई दूसरा उपाय नहीं है। गोस्वामी जी कहते हैं कि सत्संगति से दुष्ट भी सुधर जाते हैं, जैसे पारस के स्पर्श से लोहा सुन्दर स्वर्ण बन जाता है।

"सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई॥"

(बालकाण्ड-२/५)

सुसंग के महत्त्व को रेखांकित करते हुए गोस्वामी जी कहते हैं कि मलय पर्वत के संग से काष्ठमात्र (चन्दन) वन्दनीय हो जाता है, फिर कोई काठ का विचार करता है?

"प्रिय लागिहि अति सबहि मन भनिति राम जस संग।
दारु बिचारु कि करइ कोउ बंदिअ मलय प्रसंग॥"

बालकाण्ड-१०(क)

यह सुसंगति का प्रभाव ही है कि रेशम की सिलाई टाट पर भी अच्छी लगती है। **"सिअनि सुहावनि टाट पटोरे।"** (बालकाण्ड-१३/६)

सत्संगति भगवान् की कृपा से प्राप्त होती है। सत्संग से सांसारिक विषय नष्ट हो जाते हैं। भगवान् श्रीराम ने सनकादिक मुनियों से कहा- **"बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहि भवभंगा॥"** (उत्तरकाण्ड ३२-४) भक्ति की प्राप्ति भी सत्संग से सम्भव है। भक्ति समस्त सुखों को देने वाली है परन्तु बिना सत्संग के भक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती। भगवान् श्रीराम अयोध्यावासियों से कहते हैं- **"भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥"** (उत्तरकाण्ड ४४-३) भगवान् श्रीराम नगरवासियों से कहते हैं कि सत्संगति ही संसृति (जन्म-मरण के चक्र) का अन्त करती है- **"सतसंगति संसृति कर अंता।"** (उत्तरकाण्ड-४४/३) पुण्यसमूह के बिना सन्त नहीं मिलते। बिना सन्त के सत्संग प्राप्त नहीं होता। बिना सत्संग के विवेक नहीं होता। बिना विवेक के ज्ञान नहीं मिलता और बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं मिलती। सन्तों का संग मोक्षदायक है। काकभुशुण्डि जी गरुड़ जी से कहते हैं कि सत्संगति इस संसार में दुर्लभ है। संसार में पल भर का एक बार सत्संगति प्राप्त हो जाय तो मनुष्य-जीवन धन्य हो जाय। **"सतसंगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकउ बारा॥"** (उत्तरकाण्ड-१२२ ग/३)

गोस्वामी जी कहते हैं कि सत्संग के बिना भगवद्-कथा का श्रवण सम्भव नहीं, भगवद्-कथा-श्रवण बिना मोह नहीं भागता और मोह का नाश हुए बिना भगवान् श्रीराम जी के चरणों में अचल प्रेम नहीं होता अर्थात् सत्संग भगवद्-साक्षात्कार का आधार है।

"बिनु सतसंग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग।

मोह गएँ बिनु रामपद, होइ न दृढ़ अनुराग॥"

(दोहावली, १३२)

भगवान् शिव जी माता पार्वती जी से सत्संग की महिमा को बताते हुए कहते हैं कि 'हे पार्वती! सन्त समागम के समान दूसरा कोई लाभ नहीं है, परन्तु सत्संग हरिकृपा के बिना सम्भव नहीं, ऐसा वेद और पुराण सभी कहते हैं।

"गिरिजा संत समागम, सम न लाभ कछु आन।
बिना हरि कृपा न होइ सो, गावहिं बेद पुरान॥"

(उत्तरकाण्ड-१२५ ख)

लंकिनी ने हनुमान् जी से सत्संग की महिमा की चर्चा करते हुए कहा- "हे तात! स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाय तो भी वे सब मिलकर दूसरे पलड़े पर रखे हुए उस सुख के बराबर नही हो सकते, जो क्षणमात्र के लिए सत्संग से होता है।

"तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥"

(सुन्दरकाण्ड-४)

सज्जनों की संगति शुभद, फलद और सुखद होती है। अच्छे गुरु का सान्निध्य पाकर शिष्य लोकहित के साथ ही आत्महित साधता है। वल्लभाचार्य को पाकर सूरदास, रामानन्द को पाकर कबीरदास, रैदास को पाकर मीराबाई, समर्थ गुरु रामदास को पाकर शिवाजी, रामकृष्ण परमहंस को पाकर विवेकानन्द, स्वामी बिरजानन्द को पाकर स्वामी दयानन्द ऐसे मानव-रत्न बने जिन्होंने अपनी आभा से विश्वकल्याण का मार्ग प्रशस्त किया। सज्जनों की संगति व्यक्ति में सकारात्मक ऊर्जा का संचार कर उसे लोक-कल्याण से जोड़ देती है। ऐसा व्यक्ति लोककल्याण में आत्मकल्याण का दर्शन कर लेता है।

शास्त्रों ने भी सत्संगति की महिमा गायी है। शास्त्रोक्ति है कि कल्पवृक्ष कल्पित वस्तुओं को प्रदान करता है, कामधेनु इच्छित वस्तुओं को देती है और चिन्तामणि जिस वस्तु का चिन्तन किया जाय, वह प्रदान करता है परन्तु सत्संगति से कुछ भी अलभ्य नहीं रह जाता। महापुरुषों की संगति सभी के लिए उन्नतिकारक होती है। यह संगति का प्रभाव है कि कमल के पत्ते पर पड़ी हुई पानी की बूँद मोती जैसी शोभा प्राप्त कर लेती है।

"महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः।
पद्मपत्रस्थितं तोयम् धत्ते मुक्ताफलश्रियम्॥"

सत्संगति गंगा की तरह पाप का नाश करने वाली, चन्द्रकिरण की तरह शीतल, अज्ञानरूपी

अन्धकार का नाश करने वाली, ताप को दूर करने वाली, कामधेनु की तरह इच्छित वस्तु को देने वाली और बहुत पुण्य से प्राप्त होने वाली होती है। अतः मनुष्य को सुसंग में रहना चाहिए।

गोस्वामी जी ने श्रीरामचरितमानस में सुसंग और कुसंग के प्रभाव को अनेक सुसंगत उदाहरण से परिपुष्ट किया है। सुसंग मनुष्य को ईश्वर का साक्षात्कार, परमशिव का दर्शन और मोक्ष का अधिकारी बना देता है, वहीं कुसंग मनुष्य को जीवन-पथ से भ्रष्ट कर निरन्तर नरक की ओर ले जाता है। इसलिए गोस्वामी जी का यह कथन मनुष्य को दिशा प्रदान करने के साथ उसे सुसंग में रहने की प्रेरणा प्रदान करता है। **"सन्त संग अपबर्गकर कामी भव कर पंथ।"** मनुष्य को सत्संगति प्राप्त कर अपने जीवन की सार्थकता सिद्ध करनी चाहिए और सज्जनों की संगति में रहकर परिवार, समाज और देशोपकारक बन अपने सद्कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए यश का भागी बनना चाहिए।

■

Indo-Nepal Relation: A Need for Reboot

Maj. Gen. A.K Chaturvedi*

Abstract: *India and Nepal which have civilizational relationship are having strains in their relations. Recent flash point is opening of road to Lipulekh Pass by India. Nepal claims that the road passes through area which belongs to her. India denies Nepal's claim. Nepal has precipitated the issue by issuing a fresh map of the area which shows the disputed area of Kalapani as part of Nepal. The current protest is a culmination of a hostility which has been brewing up for quite some time. It is also believed that the current hostile attitude of the Prime Minster of Nepal; Sri KP Sharma Oli is on account of intra party problems of the Nepali Communist Party. China; who has been trying to become an important player in Nepal with the aim to reach Indian heartland has also been adding fuel to fire. In the change socio-political and socio economic environment where social media plays an important role, time has come for India to have a fresh look at her Nepal Policy.*

Key Words: *Indo-Nepal- china relations, Lipulekh pass and kalapani*

Introduction

India's relations with Nepal have hit the Nadir in recent times. Although for some time they were drifting but the Border dispute on account of virtual Inauguration of an 80 Km road to Lipulekh pass on the Indo Tibet border on 08 may by the Defence minister of India; was the latest flash point in the Indo Nepal relations. The latest issue is actually based on a dispute over an historical accuracy or of otherwise of a geographical territory. It has been brewing between the two neighbouring countries for the past several decades now. The bone of contention is the Kalapani-Limpiadhura-Lipulekh 'Trijunction' between Nepal-India and Tibet (now part of Chinese Tibet Autonomous Region). Located on the banks of the river Kali (Mahakali) at an altitude of 3600m, the Kalapani territory lies at the eastern border of Uttarakhand in India and Nepal's Sudurpashchim Pradesh in the West.

*PVSM, AVSM (Retired from Indian Army)

India claims the area is part of Uttarakhand's Pithoragarh district, while Nepal believes it to be part of its Dharchula district.

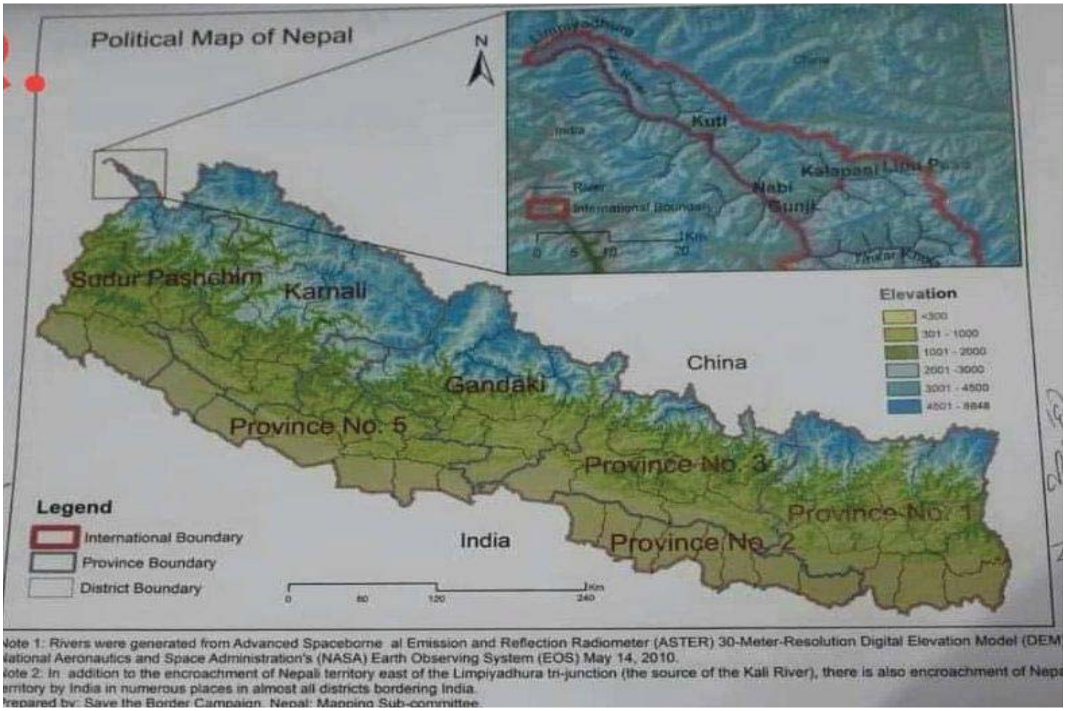

Map-1: Latest Political map of Nepal

Nepal Protested that the road was in the area which is part of Nepal. It needs to be noted that the new road alignment is along the Kali River which is the boundary between India and Nepal. The end point of the road is at Lipulekh Pass with China which is near the tri-junction of India, China and Nepal. The construction is expected to end by March 2021. The Road from Ghatiabgarh to Lipulekh is 80 km long new road (greenfield) under construction by Border Road Organisation (BRO) with a deadline of December 2022. Nepal's foreign ministry summoned the Indian envoy last week to protest against the construction of the road. New Delhi has rejected Kathmandu's protest, saying the Lipulekh region is "completely within the territory of India" and that both sides could resolve such boundary issues through diplomatic dialogue. The Nepal Government on 20 May unveiled a new political map of the country that depicts Lipulekh, Kalapani and Limpiadhura as part of Nepalese territory. Nepal's lower house passed the constitutional amendment seeking to replace the old map with the new map on 13 Jun 2020 and Upper House passed the bill on 17 Jun 2020. The Law Minister of Nepal informed the house that they had enough facts and evidence to support their claim and will resolve the issue with India through diplomatic

negotiations. President of Nepal gave her accent on the same day after the passing of the constitutional amendment by the Upper House. India, which controls the region - a slice of land including Limpiadhura, Lipulekh and Kalapani areas in the northwest - has rejected the map, saying it is not based on historical facts or evidence. India is prepared to discuss it but does not have the same urgency[1]. It also needs to be noted that India's new road, up to the Lipulekh pass, is not an unprecedented change in the status quo. India has controlled

Map-2: Alignment of Dharchula- Lipulekh

Ref: https://www.newindianexpress.com/nation/2020/may/08/shorter-comfortable-and-less-costlier-route-to-kailash-mansarovar-inaugurated-2140737.html

Map-3: Area Showing Disputed Area

Ref: https://www.sirfnews.com/nepal-parliament-approves-new-map-that-includes-indian-territory/

this territory and built other infrastructure here before, besides conducting its administration and deploying military forces up to the border pass with China.[2] The area of Kalapani is of strategic importance to India because it provides shortest route to Tibet from Delhi besides it would be an important and convenient route for Man Sarovar and Mount Kailash. It is of significance that China appears of have accepted the sovereignty Of India on this route as in 2015 she had agreed to do trade with India through Lipulekh pass.

This indeed is a nadir in the relationship between India and Nepal. More so with China gaining upper hand in Nepal makes the situation quite worrisome for India, because presence of China in a hostile Nepal will directly threaten heart land of India. An obvious question is whether such a low in the relationship is desirable in the national interest of India.

Border Dispute between India and Nepal

Map-4: Disputed Area

Ref: currentaffairgktotoday.in

The problem has its origin in the interpretation of the Treaty of Seagull of 1816;

between the East India Company and Nepal post Anglo- Nepali War (1814-1815), which stipulated that the Kali (India call it Mahakali) river would mark the western border of Nepal with India. Kalapani is located on its East bank. The pilgrim-cum-trade route here from India to Tibet runs for the most part on the West bank of the Kali, but, at Kalapani it crosses briefly to the East bank. India asserts that old British surveys and maps show this section as part of India. But Nepal points to other maps and documents to support her claim. Nepal has laid claim to all areas east of the Lipu Gad the rivulet that joins the river Kali on its border, a Tri-junction with India and China . Total area which Nepal claims is 355 km^2 of the Dharchula District of Nepal.[1] The tributaries of the Kali River comprise a number of streams, including the Lipu Gad, which merge into the main river at the Kalapani temple near the tri-junction. The Nepalese contention is that the Lipu Gad is, in fact, the Kali river up to its source to the east of the Lipu Lekh Pass. Nepal based on several other maps published in 1827, 1835, 1846, 1850, 1856 had also confirmed that the river originating from Limpiadhura is Kali. Their argument is based on their interpretation of the river science perspective postulated by John Playfair (1802), R E Horton (1945) and AN Strahler (1964). Nepal argues that the main river at any confluence is distinguished from its

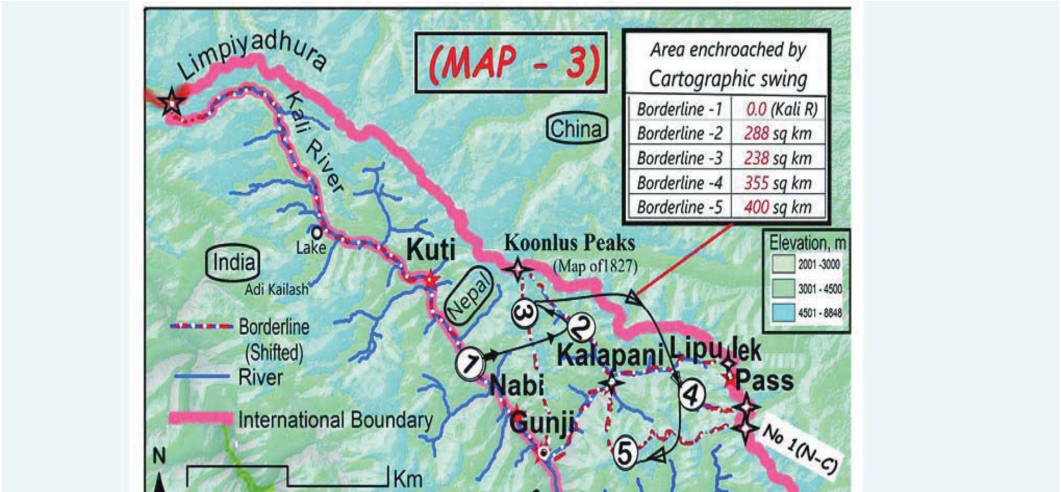

Map-5: Nepal's Interpretation of Origin of Kali river

Ref: Dr Jagat K Bhusal, "India's Cartographic Manipulation Of Nepali Territory A Case Of Limpiadhura To Lipulekh", published in The Rising Nepal dated 20 Dec 2019.

length, its water volume, its watershed area and number of tributaries to it. The average water flows, the river length and the watershed area of Kali (Kuthi Yanti) are about three

times larger, 2.5 times longer, and three times greater than Lipu (or Kalapani) stream respectively at the Gunji confluence.[2]

Notwithstanding the current protest, it needs to be noted that the Road to Lipulekh has not been built overnight. In fact the road was under construction since 2008 and as such it is unbelievable that the Nepal government was not aware of its progress. In this connection it is relevant to note that the Nepal Government raised the issue during last November , when India issued its new political map based on new reorganisation of its own states' boundaries in post Article 370 abrogation scenario. Thus May 08 announcement by India about the new road provided an opportunity to Nepali PM, Sri KP Sharma Oli to strengthen his position within his party as well as to divert attention of the nation from the problems staring in the face. He was swiftly able to mobilise public opinion, play up nationalist sentiments against India, get his internal party rivals on board, and divert attention from his failed ordinances and challenges to contain the COVID-19 pandemic. Land in any case is an emotive issue but since the blockade of 2015, anti-Indian sentiments have been gaining ground in Nepal and as such average Nepali felt quite aggrieved. The argument of ROTI-BETI relations and religious and traditional cultural relations no longer impress the new generation of Nepal. In fact when they see pictures of Shanghai and Beijing and compare them to adjoining areas of Bihar and East UP; whom they find as impoverished as they themselves are; they do not relate to India to their dreams. Such public sentiments; PM Oli finds easy to exploit to strengthen his position within the party and within the country. Some of the recent actions of the Nepal Government display the tilt of the present government which is Anti Indian and leans towards china. Two examples would suffice. First is; Nepal choosing not to attend the BIMSTEC Conference hosted by India, terming it as an anti-China military alliance driven by India in Jan 2020 and second is that the Nepali Communist Party has created obstacles to the implementation of a United States-sponsored MCC grant that would upgrade Nepal's electricity transmission system and connect it to the Indian power grid.[1] Nepal is also trying to chart a more independent Foreign policy course. They are now trying to project themselves not as a 'land locked country' but a 'land connected country'. The public sentiments and attitude of the current Nepal Government brings out that more than Chinese interference it is on account of exploitation of the public sentiments of Anti India stance by the current govt where China is only fishing in the troubled waters.

The dispute over the location of the river, and consequently that of the territoriality of Kalapani, was first raised by the Nepalese government only in 1998, after the ratification of the Mahakali treaty with India by Nepal 's Parliament. It may be noted that even when Indian military units occupied the Kalapani area during the Sino-Indian war of 1962, Nepal

did not raise any objection. Nepal ignored the Kalapani issue from 1961 to 1997, but for domestic political reasons it became a convenient India-Nepal controversy in 1998. It is interesting to note that The Kalapani, is just a 35 square km area claimed by both India and Nepal. According to Nepal, after the India-China war in 1962, Nepal allowed Indian troops to occupy some posts in Nepal as a defensive measure. India has withdrawn from all of them, except Kalapani. This has raised nationalist hackles in Nepal. Now Nepal has demanded that the border post be removed and the area restored to it. Nepal 's claims first surfaced during the negotiations resulting in the Sino-Nepal Border Agreement (1961), Sino-Nepal Border Protocol (1963) and, the subsequent 1979 Border Protocol, and it continues to seek adjustments on the western extremity of the border, about 5.5 kms. westwards towards the Lipulekh Pass.

India, on the other hand, claims that certain revenue records dating back to the 1830s show that Kalapani area has been part of the Pithoragarh district. In this connection India cites that the British India conducted the first regular survey of the upper reaches of the river Kali, in the 1870s. A vintage map of the 1879 shows that Kalapani was part of India. The stand of Indian government has been that the 1879 map should be considered in deciding the borders between the two countries. In this connection the shifting course of the Kali (Mahakali) river in the area has added to the problem.[2] Nepal had disputed the source of the river Kali, as claimed by India. During July-August 2000, it was agreed between the PMs of the two countries that field-work for the demarcation of the boundary will be completed by AD 2001-2002 and final strip maps will be prepared by 2003.

Besides Kalapani, there are two more land disputes between the two countries. One is in the Susta river border region which is part of West Champaran District in Bihar and Nepal claims it to be part her of Susta Rural Municipality under West Nawalparasi District of Province No 5.

and the second little less known is at the Eastern Tri- Junction in Sikkim.

Changing Dimensions of Indo Nepal Relations

Transformation of Nepal-The Constitution of Nepal, adopted in 2015, affirms Nepal as a secular federal parliamentary republic divided into seven provinces. Some parts of the Terai region were gifted to Nepal by the British as a friendly gesture because of her military help to sustain British control in India during the First War of Independence of India in 1857. In 1923, the United Kingdom and Nepal formally signed an agreement of friendship that superseded the Seagull Treaty of 1816.[3]

Both governments agreed during Modi's 2014 visit to discuss the issue through Foreign Secretary level talks. At the root of the issue is the differing interpretations of what exactly warrants a diplomatic dialogue. While Nepal considers that certain territories which

belongs to Nepal but is under occupation of India, the latter considers it to be an issue of technical nature focused on delimitation, boundary pillars etc.[4]

There is no doubt that China rarely shies away from exploiting the disputes of India with her neighbours. It is a matter of concern that the appeal of China's authoritarian system is growing amongst those new fledgling democracies like Nepal.

Although with their Act East policy India has been investing in upgrading its cross-border infrastructure and economic assistance to Nepal for example; there are now new rail and road links, an electronic cargo system for Nepali goods to transit via Indian ports, inland waterway navigation plans, and a new cross-border pipeline for petroleum products. These are just some examples of the many projects that India has undertaken/are being undertaken. As far as financial assistance is concerned the details are as tabulated below::-

Table-1: Indian Financial Aid to Nepal

Ser No	Year	Amount in Crores
1.	2016-17	333.72
2.	2017-18	253.17
3.	2018-19	652

Ref: Jayant Jacob, " Nepal Top Recipient of India Aid with 253 Crore", published in Hindustan Times 06 Apr 2018

While this approach is; 'work in progress'; the traditional approach, focused on security, military and other geostrategic factors, continues to prevail, especially in moments of crisis and tension such as now.

Madhesi Problem and Blockade of 2015- Madhesis form 39 % of the population of Nepal but when the then seven-party alliance of the mainstream political parties and the CPN-Maoist jointly announced the Interim Constitution in 2007, it totally ignored the concept of federalism. This triggered a decade long Madhes movement. It was for demanding equal rights for Madhesis, Tharus, Muslims and Janjati groups in Nepal.[1] Although the interim constitution of 2008 ensured the demands of Madhesis to be considered, the 2015 Constitution of Nepal failed to address any of those issues. One of the major trigger was unfair formation of seven federal provinces under the new Constitution.[2] The other one was the issue proportional representation or inclusion in all organs of the state (Madhesis being higher Indian population and yet have lesser number of members in Parliament)."[3] The constitution states that 45% of all jobs in state organs and public employment are reserved. Madhesis did not accept this amendment. The third issue was related to gender discrimination as it denies single woman to pass on citizenship to their

children. As per the amendment, clauses in the constitution draft say that both parents have to be Nepali to acquire citizenship. Likewise, a Nepali woman married to a foreign may not acquire citizenship but if the father is Nepali, the child is given citizenship regardless. Madhesi Communities, who often have marital ties with Indians across the border, will be disproportionality affected because they are ethnically and socially connected with the northern Indians. There was a strike based on this disaffection and it resulted into an economic blockade, which began on 23 Sep 2015. The blockade was an unmitigated disaster which quickly degenerated into a humanitarian crisis. The blockade choked imports of not only petroleum, but also medicines and earthquake relief material.[4] Nepal accused India for the blockade.[5] Although India denied the charge but it did not cut ice with suffering Nepalis especially in view of Indian reservations about the constitutional provisions which India felt were Anti Madhesis. The blockade turned average Nepali hostile to India. There was a campaign on social media: **hashtag#BackoffIndia** as well as street agitations. Blockade affected distribution of relief material and stoppage of international flights from Kathmandu Airport. The government of Nepal failed to ease this fuel crisis and could not bring petroleum from China on time although it signed an agreement to buy one third of Nepal's petroleum requirement from the northern neighbour.[6] This agreement was seen as a cornerstone for Nepal to end the full dependency on only one country for petroleum imports. China donated 1.3 million litres of petrol to Nepal after the fuel crisis through the Kerung border point.[7] India repeatedly kept suggesting to Nepal to solve the issue with the Madhesi people because they are the ones who were blocking the border points and disrupting supplies. Some Nepali scholars started asking the government to Internationalize the issue as India had moved back from the Nepal India friendship treaty and violated the various International trade, transit and commerce laws. India officially informed that 4,310 trucks were sent to the border, where they had been stranded. He argued that from there onwards, it was Nepal's responsibility to ensure that the trucks entered Nepal safely.[8]

Madhesi parties also criticized the Nepali media reports blaming the blockade on India. It was said that the blockade had been done by the Madhesi people and that India had nothing to do with it.[9] Finally the blockade ended on 04 Feb 2016 when Madhesis backed down. There is no doubt that the blockade damaged the Indo Nepal Relations substantially and it will take a long time to repair it.

Nepal's Neutrality- The 1950 military occupation of Tibet by the PLA raised significant concerns of security and territorial integrity in Nepal, drawing Nepal into a close relationship with extensive economic and military ties with Republic of India.[10] The 1950 Indo- Nepal Treaty of Treaty of Peace and Friendship that had established a close Indo-Nepalese relationship on commerce, and foreign relations, is being increasingly resented in Nepal,

which began seeing it as an encroachment of its sovereignty. During the War of 1962, though Nepal maintained neutrality, however allowed Indian troops to establish 18 border observation posts (BOPs) along the Sino-Nepal border. After the war, Indian army acquiesced to Nepal governments request and pulled out from all but one border observation post. India still maintains military presence in Nepal's Kalapani area. Subsequent Nepal since 1990 has been urging India to remove Indian troops from Kalapani area, which has however not been agreed by India.

Growing Chinese Influence in Nepal

Nepal established diplomatic relations with the People's Republic of China on 1 August 1955, and signed the Treaty of Peace and Friendship in 1960; relations since have been based on the Five Principles of Peaceful Coexistence (PANCHSHEEL) . Nepal maintains neutrality in conflicts between China and India. It remains firmly committed to the 'One China' Policy, and is known to curb anti-China activities from the Tibetan refugees in Nepal.[11] Citizens of both countries can cross the border and travel as far as 30 km without a visa.[12] China is presently viewed favourably in Nepal owing to an absence of any border disputes (things appear to have changed since then), coupled with its assistance in infrastructure development and aid during emergencies; favourability has increased since China helped Nepal during the 2015 economic blockade alleged to have been imposed by India.[13] Subsequently, China granted Nepal access to its ports for third-country trade, and Nepal joined China's Belt and Road Initiative (BRI).[14]

As mentioned earlier, the **bilateral relation** between Nepal and China has been friendly and is defined by the Sino- Nepalese Treaty of Peace and Friendship of 1960. From 1975 onward, Nepal has maintained a policy of balancing India and China. In recent years, China has been making an effort to gain entry into SAARC, and, Nepal has been supporting them. In recent times Since 1975, China is the largest source of FDI to Nepal.[15] India on the other hand remains one of the major source of remittance to Nepal.[16] It is estimated that there are around 1 million Nepalese migrant workers in India while the number of Nepalis in China is minuscule (3,500 in Mainland and 15,950 in Hong Kong)[17] as of 2017.

Chinese Interference in Nepal's politics- Since April there is a rift growing within the Nepal Communist Party; due to creeping differences between various factions who are threatening to unseat PM Oli. It came to Chinese Ambassador to mediate between the factions. Although fight stopped for a while but it is again becoming intense when PM Oli blamed India for the internecine fight. Now Other factions' leaders are demanding PM Oli's Resignation. The interference by Chinese Ambassador has not gone unnoticed. Local Media is alleging that China is trying to micro manage the political affairs which is a red

line.[18] Thus china is penetrating besides society in Nepali politics also. For the last two years at least, there have been regular interactions between the NCP and CPC on these issues. In recent months, unlike in the past, ideology often figures prominently in the bilateral relationship. In fact, 'Xi thought' has become de facto official doctrine for the NCP and Xi somehow is in the process of making himself de facto leader of the NCP.[19] China however gives the impression that she is open to working with any political dispensation in Kathmandu as long as it is prepared to take strong action against political activities of the Tibetan refugees. It may be a matter of further alarm to India that China has also begun taking an active interest in Terai politics.[20] As China's political influence grows in Nepal, Beijing may have, encouraged Prime Minister Oli to take a bolder stance against India during the current crisis. By playing the China balancing card as a last resort, Nepali leaders have often hoped to get Delhi to pay attention to festering problems that Indian diplomacy neglects or forgets about. It is risky because it assumes China is always willing to extend indefinite support to Nepal at the cost of its relations with India.

Attempts to Counter India's Cultural Dominance -India's soft power influence in Nepal has always remained a challenge to pro-China forces in Kathmandu and Beijing. Bollywood's connect with the millennials in Nepal is extraordinary. More often than not, it engulfs itself in discomfort exhibited by the Nepali nationalists. Recent order of restricting screening Indian movies to only six months in a year is case in point. There is a growing demand in the Madhes region to become independent from Nepal. These kinds of sentiment make decision makers in Nepal quite apprehensive about India. In this connection Indian support for amending the constitution gave grind to these fears. To counter these fears Nepal has accepted a Chinese offer of paying the salaries of teachers if Nepal introduces Mandarin in schools.[21]

Impact of Tension between India and Nepal

The largely unguarded border with Nepal has been taken by the Chinese and Pakistani intelligence to their advantage to smuggle arms, goods and carry out attacks in India and return to Nepal to seek shelter. Nepal has been used as a transit point for carrying out such attacks on Indian soil. The thick jungles in Nepal empowers the scope for cross border terrorism. The ISI of Pakistan has increased its assets in Kathmandu over the years. Nepal has become a comfortable launch pad for the sleeper cells that aim to target India. Nepal has also been a victim of this scourge.

Chinese Investment in Infrastructure Development- The Chinese are investing in 'hard infrastructure' that can help them boost connectivity to Nepal. This includes railway lines (it has not even started), highways, bridges, airports, hydroelectric projects. In the fiscal year 2019-2020, over 90% of foreign direct investment (FDI) in Nepal is from

China. Beijing pledged nearly $500 million in financial aid to Nepal in October last year when Chinese President Xi Jinping visited the Himalayan country.[22] However keeping in view the examples of other countries, Nepal needs to realise that it would be a debt trap and may lead to Nepal becoming an economic colony of China in future. Also such connectivity will destroy Small Scale Industries not only in Nepal but even in border areas of India due to open border. Oblivious to future shocks Nepal is increasingly becoming enamoured with China's economic diplomacy. In this connection the case in point are hydroelectric projects which are increasingly getting transferred to China with likely disastrous consequences for India- Nepal power sharing arrangements. It may be noted that China has an insatiable need for power and therefore while China might get benefited Nepal definitely will be a loser. In this connection the recent attempts post 2015 blockade, Nepal has diversified its supply of petroleum products from China by signing an agreement with Petro China[23], it ended the monopoly of IOC to supply petroleum products to Nepal.[24] Economic viability of the proposal notwithstanding, China has also permitted the use of four of its sea ports and three of its land ports to Nepal for its trade.[25] However it will not be easy to replace totally by China based on many factors but mainly on account of economy.

China as a Quid pro quo has asked Nepal to increase monitoring on its border and apprehend those Tibetan who run away from Chines oppression in Tibet. Nepal has already signed several security agreements with China in this regard and has committed to 'One China' principle. Further Nepal has committed that it will not allow Anti- china activities on its soil and operationalized border security cooperation over the course of several years. With 20,000 Tibetans living in Nepal is likely to become a source of problem in Future.[26]

New Delhi is become aware of the growing influence of China in Nepal. As part of India's "neighbour-hood-first" policy, New Delhi is stepping up its political, economic and even military engagement with its neighbours. However, India is lagging behind China. The only area where India continues to have an upper hand over China is its presence in Nepal's culture, language and social life. In this connection besides Mandarin teachers China is also establishing Study Centres to enhance its cultural connect .

Nepal Likely to become a Victim of Chinese Expansionism

Claims by China on Nepalese territory were first made in 1930 when Mao Zedong declared in the original version of the Chinese Revolution and the Communist Party, that "the correct boundaries of China would include Burma, Bhutan and Nepal".[27]He also postulated in his 'Five fingers of Tibet' policy that Ladakh, Nepal, Sikkim, Bhutan and NEFA (Arunachal Pradesh) are the five fingers attached to that palm (Tibet).[28]

In November 2019, encroachment by China of 36 hectares of Nepal's territory

was reported and that there was a further risk of losing several hundred hectares of land.[29]. It has also been reported that road construction work in Tibet Autonomous Region has caused change in the course of common rivers like Arun and expand China's boundary into northern territories of Nepal.[30]

In May 2020, Chinese media, called Mount Everest as Mount Qomolangma claimed it as part of Chinese territory. There is an outrage on this issue in Nepal. [36]

Way Ahead

One of the things which irks Nepal is that India tries to micro manage Nepal's politics. It will be better for Indian policy framers to realise the changing paradigm of Nepal and they need to work on the principle of India Frist but remain sensitive to Nepal's aspirations. India needs to assure and keep reassuring that she respects Nepal's sovereignty.

The Nepalese have started getting aware of Chinese intentions as cases of Chinese nationals indulging in human trafficking and Cyber-Crimes have started coming to light. Also there are border disputes coming up with China too. A change in New Delhi's attitude is required in order to pursue our diplomacy in Nepal. Projects need clearances, funding at a pace that can be matched up to the Chinese.

India and Nepal need to work hard to keep their relationship stable, even if not special. For example, India can no longer afford to remain fixated on its traditional approach towards Nepal and expecting Nepal to give India the right of 'First Refusal'. India needs to become aware that Nepal has been embracing a policy of strategic diversification to safe guard its national interests. The rising presence of China across the Himalayas, especially after Nepal having decided to join BRI has called for a paradigm shift in India's Nepal policy. In this connection the report prepared by an Eminent Persons Group from both the countries to assess the state of bilateral relations mandated in 2015 by Indian and Nepali PM is gathering dust since its submission in 2018. Such indifference on the part of India is being taken negatively by Nepal.

Even after political trust is restored and diplomatic dialogue begins, whether in a few days, months or years, both sides will have to compromise. The border dispute has now turned into a permanent political irritant between both countries. To thwart Chinese attempts to fish in the troubled water it is important that India settles the issue with Nepal. In this connection the historical, technical and cartographic claims from both sides will probably lead to a dead-end, with never-ending, clashing interpretations about river alignments and other contentious criteria. The only possible solution is to go for co management and if possible shared sovereignty. Such a possibility may appeal to Nepal as it would offer them easy access to Mount Kailash and Man Sarovar. If India in past could offer to Pakistan Joint management of Siachen it would not be such a difficult proposition.

References:

1. Constantino Xavier," Interpreting the India-Nepal border dispute", Pub in UP Front dated 11 June 2020
2. IBID-1
3. "Nepal launches new map including Lipulekh, Kalapani amid border dispute with India". indiatoday.in. 20 May 2020.
4. Dr Jagat K Bhusal, "India's Cartographic Manipulation of Nepali Territory A Case of Limpiadhura To Lipulekh", published in The Rising Nepal dated 20 Dec 2019.
5. IBID- 1
6. Adrija Roy Chowdhury, "Mapping the history of Kalapani dispute between India and Nepal", Published in the Indian Express dated 13 Jun 2020
7. Savada, Andrea Matles; Harris, George Lawrence, Nepal and Bhutan: Country Studies
8. IBID-1
9. "Madhes movement - The Himalayan Times". Retrieved 2017-10-21.
10. Gopal Sharma, "Nepal's crisis drags on as ethnic minorities reject charter amendment", published by Reuters dated 24 Jan 2016
11. Dipendra Jha, "Talk to the Terai", published in Kathmandu Postdated 21 Sep2015.
12. Vishal Arora, "R.I.P., India's Influence in Nepal", published in The Diplomat, dated 25 Nov 2015.
13. A PTI Report, "Nepal PM Wants India to Lift Undeclared Blockade", reported by NDTV on 15 Nov 2015.
14. "Nepal inks fuel agreement with China to ease fuel crisis", uploaded on https://www.erewise.com/current-affairs/nepal-inks-fuel-agreement-with-china-to-ease-fuel-crisis_art5631e8de9cbe2.html#.XwNm9y0w3fZ dated 29 Oct 2020
15. "Fuel-strapped Nepal Sends Team to China to Ease Supply". NDTV.com.
16. "Sushma denies Nepal blockade". The Telegraph. 1 October 2015
17. "Wrong to blame India for blockade on the border: NPS". *The Times of India* dated 6 October 2015.
18. The Tribune, Chandigarh, India - Editorial". Retrieved 17 April 2017
19. Barbara Demick, "Tibet's Road Ahead: Tibetans lose a haven in Nepal under Chinese pressure", published in Los Angeles Times dated 06 Aug 2015.
20. "China urged to let Nepalis work in Taklakot". The Himalayan Times. 7 June 2019.
21. Rajeshwari Pillai Rajagopalan, "Why Nepal's Access to China Ports Matters", Published in The Diplomat dated 14 Sep 2018.
22. "Belt and Road Initiative: Nepal's concern and commitment". The Himalayan Times. 23 April 2019.
23. A Xinhua Report, "Two thirds of Nepal's total FDI comes from China in 1st half of FY", uploaded on http://english.cctv.com/2017/02/06/ARTIiF3bm6dHECD0tRdj2Op5170206.shtml dated 02 Jun 2017
24. Peter Jenssen, "Remittances keep Nepal's shaky economy afloat", published in Nikkei Asian review dated 27 Sep 2016
25. Internet upload: http://www.bycensus2006.gov.hk/FileManager/EN/Content_962/06bc_em.pdf
26. Kamal Dev Bhattarai, "China's Growing Political Clout in Nepal", Published in The Diplomat dated 22 May 2020.
27. IBID-26
28. IBID-26
29. Sharan KA, "Nepal: Threats and Challenges to India's Nepal Policy", published in GEOPOLITICS dated

21 Jan 2020.

30. IBID-26.
31. Kiran Sharma, “China deal ends an Indian monopoly in Nepal”, published in Nikkei Asian Review dated 31 Oct 2015
32. Mandhana, Niharika, ”Nepal Signs Fuel Deal With China Amid Supply Disruptions”, published in The Wall Street Journal dated 29 Oct 2015
33. IBID-32
34. IBID-31
35. ”Economic and political relations between Bhutan and the neighbouring countries pp-168" (PDF). *Institute of developing economies Japan external trade organisation*. Retrieved 29 June 2020.
36. IBID-29
37. Maha Siddiqui, “Ladakh is the First Finger, China is Coming After All Five: Tibet Chief’s Warning to India”, News 18 dated 18 Jun 2020
38. EurAsian Times Desk, “China Encroaching Nepal Land Could Set Up ‘Border Posts’ In Seized Territories” Uploaded on https://eurasiantimes.com/china-encroaching-nepal-land-could-set-up-border-post-in-seized-territories/

■

A Brief Introduction of Surface Enhanced Raman Spectroscopy (SERS)

Manish Kumar Tripathi & Suresh Kumar Pandey*

Abstract: *Surface Enhanced Raman Spectroscopy (SERS) is very similar to conventional Raman spectroscopy which gives intensified Raman signals. Due to this SERS technique frequently used into the various field that provide better interpretation of the molecular properties. In this context we are trying to give a general introduction of the Raman spectroscopy and modified Raman spectroscopy, i.e., surface-enhanced Raman spectroscopy.*

Keyword: *Raman spectroscopy, SERS, Electromagnetic Effect, Chemical effect, SERS substrate*

1. Introduction

Raman scattering and the infrared spectroscopy are complementary to each other, and they help in the elucidation of the molecular structure information as well as the nature of bonding in molecules. Raman spectroscopy is a label-free and non-inasivetechnique. Raman scattering is the inelastic scattering of light after its interaction with the vibrational and rotational modes of a molecule.It was theoretically speculated by Smekal et al. in 1923 and was observed for the first time in1928 by Sir C.V. Raman and Krishnan. The phenomenon was first observed by focusing sunlight on to a specimen and the faint scattered radiation was detected by eyes. Nowadays, Raman spectroscopy is so advanced and quite simple with the development of laser technology and advancements in the detection technology. These advancements, together with the ability of Raman Spectroscopy to examine aqueous solutions, samples inside glass containers, and samples without any preparation, have led to a rapid growth in the application of the technique.However, for every 10^6 photons, only 1 photon gets Raman scattered [1-5]. Hence there are a number of avatars of this technique that has enhanced the scattering cross section and has taken this technique's application to hitherto unknown domains.

*Research Scholar, Department of Chemistry, IIT (BHU), Varanasi

In the beginning of the development of surface-enhanced Raman spectroscopy,it wasfound that the determination of the behavior of adsorbed molecules on adsorbent carries relevant information that depends upon the strength of the interaction between the adsorbate surface and adsorbed molecules. In 1974, Fleischman et. al. reported the Raman spectrum of a monolayer of pyridine adsorbed on a silver electrode surface.After that, in 1977,Jeanmaire and Van Duyne and other groups of researchers observed that the intensity of Raman scattering of the adsorbed species is about 10^5-10^6 times stronger than that of the non-adsorbed species [1, 5]. This observation opened a new field in the area of Raman spectroscopy called surface enhanced Raman spectroscopy (SERS). It offers a demonstration of the vibrational probe of in situ gas-solid, liquid-solid, and solid-solid environments, and also a high-resolution probe of vacuum-solid interfaces [1, 5].

Surface enhanced Raman spectroscopy (SERS) is a prominent techniquefor amplifying Raman signals through higher Raman cross-section of the analyte. Amplification of the electromagnetic field near the metal nanostructures which is responsible for the excitation of localized surface plasmon resonances (LSPR). Laser excitation resonantly drives the metal surface charges, creating highly localized plasmonic light fields at these photonic structures, which are known as hot spots. The enhancement of the Raman scattering by SERS technique generally depends upon (1) the chemical behavior of the adsorbed molecules (2) the roughness of the adsorbent and (3) the optical characteristic of the adsorbent. Since the Raman signal is proportional to the intensity of the field, when a molecule is bonded, adsorbed or lies close to the enhanced field of a hot spot, a massive enhancement in the Raman signal appearedthat are in orders of the absolute magnitude, and is also boosting the effectivity of the SERS technique up to 10^{-18} M concentrations or even down to single molecule examination.Due to this property, SERS leavefoot-prints in the fieldslike surface chemistry, electrochemistry, solid-state physics, inorganic chemistry of metals, problems of radiating multipoles near metal surfaces, generation of surface plasmon and study of corrosion. SERS proved himself via their predictions in a various field that enables them as a useful technique for solving problems in molecular biology, biophysics, and biochemistry [1-5].

2. Principle [1, 5]

A schematic diagram to explain the principle of SERS is shown in Figure 1. The technique is so sensitive that even a single molecule can be detected. The exact mechanism of the enhancement effect of SERS is still a matter of controversy in the literature. There are two main mechanisms for the substantial enhancement of weak Raman signal from Pyridine adsorbed on electrochemically roughened Ag.

1. Electromagnetic effect (Given by Jeanmaire and Van Duyne) is based on the excitation of localized surface plasmons.
2. The chemical method (Given by Albrecht and Creighton)is based on the charge transfer effect of the adsorbed molecule on the enhancement efficiency.

The main features of the SERS technique are summarized as follows:

1) SERS is a highly surface-sensitive, non-destructive, and in-situ vibrational spectroscopic technique.
2) It occurs when analyte molecules are brought in a few nanometers of the SERS active substrates of distinct morphologies.
3) The excitation behavior (scattering intensity versus excitation frequency) varies from the fourth power with respect to the usual Raman scattering.
4) SERS has a tremendous spatial resolution. The enhancement range is several nanometers, valid for one or several molecular layers close to the SERS active substrate.
5) Its activity depends on the behavior of the metal and roughness of the surface.

Along these lines, SERS active substrate fabrication is a significant field related to the SERS technique. The two most common SERS active substrates are metal colloids of Au, Ag, and Cu; those are obtained by the chemical reduction method, and through the metal, electrode surfaces roughened by one or more electrochemical oxidation-reduction coupled reactions. The recent advancement of nanotechnology has been used to create different nanostructures from nanoparticles to nanowires so that these are also utilized as a SERS active substrate for getting much enhancement into the Raman signals.

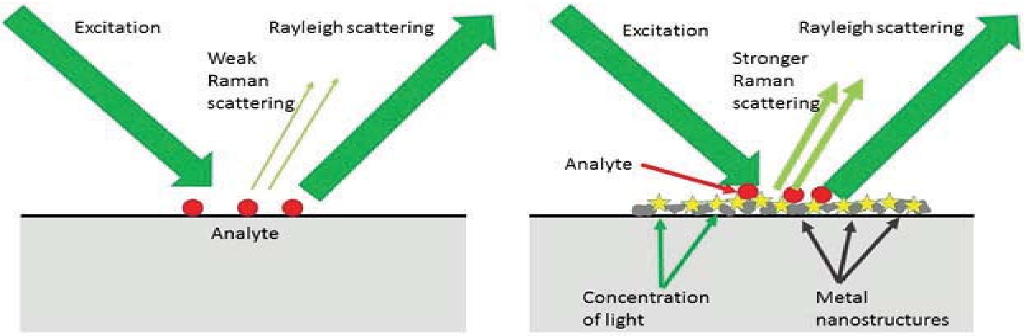

Figure 2 A schematic diagram of SERS spectroscopy

3. Surfaces for SERS Study

Generally visible and near-infrared radiation (NIR) used for exciting the Raman modes. Silver (Ag), gold (Au), and copper (Cu) are typical metals for SERS experiments because their plasmon resonance frequencies fall within these wavelength ranges, providing maximal enhancement for visible and NIR light. Recently, the SERS effect has been demonstrated in metals like platinum (Pt), ruthenium (Ru), palladium (Pd), iron (Fe), cobalt (Co), and nickel (Ni) but they show small enhancements in the Raman signals. The enhancement factor is very low with respect to the enhancement factors of the Au and Ag metals. This is happening because of the difficulty in the excitation of the surface plasmon resonances NIR.A key parameter to take into consideration during SERS experiments is the choice of the enhancing substrate. Silver nanostructure is one of the best substrates for SERS, but some other metal also shows excellent intensity enhancement SERS substrates.Due to this reason, Silver is one of the most suitable substrates for SERS measurement apart from this, some other metals like copper, gold, nickel oxide, etc. are also used for similar investigations. Generally, three kinds of metal surfaces are used for SERS analysis which is as follows

3.1. Nanostructured substrate

This category is generally utilizing the evaporation method for the preparation of the substrate.Metal films formed by substratesare kept at a certain specific temperature, which is lower than the room temperature for silver metal, the roughness feature is emerging when the temperature of the substrate should be below 240K. The film acquires roughness characteristics of the optical wavelength parameter, which is responsible for the increment of the SERS activity that is generally lost because of the surface diffusion. The activity of the SERS also depends on the rate of the evaporation, the thickness of the film, and the material of the substrate. Experimental observation of cold deposited films tells that rough surfaces are the better candidate for the SERS substrate [3].

3.2. Metallic electrodes

In these categories, metalsare accumulating on the surface of the electrode via aredoxreaction into an electrochemical cell. In oxidation half cell reaction, metal salts generally metal halides are formed at the surface of the electrode,and the reduction half cell reaction produced metal into unionized form over the surface of the electrode, through this process roughness obtainablein the range of 10-100 nm at the surface [3].

3.3. Metal nanostructures in solution

Metal sols with 10-100 nm of particle diameters are formed by reducing metal ions with an acceptable chemical reagent. The sols prepared by reduction method are

quite stable. Metal particles are typically negatively charged. Once a neutral molecule is added to the metal hydrosol, it will adsorb the negative ion that is responsible for the reduction of the charges of the particle, resulting agglomeration probability of these particles are enhanced whereas the dependency of this method on the size and shape of the hydrosol, pH, ionic strength and amount of the adsorbate.

For the synthesis of silver hydrosol, there are two popular methods(1)Silver sol is made through a reduction of the silver salt, usually silver nitrate solution with a $NaBH_4$mild reducing agent. UV visible absorption of a freshly prepared silver sol is around 400 nm. The synthesized particlesare spherical in shape, whose diameter in the range of the 1-50 nm generally smaller than the wavelength of the light. This synthesis protocol got huge popularity because it produced a uniform shape of the particle with better reproducibility. (2) Citrate used for reducing metal salts, but the synthesized metal sols acquire irregular shape with better reproduction capability of citrate [3].

4. Selection Rule [1, 5]

Like other spectroscopic technique, SERS also have some selection rules. Since Raman scattering depends on the polarizability,and this is general anisotropic, the alignment of the induced dipole moment might be different with respect to the driving electromagnetic fields. Secondly, generally, a lot of metals are less reflective within the visible region of the spectrum. Resulting, the induced dipoles are quietly weaker than the molecular dipole. Therefore, we expect some set of thumb rules that explain the observed SERS spectral results other than some rigid set of selection rules. Some thumb rules related to SERS are summarized as follows:

(I). The vibrational mode in which atoms are directly bonded to metal atoms is a more pronounced vibrational mode for the SERS spectrum.

(II). Vibrations involving atoms that are close to the metal surface are going to be a lot of increase.

(III). Vibrations those are containinga more significant component of dipole moments in a direction perpendicular to the surface cause maximum enhancement.

(IV). When the vibrational band corresponding to a symmetrical mode cause more massive enhancement, the variation from mother frequency is quite small, whereas asymmetric vibrational modes show significant change into frequency, a shift in frequency associated with increment into the intensity is not very common.

(V). Molecules adsorbed homogeneously on the surface of the metal, then the bending modes thatare out of plane cause enhancement. When molecules adsorbed perpendicularly on the surface, then the bending modes that are inplane cause more

enhanced. When both vibrational modes, i.e.,inplane and out of plane bending modes are equally increased, then it is a pronounced tilted orientation of the adsorbate on the metal surface.

(VI). For every adsorbate, there is an ideal focus at which the improvement is most significant in comparison to a monolayer of the adsorbate on the metal surface. At different fixations, multilayer impact and mass properties show.

(VII) Best SERS spectrum results when the recurrence of the producing radiation matches the plasma reverberation recurrence of the colloidal particles.

5. Enhancement Mechanism [1, 5]

There are two theories proposed to understand the enhancement of the raman signals via SERS technique, (i) the long-range 'electrochemical impact' which improves the electric field at the surface and (ii) the short range 'chemical impact' which is responsible for the changes the polarizability of the adsorbed atom. Silver surfaces are generally excited with visible laser light during this electromagnetic enhancement theory explains better enhancement factor.

5.1. Electromagnetic Enhancement Mechanism [1, 5]

In this theory, a molecule/atom close to the metallic sphere or a molecule in the middle of two metallic spheres produces a small cluster is thought of. When laser light is incident on a rough metal sphere or on the metal surface of high curvature as in colloidal silver particles, surface plasmon resonance occurs, which leads to large surface polarizability creating large local fields near the surface. For the case of a sphere of a diameter smaller than the wavelength of light, the local filed enhancement is described by the following sequence of processes.

(i). A dipole moment p (ù) is induced at the center of the sphere of radius 'a' by the incident fields E_0 (ù).

(ii). The induced dipole creates a fields E (r_0, ù) at the molecular location (r_0 is the location of the molecule, the centre of the sphere is taken as the origin).

Thus, a molecule located at r_0 experiences the incident field E_0 (r_0, ù) plus the field caused by radiation emitted by the induced dipole. That is,

$E_{eff}(r_0, ù) = E_0 (r_0, ù) + E (r_0, ù)$ ……….. (1)

For a molecule situated on the surface of a sphere of minimal radius and with the polarization of the incident and scattered wave perpendicular to the scattering plane, the enhancement factor is given by

$G = 5 [1 + 2g_0 + 2g + 4gg_0]^2$ ………….. (2)

Where g and g_0 are the values of the function (å - 1)/(å + 2) evaluated at ù (incident frequency) and ù´ (scattered frequency) respectively, å is the ratio of the complex dielectric constant of the material of the particle to that of the surrounding medium. When the localized surface plasmons in the sphere are excited, g and g_0 become very large and Eq. (2) reduced to

$$G = 80\,|gg_0|^2 \qquad \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ (3)$$

When the adsorbed molecules cover the entire surface of the sphere, the enhancement factor is calculated by summing up the scattering from all molecules and averaging over molecular orientation. The value is given by

$$G = |\,(1 + 2g)\,(1+2g_0)\,|^2 \qquad \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ (4)$$

For the same kind of enhancement mechanism, if the adsorption is on spheroid instead of a sphere, then

(i). the plasmon resonance moves towards the red.

(ii). the enhancement facets increase with increment in the proportion of the larger to smaller axes.

(iii). metals are excellent plasmon enhancers;they showconsiderable enhancement if the ratio of more significant to lower axes is larger.

(iv). hemispherical or hemispheroidal metal smash improves the enhancement upto a significant extent.

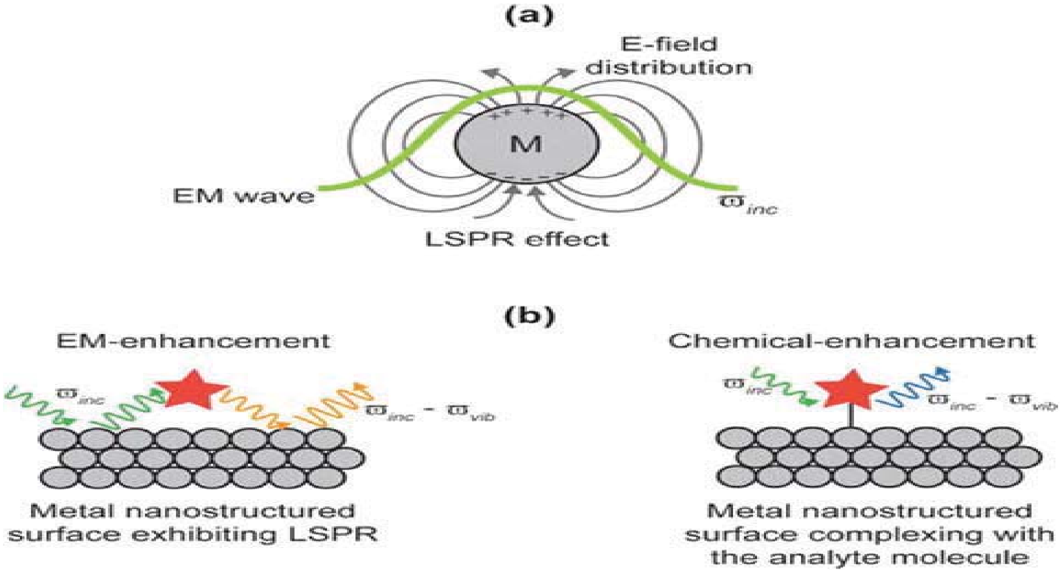

Figure 2 Schmatic representation of the enhancement theory of the SERS spectroscopy (doi: 10.5772/intechopen.71573)

5.2. Chemical enhancement Mechanism [1, 5]

In the 'chemical impact' mechanism, signal improvement emerges from adsorption prompted adjustment of the sub-atomic polarizability of the adsorbate. In this theory, charge-transfer interaction is the primary supporter of signal improvement. Chemisorbed analytes can make the charge migration measurable. Chemical enhancement theory understands with the charge transfer complex,which is formed by the adsorbed molecule.The decision of surface metal is likewise directed by the plasmon resonance frequency. For this there are **t**wo modes of charge migration interactions are proposed.First, one is the ground state charge migration, and the second one is the excited state charge migration. In the ground state charge migration, charge migration takes place between the molecular ground state and vacant states of the metals.The charge might be moved between the molecule and metal surfaces, relying on the separation between them. This charge migration is governed by the molecular vibrations and the changes into the polarizability that strongly depend upon the vibration bands, bringing about the huge enhancement of the related molecular vibration mode. The ground state charge migration model prompts the development of a surface molecule complex. Vibrations that are symmetric regarding the symmetric element of the complex are just expected to be enhanced. In the energized state charge migration model, an electron from a state beneath the Fermi level in the metal is excited to an unoccupied state of the adsorbed molecule. One can expect resonance if the energy of the incident photon similar to the charge transfer transition state. The scattering intensity majorly dependent on the chemical behavior of the adsorbed molecule and its interaction with the adsorbent, i.e., metallic surface.

5.2.1. Physisorption: When the molecule moves towards the surfaces, there are both physical and chemical phenomenon's are happening through which they influenced each other. The surface could act as a mirror surface where the molecular dipole moments produced an image dipole of inverse polarity on the opposite side of the surface. These two dipoles will attract each other via dipole-dipole interactions resulting in between the metal surface and the molecule such a phenomenon is called physisorption.

5.2.2. Chemisorption: Chemisorption: A subsequent connection is a chemisorption which brings about the conceivable making of a weak chemical bond between the molecule and the metal. This is almost certain if the particle has a lone pair of electrons. When a weak bond is formed, then we say molecules are and adsorbed on the surfaces through chemisorbed or chemically. In spite of the fact that a chemisorbed molecule is more emphatically bound to the surface than a physisorbed one, in the

two cases, the interactions are so weak with respect to the typical chemical bonding and for the charge transfer phenomenon molecule must be chemically adsorbed.

Chemically adsorbed molecules produce a stretching band in the low-frequency region. Correspond to the metal-adsorbate. Usually, chemisorption reduced symmetry of the adsorbed analyteresulting splitting of fundamental modes takes place.

6. Application:

6.1. Detection of body fluids: Body fluids are successfully discriminated by coupling Raman spectroscopy and chemometrics. Hence Raman spectroscopy is reliable and nondestructive and offering substantial advantages over the current techniques used to identify body fluids[6]. Raman spectroscopy provides a solution for the identification of vaginal fluid stain with advanced statistical analysis. Calculated characteristic Raman and fluorescent spectral components were used to build a multidimensional spectroscopic signature of vaginal fluid, which demonstrated reasonable specificity and was able to handle heterogeneous samples from different donors[7]. The Raman signature of dry blood evolves with time in a reproducible way, which suggests that Raman spectroscopy can be potentially used for determining the age of a blood stain[8].Raman spectroscopic signatures play a crucial role in the testing of samples from a variety of pure body fluids obtained from donors of different races, genders, and ages. The sufficient identification of real-life samples can be achieved using the combination of multidimensional signature fitting with multivariate classification and regression analyses[9].

6.2. Detection of contaminated heavy metal ions: Higher intake of cadmium cause acute, chronic, and dangerous poisoning as well as diseases like diabetes, cardiovascular cancer, etc. The contamination of cadmium in cereals occurs from the paddy soils which is contaminated by base metal mining [11-13], industrial discharge [10], phosphate fertilizers [14], etc. if contaminated water is used for the irrigation purposes for the paddy soils, then it requires specific attention because these water effects redox phenomena if aerobic cultivation is a condition, is more then it favors contamination of cadmium while the anaerobic conditions less favor cadmium contamination [14-16]. For this purpose, a lot of analytical methods like atomic absorption spectroscopy (AAS) [17], Laser-Induced Breakdown Spectroscopy (LIBS) [18], FAAS spectrometry [19], voltammetry [20], Atomic Fluorescence Spectrometry (AFS) [21], Graphite furnace atomic absorption spectrometry [17],

visible and near-infrared hyperspectral imaging [22], and microwave-induced plasma atomic emission spectrometry [23] are used for detection of cadmium as well as some other heavy metals in cereals. Apart from these analytical tools, Raman spectroscopy vast and suitable method for the detection of the contaminated heavy metal ions. Raman spectroscopy is a non–destructive vibrational spectroscopy, and it is able to analyze any kind of sample without prior sample preparation very quickly. By using handheld Raman spectroscopy, characterize sample into remote areas before the storage of cereals. Raman spectroscopy is able to characterize trace of the heavy metals in grains more significantly. The intensity of Raman scattering is less significant, so utilizing the SERS technique for enhancement in Raman scattering by incorporation of nanostructured during the characterization.

6.3. Biomolecules: For the study of biomolecules and the pathogens, highly sensitive SERS approaches are widely taken that are represented into the literature and specifically addressed through recently reviewing articles [4]. The word 'biomolecules' is referred molecules that areformed by a living organism, together with the low molecular weight substances that are generally building blocks of life like nucleotides, amino acids, lipids, monosaccharides, vitamins, metabolites, and semiochemicals. Those are containing elements such as carbon, hydrogen, oxygen, nitrogen, phosphorus, and sulfur.

Usability of the SERS technique is various sensitive areas of the studies, Nie and Emory completed probably the most punctual examination on single-atom SERS by joining SERS with transmission electron microscopy (TEM) and filtering burrowing microscopy (STM) methods. Presentation detection of the single particle by adopting SERS protocols and different kinds of measurement in biomedical fields as a flexible testing tool to study different organic atoms like a virus, bacteria, protein, DNA, and RNA [4].

7. Summary

In summary, SERS techniques are the highly sensitivity, proper compatible, non-invasive, and level free technique that offers unique information of the molecules into a very short period of time without any complicated protocols of sample preparation. Through this technique intensity of the Raman signals is much enhanced that gives outbreaks for the Raman spectroscopy.Especially, label-free SERS offers novel intrinsic sub atomic fingerprint information of biological samples with high sensitivity and precision, which has been generally applied into the recognition of the biological and biomedical analytes..

Reference:

1. Modern Raman Spectroscopy- A practical approach by Ewen Smith and Geoffrey Dent, 2005.
2. Andreea Ioana Radu et al., Talanta, 160, 2016, 289-297.
3. Manuel Gomez et al., Material Today, 17, 2014.
4. Xiao-Shan Zheng et al., Spectrochimica Act Part A: Molecular and Biomolecular Spectroscopy, 197, 2018, 56-77.
5. E. C. Le Ru, P. G. Etchegoin, Principle of Surface Enhnaced Raman specrsocopy and Related Plasmonic Effects, 2009.
6. C. K. Muro, K. C. Doty, L. de Souza Fernandes, I. K. Lednev, Forensic Chemistry 1 (2016) 31–38).
7. A. Sikirzhytskaya, V. Sikirzhytski, I. K. Lednev, Forensic Science International 216 (2012) 44–48).
8. K. C. Doty1 & G. McLaughlin1, I. K. Lednev, Anal Bioanal Chem, DOI 10.1007/ s00216-016-9486-z).
9. Sikirzhytski, V., Sikirzhytskaya, A., Lednev, I. K., Appl. Spectrosc. 2011, 65, 1223"1232.
10. Horiguchi, H. Nihon Eiseigaku Zasshi., Jpn. J. Hyg. 2012, 67, 447–454.
11. Sriprachote, A.; Kanyawongha, P.; Ochiai, K.; Matoh, T., Tak Province, Thailand. Soil Sci. Plant Nutr. 2012, 58, 349"359.
12. Honda, R.; Swaddiwudhipong, W.; Nishijo, M.; Mahasakpan, P.; Teeyakasem, W.; Ruangyuttikarn, W.; Satarug, S.; Padungtod, C.; Nakagawa, H., Toxicol. Lett. 2010, 198, 26"32.
13. Williams, P. N.; Lei, M.; Sun, G.-X.; Huang, Q.; Lu, Y.; Deacon, C.; Meharg, A. A.; Zhu, Y.-G., China. Environ. Sci. Technol. 2009, 43, 637"642.
14. Arao, T.; Kawasaki, A.; Baba, K.; Mori, S.; Matsumoto, S., Environ. Sci. Technol. 2009, 43, 9361"9367
15. Kawasaki, A.; Arao, T.; Ishikawa, S., Jpn. J. Hyg. 2012, 67, 478"83.
16. Fan, J. L.; Hu, Z. Y.; Ziadi, N.; Xia, X.; Wu, C. Y. H., Environ. Pollut. 2010, 158, 409"415.
17. Kulkarni CP, International Journal of Food Science and Nutrition, 2017, 2, 2455-4898.
18. Xiande Zhao, Chunjiang Zhao, Xiaofan Du, Daming Dong, Scientific Reports, 2019; DOI: 10.1038 /s41598-018-37556-w.
19. Kafeel Ahmad, Kinza Wajid, Zafar Iqbal Khan, Ilker Ugulu, Hafsa Memoona, Madiha Sana, Khalid Nawaz, Ifra Saleem Malik, Humayun Bashir, Muhammad Sher,

Bulletin of Environmental Contamination and Toxicology 2019,112, 1-7, DOI:10.1007/s00128-019-02605-1.

20. Clinio Locatelli, Dora Melucci, Food Chemistry, 2012, 130, 460-466, DOI: 10.1016/j.foodchem.2011.07.070.

21. Li, F.; Lu, A.; Wang, J., Int. J. Environ. Res. Public Health 2017, 14, 1163, DOI: 10.3390/ijerph14101163.

22. Hande Tinas Nil Ozbek Suleyman Akman, Spectrochimica Acta Part B: Atomic Spectroscopy 2018, 140, 73-75, DOI: 10.1016/j.sab.2017.12.002.

23. Font, R.; Vélez, D.; Del Río-Celestino, M.; De Haro-Bailón, A.; Montoro, R, Microchim. Acta, 2005, 151, 231–239, DOI: 10.1007/s00604-005-0404-x.

24. Li Xu ; Wu WeiJi ; Liu Jia ; Li XingYuan ; Li FengXu ; Li BeiBei, Journal of Food Safety and Quality, 2019, 10, 866-869.

■

How do Insects Communicate?

Kritika Rao*

ABSTRACT: How do ants know what path to follow? Which mechanisms do some male and female moths use to meet each other when located far away? As humans along history, insects have developed different ways to communicate with each other.Do you want to know how and for what purpose do insects communicate by all its senses? Communication between insects is one of the most important keys in insect life and survival. Insects are able to communicate in many different ways, including sound, chemicals, "dances" or visual cues, and vibrations.As species, insects are highly diverse and so is the variety of signals they produce. Their world is constantly abuzz, but the bugs are experts at distinguishing the cacophony created by winds, rain, leaves rustling, and other noises around them. And while the meaning of their vibrations may not be apparent to humans, flies, beetles, and grasshoppers use these communication methods to find each other, attract a mate, and send out warnings about approaching predators and parasites.

Keywords:visualcues, vibrations, abuzz, cacophony, leaves rustling, antennal tapping, round dance, waggles, prodigious, semiochemicals, allelochemicals, rivalry behaviour.

1. Introduction

Communication may be defined as any exchange of information between individuals. For members of the Human species, it is an essential part of all social interactions. We communicate through speech, written language, sign language, body language, Braille, Morse code, and many other cultural and technological inventions. Our brains are uniquely adapted for symbolic communication, but most of our "language" skills are acquired through learning.

Insects also have many ways to communicate but, unlike humans, their "language" is almost entirely innate. Each individual is born with a distinctive "vocabulary" that is shared only with other members of its own species. Learning plays little or no role in the ability to produce these signals or to understand them. Of course, they have particular notes, as of joy, sorrow, anger, despair, etc., which are produced by the wings, usually when on the wing.

2. Why do Insects Communicate?

Insects communicate both with organisms of the same species (intraspecific

*H.No. 519, Awas Vikas Colony, Kunraghat, Gorakhpur

communication) and directly or indirectly with organisms of other species (interspecific communication) for many reasons:

- ✓ Recognition of kin or nestmates
- ✓ Locating or identifying a member of the opposite sex
- ✓ Facilitation of courtship and mating
- ✓ Giving directions for location of food or other resources
- ✓ Regulating spatial distribution of individuals — aggregation or dispersal
- ✓ Establishing and maintaining a territory
- ✓ Warning of danger; setting off an alarm
- ✓ Advertising one's presence or location
- ✓ Expressing threat or submission (agonistic behaviors)
- ✓ Deception / mimicry

3. Types of Insect Communication

Insects use almost all senses to communicate. Along this section, we'll analyse one by one all communication systems that insects developed through the "five sense", just like some of the flashiest examples.

3.1 Tactile communication: "The touch"

"Keep in touch!" For you, it's probably just a metaphor, but for some insects it's really a channel of communication. Since many insects have poor vision and sound perception, physical contact provides an important avenue of communication. In blister beetles (family Meloidae), courtship begins with a series of antennal taps by the male on each side of the female's body. She signals her receptivity by lifting her wing covers (elytra) and allowinghim to climb on her back. But to complete his quest, the male must continue tapping, alternating from side to side at just the right frequency until the female is stimulated to extend her genitalia and begin mating.

Antennal tapping is also an essential component of communication in both ants and termites. Antennal tapping on the hind legs is used during tandem running in both ants and termites. This is a "follow-the-leader" behaviour in which the tapping informs the leader that she has not lost her disciple. If tapping stops, the leader instinctively turns around and searches in ever-widening circles until she re-establishes contact with the follower.

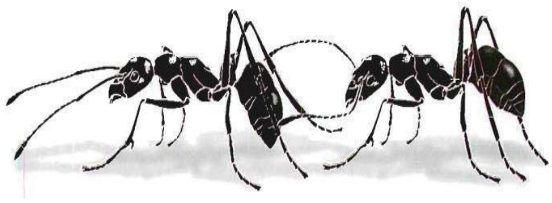

The “dance” language of honeybees is largely a tactile communication system, performed in total darkness on the vertical surface of the honeycomb. A “round dance” signals to nestmates the presence of a nectar source in close proximity to the hive (usually less than 80 feet). The “waggle dance” is used for longer distances. It involves a figure eight pattern with a series of abdominal waggles on a straight run after each half-circle turn. When the message is urgent, only one thing matters: communicating clearly and directly. It also doesn¼t matter whether the receivers “understand” the message. What matters is that they are able to get the information and act appropriately. So from this standpoint, thehoney bee dance certainly qualifies as a means of gathering information,packaging it into symbols, and generating an appropriate response in therecipients.[1]

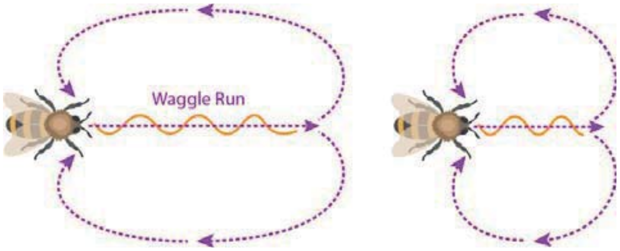

Certain treehoppers (order Hemiptera: family Membracidae) produce vibrations in the tissue of their host plant that can be felt by all other treehoppers on the same plant. Substrate vibrations can be a particularly effective system of communication for small insects who cannot generate an acoustic signal loud enough to be heard more than few inches away.

3.2 Chemical communication: “smell and taste”

Insects are prodigious users of chemical signals and cues, which play diverse and fundamental roles in the transfer of information both within and between species. Chemical signals and cues have been collectively called semiochemicals, derived from the Greek word “semeon” for signal. In this type of communication, the emitter scatters chemical substances at the environment which are detected by other organisms. There exists a lot of types of chemical substances: pheromones (for finding a mate), allelochemicals (as alarm signals, as a defensive system…), etc.

Even more important than how they scatter those substances, is the system they use to detect them: insects have more or less specialized receptors located on their antennae, their legs, etc. We can say they can savor and smell these substances with almost all parts of their body!

Females of some moth species emit pheromones that can be detected even by male moth located kilometers away. This is the case of Small Emperor Moth females

(*Saturniapavonia*), which attract males located almost 16km away.Chemical communication is of great importance to many social animals, but it reaches its pinnacle in the insect societies. There is just "so much to say" when one's life is intimately intertwined with those of tens, thousands, or even millions of other colony members. And although visual, auditory, and tactile stimuli feature prominently, pheromones have emerged as the signals of choice in social insect communication.[2]

Euclytiaflava is a bedbug parasitoid that detects its hosts by the way they smell: more accurately, by detecting the chemical substances that the hosts emit (these types of substances that benefit the receptor but not the emitter are known as **kairomones**)

Recent studies suggest that wasps, ants, and some bees all use structurally related hydrocarbons as queen pheromones, which likely evolved from conserved signals of solitary ancestors.[3] CHCs associated with fertility are further similar among several lower termites, suggesting that the use of CHCs as queen pheromones either is common to most (if not all) insects or has convergently evolved in many insect species.[4]

3.3 Acoustic communication: "the hearing"

In about 18 groups of insects (e.g. cicada, crickets, grasshoppers, bush-crickets, beetles, moths, etc) species use acoustic signals for mate attraction, courtship and rivalry behaviour. In crickets and grasshoppers species-specific sound signals are generated by rhythmically moving either the front wings together or the hind legs against the wings. In this way a scraper is scratched against a file and sounds are generated. Sound is perceived by a variety of specialized ears, which in different species may be located at different parts of the body. These acoustically communicating insects have ears just like people. Unlike people who have only two, however, insects contain at least one ear on almost every part of their body.[5] Due to their conspicuous acoustic behaviour these insects are outstanding model organisms to explore the **neural basis of sound production and auditory processing.**

In crickets only the males sing to attract females. In grasshoppers males and females communicate by acoustic signals. These insects rub their hind legs against the wings using complex movement and motor patterns to generate species-specific songs.Some studies reinforce the idea that males of some mosquitoes species have a higher sensibility in their antennae to detect the vibrations emitted by the beating of female wings through the air.

Insects emit a wide variety of sounds in different frequencies, amplitude and periodicity, and each species has a very well defined pattern. In fact, only by registering and analysing insect's sounds we can identify the species that has emitted them.

While humans can detect sounds in a range from 20 to 20.000Hz, insects can emit and detect sounds above this range (some crickets can produce ultrasounds above 80.000Hz).

Some cicades are able to emit sounds that exceed 120 decibels (they almost reach the human ear pain threshold!). However, some small cicade species emit sounds in a so elevated frequency that can't be listened by humans, but that could be painful for other animals.[6]

Male cicadas have specialized tymbalorgans (drum)–An air sac connected to an area of flexible cuticle that it sharply contracts to make a click–The air sac resonates at the frequency of the clicks and amplifies the sound.[7] The sounds of cicades have many purposes, although they use it specially for finding a mate or to delimitate their territory.In sound emission, the mechanical impedance of the transmitter (the vibrating parts of the insect) should be low, compared with that of the air (the radiation impedance). In sound reception, the impedance of the air should be low, compared with that of the sound-receiving structure. The frequency range of insect sounds is limited, mainly by the impedance problem because the radiation impedance depends very much upon the size of the object relative to the wavelength of sound.[8]

In C. pinguis, the exploitation of new, expanding leaves involves vibrational communication among group members.[9]While feeding on a nutritious, growing shoot, nymphs are uncommunicative. Once that leaf grows to maturity or becomes damaged, however, nymphs engage in a behavior that 50 Reginald B. Cocroft& Jennifer A. Hamel looks and sounds (after converting the plant-borne vibrations into airborne sound) as if they are grunning in placeh i the feet are moved as during walking, but the nymph remains stationary. Nymphs may also walk for a few millimeters, bumping into or walking over other group members. This behavior appears to be contagious; it starts with one or a few nymphs, but waves of restless movements occur every few minutes, gradually involving more and more individuals.

3.4 Visual communication: "The sight"

Some flies and beetles can make light. Fireflies are a type of beetle that make flashes of light. After dark, female fireflies sit on the ground while the males fly above them. Each species of male firefly flashes their own signal of light from their bodies. The female looks for the signal from the firefly of her own species and signals back to him. He then lands beside her so that they can begin the mating process.

Butterflies, flies and other insects use colours in visual communication. Some male flies have bright spots on their wings that they flap around and show off to females during the mating season. Some butterflies have ultraviolet colours on their wings that cannot be seen by humans in natural light. The ultraviolet patterns can be seen by other butterflies and are used as visual communication signals when the butterflies are looking for mates.

Another interesting example of visual communication in insects is that of the grasshopper. Although acoustic calling in grasshoppers is a well known source of communication, grasshoppers visually communicate as a means of courtship and mating.

The courtships of the species Tetrixceperoiinclude a sort of "pronotal bobbing" which involves fast movements of high amplitude while the courtships of *T. subulataand T. undulataperform* "later swinging" and "frontal swinging".[10]

References

1. Peter Borst, Communication amoung the bees, 2018.
2. Robert K. Vander Meer, Michel D. Breed, Mark L. Winston and Karl E. Espelie, Pheromone Communication in Social Insects, Westview Press, Boulder, CO, 1998. 368 pp, illus.
3. Oi et al. 2015, Van Oystaeyen et al, 2014.
4. Hoffman et al. 2014, Weil et al, 2009.
5. ZebTedford, Communication between Insects, 2011.
6. Irene Lobato Vila, How Do Insects Communicate, 2015.
7. allebasi114, Insect Communication, University Of California.
8. Axel Michelsen(Biological Institute, University of Odense, Denmark), HaraldNocke(Zoological Institute, University of Cologene, Germany), Communication in Insects, 2014.
9. Cocroft, RB. 2005, Proceedings Of The Royal Society B: Biological Sciences, 272,1023.
10. Hochkirch , A. , Deppermann, J. and Groning J. 2006, Visual Communication Behaviour as a mechanism behind reproductive interference in three pygmy grasshoppers(Genus Tetrix, tetrigidae, orthoptera) Journal of Insect Behaviour, 19, 559-571.

■

पूर्वांचल की आध्यात्मिक भूमि पर स्वामी विवेकानन्द का आध्यात्मिक भ्रमण

अश्वनी कुमार

सार-संक्षेप- आधुनिक विश्व-पटल पर अध्यात्म एवं भारतीय संस्कृति को स्थापित करने वाले योद्धा, देशभक्त, तूफानी संन्यासी, जन-जन के स्वामी, जिनके रोम-रोम से मातृभूमि के वन्दन के स्वर प्रस्फुटित होते थे जिन्होंने विदेशी शासन से परतन्त्र भारतवासियों के अन्त:करण को झकझोर दिया था जिनके उद्‌बोधनों से प्रेरित होकर भारतीय युवा अपने प्राणों की आहुति मातृभूमि की बलिवेदी पर चढ़ाने हेतु तत्पर थे जिन्होंने करुण स्वर में पुकार कर कहा था, "प्रत्येक भारतवासी तुम्हारा भाई है, गर्व से कहो कि तुम हिन्दू हो और तुम्हारा जीवन मानवता एवं विश्व कल्याण के लिए है।" ऐसे स्वामी विवेकानन्द काशी, गाधिपुर (गाजीपुर), प्रयागराज, अयोध्या अपने प्रथम प्रवास पर परिव्राजक के रूप में आए।

बीज शब्द : पूर्वांचल, नरेन्द्रनाथ दत्त, शिकागो, सनातन परम्परा, प्रयाग

प्रस्तावना

भारतीय सनातन परम्परा में दर्शन हेतु परिक्रमा तीर्थाटन करना विशेष महत्त्व का है। संन्यासी, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी एवं गृहस्थ देश-देशान्तर का यथासम्भव भ्रमण कर ज्ञानार्जन करते थे। गुरुकुल (विश्वविद्यालय) में अन्त:वासी के रूप में शिक्षा ग्रहण करने के बाद ब्रह्मचारी को देश भ्रमण हेतु जाना होता था। संन्यासी की संन्यास दीक्षा के बाद वह परिव्राजक के रूप में विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करते हुए ज्ञानार्जन करता था। वानप्रस्थी एवं गृहस्थ भी समय-समय पर तीर्थाटन एवं दर्शन हेतु भ्रमण किया करते थे। तीर्थाटन एवं सतत भ्रमण करते हुए परिव्रजा करना - मधुकरी करना सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। चतुष्टाश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास) की परिव्रजा आश्रमानुसार महत्त्व की थी।

एक संन्यासी के रूप में स्वामी विवेकानन्द ने भी अपना परिव्राजक काल विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करते हुए व्यतीत किया। प्रारम्भिक भ्रमण काशी, गाधिपुर (गाजीपुर), प्रयागराज, अयोध्या हुआ था। सर्वप्रथम स्वामी विवेकानन्द का आगमन उत्तर प्रदेश की भूमि पर कब हुआ होगा, इस

*जीवनव्रती कार्यकर्ता, विवेकानन्द केन्द्र, कन्याकुमारी

विषय में स्पष्टत: कह पाना अत्यन्त कठिन है। परन्तु संन्यास के उपरान्त स्वामी विवेकानन्द का भारत-भ्रमण का एक लम्बा काल उत्तर-प्रदेश में व्यतीत हुआ।

यदि यह कहा जाए कि स्वामी विवेकानन्द का नाता उत्तर-प्रदेश से उनके जन्म के पूर्व का है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। स्वामी विवेकानन्द की माताजी (भुवनेश्वरी देवी) ने काशी विश्वनाथ जी से एक सम्बन्धी के माध्यम से पुत्र-प्राप्ति की कामना करते हुए मन्नत माँगी थी। इसके परिणामस्वरूप नरेन्द्र का जन्म हुआ और उनकी माँ ने उनका नाम काशी विश्वनाथ के नाम पर वीरेश्वर रखा।

प्रचण्ड साधना से प्रदीप्त होकर ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस कलकत्ता के दक्षिणेश्वर मन्दिर के काली मन्दिर के प्रांगण में स्थित अपने आवास के बरामदे में काशी की ओर मुख करके प्रार्थना कर रहे थे। उसी समय भाव समाधि में उन्होंने देखा कि एक ज्योति-पुंज मोक्षदायिनी काशी से निकलकर आकाश मार्ग से कलकत्ता में प्रवेश कर गया। सहसा ठाकुर के मुँह से निकल पड़ा, "वो आ गया! वो आ गया!" संन्यास के उपरान्त जब स्वामी विवेकानन्द भारत भ्रमण पर निकले तो उत्तर-प्रदेश में उनका प्रवास विभिन्न नगरों में एक परिव्राजक के रूप में हुआ। जिसमें काशी, गाजीपुर, प्रयागराज, मेरठ, लखनऊ, अयोध्या, हरिद्वार, ऋषिकेश, नैनीताल, वृन्दावन आदि स्थान प्रमुख हैं।

मोक्षदायिनी 'काशी' में स्वामी विवेकानन्द जी का आध्यात्मिक भ्रमण

काशी में स्वामी विवेकानन्द का सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तर का, चिरपुरातन और शाश्वत रहा है। माँ भुवनेश्वरी देवी ने पुत्र प्राप्ति की आकाँक्षा से अपने एक घनिष्ठ काशीवासी सम्बन्धी के द्वारा काशी के अधीश्वर जीवों के मुक्तिदाता बाबा विश्वनाथ की पूजा-अर्चना करवाई थी। जब माँ भुवनेश्वरी ने बालक को जन्म दिया तो उसे काशी विश्वनाथ का प्रसाद मानते हुए नाम रखा वीरेश्वर जिसे प्यार से 'बिले' बुलाते थे। यही बालक आगे चलकर स्वामी विवेकानन्द हुए। इस प्रकार देखा जाए तो स्वामी विवेकानन्द का जन्म से ही उत्तर-प्रदेश में स्थित भारत की आध्यात्मिक नगरी काशी से अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध था। दत्त परिवार का काशी से यह सम्बन्ध केवल इतना ही न होकर अपितु पूर्व काल से ही था। वीरेश्वर, बिले, नरेन्द्र, विविदृषानन्द एवं विवेकानन्द आदि नामों से प्रख्यात सन्त के ददाजी श्री दुर्गाप्रसाद दत्त ने 25 वर्ष की अवस्था में संन्यास लेकर दीर्घकाल तक काशीवास किया था। स्वामी विवेकानन्द की जीवनी में ऐसा उल्लेख मिलता है कि उनकी दादी एवं बुआ काशी दर्शन हेतु अन्य सम्बन्धियों के साथ यहाँ आये थे। एक दिन दुर्गाप्रसाद की एक बहन पैदल काशी विश्वनाथ का दर्शन करने जा रही थीं और वर्षा के कारण भूमि गीली होने से फिसलकर गिर गईं। संयोगवश पीछे से संन्यासियों की एक मण्डली आ रही थी। इस मण्डली में से एक संन्यासी उच्च स्वर में बोल उठे, "माई गिर गई" और उन्हें उठाकर बैठा दिया।

यह कोई और नहीं विश्वनाथ दत्त के पिताजी और स्वामी विवेकानन्द के दादाजी संन्यासी वेश में श्री दुर्गाप्रसाद ही थे। दुर्गाप्रसाद की बहन इस संन्यासी का स्वर सुनकर और मुखाकृति देखकर बोल उठी, "कौन दुर्गाप्रसाद?" इस अप्रत्याशित घटना के लिए वो संन्यासी तैयार नहीं था और उसने बहुत दुखित स्वर में कहा, "यहाँ भी तुम पीड़ित करने आ गई" और तत्काल वे उस मण्डली को छोड़कर तेजी से दूसरी ओर चले गए। कालान्तर में दत्त परिवार को समाचार मिला था कि वे काशीधाम के एक मठ के मठाधीश हो गए।

1868 ई. में ठाकुर श्रीरामकृष्ण जी का आगमन काशी हुआ तो वह काशी विश्वनाथ को आभार व्यक्त करने हेतु उनके दर्शन को गए। ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस रानी रासमणि के दामाद माथुर बाबू के साथ नाव से बैजनाथ धाम होते हुए काशी पहुँचे थे। काशी में उन्होंने काशी विश्वनाथ, विशालाक्षी देवी, कालभैरव, संकटमोचन, दुर्गा मन्दिर आदि मन्दिरों का दर्शन किया। एक विशेष घटना उल्लेखनीय है जब ठाकुर नाव से गंगा जी में विहार कर रहे थे। नाव मणिकर्णिका घाट के सामने आ गई तब वहाँ ठाकुर को भाव समाधि लग गई और उन्होंने देखा कि मणिकर्णिका घाट पर जलने वाली प्रत्येक चिता के पैरों के समीप एक पुरुष जाता है और उसके पैरों की गाँठों को खोलता है। भाव समाधि में ठाकुर के मुख से जो उद्‍गार निकले वे इस प्रकार थे, "यहाँ तो साक्षात् महाकाल जीव को मुक्त कर रहे हैं।" काशी प्रवास के काल में ठाकुर एक अद्‍भुत आध्यात्मिक भाव से ओतप्रोत थे, सर्वत्र उनको शिव ही शिव दिख रहे थे।

यहाँ पर ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस की पंचगंगा घाट पर तैलंग स्वामी से भेंट अत्यन्त ही अविस्मरणीय है। यहीं भारत की दो महान आध्यात्मिक विभूतियों का संगम हुआ। ठाकुर ने तैलंग स्वामी के लिए कहा कि ये तो साक्षात् शिव हैं। तैलंग स्वामी एक ब्रह्मज्ञानी, उच्चतम आध्यात्मिक अवस्था में पहुँचे हुए सन्त थे। वे दक्षिण भारत से आकर काशी में अनेक वर्षों से निवास कर रहे थे। उनका काशी आगमन कब हुआ? इसका निश्चित समय ज्ञात नहीं है। काशी के सन्त समाज एवं जनसामान्य के मध्य तैलंग स्वामी के प्रति अत्यधिक श्रद्धा और भक्ति थी। तत्कालीन काशी के सन्त समाज एवं जनसामान्य के मध्य तैलंग स्वामी के प्रति अत्यधिक श्रद्धा और भक्ति थी। तत्कालीन काशी के सन्त समाज के वे गौरव थे। उनके सम्बन्ध में अनेक आध्यात्मिक घटनाएँ उल्लेखनीय हैं जो जनसामान्य के मध्य चर्चा का विषय हुआ करती थीं। पंचगंगा घाट पर दिगम्बर होकर तपती दोपहरी में वे रेत पर प्रसन्नचित्त मुद्रा में लेटे रहते थे। तैलंग स्वामी को दही अत्यन्त प्रिय था। एक बार एक दही बेचने वाली ग्वालिन ने अपना बड़े दही का मटका श्रद्धापूर्वक तैलंग स्वामी को समर्पित कर दिया। उस दही के मटके को तैलंग स्वामी पूरे दिन भक्तों को और श्रद्धालुओं को बाँटते रहे किन्तु इतने पर भी वो समाप्त नहीं हुआ। श्रद्धावश श्रद्धालु दान स्वरूप कुछ पैसे तैलंग स्वामी के पास बिछी चादर पर चढ़ाते रहे। सन्ध्या के समय तैलंग स्वामी ने वो

सारी राशि उस श्रद्धालु ग्वालिन को प्रदान कर दी। यह राशि उसके दही की मात्रा के और एक दिन की कमाई से बहुत अधिक थी। इस घटना को एक लोभी बनिया देख रहा था और उसने विचार किया कि यह तो बड़े फायदे का सौदा है। दूसरे दिन वो भी एक घड़े में लोभी भाव से दही भरकर लाया और इस भाव से तैलंग स्वामी को दही समर्पित किया कि जिस प्रकार विगत दिन उस गरीब ग्वालिन को धनराशि प्राप्त हुई थी उसी प्रकार उसको भी लाभ मिलेगा। जैसे ही उसने तैलंग स्वामी के हाथों दही का घड़ा सौंपा और झूठमूठ कहा कि महाराज जी मैं आपको यह समर्पित करता हूँ। सिद्ध महात्मा तैलंग स्वामी उसके लोभी भाव को भाँप गए और दही का घड़ा गटागट पी गए और खाली मटकी फेंक दी।

काशी आमन्त्रण के उत्तर में प्रथम पत्र 4 फरवरी 1889 को वराहनगर मठ के स्वामी विवेकानन्द ने लिखा, "आपका पत्र मिला जिसमें आपने वाराणसी के स्वर्गोपम नगर में निमन्त्रित किया है। मैं इसे वीरेश्वर का आदेश मानकर स्वीकार करता हूँ। जो वाराणसी और विश्वनाथ के दर्शन से द्रवित नहीं होता, वह पाषाण हृदय है जितना शीघ्र हो सकेगा मैं वहाँ पहुँचूँगा। यह सब अन्ततोगत्वा वीरेश्वर की इच्छा पर निर्भर करता है। मैं दो-चार दिनों से यहाँ कलकत्ता निवासी एक सज्जन के मकान पर हूँ किन्तु वाराणसी के लिए चित्त अत्यन्त व्याकुल है। वहाँ कुछ दिन रहने की अभिलाषा है एवं देखना है कि मुझ जैसे मन्दभाग्य व्यक्ति के लिए श्री विश्वनाथ तथा माँ अन्नपूर्णा क्या करती हैं। अबकी बार मैंने प्रतिज्ञा की है, 'शरीरं वा पातयामी, मन्त्रं वा साधयामि' (मन्त्र की साधना अथवा शरीरनाश) काशीनाथ मेरे सहायक हैं। दूसरे पत्र में स्वामी जी ने लिखा, "मैंने आपको लिखा था कि मैं एक-दो दिनों में ही काशी पहुँच रहा हूँ किन्तु विधि का विधान कौन बदल सकता है? योगेन्द्र (योगानन्द) नामक एक मेरे गुरुभाई को चित्रकूट, ओंकारनाथ आदि स्थानों का दर्शन कर यहाँ लौटने पर चेचक हो गया है। यह समाचार पाकर उसकी सेवा-सुश्रूषा हेतु मुझे यहाँ आना पड़ा है। मैं दो-चार दिनों में ही काशीपुरी-अधीश्वर श्री विश्वनाथ के पवित्र क्षेत्र में पहुँच सकूँ। देखो काशीनाथ की क्या इच्छा है।"

काशी प्रवास के समय स्वामी विवेकानन्द ने अपने जीवन की एक अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण एवं प्रेरणादायी घटना का उल्लेख विभिन्न स्थानों एवं अपने आख्यानों में किया है। काशी में स्वामी विवेकानन्द विश्वप्रसिद्ध प्राचीन दुर्गा मन्दिर का दर्शन करने गये थे। दर्शन के उपरान्त स्वामी जी एक सँकरी गली से जा रहे थे। मन्दिर परिसर एवं आसपास बहुसंख्या में बन्दर विचरण करते हैं। बन्दरों के एक झुण्ड ने स्वामी जी का पीछा किया। स्वामी जी उनसे रक्षा हेतु तीव्र गति से भागने लगे परन्तु बन्दरों के झुण्ड ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। तभी सँकरी गली से एक संन्यासी ने तेज स्वर में कहा, "भागो मत! सामना करो!" विवेकानन्द हाथ में दण्ड लेकर बन्दरों के झुण्ड का सामना करने हेतु तत्पर हुए तभी क्या देखते हैं कि सभी बन्दर ठिठक कर रुक गये और कुछ

समय उपरान्त भाग गए। इस घटना से स्वामी जी को प्रेरणा मिली कि समस्याओं से जितना घबराकर हम भागते हैं उतना ही वे हमारा पीछा करती हैं परन्तु जब हम उनका सामना करते हैं तो निश्चित रूप से हम उनका समाधान पा लेते हैं।

स्वामी जी द्वारा काशी का अन्तिम प्रवास

स्वामी विवेकानन्द अमेरिका के अपने द्वितीय प्रवास से लौटकर काशीवास कर रहे थे। तभी काशी निवास का संकल्प लिए हुए भिनगा के राजा श्री उदय प्रताप सिंह का गोविन्दानन्द नामक सन्देशवाहक स्वामी जी से मिला। राजा साहब के सन्देश में था, "यद्यपि मैं अपने भवन से बाहर न निकलने की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ तथापि यदि आपसे मिलने का समय प्राप्त हो जाए तो मैं अपना व्रत भंग करके भी आपके निवास स्थान पर मिलने आऊँगा।" परन्तु स्वामी जी ने राजा साहब की पवित्र एवं धर्मानुकूल धारणा से की हुई प्रतिज्ञा न तोड़ने का निर्णय करते हुए स्वयं ही समय आने पर उनके निवास भिनगा भवन में उपस्थित होने के लिए कहा। उपयुक्त दिवस को राजा साहब के द्वारा भिजवाई गई घोड़ागाड़ी से स्वामी जी, स्वामी सदानन्द एवं स्वामी गोविन्दानन्द ने भिनगा भवन की ओर प्रस्थान किया। तभी रास्ते में एक अन्य घोड़ागाड़ी से स्वामी शिवानन्द, चारुदत्त मजूमदार एवं हरिदास भी स्वामी जी से मिलने हेतु आए। जब उन्होंने देखा कि स्वामी जी भिनगा के राजा की बग्घी पर बैठकर भिनगा भवन की ओर जा रहे हैं तब वे लोग भी अपनी घोड़ागाड़ी से स्वामी जी के पीछे-पीछे भिनगा भवन की आरे अग्रसर हुए।

राजा भिनगा के आवास पर स्वामी जी पहुँचे तो सरल हृदय राजा उदयप्रताप सिंह ने स्नेह एवं श्रद्धा के साथ स्वामी जी और उनके साथियों का स्वागत किया। राजा साहब ने विश्वपटल पर भारतीय संस्कृति एवं भारत के गौरव को प्रतिस्थापित करने के लिए स्वामी जी की भूरि-भूरि प्रशंसा की। राजा उदयप्रताप सिंह ने स्वामी जी से भारतीय वेदान्त एवं दर्शन के उत्थान तथा सेवा कार्य को करने के लिए काशी में एक धार्मिक संस्था की स्थापना करने का विशेष आग्रह किया और उसके लिए आर्थिक सहायता प्रदान करने को वे सहर्ष प्रस्तुत हुए। वे स्वामी जी की ओर लक्ष्य करके बोले, "बुद्ध एवं शंकर जिस कोटि के हैं, स्वामी जी आप भी उसी कोटि के हैं।" राजा साहब के आग्रह पर स्वामी जी ने कहा कि अत्यधिक प्रवास के कारण उनका स्वास्थ्य वर्तमान में भग्न हो गया है वे इस स्थिति में नहीं हैं कि किसी धार्मिक एवं सेवाभावी संस्था के निर्माण के उत्तरदायित्व का निर्वहन कर सकें। इसलिए अभी इस विषय में कोई वचन नहीं दे सकते हैं। उन्होंने कहा कि वे कलकत्ता लौटने के उपरान्त स्वास्थ्य में सुधार होने पर एवं अपने साथियों से विचार-विमर्श कर इस विषय में निर्णय लेंगे। इस प्रकार राजा उदयप्रताप सिंह एवं स्वामी जी का प्रथम एवं अन्तिम मिलन स्नेहपूर्ण रहा और काशी में रामकृष्ण मिशन एवं अद्वैत आश्रम की स्थापना का वास्तविक कार्य प्रारम्भ हुआ।

अगले दिन स्वामी जी के निवास स्थान पर आकर भिनगा के राजा का एक व्यक्ति एक बन्द लिफाफा स्वामी जी को दे गया। स्वामी जी ने उसको खोलकर देखा तो उसमें 500 रु. का एक चेक था। यह उस राजर्षि ने स्वामी जी को प्रणामी भेजी थी। साथ में एक पत्र भी भेजा था जिसमें स्वामी जी का भिनगा भवन आने के लिए आभार व्यक्त किया गया था तथा सेवा कार्य हेतु एक संस्था का निर्माण काशी में करने का पुन: आग्रह किया गया था। राजा साहब का उत्साह एवं समर्पण देखकर स्वामी जी ने अपने गुरुभाई स्वामी शिवानन्द जी की ओर तत्काल उन्मुख होकर कहा, "महापुरुष, आप इन रुपयों को लेकर काशी में ठाकुर का एक मठ स्थापित कीजिए।" किन्तु उस समय स्वामी शिवानन्द इस कार्य का उत्तरदायित्व ग्रहण करने हेतु सहमत नहीं हुए। स्वामी जी काशी से कलकत्ता बेलूर मठ वापस चले आए किन्तु कुछ ही महीनों पश्चात् उनका स्वास्थ्य अत्यन्त तीव्रता से गिरने लगा। तब भी स्वामी जी को राजा भिनगा का आग्रह स्मरण था तथा वे उस पर गम्भीरता से विचार कर रहे थे। उन्होंने स्वामी सारदानन्द जी से इस कार्य को करने की इच्छा व्यक्त की किन्तु स्वामी सारदानन्द सहमत नहीं हुए। स्वामी जी अपने प्रयास में सतत आग्रही और प्रयत्नशील रहे। उन्होंने स्वामी शिवानन्द के समक्ष पुन: इस बात को रखा। उस समय स्वामी शिवानन्द के मन में इस कार्य को लेकर कुछ असमंजस की स्थिति थी। तब स्वाामी जी ने झिड़कते हुए कहा, "रुपये लेकर कार्य न करने के कारण क्या मुझे धोखेबाज होना पड़ेगा?" अपने प्रिय गुरुभाई के इन करुण शब्दों ने स्वामी शिवानन्द को झकझोर के रख दिया और जून के अन्त में इस कार्य के निमित्त उन्होंने वाराणसी की यात्रा की। यहाँ एक आश्चर्य या सुयोग या नियति का खेल चाहे जो भी हम बुद्धि से कह लें जिस दिन स्वामी विवेकानन्द जी की बेलूर मठ में महासमाधि हुई ठीक उसी दिन काशीधाम में श्रीरामकृष्ण अद्वैताश्रम की स्थापना स्वामी शिवानन्द कर रहे थे। यहीं काशीधाम में स्वामी जी की अन्तिम कीर्ति श्रीरामकृष्ण अद्वैताश्रम है।

पवहारी बाबा के तपस्थली गाजीपुर में स्वामी विवेकानन्द जी का आध्यात्मिक भ्रमण

स्वामी विवेकानन्द का नरेन्द्र के रूप में सम्पूर्ण भारत के भ्रमण का प्रथम चरण 1888 से 1892 ई. तक रहा। स्वामी जी ने जब भारत की आध्यात्मिकता से विश्व को परिचित कराने के लिए शिकागो प्रस्थान किया तब तक उन्होंने सम्पूर्ण भारत का पूर्व से पश्चिम तक उत्तर से दक्षिण तक भ्रमण कर लिया था। स्वामी जी इसी क्रम में काशी से पूरब में स्थित छोटी काशी के नाम से विख्यात गाजीपुर (गाधिपुर, ऋषि विश्वामित्र के पिता राजा गाधि के नाम पर आधाररित) में आध्यात्मिक सन्त पवहारी बाबा से मिलने हेतु गए।

स्वामी विवेकानन्द ने प्रयागराज से काशी होते हुए गाजीपुर के लिए प्रस्थान किया। 24 जनवरी 1890 को स्वामी जी अपने मित्र श्री प्रेमदा दास मित्रा (काशी निवासी) को पत्र लिखकर सूचित करते हैं, "मैं तीन दिन हुए सकुशल गाजीपुर पहुँच गया। यहाँ मैं अपने एक बाल सखा

बाबू सतीशचन्द्र मुखर्जी के यहाँ ठहरा हूँ। स्थान अत्यन्त मनोरम है, गंगाजी पास में ही बहती हैं।" यहाँ निष्कर्ष यह है कि 21 जनवरी 1890 ई. को स्वामी जी गाजीपुर पहुँच गए थे। वाराणसी से 60 किलोमीटर दूर गाजीपुर जिले में स्थित दिलदारनगर रेलवे स्टेशन से ट्रेन द्वारा ताड़ीघाट रेलवे स्टेशन पर पहुँचकर उन्होंने नाव से गंगाजी को पार कर शाम के समय नगर में प्रवेश किया। स्वामी विवेकानन्द का गाजीपुर प्रवास का कारण, उद्देश्य एवं अभिप्राय वहाँ के विख्यात सन्त पवहारी बाबा का दर्शन करना था। स्वामी जी की आध्यात्मिक जिज्ञासा व भारत के आध्यात्मिक सन्त का दिग्दर्शन करना ही इस यात्रा का मूल कारण था। पवहारी बाबा का आश्रम उत्तरमुखी गंगाजी (जहाँ गंगा जी की धारा दक्षिण से उत्तर की ओर सीधी दिशा में प्रवाहित होती है) के सुरम्य तट पर स्थित है। भारतीय अध्यात्म दर्शन के अनुसार उत्तर तटीय गंगाजी के तट पर रहकर साधना करना अत्यन्त फलदायक एवं मोक्षदायक होता है। सम्पूर्ण भारतवर्ष में गंगोत्री से गंगासागर तक अपने अविरल प्रवाह में भारत की आध्यात्मिक, सांस्कृतिक विरासत को सँजोए हुए केवल तीन स्थानों पर गंगाजी ने पूर्व से पश्चिम बहते हुए अपनी धारा को उत्तरमुखी दिशा में प्रवाहित किया है। प्रथम उत्तराखण्ड में देवात्मा हिमालय की गोद में स्थित देवप्रयाग, द्वितीय महादेव की नगरी काशी और तीसरा स्थान गाजीपुर है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार पवहारी बाबा का 1890 का तत्कालीन आश्रम ऊँची दीवारों से घिरा हुआ, उद्यानयुक्त, दो चिमनियों से सुशोभित था और आश्रम के अन्दर एक गुफा थी जिसमें पवहारी बाबा साधनारत रहते थे। अपितु वर्तमान समय में आश्रम में प्राचीन गुफा को सुरक्षा कारणों से बन्द रखा गया है। वहाँ के पुजारी का कहना है कि बाबा के निर्देशानुसार उनके समाधि लेने के पश्चात् उस गुफा में प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया। यदि कभी किसी ने उसमें प्रवेश करने का दुस्साहस किया तो वहाँ किसी जीव के फुँफकारने जैसी ध्वनि सुनाई पड़ी है।

स्वामी जी को 3 फरवरी, 1890 को पवहारी बाबा का दर्शन प्राप्त हुआ। स्वामी जी लिखते हैं, "वास्तव में वे महापुरुष हैं।" स्वामी जी के अनुसार, "मैं उनकी शरण में गया और उन्होंने मुझे आश्वासन दिया जो हर किसी के भाग्य में नहीं। घटना बड़ी विचित्र है, बताई नहीं जा सकती।" वास्तव में यह रहस्य ही है, स्वामी जी की पवहारी बाबा से प्रथम भेंट में ही क्या हुआ होगा जो वह किसी को बताना नहीं चाहते थे। यहाँ भारत के दो आध्यात्मिक सन्तों का साक्षात्कार था जिसको वही समझ सकते हैं जो भारत की गूढ़ आध्यात्मिक भावधारा से अनुप्राणित हैं। सामान्य जन के लिए यह एक पहेली के समान होगा। स्वामी जी लिखते हैं, "ऐसे महापुरुष का साक्षात्कार किये बिना प्राचीन एवं आर्ष ग्रन्थों पर पूर्ण विश्वास नहीं होगा।" अर्थात् शास्त्रों में जो गूढ़ आध्यात्मिक बात कही गयी हैं, उनको स्वामी जी ने पवहारी बाबा के उच्च कोटि की साधना से परिपूर्ण आध्यात्मिक व्यक्तित्व में प्रत्यक्ष देखा था। पवहारी बाबा के व्यक्तिगत पूर्व जीवन सम्बन्धी घटनाओं की सूचनाओं का स्रोत स्वामी विवेकानन्द का लेख, व्याख्यान, संवाद एवं पत्र तथा गाजीपुर के

स्थानीय निवासियों में प्रचलित जनश्रुति है। यह ज्ञात है कि पवहारी बाबा का जन्म वाराणसी के निकट गुन्जी ग्राम में हुआ था। वहाँ से वे बाल्यकाल में ही गाजीपुर से एक मील दूर स्थित गाँव में अपने चाचा के यहाँ आ गए। पवहारी बाबा का बचपन एक सामान्य बालक के समान ही व्यतीत हुआ। अकस्मात प्रिय चाचा की मृत्यु ने बालक के मन में तीव्र वैराग्य का उदात्त भाव उत्पन्न कर दिया। इस भाव को स्वामी विवेकानन्द अत्यन्त सुन्दर रूप से लिखते हैं, "दुख से मर्माहत एवं सन्तप्त बालक शून्य को पूर्ण करने के लिए अब एक ऐसी चिन्तन वस्तु के अन्वेषण के लिए कटिबद्ध हो गया जिसमें कभी परिवर्तन होता ही नहीं।" अब बालक ने आध्यात्मिक ज्ञान की खोज एवं सत्य के अन्वेषण हेतु गुरु की खोज में भारतवर्ष की पवित्र भूमि पर परिभ्रमण हेतु अपने निवास स्थान से प्रस्थान कर दिया।

स्वामी विवेकानन्द के विवरणों से ज्ञात होता है कि बाबा को हिन्दी, संस्कृत के अतिरिक्त तमिल, तेलुगु, बंगला, गुजराती भाषाओं का ज्ञान था क्योंकि संवाद के समय बाबा इन भाषाओं के प्राचीन आध्यात्मिक एवं धार्मिक ग्रन्थों का उल्लेख किया करते थे। अपने इस प्रवास एवं साधना काल में बाबा ने गुजरात में भगवान् दत्तात्रेय एवं अनेक पुरातन ऋषियों की तपस्थली जूनागढ़ स्थित गिरनार पर्वत पर जाकर हठयोग की साधना की थी। तत्पश्चात् वे काशी के निकट अपने गुरु के आश्रम गये। पवहारी बाबा के गुरु एक गाँव में भूमि के नीचे स्थित एक गुफा में रहकर साधना करते थे। अपने गुरु से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर वैष्णव संन्यासी बनकर बाबा गाजीपुर आ गए। पुनः गाजीपुर आने के पश्चात् पवहारी बाबा अपने आश्रम से कभी किसी स्थान पर नहीं गये, कभी-कभी निस्तब्ध घनघोर रात्रि में गंगाजी को तैरकर पार कर दूसरे किनारे पर स्थित जंगल में जाया करते थे। आश्रम में साधना के समय जब वह अपनी भूमिगत गुफा में प्रवेश कर जाते थे तो कब निकलेंगे किसी को ज्ञात नहीं होता। कभी-कभी बाबा छः महीने के लम्बे समय उपरान्त गुफा से निकला करते थे। गुफा में प्रवेश के समय बाबा निराहार रहा करते थे। जब गुफा से बाहर आते तो यज्ञ करते और धुआँ देखकर आश्रम एवं स्थानीय लोगों को ज्ञात होता कि बाबा गुफा से बाहर निकल आए हैं। साधना के समय कई-कई महीनों तक आहार ग्रहण नहीं करने के कारण लोग उन्हें पवहारी अर्थात् जो हवा का आहार करता हो, के सम्बोधन से बुलाने लगे और यही नाम आगे चलकर प्रसिद्ध हुआ। अपितु उनका पूर्व का नाम अभी तक किसी को ज्ञात नहीं है। आहार के रूप में तो कई-कई वर्षों तक वे केवल नीम के पत्ते को पीस कर ही पी लिया करते थे। जब बाबा गुफा से बाहर आते तो यज्ञ करते और मिष्ठान, पकवान आदि व्यंजन स्वयं बनाकर दीन-दरिद्रों एवं सामान्य जन में प्रसाद के रूप में बाँट देते और सन्ध्या के समय केवल नीम के पत्ते के घोल को पीकर तृप्त हो जाते। यह है भारत की आध्यात्मिक परम्परा। कहते हैं कि एक बार तो गुफा में साधना करते हुए एक विषधर नाग ने उनको काट लिया, कुछ घण्टों तक अचेत रहने के बाद जब सचेत हुए तो उन्होंने कहा, "यह तो प्रियतम का भेजा हुआ दूत था।" स्थानीय

लोगों से ज्ञात हुआ कि सर्प और चूहा उनकी गुफा में हिंसक प्रवृत्ति त्यागकर एक साथ निवास किया करते थे अर्थात् प्राणी मात्र से प्रेम के उदात्त भावारोहण के कारण हिंसक जीव भी एकात्मभाव के अनुरूप हो गये थे। पवहारी बाबा की प्राणी मात्र के प्रति एकात्मभाव की यह स्थिति थी कि वे सभी प्राणियों में ईश्वर का प्रत्यक्ष रूप देखते थे। कहा जाता है कि एकबार उन्होंने ठाकुर जी को भोग लगाने हेतु रोटी बनाकर रखी थी तभी कहीं से एक कुत्ता आया और एक रोटी लेकर भागने लगा शेष रोटी लेकर बाबा कुत्ते के पीछे-पीछे दौड़े और कहते रहे, "हे महात्मा! यह रोटी भी लेते जाएँ यह आपकी क्षुधापूर्ति में सहायक होगी।"

स्वामी विवेकानन्द के विवरण से ज्ञात होता है कि उनको एक उच्चकोटि का सन्त हिमालय प्रवास के समय 1896 ई. में मिला था। संवाद के बाद उसने बताया कि अपने सन्त जीवन से पूर्व वह एक चोर था। एक दिन चोरी के निमित्त गाजीपुर के सन्त पवहारी बाबा के आश्रम में गया। सामानों की दो गठरी (पोटली) बाँधने के बाद जब जाने को तत्पर हुआ तब तक सन्त आ गए। चोर वहाँ से केवल एक पोटली ही लेकर भागने लगा। दूसरी पोटली लेकर पवहारी बाबा चोर के पीछे-पीछे महात्मा-महात्मा कहते हुए दौड़े। चोर को रोक कर कहा कि यह दूसरी पोटली भी लेते जाइए आप के काम आएगी। इस घटना से तत्काल उस व्यक्ति का भावान्तर हुआ और महात्मा के सद्विचारों से एक चोर भी उच्चकोटि का सन्त बन गया। यह घटना स्वयं उस व्यक्ति ने बतायी तो स्वामी जी समझ गए कि यह वही सन्त हैं जिनके सान्निध्य में रहने का सौभाग्य एवं अवसर 1890 ई. के गाजीपुर प्रवास के समय उन्हें प्राप्त हुआ था।

अपने जीवन के अन्तिम समय में पवहारी बाबा किसी से मिलते नहीं थे। स्वामी जी से भी बाबा एक बड़े दरवाजे के पीछे से संवाद किया करते थे। स्वामी जी के अनुसार उनकी वाणी अत्यन्त प्रिय एवं मधुर थी। पवहारी बाबा ने अपनी जीवन लीला भी बिना किसी को किसी प्रकार का कष्ट देते हुए समाप्त की। हवन हेतु जो समिधा (लकड़ियाँ) उनकी गुफा के ऊपर वाले कक्ष में रखी जाती थीं उसको एकत्रित करते रहे और एक दिन ज्वाला प्रज्ज्वलित करके अपने नश्वर शरीर को आत्माहुति से अग्नि में समर्पित कर भस्म के रूप में परिवर्तित कर लिया। स्वामी जी लिखते हैं कि अपने जीवन के अन्त में भी इस महान सन्त ने किसी को अन्त्येष्टि सम्बन्धी कार्य का भी कष्ट नहीं दिया।

गाजीपुर से स्वामी जी 7 फरवरी 1890 को पत्र में अपने मित्र काशी निवासी श्री प्रेमदा दास मित्रा को गाजीपुर आने का आग्रह करते हैं क्योंकि स्वामी जी का गाजीपुर प्रवास दीर्घकाल तक बढ़ गया था। पूर्व में स्वामी जी की योजना दीर्घकालीन प्रवास की नहीं थी किन्तु पवहारी बाबा के प्रथम दर्शन के उपरान्त उन्होंने और अधिक समय तक वहाँ रहने का निश्चय किया था। स्वामी जी सन्त के सान्निध्य में इतने मुग्ध थे कि बलराम बसु के भावपूर्ण कलकत्ता वापस आने के आग्रह

को भी अस्वीकार कर दिया। अपितु यहाँ से स्वामी जी राखाल, शशि, बाबूराम एवं गंगाधर आदि गुरुभाइयों को भी गाजीपुर आने का आग्रह करते रहे। यहीं पर स्वामी जी को ज्ञात हुआ कि उनके एक गुरुभाई काली (स्वामी अभेदानन्द) हरिद्वार में पहाड़ी ज्वर से पीड़ित हैं। स्वामी जी के आग्रह पर वह कुछ समय के लिए गाजीपुर आये और पुनः स्वामी जी ने उन्हें वराहनगर कलकत्ता भेज दिया।

सतीशचन्द्र मुखर्जी के गोरा बाजार निवास से स्वामी जी अफीम फैक्टरी में कार्यरत बाबू गगनचन्द्र राय के निवास स्थान पर रहने लगे। यहीं से वे स्वामी अखण्डानन्द जी को गाजीपुर आने का आग्रह करते हैं और निर्देश देते हैं कि वराहनगर में किसी को ज्ञात न हो। स्वामी जी के पत्रों से ज्ञात होता है कि उन्होंने नगर से दूर किसी ग्राम के निकट निर्जन स्थान में पवहारी बाबा के निर्देश पर गुप्त रूप से निवास करके साधना भी की थी। गाजीपुर प्रवास काल में स्वामी जी लगभग प्रत्येक दिन पवहारी बाबा के आश्रम में जाते थे।

स्वामी जी ने पवहारी बाबा से हठयोग में दीक्षा प्रदान करने का आग्रह किया था किन्तु बाबा इसको टालते रहे। वहाँ के स्थानीय लोगों एवं स्वामी जी के अनुसार बाबा ने अपने सम्पूर्ण जीवन में किसी को दीक्षा नहीं दी ना ही किसी को अपना शिष्य ही बनाया। जब स्वामी जी ने आग्रह किया कि इससे आपके विचार जन-जन तक पहुँचेंगे और लोगों की आध्यात्मिक उन्नति में सहायक होंगे तो बाबा ने विनम्रता से अस्वीकार कर दिया।

इस सम्बन्ध में बाबा ने स्वामी जी को रोचक कहानी सुनाई - एक बार एक युवक दुष्कर्म करते हुए पकड़ा गया। लोगों ने सजा स्वरूप उसकी नाक काट दी, दुनिया को दिखाने हेतु वह विरक्त होकर साधु के रूप में जंगल में रहने लगा। कुछ समय बाद एक युवक उसके पास आकर शिष्य बनाने का आग्रह करने लगा। एक दिन उसने युवक को निर्जन स्थान पर ले जाकर तेज उस्तरे से उसकी नाक को काट दिया, नाक काट देने के बाद उसने कहा कि हो गई तुम्हारी दीक्षा। इस प्रकार एक के बाद एक नककटे लोगों ने दीक्षा के रूप में लोगों के नाक काट-काट कर एक नवीन सम्प्रदाय नककटी सम्प्रदाय ही बना डाला।

स्वामी जी के अनुसार पवहारी बाबा ने उन्हें बताया कि तुम्हारी क्या धारणा है कि केवल स्थूल शरीर द्वारा ही लोगों की सहायता हो सकती है? क्या शरीर के क्रियाशील हुए बिना केवल मन से दूसरे के मन की सहायता नहीं की जा सकती? इसी को कालान्तर में स्वामी जी ने बताया, "विचार चाहें गुफाओं एवं कन्दराओं में ही क्यों न हों वे एक दिन उसको तोड़कर बाहर निकलते हैं और अपना प्रभाव स्वतः ही दिखलाते हैं।"

स्वामी जी को यहीं पर पवहारी बाबा से चर्चा करते हुए ध्यान में आया कि जिस प्रकार व्यक्ति रघुनाथ जी की पूजा में तल्लीन होकर लाभ लेता है वही आध्यात्मिक लाभ उसे एकाग्रता

एवं लगन के भाव से कोई भी सामान्य कार्य करते हुए प्राप्त होता है।

स्वामी विवेकानन्द लिखते हैं, "जो प्राणी जितना निम्न स्तर में रहता है, उतना ही अधिक वह इन्द्रियों में सुख अनुभव करता है और उतने ही अधिक परिमाण में वह इन्द्रियों के राज्य में निवास करता है। साधना का अर्थ वह शक्ति होना चाहिए जो पशुभावापन्न मानव को इन्द्रिय भोगों के जीवन के परे ले जा सके, उसे बाह्य सुख देकर नहीं, वरन् उच्चतर जीवन के दृश्य दिखलाकर, उसका अनुभव कराकर। इस विषय में मैंने बाबा में अद्भुत तितिक्षा देखी है, इसलिए मैं उनसे कुछ प्रसाद का भिक्षुक हूँ।" स्वामी विवेकानन्द ने गाजीपुर में पवहारी बाबा के सान्निध्य में यह प्रत्यक्ष देखा और अनुभव किया, "हम सत्य-शुद्ध सत्य को प्राप्त करें, चाहें उसके आन्दोलन में हमारे हृदय के तार छिन्न-भिन्न ही क्यों न हो जाएँ, हम निःस्वार्थ एवं निष्कपट प्रेरणा को प्राप्त करें चाहें उसकी प्राप्ति में हमारा अंग-प्रत्यंग ही क्यों न कट जाए। सूक्ष्म वस्तु काल-स्रोत में प्रवाहित होते-होते अपने चारों ओर स्थूल वस्तुओं को समेटे रहती है और अव्यक्त-व्यक्त हो जाता है, अदृश्य-दृश्य का स्वरूप धारण कर लेता है। जो बात असम्भव सी प्रतीत होती थी वह वास्तविक रूप धारण कर लेती है, कारण कार्य में विचार शारीरिक कार्यों में परिणत हो जाते हैं।"

स्वामी जी ने कहा है कि भारत की आत्मा धर्म है यदि भारत से धर्म को निकाल दिया जायेगा तो भारत समाप्त हो जाएगा और इसका आधार है भारत की सन्त एवं ऋषि परम्परा। भारत में अति प्राचीन काल से एक महान सन्त एवं ऋषि परम्परा विद्यमान रही है। प्राचीन काल से यहाँ के ऋषियों एवं महान सन्तों ने समाज का मार्गदर्शन किया है। सन्त धर्म, अध्यात्म एवं समाज की मूल्यपरक व्यवस्थाओं का पुरोधा एवं अन्वेषक होता है। जब स्वामी जी की भारत के महान सन्त पवहारी बाबा से जो अध्यात्म, धर्म एवं साधना के सम्बन्ध में चर्चा हुई तब उससे स्वामी जी के विचारों में अनेक परिवर्तन हुए। स्वामी जी की अनेक विषयों पर जो धारणाएँ थीं वे पवहारी बाबा से वार्तालाप करके स्पष्ट हो गयीं जो उनके भावी जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुईं। पवहारी बाबा एवं स्वामी जी का जिन विषयों पर संवाद हुआ उसमें गुरु-शिष्य परम्परा एक प्रमुख विषय था। जब स्वामी जी ने पवहारी बाबा की अखण्ड-प्रचण्ड तप-साधना तथा आध्यात्मिक उन्नति को प्रत्यक्ष देखा तब उनका आकर्षण पवहारी बाबा के प्रति होना स्वाभाविक ही था। स्वामी विवेकानन्द के अन्तःकरण में उनसे दीक्षा लेने की इच्छा जागृत हुई और इसके लिए उन्होंने बाबा से बार-बार आग्रह भी किया किन्तु बाबा ने उन्हें दीक्षा नहीं दी क्योंकि वे जानते थे कि स्वामी जी को भारत का पुनर्जागरण का महती कार्य करना है व्यक्तिगत साधना नहीं। वास्तव में स्वामी जी को निमित्त बनाकर ठाकुर एवं बाबा जैसे अनेक सन्तों की साधना कार्य कर रही थी।

एक दिन स्वामी जी चन्द्रमा के प्रकाश में सोये हुए थे उन्होंने देखा कि ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस कातर दृष्टि से उनको देखे जा रहे हैं ऐसा लगातार कई दिनों तक दिखाई दिया। तब स्वामी

जी ने पवहारी बाबा से दीक्षा लेने का आग्रह करना बन्द कर दिया। वास्तव में इन दोनों महान सन्तों ने भावी विवेकानन्द के निर्माण की योजना के रूप में एक साथ कार्य किया जिससे कि कालान्तर में स्वामी विवेकानन्द किसी गुरु के आकर्षण में न पड़कर अपने निमित्त निर्दिष्ट कार्य को निर्बाध रूप से सम्पन्न कर सके क्योंकि सम्पूर्ण भारत के भ्रमण के समय स्वामी विवेकानन्द को ऐसे अनेक महान सन्त मिलने वाले थे और उनका यह भाव किसी के प्रति न हो जिसे ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस एवं पवहारी बाबा ने मिलकर गाजीपुर में ही तिरोहित कर दिया। स्वामी विवेकानन्द की आध्यात्मिक उन्नति के मार्गदर्शक के रूप में श्रीरामकृष्ण परमहंस के साथ-साथ पवहारी बाबा का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा अपितु इन दोनों महान सन्तों ने अपने द्वारा प्रत्यक्ष रूप से कोई कार्य नहीं किया किन्तु उनके द्वारा दिग्दर्शित एवं मार्गदर्शित स्वामी जी ने सम्पूर्ण विश्व को अपने तेजस्वी विचारों से आलोकित कर दिया और भारत को पुनरुत्थान तथा आध्यात्मिक जागरण हेतु जागृत कर दिया। निद्रामग्न भारत को तमस से जगाकर स्वामी जी ने स्वतन्त्रता प्राप्त करने एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए प्रखरता के साथ प्रेरित किया जिसके परिणामस्वरूप अनेक युवाओं ने भारतीय स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर अपने प्राणों को बलिदान कर दिया। अनेक लोगों ने त्याग का प्रतीक भगवा वस्त्र पहन कर भारत की सनातन संन्यासी परम्परा का निर्वाह करते हुए अध्यात्म एवं धर्म जागरण का कार्य किया।

ताड़ीघाट गंगाजी के तट पर बसा उस समय का एक छोटा सा ग्राम था। गंगाजी के एक तट पर गाजीपुर नगर है और ठीक दूसरे तट पर ताड़ीघाट। मुगलसराय जो वाराणसी से सोलह किलोमीटर की दूरी पर रेलवे का मुख्य एवं बड़ा स्टेशन था वहाँ से एक रेलवे लाइन दिलदारनगर होते हुए ताड़ीघाट आती थी जिसका उल्लेख स्वामी जी ने अपने पत्रों में भी किया है। वहाँ से उतरकर गंगाजी को पारकर नाव से गाजीपुर पहुँचा जाता था। वर्तमान में ताड़ीघाट की जनसंख्या एवं बाजार उस समय की तुलना में विस्तारित हो गये हैं लेकिन अभी भी वह ट्रेन मुगलसराय से आती-जाती है। अब गंगाजी को पार करने के लिए पुल बन गया है जिससे लोग सरलता से गाजीपुर नगर की ओर आ-जा सकते हैं।

ईश्वर सर्वव्यापी है उसके ही द्वारा सब संचालित है चाहे सुख हो या दुःख। वह सबकी ध्यान रखता है विशेषतः अपने भक्तों का तो और भी। जो भक्तगण ईश्वर को अपना सर्वस्व अर्पण करके वैरागी बनकर मोक्ष की ओर अग्रसर होते हैं वे तो सदैव ईश्वर-आश्रित ही रहते हैं इसकी एक अद्‌भुत घटना स्वामी विवेकानन्द के जीवन में गाजीपुर में दिखती है। स्वामी विवेकानन्द ने पवहारी बाबा से मिलने हेतु प्रस्थान किया। उस समय स्वामी विवेकानन्द रुपये-पैसे को हाथ से छूते भी नहीं थे। भिक्षा माँगकर प्रसाद ग्रहण कर लेते थे और किसी प्रिय द्वारा यदि यात्रा हेतु रेल टिकट दे दिया जाता तो रेल से यात्रा करते थे। जब स्वामी जी ने मुगलसराय से ताड़ीघाट (गाजीपुर का एक स्टेशन) जाने के लिए रेल से प्रस्थान किया तब वे कई दिनों से भूखे थे। उनके साथ ही

एक व्यापारी सेठ भी यात्रा कर रहा था। वह स्वामी जी के भगवा वस्त्र को देखते हुए अनेक प्रकार के व्यंग्य एवं टिप्पणियाँ करने लगा। वह स्वामी जी को निर्दिष्ट कर बोला कि इतना बलिष्ठ और सुन्दर शरीर है क्यों नहीं मेहनत मजदूरी करके अपना भरण-पोषण करते हो? इस प्रकार समाज के ऊपर आश्रित क्यों हो? देखो! मैं कितना सुखी हूँ मेरे पास सब कुछ है और तुम्हारे पास तो कुछ भी नहीं है। तुम केवल समाज के ऊपर भार स्वरूप हो। इस प्रकार की अप्रिय बातें वो व्यंग्य स्वरूप स्वामी जी से कहने लगा। इधर स्वामी जी की भूख एवं प्यास चरम पर थी यहाँ तक कि पीने का पानी भी नहीं प्राप्त हो पा रहा था। भूख एवं प्यास से उनका सम्पूर्ण मन एवं शरीर क्लान्त हो गया था।

जब गाड़ी ताड़ीघाट रेलवे स्टेशन पर पहुँची तब स्वामी जी स्टेशन पर बैठ गए परन्तु कुछ समय पश्चात् वहाँ के चौकीदार ने सबको वहाँ से हटा दिया तब स्वामी जी स्टेशन के बाहर ही एक छोटे से बरामदे में बैठ गए। वहाँ वह सेठ भी था। उसने अपनी पोटली खोली एवं वो उसमें से विभिन्न प्रकार की मिठाइयाँ एवं अन्य खाद्य सामग्री निकालकर स्वामी जी को दिखाकर खाने लगा और प्रसन्नता से कहने लगा कि 'देखो मैं कितना अच्छा भोजन कर रहा हूँ और विभिन्न प्रकार के व्यंजनों का भी सेवन कर रहा हूँ। तभी एक व्यक्ति हाथ में पानी का लोटा, एक चटाई और खाने की एक पोटली लेकर वहाँ आया और उसने इधर-उधर देखा तो स्वामी जी के समीप आया और उनको दण्डवत प्रणाम करके सभी वस्तुएँ देते हुए उनसे ग्रहण करने का आग्रह किया। स्वामी जी ने समझा कि सम्भवतः यह व्यक्ति गलती से यहाँ उनके समीप आ गया है। यदि वह इस प्रकार आया है तो वे वस्तुएँ लेना अनुचित है। स्वामी जी के बारम्बार कहने पर उस व्यक्ति ने कहा कि ये सभी वस्तुएँ आप ही के लिए हैं, कृपया इनको ग्रहण करें। तब स्वामी जी ने कहा कि हम एक दूसरे को जानते तक नहीं हैं तो आप किस प्रकार ये वस्तुएँ यहाँ मेरे लिए लेकर आ गए। तब उस व्यक्ति ने बताया कि मैं यहाँ ताड़ीघाट का हलवाई हूँ, मेरी एक मिठाई की दुकान भी है। दोपहर के भोजन के पश्चात् मैं थोड़ा आराम करने हेतु लेटा था तभी भगवान् रामलला आये और कहने लगे कि तुम यहाँ आराम से सोये हो और रेलवे स्टेशन पर मेरा एक भक्त संन्यासी भूखा-प्यासा है। जाओ उसके लिए भोजन एवं मिष्ठान ले जाओ। तब मैंने सोचा कि सम्भवतः यह सपना था और मैं पुनः सो गया लेकिन कुछ समय बाद पुनः रघुनाथ जी आए और मुझे चारपाई से धक्का देकर गिराते हुए बोले कि तुम अभी भी सोए हो जाओ अतिशीघ्र भोजन एवं मिठाई लेकर स्टेशन पहुँचो। तब मैंने इसको भगवान् का आदेश मानकर पूड़ी-सब्जी बनायी एवं सुबह की बनी मिठाई लेकर यहाँ आया। यहाँ पर आस-पास देखा तो कोई अन्य संन्यासी या साधु नहीं था। केवल आप ही थे, तो मैं आपके समक्ष आ गया। इतना कहकर वह स्वामी जी को प्रसाद ग्रहण करने का आग्रह करने लगा। तब स्वामी जी ने भोजन प्रसाद ग्रहण कर जल पिया।

यह सब कुछ स्वामी जी पर व्यंग्य करने वाला सेठ देख रहा था उसे अपने अनुचित

आचरण एवं व्यवहार पर अपराधबोध हुआ और वह बारम्बार स्वामी जी से क्षमा याचना करने लगा। यहाँ पर स्वामी विवेकानन्द ने यह अनुभव किया कि ईश्वर की असीम अनुकम्पा उन पर बरस रही है और वो उनसे कोई विशिष्ट एवं अपने द्वारा निर्दिष्ट कार्य करना चाह रहा है। इस घटना से उनका ईश्वर पर विश्वास और दृढ़ हो गया। यहाँ श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण का यह उद्घोष कि जो मेरा या मेरे द्वारा निर्दिष्ट कार्य करके पूर्णत: मेरे ऊपर ही आश्रित रहता है उसके योगक्षेम का मैं सदैव वहन करता हूँ ('अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना: पर्युपासते। तेषां निम्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।')।

इस प्रकार स्वामी जी ने भारत में अपने जीवन के प्रवास में जिन लोगों से प्रेरणा प्राप्त की उनमें से एक सन्त पवहारी बाबा हैं जिनकी साधना-स्थली बनने का गौरव गाजीपुर को प्राप्त हुआ। स्वामी जी ने 3 अप्रैल 1890 ई. तक गाजीपुर, उत्तर-प्रदेश में आध्यात्मिक लाभ हेतु निवास किया। स्वामी जी ने अपने भ्रमण के चार सालों (1888 से 1892) में 68 दिनों तक का एक लम्बा काल गंगाजी की पावन गोद में बसी छोटी काशी के नाम से प्रसिद्ध इस नगरी में व्यतीत किया जहाँ उन्होंने भारतीय सनातन सत्य के एकात्मदर्शन को प्रत्यक्ष पवाहारी बाबा के जीवन के रूप में देखा।

तीर्थराज प्रयागराज में स्वामी विवेकानन्द जी का आध्यात्मिक भ्रमण

गंगा-यमुना-सरस्वती के संगम पर बसा पवित्र तीर्थराज है प्रयागराज। स्वामी विवेकानन्द वाराहनगर मठ से बैजनाथ होते हुए दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में प्रयागराज पहुँचे। वास्तव में स्वामी जी ने कलकत्ते से काशीधाम के लिए प्रस्थान किया था क्यों कि काशी में निवास कर आध्यात्मिक लाभ लेने की उनकी प्रबल इच्छा थी परन्तु जब स्वामी जी बैजनाथ में थे तभी उनको सूचना मिली कि स्वामी योगानन्द जी चेचक से बीमार हो गए हैं। अपने प्रिय गुरुभाई की अस्वस्थता का समाचार प्राप्त होने पर स्वामी जी तत्काल प्रयाग के लिए प्रस्थान कर गए। स्वामी विवेकानन्द ने प्रयाग से अपना पहला पत्र 30 दिसम्बर 1889 को बलराम बसु को लिखा। उस पत्र में वे उल्लेख करते हैं कि गुप्त महाराज के एक पत्र से योगानन्द के अस्वस्थ होने का समाचार प्राप्त हुआ। मैंने तत्काल प्रयाग के लिए प्रस्थान किया और दूसरे दिन ही यहाँ पहुँच गया। ऐसी मान्यता है कि प्रयागराज में ही ब्रह्मा जी ने सृष्टि की रचना के बाद प्रधान यज्ञ किया था अत: इस कारण इस स्थान का नाम प्रयाग हुआ। प्रयागराज में बारह माधव विद्यमान हैं और इसकी अधिष्ठात्री देवी ललिता देवी हैं। प्राचीनकाल से चले आ रहे तप-ध्यान, संवाद-परिचर्चा की कुम्भनगरी प्रयागराज जहाँ भरद्वाज ऋषि का विश्वविद्यालय था, जहाँ कुमारिल भट्ट जैसे प्रकाण्ड विद्वान एवं तपस्वी ने अपने जीवन के अन्तिम क्षण में निर्विकार भाव से तूषानल (धान) की भूसी पर अग्नि प्रज्ज्वलित कर बैठे हुए ही आदिशंकर का अपने शिष्य प्रकाण्ड विद्वान मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ करने हेतु मार्गदर्शन किया था और आदिशंकर उनकी विद्वता, तपस्या एवं सरलता से अभिभूत हो गये थे।

देवात्मा हिमालय की गोद से निकली गंगाजी एवं यमुना जी का सुरम्य संगम इस प्रकार प्रतीत होता है जैसे नीलकण्ठ रूपी श्यामा यमुना को श्वेत धवल ब्रह्मापुत्री गंगा आप्लावित करते हुए आलिंगन कर रही हों। सदियों से अविरल प्रवाहित यह संगम प्राचीन भारतीय सनातन संस्कृति का साक्षी रहा है। प्रयागराज में महर्षि भरद्वाज का गुरुकुल (विश्वविद्यालय) था जिसके कुलपति स्वयं महर्षि भरद्वाज थे और उस समय वहाँ दस हजार विद्यार्थी अध्ययनरत थे। महर्षि भरद्वाज विद्वान एवं महान वैज्ञानिक होने के साथ-साथ प्रखर तपस्वी भी थे। महर्षि विमानशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि विषयों के प्रख्यात अन्वेषक थे। भगवान् श्रीराम ने अपने वनगमन के समय भरद्वाज ऋषि के आश्रम में एक रात्रि निवास किया था। महर्षि ने ही उन्हें चित्रकूट में निवास करने का सुझाव दिया था।

इसी संगम एवं प्रयाग नगरी की महिमा रामायण में वाल्मीकि मुनि इस प्रकार करते हैं- 'अवकाशो विविक्तोऽयं महानद्योः समागमे। पुण्यश्च रमणीयश्च वसत्विह भवान् सुखम्।।' "गंगा और यमुना - इन दोनों महानदियों के संगम के पास यह स्थान बड़ा ही पवित्र और एकान्त है, यहाँ की प्राकृतिक छटा भी मनोरम है, अतः तुम यहीं सुखपूर्वक निवास करो।"

भगवान् श्रीराम के वनगमन के समय उनके प्रयागराज पहुँचने पर गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में सुन्दर ढंग से तीर्थराज प्रयाग की महिमा का वर्णन किया है-

'को कहि सकई प्रयाग प्रभाऊ। कलुष पुंज कुंजर मृगराऊ।।
अस तीरथपति देखि सुहावा। सुख सागर रघुबर सुखु पावा।।'

अर्थात् पापों के समूह रूपी हाथी को मारने के लिए सिंह रूप प्रयागराज का महत्त्व-माहात्म्य कौन कह सकता है। ऐसे सुहावने तीर्थराज का दर्शन कर सुख के समुद्र रघुकुलश्रेष्ठ श्रीराम जी ने भी सुख पाया।

'यह सुधि पाइ प्रयाग निवासी। बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी।।
भरद्वाज आश्रम सब आए। देखन दशरथ सुअन सुहाए।।'

अर्थात् यह समाचार सुनकर प्रयाग निवासी ब्रह्मचारी, तपस्वी, मुनि, सिद्ध और उदासी सब दशरथ जी के सुन्दर पुत्रों को देखने के लिए भरद्वाज मुनि के आश्रम आये। आगे गोस्वामी जी कहते हैं-

'संगमु सिंहासनु सुठि सोहा। छत्रु अखयबटु मुनि मन मोहा।।
चवँर जमुन अरूणाचल गंगा तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद भंगा।।'

अर्थात् (गंगा, यमुना और सरस्वती) संगम ही उसका अत्यन्त सुशोभित सिंहासन है। अक्षयवट छत्र है, जो मुनियों के भी मन को मोहित कर लेता है। यमुनाजी और गंगाजी की तरंगें उसके (श्याम और श्वेत) चँवर हैं जिनको देखकर ही दुःख और दरिद्रता नष्ट हो जाती है।

'छेत्रु अगम गढ़ गाढ़ सुहावा। सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा।।
सेन सकल तीरथ बर बीरा। कलषु अनीक दलन रनधीरा।।'

अर्थात् प्रयाग क्षेत्र ही दुर्गम, शक्तिशाली और सुन्दर गढ़ है जिसको स्वप्न में भी (पापरूपी) शत्रु नहीं भेद सकता। सम्पूर्ण तीर्थ ही उसके सैनिक हैं जो पापरूपी शत्रु को कुचल डालने में समर्थ हैं। जब स्वामी विवेकानन्द प्रयागराज पहुँचे तो माघ मास का समय था। माघ मास में त्रिवेणी के संगम पर सन्त-महात्मा और धार्मिक जनमानस कल्पवास करते हैं। यहाँ कल्पवास प्राचीन काल से चलता आ रहा है। कल्पवास के समय कल्पवासी को आध्यात्मिक उन्नति एवं साधना-तप के लिए अनेक कठिन विधि-विधानों का पालन करना होता है जिसमें आहार, वाक्, विचार, संयम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। कल्पवासी गंगा, यमुना एव सरस्वती के संगम पर ही अपनी कुटिया बनाकर निवास करते हैं। अपने ही हाथ का बना सात्विक आहार ग्रहण करते हैं तथा साधना, भजन और सत्संग के द्वारा सामूहिक आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करते हैं।

यहीं पर प्रत्येक बारह वर्ष के बाद महाकुम्भ का आयोजन होता रहा है। भारतीय संस्कृति में कुम्भ का अपना विशेष महत्त्व है। कुम्भ का व्यापक रूप से सामाजिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण है। स्वामी जी के पत्र से ज्ञात होता है कि उस समय प्रयाग में गोपाल माँ, योगिन माँ एवं निरंजन महाराज भी थे जिन्होंने कल्पवास करने का निश्चय किया था। अपने एक पत्र में स्वामी जी लिखते हैं, "यहाँ के लोग मुझसे आग्रह कर रहे हैं कि मैं माघ मास यहीं व्यतीत करूँ पर मैं तो वाराणसी जा रहा हूँ। गोपाल माँ एवं योगिन माँ यहाँ कल्पवास करेंगी शायद निरंजन भी यहीं रहेगा। योगानन्द क्या करेगा मैं नहीं जानता।"

प्रयागराज में स्वामी जी की अनेक ज्ञानी, विद्वानों एवं साधु-सन्तों से भेंट हुई परन्तु इसका कोई विस्तृत विवरण नहीं प्राप्त होता है। अपने प्रयागराज प्रवास के सयम स्वामी विवेकानन्द ने प्रयाग का किला, अलोपी माता मन्दिर, भरद्वाज मुनि आश्रम आदि स्थानों का दर्शन एवं भ्रमण किया। भरद्वाज मुनि के आश्रम में ही श्रीरामचन्द्र जी ने अपने अनुज लक्ष्मण एवं भार्या सीता के साथ वनवास जाते समय निवास किया था। यहाँ भरद्वाज मुनि ने प्रभु श्रीराम की सेवा-पूजा की थी और अनेक विषयों पर उनका वार्तालाप हुआ था। भरद्वाज मुनि ने ही भगवान् श्रीराम को दक्षिण की ओर जाने का मार्ग बताया था जिससे भगवान् श्रीराम ने चित्रकूट होते हुए दक्षिण दिशा की ओर अपना प्रवास किया था। जब भरत श्रीराम को मनाकर वापस अयोध्या ले जाने के लिए आये तो भरद्वाज मुनि से मिलकर उन्होंने अपने आराध्य भगवान् श्रीराम के विषय में यहीं से सूचना प्राप्त की। उन्होंने प्रयागराज से दक्षिण दिशा की ओर चित्रकूट के लिए प्रस्थान किया। तब भरत ने अपनी माताओं और प्रजा के साथ प्रयागराज से उसी मार्ग से चित्रकूट की ओर प्रस्थान किया जिस मार्ग से भगवान् श्रीराम जी गए थे। प्रयाग किले के पास ही एक प्राचीन हनुमान जी की लेटी हुई प्रतिमा

है, उसके विषय में कहा जाता है कि जब गंगाजी में भयंकर बाढ़ आती है तब बाढ़ का पानी बढ़ते-बढ़ते किले के पास हनुमान जी की प्रतिमा के चरण को स्पर्श करते ही पानी घटने लगता है। किले के भीतर एक प्राचीन अक्षयवट है जिसकी स्थानीय लोगों में धार्मिक मान्यता यह है कि यहाँ पर श्रद्धालुओं की प्रार्थना पूर्ण हो जाती है। प्राचीन काल में साधक एवं ऋषि-मुनि यहाँ पर तपस्या करते थे। उनके द्वारा तपस्या हेतु उपयोग की गयी गुफाओं के अवशेष आज भी वहाँ विद्यमान हैं।

प्रयागराज में त्रिवेणी पर प्रत्येक छह वर्ष पर कुम्भ एवं बारह वर्ष पर महाकुम्भ प्राचीन काल से लगता आ रहा है। भारतीय संस्कृति में कुम्भ की महिमा एवं महत्त्व अपार है। यह विश्व का सबसे बड़ा समागम है जिसमें प्राचीन काल से ही ऋषि-मुनि, साधु-संन्यासी यहाँ आकर कल्पवास करते हुए जनसामान्य को दर्शन देते हैं और विभिन्न विषयों पर मार्गदर्शन करते हैं। संगम क्षेत्र का कण-कण ऋषियों की पावन रज से पवित्र हो जाता है। करोड़ों लोगों का आगमन निर्बाध रूप से संगम के तट पर होता है और सनातनी हिन्दू यहाँ तप, पूजा करते हुए साधनारत होकर माघ मास में निवास करते हैं। प्रयागराज का कुम्भ अद्‌भुत होता है। स्वयं लेखक भी 2013 के महाकुम्भ में इसका साक्षी रहा है। 2013 में 63 वर्ग किलोमीटर में कुम्भ नगरी त्रिवेणी संगम पर बसी थी जिसका दृश्य अत्यन्त मनोहर एवं आध्यात्मिक अनुभूति से परिपूर्ण था। वास्तव में यह सौभाग्य अवश्य ही पूर्वजन्म में किये गये पुण्यकार्य से ही प्राप्त होता है। अपने इन 60 दिनों के महाकुम्भ निवास एवं कल्पवास में भारत की आध्यात्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशेषता का जो सुन्दर दृश्य और समन्वय देखा वह अवर्णनीय है। प्रमुख स्नान की तिथियों के दिवस त्रिवेणी संगम पर आने वाले श्रद्धालुओं की संख्या तो एक करोड़ से भी अधिक थी। श्रद्धालु बीस से पच्चीस किलोमीटर की पैदल यात्रा करते हुए त्रिवेणी स्नान हेतु आए थे। हम सब कार्यकर्ता देखते रह जाते थे कि विभिन्न भाषाओं के बोलने वाले लोग बड़े-बुजुर्ग, युवा सभी एक ही दिशा में त्रिवेणी संगम की ओर प्रयाण कर रहे हैं। 80-80 वर्ष के बुजुर्ग भी आवश्यक वस्तुओं की पोटली सर पर रखे हुए सतत अग्रसर हो रहे हैं। क्या निर्धन क्या धनी, न किसी प्रान्त का भेद, न किसी भाषा का भेद, न किसी जाति का भेद बस सभी एक ही पथ के पथगामी, समाज में व्याप्त सभी भेद वहाँ अभेद हो गए। एक ही भाव ईश्वर के प्रति श्रद्धा-भक्ति, शरीर क्लान्त परन्तु मन प्रफुल्लित, अद्‌भुत दृश्य। सामान्य जन के साथ साधु, संन्यासी, तपस्वी एवं समाज का भी समागम। जिस प्रकार कोई माँ अपने बच्चों को बिना किसी भेद-भाव के वात्सल्य एवं प्रेम के साथ अपने आँचल से ढककर गोद में उठा लेती है उसी प्रकार माँ गंगा भी सबको बिना किसी भेद-भाव के अंगीकार कर रही हैं। कुम्भ नगरी में चहुँओर आध्यात्मिक रूप से उच्चकोटि के साधक सन्तों का निवास, धूनी के समक्ष भस्म लगाकर बैठे हुए संन्यासीगण अति उत्साह से चहुँओर ईश्वर भजन एवं कीर्तन कर रहे हैं। इस प्रकार एक साथ इतने महान सन्तों का सहजता के साथ दर्शन प्रयागराज कुम्भ में

देखने का यह अनुभव अविस्मरणीय है। प्रयागराज के कुम्भ में न कोई भूखा रहता है न कोई बेसहारा, चाहे श्रद्धालुओं की संख्या करोड़ों में ही क्यों न हो। इतनी बड़ी संख्या में आये हुए श्रद्धालुओं की जिजीविषा एवं तप का भाव विरले ही अन्यत्र देखने को मिले। कुम्भ के समय का चीनी यात्री ह्वेनसांग का विवरण देना भी यहाँ प्रासंगिक होगा। पाँचवीं शताब्दी में भारत के महान सम्राट हर्षवर्धन 6 एवं 12 वर्ष पर लगने वाले प्रत्येक कुम्भ एवं महाकुम्भ में यहाँ आते थे। त्रिवेणी के संगम पर वह अपना सब कुछ दान दे देते थे और अपनी भगिनी से वस्त्र माँगकर पहनते और अपनी राजधानी कन्नौज वापस लौट जाते थे। गत वर्ष 7 जनवरी 2019 से 4 मार्च 2019 तक प्रयागराज में त्रिवेणी के संगम पर कुम्भ लगा था।

ऐसी प्रयागराज की भूमि में आकर स्वामी विवेकानन्द अभिभूत थे। यही वह पवित्र भूमि है जहाँ कुमारिल भट्ट ने गुरु अपमान का प्रायश्चित करने हेतु तुषानल (धान की भूसी की आग) में अपने आपको भस्मीभूत कर लिया था। परन्तु कुमारिल भट्ट अर्धरूप में दावानल में जल रहे थे तब आदिशंकर को ज्ञात हुआ और दौड़ते हुए उनसे मिलने आये। उस समय कुमारिल भट्ट का स्थितप्रज्ञ भाव देखकर आदिशंकर भी अभिभूत हो गये और इस महान ऋषि को कोटि-कोटि प्रणाम किया। जब शंकर ने अपने आने का मन्तव्य बताया तो कुमारिल भट्ट ने उन्हें अपने शिष्य प्रकाण्ड विद्वान मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ करने का निवेदन किया और देखते ही देखते आदिशंकर के आँखों के समक्ष निर्विकार एवं समभाव से तुषानल ने अपने नश्वर शरीर को भस्म कर लिया। प्रयागराज में ही अलोपी माता का मन्दिर है जो बावन शक्तिपीठों में से एक है। यहाँ पर देवी सती की कलाई गिरी थी। प्रत्येक वर्ष यहाँ पर लाखों श्रद्धालु दर्शन करने आते हैं। मान्यता यह है कि यहाँ पर माता की अंगुलियाँ अक्षयवट, मीरापुर एवं अलोपी में गिरी थीं। यहाँ की अधिष्ठात्री देवी ललिता देवी एवं भैरव 'भव' हैं। यहाँ पर अक्षयवट के निकट ललितेश्वर महादेव का भी मन्दिर है। मत्स्यपुराण में वर्णित है, "प्रयागे ललिता देवी, नैमिषे लिंग्धारिणी, प्रयागे ललिता, कामाक्षी गन्धमाद।।"

अयोध्या में स्वामी विवेकानन्द जी का आध्यात्मिक भ्रमण

श्रीरामचन्द्र की जन्मभूमि अयोध्या धाम में स्वामी विवेकानन्द का आगमन 1890 के लगभग हुआ। कलकत्ते से स्वामी जी का हृदय हिमालय दर्शन के लिए अत्यन्त व्याकुल था क्योंकि ठाकुर रामकृष्ण का वचन था कि जिसने सागर और हिमालय का दर्शन नहीं किया उसकी आध्यात्मिक उन्नति कैसी? हिमालय दर्शन की उत्कट अभिलाषा मन में धारण करते हुए स्वामी जी अपने गुरुभाई स्वामी अखण्डानन्द जी के साथ काशी आ पहुँचे। स्वामी अखण्डानन्द जी इससे पूर्व हिमालय, तिब्बत, कश्मीर आदि स्थानों का विस्तृत भ्रमण कर चुके थे।

जब स्वामी जी काशी में निवास कर रहे थे तब अखण्डानन्द जी से कहते रहे कि तुरन्त हिमालय चलो परन्तु गुरुभाई अखण्डानन्द जी के मन में स्वामी जी को अयोध्या दर्शन कराने की

इच्छा थी। स्वामी अखण्डानन्द पूर्व में एक बार अयोध्या का दर्शन कर चुके थे। अतः उन्होंने अयोध्या के वास्तविक आध्यात्मिक स्पन्दन को अवश्य ही अनुभव किया होगा। वही अनुभूति स्वामी अखण्डानन्द अपने प्रिय गुरुभाई जिनको वे अपने प्राणों से भी अधिक प्रेम करते थे जो भविष्य में चलकर संघ का गठन करने वाले थे एवं जिसके चौथे अध्यक्ष के दायित्व का निर्वहन स्वयं स्वामी अखण्डानन्द को करना था। भला अपने अग्रज को अयोध्या की पावन पवित्र रज से कैसे वंचित होने देते?

सरयू नदी के तट पर पावन सप्तपुरी अयोध्या वही भूमि है जहाँ भगवान् श्रीविष्णु ने त्रेतायुग में श्रीराम के रूप में जन्म लिया और अपनी लीला दिखाई और रामराज्य जैसी आदर्श व्यवस्था स्थापित की। वही अयोध्या जहाँ वसिष्ठ ऋषि जिनका स्थान सप्तर्षियों में है, जिन्होंने इक्ष्वाकु वंश के राजाओं का गुरुपद स्वीकार कर अयोध्या में निवास किया। वही अयोध्या जहाँ ऋषि विश्वामित्र ने आकर राजा दशरथ से लोकहित, समाजहित, राष्ट्रहित के लिए राम एवं लक्ष्मण को माँगा था और भावी चुनौतियों हेतु प्रशिक्षित किया था।

अयोध्या मथुरा माया काशी काचिरवन्तिका, पुरी द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिका।

अयोध्यां तु धर्मज्ञं दीर्घयज्ञं महाबलम्, अजयत् पांडवश्रेष्ठो नातितीव्रेणकर्मणा।।

(सभापर्व 30-2)

कालान्तर में भगवत प्रिय तुलसी ने तपस्वी की भाँति सरयू तट पर कुटिया में निवास करते हुए मानस के कुछ अंशों की रचना की थी। श्रीरामचरितमानस में तुलसीदास जी ने श्रीराम जी के लीला वर्णन के साथ वेदान्त को सहज भाषा में निरूपित कर जन-जन तक पहुँचाया। जहाँ से स्वामी नारायण सम्प्रदाय के संस्थापक नीलकण्ठ स्वामी जी महाराज ने 10 वर्ष की अवस्था में श्रावण मास के घनघोर तिमिर में उफनाती सरयू नदी की धारा में आध्यात्मिक उन्नति एवं अपने जीवन के उद्देश्य की पूर्ति हेतु छलांग लगा दी थी। वे भारत के विभिन्न भागों में प्रचण्ड साधना एवं तप के पश्चात् गुजरात पहुँचे और उन्होंने स्वामी नारायण जैसे आध्यात्मिक संगठन की स्थापना की।

स्वामी अखण्डानन्द जी ने जब अयोध्या जाने के विषय में स्वामी जी से पूछा तब उन्होंने एकदम ही मना करते हुए अस्वीकृति व्यक्त कर दी। किन्तु स्वामी अखण्डानन्द जी कहाँ मानने वाले थे? वे हठात् काशी से अयोध्या हेतु दो टिकट खरीदकर ले आये। तब स्वामी जी ने अपने अत्यन्त प्रिय एवं स्नेहाशीष गुरुभ्राता के समक्ष निरुत्तर होकर बेमन से अयोध्या के लिए प्रस्थान किया। वे ट्रेन में अत्यन्त शान्त भाव से चुपचाप बैठे रहे और उन्होंने अपने गुरुभाई से भी बोलना बन्द कर दिया। जब अयोध्या उतरे तो मौन रहते हुए घोड़ागाड़ी पर चढ़कर एक धर्मशाला में निवास हेतु चले गये। काशी से चलते ही उन्होंने अपने गुरुभाई से किसी भी प्रकार का संवाद एकदम ही बन्द कर दिया था। अयोध्या आगमन के पश्चात् संध्याकाल स्वामी अखण्डानन्द जी के कहने पर

लक्ष्मणघाट पर स्थित सीताराम मन्दिर के लिए प्रस्थान किया। स्वामी जी को अखण्डानन्द जी वहाँ के पुजारी एवं सन्त श्री जानकीशरण दास जी से मिलवाना चाहते थे। संयोग से उस शाम जानकीशरण दास जी से भेंट सम्भव नहीं हो पायी। अखण्डानन्द जी निराश भाव से स्वामी जी के साथ अपने निवास स्थान पर आ गये।

दूसरे दिवस प्रात:काल दोनों पुन: उपस्थित हुए और जानकीशरण दास तथा त्यागी जी महाराज जैसे सिद्ध सन्तों के साथ उन्होंने वार्तालाप किया। स्वामी विवेकानन्द का मन जानकीशरण दास जी से धर्म, शास्त्र, वेदान्त, ईश्वर-भक्ति पर चर्चा करके अत्यन्त प्रफुल्लित हो उठा। जानकीशरण दास जी भी मिलकर हर्ष से अत्यन्त आनन्द-विभोर हो गये। जब स्वामी जी वहाँ से अखण्डानन्द जी के साथ निकले तो रास्ते में अत्यन्त प्रसन्नता के साथ उन्होंने कहा कि जानते हो तुमसे मैं इतना प्रेम क्यों करता हूँ? क्योंकि तुम जानते हो कि मेरे लिए क्या करना उत्तम है। अन्यथा मना करने पर अन्य किसी का साहस नहीं होता कि वह मुझे यहाँ लेकर आ जाए। स्वामी जी ने कहा कि जानकीशरण दास जी अत्यन्त ही भगवतप्रिय उच्च कोटि के साधक सिद्ध सन्त हैं। ऐसे सन्तों का दर्शन अत्यन्त पुण्य होने से एवं ईश्वर की कृपा से प्राप्त होता है ऐसे महान सिद्ध सन्त का दर्शन आध्यात्मिक उन्नति हेतु अत्यन्त फलदायक होता है। तुमको मैं इस हेतु साधुवाद देता हूँ। अयोध्या में स्वामी जी दो-चार दिन और रुकना चाहते थे किन्तु हिमालय जाने की तीव्र इच्छा से दूसरे दिन ही वहाँ से हिमालय हेतु प्रस्थान कर गये। अयोध्या में स्वामी जी ने अखण्डानन्द जी के साथ अन्य तीर्थस्थान हनुमानगढ़ी, सीता रसोई, कनक मन्दिर आदि के दर्शन किये। अयोध्या के कण-कण के आध्यात्मिक स्पन्दन से स्वामी जी आह्लादित हो गए। अयोध्या के सन्त समाज में उन्होंने दास-भाव की उदात्त भक्ति को देखा।

कालान्तर में अयोध्या में माँ शारदा का आगमन एक बार हुआ। श्री माँ के साथ स्वामी ब्रह्मानन्द, स्वामी अद्भुतानन्द, गोलाप माँ एवं अन्य भक्तजन भी थे। यहाँ एक अद्भुत घटना का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। माँ शारदा के मन में भाव आया कि रामलला को खिचड़ी बनाकर भोग अर्पित करें। स्वामी ब्रह्मानन्द एवं स्वामी अद्भुतानन्द भिक्षा में तन्दुल एवं दाल माँग लाये। माँ ने भावपूर्वक खिचड़ी बनाकर स्वामी ब्रह्मानन्द जी को रामलला के मन्दिर में भोग लगाने हेतु भेजा। किन्तु रामलला के मन्दिर के पुजारी ने परम्परा एवं मन्दिर के नियम के अनुसार यह कहा कि यहाँ रामलला को बाहर के भोजन का भोग नहीं लगता। ब्रह्मानन्द जी ने बहुत अनुनय-विनय किया परन्तु भोग नहीं लगा। तब ब्रह्मानन्द जी ने वापस लौटकर माँ शारदा को यह बात बतायी। इस बार माँ शारदा स्वयं मन्दिर के पुजारियों के पास गईं और कहा कि यह खिचड़ी मैंने बनायी है, रामलला को भोग लगा दीजिए न। माँ का इतना कहना था कि अदृश्य प्रेरणा से पुजारियों ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी। देते भी क्यों न? आखिर स्वयं जगदम्बा ही भोग लगाने आयी थीं तो ठाकुर कैसे उसको अस्वीकृत करते। भोग लगाते समय माँ ने भाव में देखा कि रामलला बाल स्वरूप में स्वयं

खिचड़ी ग्रहण कर रहे हैं।

अयोध्या में विदेशी आक्रान्ताओं द्वारा ध्वस्त किये गये भग्न मन्दिरों को देखकर स्वामी जी का मन क्षुब्ध एवं विचलित हो गया। परन्तु उनके मन में यही विचार आया कि एक दिन भारत पुनः उठेगा और अपने प्राचीन वैभव के प्रतिमानों को पुनः स्थापित करेगा। कालान्तर में कन्याकुमारी के समुद्र में स्थित शिला पर उन्होंने यही ध्यान किया।

प्रयागराज के संगम तट पर सम्पूर्ण भारत की शाश्वत आध्यात्मिक विरासत की अनुभूति ऋषियों की चरणधूलि से प्राप्त हुई। अयोध्या के लक्ष्मण किला के तपस्वी महात्माओं के तप ने विवेकानन्द के मन में भारत की समृद्ध सन्त परम्परा के श्रद्धाभाव को परिपुष्ट किया।

सारांश

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द के प्रारम्भिक परिव्राजक काल का समय पूर्वी उत्तर प्रदेश के इन चार प्रमुख नगरों में जो भारत की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं उनमें व्यतीत हुआ। काशी की दिव्य भूमि एवं माँ गंगा के तट के आध्यात्मिक स्पन्दन से स्पन्दित होकर छोटी काशी के नाम से विख्यात गाधिपुर (गाजीपुर) के महान ब्रह्मज्ञ सन्त पवहारी बाबा का साधना की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। गाजीपुर में ही स्वामी विवेकानन्द के मन में भारतवर्ष के बाहर पश्चिम की भूमि पर जाने का विचार हृदय-पटल पर स्थापित हुआ जो कालान्तर में फलीभूत हुआ। इन्हीं नगरियों से उन्होंने अन्तःकरण से पुकारकर भारतवासियों से कहा था-

"मरते दम तक कार्य करते रहो - मैं तुम्हारे साथ हूँ, और जब मैं चला जाऊँगा, तो मेरी आत्मा तुम्हारे साथ कार्य करेगी। धन, नाम, यश और सुखभोग तो केवल दो दिन के हैं। संसारी कीट की भाँति मरने की अपेक्षा, कर्तव्य क्षेत्र में सत्य का प्रचार करते हुए मर जाना लाख गुना अधिक श्रेष्ठ है। आगे बढ़ो। आध्यात्मिकता, जीवन में कभी स्वार्थ, लोकेषणा, आलस्य, प्रमाद, दुर्बलता आदि नहीं लाती, बल्कि त्याग, निःस्वार्थता, समत्व, सजीवता, शक्ति, आनन्द, प्रेरणा, आभा, उत्साह आदि जीवन के समस्त सुन्दर तथा सकारात्मक गुणों का प्रादुर्भाव करती है। आत्मा ही तो जीवन, शक्ति तथा दिव्य ऊर्जा का स्वरूप है।"

■

Women and their changing role in India's Present scenario

(With a special focus on rural women).

Pooja Singh*

ABSTRACT: *In the developing societies like India, there are various major factors that decide the economy's standard and; in that too if we consider the rural society, its social and economic growth is to be analysed in various aspects. Like if we consider the very basic elements i.e. roti, kapda and makaan (bread, clothing and housing), there are innumerable schemes launched by the government to provide these basic amenities. However soon the rural society analysed that they need to be economically settled and empowered to achieve a standard and organized life.*

Key-words: *Reformation, Society, MGNREGA, women educaiton, upliftment, DPEP, NAEP, Priyadarshini.*

Development of any society in today's era involves its development in social, economic and technological aspects as well. Whether the society be urban or rural, both the genders play a crucial part in its proper functioning and growth. Both have their own spheres of participation and if any of this gets hindered or prohibited, the development of that society is likely to be effected.

In the developing societies like India, there are various major factors that decide the economy's standard and; in that too if we consider the rural society, its social and economic growth is to be analysed in various aspects. Like if we consider the very basic elements i.e. roti, kapda and makaan (bread, clothing and housing), there are innumerable schemes launched by the government to provide these basic amenities. However soon the rural society analysed that they need to be economically settled and empowered to achieve

*Assistant Teacher, Basik Education Department, U.P.

a standard and organized life.

Thus, different schemes of employment were demanded and then provided by the government to them. Such as Jawahar Rozgar Yojna/ Jawahar Gram Sammriddhi Yojna, Sampoorna Gramin Rozgar Yojna, MGNREGA 2005, Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojna. Those times are gone when a traditional household was supposed to be run by an earning husband and a housewife. Even in rural sector, females are highly participating in various fields of employment and thus providing a firm stability to their households and thus the whole country as well. Basic education is also being imparted through various programmes to the rural children as well as adults which is important to strengthen the nation. District Primary Education Programme (DPEP), Sarva Shiksha Abhiyan 2002 , National Adult Education Programme (NAEP) are basically aimed at improving the literacy rate of the nation. The efforts in this direction cannot be ignored still much is needed further. Like skill development is of much more importance and need to rural women and these often have different training needs than men, linked to their domestic work, household responsibilities as well as to gender based divisions of labour for managing specific tasks in crop, forestry, livestock etc.

If the social aspect is to be dealt with; there have been innumerable changes in the mindset and approach of rural women too. There were times when the amount to be spent on the female child's birth, their further growth and development, protection and their marriage expenses including dowry etc were considered as a heavy burden. And in order to get rid of them, practices like female foeticide, female infanticide became prevalent at a very large scale. But the present scenario has been changed up to a greater extent. A very weak and orthodox mindset which leads to female foeticide in rural sector has been thrashed very badly by the infusion of modern education through various literacy programmes, government policies and enforcement of law and order.

Looking back to the history of upliftment of rural women when Raja Ram Mohan Roy fought for women rights and abolition of 'sati pratha` it was through the Brahmo movement that Roy crusaded against Hindu customs such as Sati, polygamy, child marriage and caste system. He played a crucial role in the upliftment of social status of 19th century women in India. It was due to his efforts that Sir Lord William Bentick abolished Sati in 1829. Similarly Dr. B.R. Ambedkar focused upon female literacy and independence. According to him women are nation builders. Every citizen of the country is raised by her. Thus her upliftment is quite essential for the development of a nation. And for the upliftment of any human being, education is must. Without education, a human is not less than an animal. He focused on female literacy much more strongly. The reason he provided was

that the female has the responsibility to raise and develop the future builders of the nation. For development of a family and thus, a nation female literacy is of much more importance than the male counterpart. On 28 July, 1928 he emphasized on maternity leave for females working in factories and other institutions as well. He stated that providing maternity leave is essential because the government is responsible to provide sufficient rest, care and support to the builders of the nation. Thus there have been a number of social workers who have worked for the empowerment of the females, which literally helped in improving the social as well as economic statuses of women in rural India. Imparting education, economic assistance raised the self confidence of women and they started revolting against the atrocities. Now they are not mere puppets, rather they perform a decisive role in the family as well as the society.

From then onwards there has been a continuous effort of our national agencies to raise the social status of women through its machinery. Yet the fight to change the mindsets must happen every day and not be a show of tokenism one day in the year. Right from the Vedic times, women were respected and venerated. The best example of this is from Hindu mythology where Lakshmi is the goddess of wealth and fortune and Durga is the goddess of power. In fact India is personified as Bharat Mata. Empowering women socially and economically and making them self reliant is one of the core agendas of the government. The three flagship schemes – Beti Bachao Beti Padhao, Pradhan mantri Ujjwala Yojna and Sukanya Sammriddhi Yojna indicates the immense importance the government attaches to arresting the alarming decline in the child sex ratio. An important decision was taken by the government to enhance the maternity leave from 12 weeks to 26 weeks under the maternity benefit act. 33% reservations for women in local bodies is being implemented too. Although some political parties are opposed to the progressive women's reservation bill blaming that reserving 33% seats for women in local bodies did not serve its purpose as the husbands of women elected through such seats were ruling by proxy. This could be true in isolated cases but it does not reflect the reality. In fact much broad and open minded approach should be adopted regarding this.

In our rural areas, almost a third of women's work is in agriculture. Much is time and labour intensive and poorly paid, without the full protection of labour rights. Yet their family value is very less. It is time to recognize rural and indigenous women that work the land and produce food for the people. In six Indian states, a special education programme supported by UN women and local NGO helps women understand their right to live free from violence and protect themselves. Higher levels of poverty, limited access to justice and entrenched discrimination are among many factors that put women and girls in rural

areas at increased risk of violence. Rural girls are more likely to become child brides than their urban counterparts worldwide. But with the awareness created among them through various agencies and enforcement of proper law and order, rural women are able to understand and use their human rights as well. Those who were restricted behind the closed doors are participating in the various government schemes. They are not just consuming their rights to vote but even actively participating in the various poll surveys, openly explaining their problems and demanding their effective solutions too. The participation of women in electoral process is an important marker of efficacy of democracy in any country. It can be defined not only in terms of equality but also in terms of liberty and space provided for women in the democratic framework of the electoral politics. The number of female representatives in the lower house (Lok Sabha) and in most of the states in India is below 20% mark. Still some theorists believe that due to strength of women's movements in different parts of India, as well as government regulated quotas, female presence in the political area is increasing, both in terms of voting patterns as well as in access to the positions in public offices. (Lock 1998; Banerjee 2003). The term political participation has a very wide meaning. It is not only related to 'Right to Vote' but simultaneously relates to participation in decision making process, political activism, political consciousness etc. Woman in India participate in voting, run public offices and political parties at lower levels more than men. Political activism and voting are the strongest areas of women's political participation. Women turnout during India's parliamentary general elections was 65.63% compared to 67.09% turnout for men. India ranks 20th from the bottom in terms of representation of women in parliament. Indian voters have elected women to numerous state legislative assemblies and national parliament for many decades. Further rates of participation among women in 1962 were 46.63% for Lok Sabha elections and rose to a high in 1984 to 58.60%. Male turnout during that same period was 63.31% in 1962 and 68.18% in 1984.

The gap between men and women voters has narrowed over time with a difference of 16.7% in 1962 to 4.4% in 2009. Increased turnout of women was reported for the 2012 Vidhan Sabha elections (legislative/state assemblies) with states such as Uttar Pradesh reporting 58.82% to 60.29% turnout. Increased participation is occurring in both rich and poor states in India. The sex ratio of voters has improved from 715 female voters for every 1000 male voters in the 1960s to 883 female voters in 2000s. ECI sought to encourage voter registration among women and participation through education and outreach on college and university campuses. Growing participation has also been attributed to increased security at polling stations. In fact, in 16 out of 28 states, more women voted than men in India's

2014 parliamentary elections. A total of 260.6 million women exercised their right to vote in April-May 2014 elections for India's parliament.

A Data survey for women running for public office:-

Women politicians in Lok Sabha:-

Lok Sabha (Year elected)	Number of women politicians elected
17th(2019)	78
16th(2014)	64
15th(2009)	52

Thus, the participation of women has been continuously increasing in approximately all the fields either it be political, social or economical. Rural women, nowadays, are contributing financially to their households as well as to the rural economy too. And they are being helped and directed through state and national agencies. One such example is of SHG i.e. Self Help Groups. Self Help Groups (SHGs) is an organization of rural poor; particularly of women for empowering the women by providing micro-credit to undertake the entrepreneurial activity. The definition of SHG as approved by National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD) the apex banking body in India is "An SHG is a small, economically homogeneous and affinity group of rural poor voluntarily formed to save and mutually agree to contribute common fund to be lent to its members as per group decision for their socio economic development. Thus it is an informal group of about 15-20 people from a homogeneous class, who come together for addressing their common problems. Members also make regular savings contributions over a few months until there is enough money in the group to begin lending. In India, many SHGs are linked to banks for the delivery of micro-credit. Actually, a SHG is a community based group with 10-20 members which include women from similar social and economic backgrounds, all voluntarily coming together to save small sums of money, on a regular basis. In India, RBI regulations mandate that banks offer financial services, including collateral free loans to these groups on very low interest rates. This allows poor women to circumvent the challenges of exclusion from institutional financial services. Beyond their function as a savings and credit group, SHGs offer poor women a platform for building solidarity too.

According to a report from 2006, NABARD estimates that there are 2.2 million SHGs in India representing 33 million members that have taken loans from banks under its linkage program to date. This does not include SHGs that have not borrowed. SHGs are seen as instruments for goals including empowering women, developing leadership abilities

among poor and the needy people, increasing school enrolments and improving nutrition and the use of birth control.

While talking to the natives of a village in Pipraich block in the city Gorakhpur of Uttar Pradesh (India), I personally went through an experience of how our rural women are trying to empower themselves by being on their feet. Besides working in fields, almost each of them was utilizing their fields of interests /hobbies as a part of their occupation. For an example, many were involved in making curtains, jhalars (decorative material used in Indian houses), garlands, etc. which they use to sell out to the city's wholesale markets. Many of them were involved in NREGA employment. Few of them were working as part time maids in the city's households. Few were even employed in private/public sector hotels/motels /schools/colleges at the posts of cooks, peons, clerks etc. A very interesting part came known to me – These rural women themselves formed a sort of self help groups. They named it "Ambedkar Sakhi Samooh". Each group had approximately 15-25 members where each member was contributing a definite sum of money per week so that after a collection of a good amount of money, it can be used for some purposeful actions. Like if any member of the group needed the financial assistance, he could borrow it from his group at a very low rate of interest (i.e. only 2%) which is very low as compared to public/ private sector banks. This is a very good example of how the rural women are managing and fulfilling their responsibilities by being united in a group. This strengthens the bond between them besides helping them in the hour of need. Thus, with the increasing awareness, rural women are engaged in small scale entrepreneurship programs with the help of national /state agencies through which they are economically empowered and are attaining very good statuses in their families as well as societies. This economic empowerment has also created a sense about savings, education, health, environment, cleanliness, family welfare etc. Men now consult their wives in important matters related to family, finance etc. Family status has also been improved due to surplus income added to the family. The savings and expenses are managed smartly by cooperating with each other.

The constitution of India itself allows for positive discrimination in favour of women. The article 15(3) states that, "Nothing in this article shall prevent the state from making any special provisions for women and children." From then onwards several schemes have been successfully implemented. Few of them must necessarily be discussed over here:

Rashtriya Mahila Kosh (National credit fund for women) was setup in 1993 to make credit available for lower income women in India. The Mother and Child Tracking System was launched in 2009, helps to monitor the healthcare system to ensure that all mothers and their children have access to a range of services, including pregnancy care,

medical care during delivery and immunizations. The system consists of a database of all pregnancies registered at healthcare facilities and birth since 1 Dec. 2009.

Indira Gandhi Matritva Sahyog Yojna (IGMSY), Conditional Maternity Benefit (CMB) is a scheme sponsored by the national government for pregnant and lactating women age 19 and over for their first two live births. The programme was initiated in October 2010 and as by March 2013, the programme is being offered in 53 districts as around the country. The Rajiv Gandhi Scheme for empowerment of Adolescent Girls-Sabla is an initiative launched in 2012 that targets adolescent girls. The scheme offers a package of benefits to girls between the age group of 10 to 19. It is being offered initially as a pilot programme in 200 districts. It offers a variety of services to help young women become self reliant including nutritional supplementation, health education and services, life skills and vocational training.

Priyadarshini, initiated in April 2011, is a programme that offers women in seven districts access to self help groups. The National Credit Fund for Women (Rashtriya Mahila Kosh) was created by the Government of India in 1993. Its purpose is to deliver women from lower income group with access to loans to begin small businesses. Digital Laado-(Giving digital wings to daughters) is an initiative started with the association of FICCI and Google Digital Unlocked to empower and strengthen daughters on digital platforms. According to government of India 65% daughters drop out from their higher studies due to household work and several other reasons. This program is a nationwide initiative in which every daughter will be taught and trained to develop their talent and skills to work from home itself and gets connected with the global platform. Daughters can register themselves to avail these benefits from anywhere in the world- online and offline.

With the empowerment of women, the gender discrimination has been reduced up to a greater extent and a balance of power has been tried to be established between men and women. This is not only beneficial for women but also for society as society will be benefitted politically, economically and culturally. The results of this have shown that the changing scenario of today's era has definitely changed the role/participation of rural women in the family and the society. Still much is needed to be done at this front in order to create a significant approach to achieve the rural development.

References:

1) Rukmini S. "Rising female voter turnout, the big story of 50 years." Nov. 8, 2013; (www.thehindu.com)

2) K. Ahmed, 1979, Studies of educated women in India: trends and its use. Pg.21-25

3) Anita Singh Chauhan ‘Badalte Parivesh me stree pragati’. Pg. 13-14

4) Dr. B.R. Ambedkar: Writing and Speeches, Part I, Govt. of Maharashtra publications, Bombay, 1979

5) Banerjee, Sikata(2003): “Gender and Nationalism : The Masculinisation of Hinduism and Female political participation in India”, Women’s studies International Forum, 26(2):167-79

6) Lock, M (1998): “Situating Women in the Politics of Health” in S Sherwin et al (ed) The Politics of Women’s Health: Exploring Agency and Autonomy (Philadelphia: Temple University Press)

7) Chief Electoral Officer. “Voting Percentage in Various Lok Sabha Elections.” Govt. of Uttarakhand, India. Retrieved 22 Mar. 2014

8) State wise Voter Turnout in General Elections 2014, Govt. of India (2014)

9) “17th Lok Sabha to see more women power.” Daily Pioneer 25 May 2019.

10) “Empowering the Adolescent Girls- Sabla” Govt. of India Press Information Bureau. 2012. Retrieved 21 June 2014.

■

योग और विज्ञान

बबिता सिंह*

सारांश: वर्तमान समय में योग के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर जो शोध एवं अनुसन्धान का कार्य चल रहा है वह योग के क्रियात्मक पक्ष पर ही मुख्यत: केन्द्रित है। भारतीय संस्कृति में भौतिकता व आध्यात्मिकता दोनों के ही शिखर स्वरूपों का एक सन्तुलित समावेश है। 'योग' में ही सम्पूर्ण मानवता व विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान है। चाहे वह शारीरिक व मानसिक रोग हो या विकासजनित भौतिक समस्याएँ यथा- हिंसा, नशा, वितृष्णा, वासना एवं अन्य भौतिक संघर्ष। आज अधिकांशत: बुद्धिजीवी वर्ग दवा रूपी हथियारों पर शोध एवं अनुसन्धानों में लगे हुए हैं। शायद इसका कारण आर्थिक उन्नति है। योग पर अभी तक जितना भी अध्ययन, शोध एवं अनुसन्धान हुआ है उससे योग वैश्विक स्तर पर एक जीवन-पद्धति, चिकित्सा-पद्धति एवं साधन-पद्धति के रूप में स्वीकार्य हो रहा है। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के हित में हमें योग पर अधिक शोधकरने की आवश्यकता है।

बीज शब्द : योग, पतंजलि, गोरखनाथ, भगवद्गीता, प्राणायाम, नाथ-परम्परा, आध्यात्मिकता, वितृष्णा, तुरीयावस्था, समाधि।

वैदिक संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति व सभ्यता है। सम्पूर्ण भारत-धर्म, दर्शन, अध्यात्म एवं संस्कृति को यदि एक शब्द में कहा जाय तो वह है 'योग'। भारतीय वैदिक संस्कृति का प्रत्येक पहलू वैज्ञानिक, सार्वभौमिक एवं शाश्वत है। वेद मात्र उच्च आदर्शों, मानवीय मूल्यों, मर्यादाओं एवं धार्मिक शिक्षाओं का ही नहीं अपितु सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान की पराकाष्ठा का मूल स्रोत है, योग का भी मूल स्रोत 'वेद' ही है। वैदिक 'योग' पर समय-समय पर वैज्ञानिक शोध अनुसन्धान एवं तथ्यों के आधार पर नये-नये प्रयोग होते रहे हैं। महर्षि पतंजलि एवं नाथ परम्परा का योग के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान रहा है। भगवान् श्रीकृष्ण के मुख से नि:सृत गीता में विषाद योग से लेकर मोक्ष संन्यास योग तक 18 अध्याय योग ही तो हैं।

योग का एक पक्ष दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक है तथा दूसरा पक्ष क्रियात्मक व्यावहारिक है और इन्हीं दो पक्षों को क्रमश: अन्तरंग योग व बहिरंग योग भी कहते

*असि. प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र, वीरबहादुर सिंह पी.जी. कॉलेज हरनही, सहुराँव, गोरखपुर

हैं। वर्तमान समय में योग के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर जो शोध एवं अनुसन्धान का कार्य चल रहा है वह योग के क्रियात्मक पक्ष पर ही मुख्यत: केन्द्रित है। भारतीय संस्कृति में भौतिकता व आध्यात्मिकता दोनों के ही शिखर स्वरूपों का एक सन्तुलित समावेश है। 'योग' में ही सम्पूर्ण मानवता व विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान है। चाहे वह शारीरिक व मानसिक रोग हो या विकासजनित भौतिक समस्याएँ – हिंसा, नशा, वितृष्णा, वासना एवं अन्य भौतिक संघर्ष। आज अधिकांशत: बुद्धिजीवी वर्ग दवा रूपी हथियारों पर शोध एवं अनुसन्धानों में लगे हुए हैं। शायद इसका कारण आर्थिक उन्नति है। योग पर अभी तक जितना भी अध्ययन, शोध एवं अनुसन्धान हुआ है उससे योग वैश्विक स्तर पर एक जीवन-पद्धति, चिकित्सा-पद्धति एवं साधन-पद्धति के रूप में स्वीकार्य हो रहा है। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के हित में हमें योग पर अधिक शोध करने की आवश्यकता है।

महर्षि पतंजलि किसी मूर्ति या प्रतिमा दर्शन को ध्यान नहीं कहते। पतंजलि कहते हैं- क्लेशों की पूर्ण समाप्ति ही ईश्वर की प्राप्ति है। क्रिया योग का लक्ष्य ही है समाधि अर्थात् सम्बोधि, स्वरूपोपलब्धि तथा क्लेशों की परिसमाप्ति है। चित्त की अशुद्धि को दूर करने के लिए वे अष्टांग योग का उपदेश देते हैं। महर्षि पतंजलि यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि स्वरूप वाले अष्टांग योग का वर्णन करते हुए कहते हैं कि इनके पालन के बिना आत्मिक एवं वैश्विक शान्ति असम्भव है। महर्षि पतंजलि के योग की समस्त प्रक्रियाओं एवं विधाओं के पीछे एक ही उद्देश्य है कि अँधेरा-अशुद्धि एवं संशय समाप्त होना चाहिए। तत्पश्चात् साधक को कहीं जाने की आवश्यकता ही नहीं। सब समाधान तुम्हारे पास है। वे संयम के द्वारा अतीत, अनागत के ज्ञान की विधि बताते हैं। वे अणिमा, लघिमा, गरिमा आदि सिद्धियों की प्राप्ति भी करवाते हैं। महर्षि पतंजलि शरीर विज्ञान, ब्रह्माण्ड विज्ञान के रहस्यों की परतों को खोलते हैं।

महर्षि पतंजलि प्रकृति के सूक्ष्म रहस्य, सविकल्प, निर्विकल्प, सविचार द्वारा निर्विकार समाधि की विवेचना करते हैं। यहाँ उनकी दृष्टि पूर्णत: वैज्ञानिक है; सत्य, प्रेम, समर्पण एवं पूर्ण आनन्द की है। महर्षि पतंजलि योग की व्याख्या विज्ञान की तरह करते हैं। प्रत्येक योग की विद्या का निश्चित फल बताते हैं। वे ज्ञान योग, भक्ति योग एवं कर्म योग के संयोग को ही योग की पूर्णता मानते हैं। महर्षि पतंजलि वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ ही साथ आध्यात्मिक दृष्टिकोण पर भी बल देते हैं।

यजुर्वेद के 40वें अध्याय में लिखा है कि वे लोग गहरे अँधेरे में हैं जो केवल विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास को ही जीवन का लक्ष्य मानते हैं तथा इससे भी ज्यादा गहन अन्धकार में वे लोग जी रहे हैं जो केवल भक्ति, पूजा-पाठ एवं अध्यात्म में निरत होकर जीवन यापन कर रहे हैं। यजुर्वेद में आगे कहा गया है कि सुखपूर्वक जीने के लिए विज्ञान के आविष्कार भी आवश्यक

है और आत्मिक सुख एवं शान्ति के लिए उपासना, भक्ति, ध्यान, समाधि भी अति आवश्यक है, अर्थात् भारतीय संस्कृति में भौतिकवाद एवं अध्यात्मवाद को एक दूसरे के पूरक माना गया है। वेदों में ज्ञान-काण्ड, कर्म-काण्ड, विज्ञान-काण्ड एवं उपासना-काण्ड का समावेश है। अतः भारतीय संस्कृति बहुआयामी है।

ब्रह्माण्ड असीम एवं अनन्त है, उसी प्रकार स्वचिन्तन एवं स्वानुभूति के लिए योग विद्या का साधन क्षेत्र व रहस्य भी असीमित है। 'यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे' अर्थात् जो ब्रह्माण्ड में व्याप्त है, चाहे वह प्राण हो, पंचमहाभूत हो, सप्त स्वर हो, सप्त रस हो, या अणु, इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन हो या फिर चुम्बक हो, वस्तुतः यह शरीर महाघट (घटाकास) का सूक्ष्म रूप घट है। जिस तरह घड़े में अगर बहुमूल्य वस्तु डाल दी जाय तो घड़ा भी बहुमूल्य हो जाता है, अगर उसमें अमृत डाल दिया जाय तो वह 'घटामृत' कहलाता है और विष पड़ा हो तो 'विषघट' बन जाता है। इस तरह ईश्वर द्वारा रचित ब्रह्माण्डीय महाघट की सबसे सूक्ष्म इकाई 'प्रकृति पिण्ड' (नर-नारी) में जैसे गुण डाल दिये जायें तो वह शरीर उसी गुणगान से जाना जाने लगता है। घेरण्ड संहिता में घट रूपी शरीर का रहस्य जानने के लिए 'घटस्थयोग' को तत्त्वज्ञान का कारण माना है।

हमारा अस्तित्व मूलतः पाँच स्वरूपों के कारण है, जिनको योग तथा अध्यात्म में पंचकोश कहते हैं तथा पंचकोशों पर विचार करना समीचीन होगा।

अन्नमय कोश- शरीर का स्थूल स्वरूप अन्नमय कोश कहलाता है। स्थूल शरीर का पोषण पृथ्वी से उत्पन्न पोषक तत्त्वों अर्थात् आहार आदि से होता है व स्थूलता को प्राप्त करता है। शरीर की स्थूलता उसके सप्तधातु निर्माण पर निर्भर करती है। अन्न से अस्थि, मज्जा, मांस, मेद रस, रक्त, वीर्य का निर्माण होता है। वस्तुतः माता के गर्भ में ही वीर्य रज व रक्त के मिलन से अन्नमयकोश के बनने की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। अतः पृथ्वी तत्त्व की बाहुल्यता होने के कारण देह में स्थूलता, अनेकता, भारीपन व रोमकूप बनते हैं। यही इस कोश के गुणधर्म हैं। इसके मुख्य कार्यों में मल-मूत्र, रज, वीर्यादि का निकास करना भी है व षट्क्रियाएँ आसनाभ्यास इसको सशक्त बनाने के योगांग हैं।

प्राणमय कोश- शरीर के दूसरे स्तर पर प्राणमय कोश का आधिपत्य है, प्राण अदृश्य ऊर्जा है, परन्तु दैहिक जीवन व उसकी उम्र इस कोश पर आश्रित है। इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि नाड़ी निर्मित शरीर जिसमें मुख्यतः श्वास, शुक्र व रक्त निरन्तर प्रवाह में रहते हैं उन्हीं पर स्थूल देह निर्भर है। प्राणमय कोश की संरचना में क्रमशः पाँच मुख्य ऊर्जा स्रोत हैं- प्राण, अपान, समान, उदान व व्यान तथा पाँच उप ऊर्जा माध्यम हैं- कूर्म, कुंकल, देवदन्त व धनंजय। अतः प्राण ब्रह्माण्डीय होते हुए जब पिण्डीय हो जाता है तो उसे जीव कहते हैं। संचार, संचालन, स्पर्श व सोखन (शोषणम्) व जीव में धवन, भ्रमण, प्रसारण, सिकुड़ना व रुकना। यौगिक

प्राणायाम का निरन्तर अभ्यास इसको सशक्त बनाता है।

मनोमय कोश- प्राण व विज्ञानमय कोश के माध्यम से तीसरे कोश के रूप में स्थित है व दोनों से सूक्ष्म है, जो मनोभावों व मन:शक्तियों का प्रेरक है। शरीर व बुद्धि की दशा व दिशा को बदलने में यह कोश निपुण है। कठोपनिषद् में शरीर की तुलना रथ से की गयी है और मन की तुलना घोड़ों के लगाम से, जो पाँच ज्ञानेन्द्रियों पर निर्भर है। अगर ज्ञानेन्द्रियाँ इसे सही मार्ग दिखा दें तो यह महान बन जाते हैं नहीं तो मूर्ख। धारणा मौन व मुद्रा अभ्यास के द्वारा मन व ज्ञानेन्द्रियों पर स्थिर करने में सहायता मिलती है व दिव्य शक्तियों के द्वारा खुल जाते हैं। इसके गुणधर्म हैं- चंचलता, अस्थिरता, वायु से तेज दौड़ने वाला व हमेशा सुख का इच्छुक।

विज्ञानमयकोश- विवेक एवं आध्यात्मिक शक्तियों से ओतप्रोत बुद्धि सद्विचारों को अपने से संरक्षित कर बाकी सभी को नकार देती है। बुद्धि की इसी निर्णय शक्ति को वस्तुत: विज्ञानमयकोश कहा जाता है। इसके गुण एवं धर्म हैं- निर्णयात्मक, व्यवहारात्मक, सन्तुष्टि, प्रज्ञाज्ञान व विवेक। इसकी शक्ति को जागृत करने के लिए ध्यान का अभ्यास करना चाहिए।

आनन्दमयकोश- पातंजल योगसूत्र के तीसरे अध्याय 'विभूतिवाद' में वर्णित दिव्य विभूतियों के पश्चात् जिस शक्ति एवं आनन्द की अनुभूति होती है वह 'आनन्दमय कोश' है। यह सम्पूर्ण शरीर में परमसुख का संचार करने वाला है। इसी आनन्द के सागर में हिलोरें लेता साधक ब्रह्म का दर्शन करता है। इस आनन्द की चार अवस्थाएँ हैं- देहानन्द, लोकानन्द, ब्रह्मानन्द व परमानन्द। इस कोश के गुण-धर्म हैं- कैवल्य, तुरीयावस्था, दिव्यता, लीनता व मोक्ष। और इसका रसास्वादन ही समाधि की अवस्था है।

■

माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य एवं महत्त्व

गिरीश चन्द्र पाठक*

सारांशः मनुष्य, प्रकृति की सर्वोत्तम रचना है, जो अपने साथ कुछ जन्मजात शक्तियाँ लेकर जन्म लेता है। शिक्षा के द्वारा मानव की इन जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि, व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। शिक्षा किसी भी व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के विकास की धुरी होती है। शिक्षा के बिना कोई भी राष्ट्र, समाज या व्यक्ति प्रगति नहीं कर सकता है। शिक्षा एवं समाज एक दूसरे के पूरक हैं। शिक्षा की यह प्रक्रिया अपने विभिन्न रूपों में आजीवन चलती रहती है। औपचारिक शिक्षा के प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च, तीन स्तर होते हैं। माध्यमिक स्तर की शिक्षा, व्यक्ति एवं राष्ट्र दोनों के दृष्टिकोण से बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस स्तर की शिक्षा प्राप्त करके व्यक्ति उच्च एवं विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश करता है। इस स्तर पर उसका इस ढंग से विकास किया जाना आवश्यक है जिससे वह अपनी व्यक्तिगत् एवं सामाजिक दायित्वों से अवगत होते हुए उन्हें पूर्ण करने के लिए तत्पर हो। माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान, अनिवार्य विषय के रूप में सम्मलित किया गया है। सामाजिक विज्ञान जिसे सामाजिक अध्ययन भी कहा जा सकता है, के शिक्षण का उद्देश्य, छात्र-छात्राओं को मानवीय सम्बन्धों को समझने में सक्षम बनाना, उनमें उन अभिवृत्तियों एवं मूल्यों का विकास करना, जो समाज, राष्ट्र एवं विश्व के मामलों में बुद्धिमतापूर्ण ढंग से भाग लेने के लिए महत्त्वपूर्ण है, होता है। साथ ही लोकतांत्रिक जीवन शैली के अनुरूप एक ऐसा नागरिक विकसित करना होता है जिसमें देश के संविधान में सन्निहित लोकतंत्र, समाजवाद, धार्मिक सहिष्णुता के मूल्यों एवं आदर्श के प्रति समर्पण एवं निष्ठा हों। लोकतंत्र की सफलता वस्तुतः नागरिकों पर निर्भर करती है। सामाजिक विज्ञान शिक्षण द्वारा ही भावी पीढ़ी में उन आवश्यक ज्ञान, कौशल, अभिवृत्तियों, आदतों, का विकास किया जा सकता है जो वर्तमान युग में व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं को पूर्ण करते हुए, सुखी एवं सफल जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक है।

बीज शब्दः सामाजिक विज्ञान, माध्यमिक स्तर, शैक्षिक उद्देश्य, शैक्षिक महत्त्व, अनुदेशनात्मक।

*असि. प्रोफेसर, बी.एड्. विभाग, दिग्विजयनाथ एल.टी. प्रशिक्षण महाविद्यालय, गोरखपुर

संभवत: विश्व में मानव ही ऐसा प्राणी है जो अपने अनुभव से अर्जित ज्ञान को पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानान्तरित करने में सक्षम है। मानव अपने वैयक्तिक अनुभवों से ही नहीं सिखता है बल्कि वह समाज के सभी सदस्यों के सामूहिक अनुभवों से भी बहुत कुछ सिखता है। आज का बालक, कल का नागरिक है। सम्पूर्ण मानव जाति की सुरक्षा, प्रगति एवं कल्याण के लिये आवश्यक है कि व्यक्ति के हृदय में राष्ट्रीयता की भावना के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध का भी विकास हो। विज्ञान एवं तकनीकी के विकास ने राष्ट्रों की भोगौलिक सीमाओं को लांघकर सम्पूर्ण विश्व को एक समूह का रूप दे दिया है। विश्व के किसी भी कोने में घटने वाली घटना, कुछ ही क्षणों में सम्पूर्ण विश्व में देखी सुनी जा सकती है। ऐसी परिस्थितियों में समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्तव्यों एवं दायित्वों का बोध होना आवश्यक है और यह बोध सामाजिक विज्ञान के शिक्षण द्वारा ही हो सकता है। व्यक्ति की भौतिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये, शिक्षा-शास्त्री देश एवं काल की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित करते है। शिक्षक, शिक्षा-शास्त्री द्वारा निर्धारित लक्ष्य को पाठ्यचर्या के माध्यम से मूर्त रूप देते हैं। पाठ्यचर्या का अर्थ, केवल उन प्रकरणों से नहीं है, जो विद्यालय में परम्परागत् ढंग से पढ़ाये जाते हैं वरन् इसमें अनुभवों की सम्पूर्णता निहित है जिनको छात्र, विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, कार्यशाला, प्रयोगशाला एवं खेल के मैदान, शिक्षको एवं शिष्यों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्कों से प्राप्त करते हैं। यह अनुभव एवं ज्ञान, छात्र के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करते हैं एवं व्यक्ति के सन्तुलित विकास में सहायक होते हैं।

भारत जैसे देश में जहाँ अधिकांश लोग अभी भी उच्च शिक्षा से वंचित हैं, माध्यमिक शिक्षा बहुत महत्त्व रखती है। माध्यमिक शिक्षा के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) ने कहा है कि ''हमें पूर्व अंकित सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए कि माध्यमिक शिक्षा स्वयं में पूर्ण इकाई है और तैयारी का स्तर मात्र नहीं है। इस अवधि के अन्त में छात्र, यदि वह चाहे, जीवन के उत्तरदायित्वों को ग्रहण करने और उपयोगी व्यवसाय को अपनाने की स्थिति में होना चाहिए।'' माध्यमिक स्तर पर पढाये जाने वाले विषयों के शिक्षण के माध्यम से ही माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों में, सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य महत्त्वपूर्ण है क्योंकि समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों एवं दायित्वों से अवगत होकर, उनका सफलतापूर्वक निर्वहन करके ही, व्यक्ति सुखी एवं सफल जीवन व्यतीत कर सकता है।

सामाजिक विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययन-

मानव एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में ही जन्म लेता है एवं आजीवन उसका अंग रहता है। कोई भी व्यक्ति व्यवहारिक रूप से समाज से दूर रहकर अपना जीवन व्यतीत नहीं कर

सकता है। मानव को समाज में रहने के लिए अपने में कुछ व्यवहारगत परिवर्तन करने पड़ते है। इन अपेक्षित परिवर्तनों को लाने के लिए माध्यमिक स्तर की शिक्षा में विभिन्न सामाजिक विज्ञानों की चयनित विषय वस्तु को सामाजिक अध्ययन या सामाजिक विज्ञान नाम से ही सम्मिलित किया गया है। लगभग सम्पूर्ण देश में, माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान, एक अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित है। सामाजिक विज्ञान विषय के रूप में, पाठ्यक्रम का यह भाग, विभिन्न सामाजिक विज्ञानों का समन्वित एवं सरलीकृत रूप होता है जिसे सामाजिक अध्ययन भी कहा जाता है। सामाजिक विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययन के मध्य सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुये बाइनिंग एण्ड बाइनिंग (1952) ने कहा है कि ''सामाजिक विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययन माध्यमिक स्तर पर पढ़ाये जाने वाले सामाजिक विषयों के संदर्भ में परस्पर बदले जा सकने वाले शब्द है।''

सामाजिक अध्ययन सामाजिक विज्ञानों का सरलीकृत रूप है। इनमें जो अन्तर पाया जाता है, वह गहनता स्तर एवं प्रयोजन के दृष्टिकोण से है। सामाजिक विज्ञान, मानवीय सम्बन्धों का उच्चतम् एवं विद्धतापूर्ण अध्ययन है जिसमें अनुसंधान, प्रयोग एवं खोज के लिये स्थान होता है जबकि सामाजिक अध्ययन के लिये तथ्यों एवं शोधों को सरलतम रूप में, शिक्षण की सुविधानुसार रखा जाता है। सामाजिक विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन दोनों मानवीय सम्बन्धों की विवेचना करते हैं। सामाजिक अध्ययन मूलत: सामाजिक विज्ञानों से ही अपनी विषय वस्तु ग्रहण करता है जिसको निर्देशनात्मक अभिप्रायों के लिये सरलीकृत एवं पुन: संगठित किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक विज्ञानों एवं सामाजिक अध्ययन में अन्तर, दार्शनिक या सैद्धांतिक न होकर केवल व्यवहारिक एवं सुविधा के दृष्टिकोण से होता है। सामाजिक अध्ययन, इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों का गणितीय योग मात्र नही है। निश्चय ही, यह उन विषयों से पर्याप्त सामग्री ग्रहण करता है परन्तु उसी सामग्री को ग्रहण करता है जो मानव समाज के वर्तमान एवं दैनिक जीवन के संबंधों को स्पष्ट करती है। इस विषय में विभिन्न सामाजिक विज्ञानों को स्थान प्राप्त होता है परन्तु इसमे उनका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता है वरन् वे मिलकर एवं गुँथकर एकीकृत स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं। यह ज्ञान का वह क्षेत्र है जो युवकों को आधुनिक सभ्यता के विकास को समझने में सहायता करता है। ऐसा करने के लिए वह अपनी विषय वस्तु को, समाज विज्ञानों एवं समसामयिक जीवन से प्राप्त करता है। ''ए ड्राफ्ट सिलेबस ऑफ सोशल स्टडीज'' (1973) में कहा गया है कि ''सामाजिक अध्ययन, अध्ययन का वह क्षेत्र है जो मानव का, अन्य मानव एवं पर्यावरण के साथ, उसके संबंध का अध्ययन करता है। इसकी विषय वस्तु, अनेक सामाजिक विज्ञानों से ली गयी है परन्तु यह किसी एक सामाजिक विज्ञान से बहुत अधिक प्रभावित नहीं है अपितु सामाजिक अध्ययन की विषय वस्तु एवं संगठन, इसके उद्देश्यों से उत्पन्न हुआ है। इन उद्देश्यों में, मानव सम्बन्धों की समझ, पर्यावरण का ज्ञान, जिस समाज में यह पढ़ाया जा रहा है,

उसके मूलभूत सिद्धांतो एवं मूल्यों के प्रति समर्पण तथा उस प्रक्रिया में सम्मिलित होने का निश्चय जिसके द्वारा समाज कायम है एवं निरन्तर प्रगति करता है, सम्मिलित है। यह सामाजिक अध्ययन दृष्टिकोण की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता है।'' स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर पर अनिवार्य विषय के रूप सम्मिलित विषय सामाजिक अध्ययन, सामाजिक विज्ञानों का सरलीकृत रूप है। इस विषय को कुछ शिक्षा परिषदों ने सामाजिक अध्ययन के नाम से तथा कुछ शिक्षा परिषदों ने सामाजिक विज्ञान के नाम से माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया है।

माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य-

शिक्षा एक उद्देश्य पूर्ण कार्य है। शिक्षण कार्य के लिए उद्देश्यों या लक्ष्यों का होना अत्यन्त आवश्यक है। उद्देश्यों या लक्ष्यों के अभाव मे शिक्षण कार्य ही क्या, कोई भी कार्य सुचारू रूप से सम्पादित नहीं किया जा सकता है। 21वीं सदी में शिक्षा के उद्देश्यों में आमूल परिवर्तन हुआ। इन परिवर्तनों का होना आवश्यक भी था क्योंकि समाज की अवस्था में अनेकों उल्लेखनीय परिर्वतन हो चुके थे। जीवन की जटिलता ने भी उद्देश्य परिवर्तन को आवश्यक बना दिया। परिणाम-स्वरूप समय के विभिन्न दौर में शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण का प्रयास, व्यक्तिगत स्तर पर किये गये और विभिन्न आयोगों, को उद्देश्य निर्धारण का दायित्व सौपा गया। शैक्षिक उद्देश्यों का सम्बन्ध शिक्षार्थी में होने वाले उन परिवर्तनों से है, जो शैक्षिक क्रियाओं के द्वारा नियोजित रूप से शिक्षार्थियों में लाये जाते है। उद्देश्य वह बिन्दु अथवा साक्ष्य है जिसकी दिशा में शिक्षण कार्य अग्रसर किया जाता है तथा जिसके अनुसार किसी शिक्षण क्रिया के माध्यम से शिक्षार्थियों के व्यवहार में कोई पूर्व नियोजित परिवर्तन लाया जाता है।

डा. ब्लूम (1956) ने शैक्षिक उद्देश्यों को मूल्यांकन से जोड़ा है। उनके अनुसार उद्देश्य केवल ध्येय मात्र नहीं है जिनके तद्नुरूप पाठ्यक्रम को स्वरूप प्रदान करना है या जिनके अनुसार शिक्षण को दिशा प्रदान किया जाना है अपितु ये वे ध्येय है जिनके अनुसार मूल्याकंन तकनीकियों का निर्माण एवं प्रयोग करना है। शैक्षिक उद्देश्यों का सम्बन्ध, प्रत्यक्ष रूप से सीखने के उद्देश्य से होता है। डा. ब्लूम एवं उनके सहयोगियों ने शैक्षिक उद्देश्यों को व्यवहार परिवर्तन के दृष्टिकोण से तीन पक्षों संज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक में बांटा है। संज्ञानात्मक पक्ष सूचनाओं, ज्ञान एवं तथ्यों की जानकारी से सम्बन्धित होता है। भावात्मक पक्ष रुचियों, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों के विकास से सम्बन्धित होता है जबकि क्रियात्मक या मनो-गत्यात्मक पक्ष शारीरिक क्रिया से सम्बन्धित होता है जिसमे शारीरिक कौशलों का विकास सम्मिलित होता है।

मनुष्य स्वभाव से एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में जन्म लेता है एवं जीवनपर्यन्त समाज में रहते हुए अपनी जीवन यात्रा पूरी करता है। उसके सामाजिक और सुसंस्कृत प्राणी बने

रहने के लिए मानव के सामाजिक सम्बन्धों, अन्त:क्रियाओं एवं सामाजिक विकास को जानना परम आवश्यक है। समाज से सम्बन्धित ज्ञान को सभी छात्रों को अनिवार्य रूप से प्रदान करने के उद्देश्य से ही सामाजिक अध्ययन विषय को माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य विषय के रूप में स्थान दिया गया है।

किसी भी विषय के किसी भी स्तर पर अध्ययन हेतु रखे जाने का अपना एक विशेष उद्देश्य अवश्य होता है। सामाजिक अध्ययन विषय को माध्यमिक स्तर पर अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित किये जाने से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर की शिक्षा के उद्देश्यों में सामाजिक अध्ययन शिक्षण के उद्देश्य महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये-

1. लोकतान्त्रिक नागरिकता का विकास
2. नेतृत्व का विकास
3. व्यक्तित्व का विकास
4. व्यवसायिक कुशलता का विकास
5. चरित्र का विकास

उपरोक्त समस्त उद्देश्यों की प्राप्ति किसी एक विषय के शिक्षण द्वारा नहीं हो सकती है, किन्तु सामाजिक अध्ययन विषय इन उद्देश्यों की प्राप्ति में बहुत सहायक है।

ई.बी. वेस्ले (1958) के अनुसार सामाजिक अध्ययन शिक्षण का उद्देश्य, छात्रों में आदर्श नागरिकता का विकास करना, छात्रों को इतिहास, भूगोल तथा नागरिकशास्त्र के समन्वित पाठ्यक्रम के तथ्यों की जानकारी देना, वर्तमान समस्याओं को सुलझाने की समझदारी उत्पन्न करना, सामाजिक वातावरण के अनुकूल ढलने का प्रशिक्षण देना, प्रजातान्त्रिक आदर्शों का ज्ञान कराना, छात्रों को शुद्ध विचार तथा चिन्तन करने का प्रशिक्षण देना, सामाजिक वातावरण का ज्ञान कराना, विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास करना, अधिकार और कर्त्तव्यों के सम्बन्धों की जानकारी देना, परिवार, नगर, ग्राम तथा देश का चेतनायुक्त सदस्य बनाना, राष्ट्रीय प्रेम की भावना उत्पन्न करना, छात्रों को एक आदर्श तथा चरित्रवान नागरिक बनाना होता है। एक नागरिक के लिए जो आवश्यक गुण होते हैं, उनका विकास सामाजिक अध्ययन के द्वारा ही किया जा सकता है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण द्वारा व्यक्ति को अपने समाज में सही ढंग से समायोजित होने में सक्षम बनाया जा सकता है।

बाइनिंग तथा बाइनिंग (1952) ने सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को निम्नलिखित रूप में

व्यक्त किया है-

1. ज्ञान की प्राप्ति
2. तर्कशक्ति एवं आलोचनात्मक न्याय की क्षमता का विकास
3. स्वतन्त्र अध्ययन का प्रशिक्षण
4. आदतों एवं कौशलों का निर्माण
5. वांछनीय व्यवहार का प्रशिक्षण

अच्छी नागरिकता के लिए एक प्रकार के निश्चित मात्रा में ज्ञान की आवश्यकता होती है। तथ्यपूर्ण ज्ञान एवं अवबोध, सामाजिक प्रगति में प्रत्यक्ष रूप से योगदान करता है क्योंकि यह स्पष्ट चिन्तन एवं निर्णयन के लिए आवश्यक होता है। एक अच्छे नागरिक को एक निश्चित मात्रा मे तथ्यपूर्ण सूचनायें होनी चाहिए क्योंकि तथ्यों के बगैर चिन्तन सम्भव नहीं है तथा विचारों के बगैर आधुनिक सभ्यता की समस्याओं का समाधान नहीं किया जा सकता। ज्ञान, सहानभूति एवं अवबोध के लिए आधार का कार्य करता है जो सामाजिक अन्त:क्रिया तथा सामाजिक एकजुटता के लिए आवश्यक होती है। चिन्तन एवं तर्क की शक्ति का विकास, तथ्यों से अवगत हुए बगैर नहीं की जा सकती। चिन्तन एवं तर्कशक्ति के विकास के लिए न केवल तथ्यों का होना आवश्यक है बल्कि इनका स्पष्ट रूप से संगठित होना की आवश्यक है। तर्कशक्ति के आधार के लिए बड़ी संख्या मे सुसंगठित तथ्यों का होना जरूरी है। निर्णयन भी तथ्यों पर आधारित होता है। सामाजिक अध्ययन शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य, स्वतन्त्र अध्ययन की क्षमता का विकास करना होता है। स्वतन्त्र अध्ययन का उद्देश्य, अच्छे अध्ययन की रुचि का विकास करना होता है जो सम्पूर्ण जीवन चलती रहती है। सामाजिक अध्ययन का उद्देश्य आदतों एवं कौशलों का विकास करना भी होता है। आदतों में बहुत सारी बातें सम्मिलित है। इनमें सन्दर्भो एवं पाठ्यपुस्तकों का बुद्धिमतापूर्ण प्रयोग तथा भावनाओं पर नियन्त्रण सम्मिलित है। कौशलों के अन्तर्गत मानचित्र, चार्ट, आदि का निर्माण एवं प्रयोग, सभी प्रकार की पुस्तकों जैसे शब्दकोश, इनसाइक्लोपिडिया, गाइड का प्रयोग तथा पुस्तकालयों का कुशलतापूर्वक एवं स्वतन्त्र रूप से प्रयोग सम्मिलित किया जा सकता है। विद्यालयों का दायित्व है कि वह विचारों, रुचियों, आकांक्षाओं, प्रेरकों आदि के द्वारा, जो मानव व्यवहार को निर्धारित करने वाले महत्त्वपूर्ण कारक हैं, को प्रभावित करते हुए, विद्यार्थी के व्यवहार को एक अच्छे नागरिक के व्यवहार में बदलने का प्रयास करे।

माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास, नागरिकशास्त्र, भूगोल एवं अर्थशास्त्र विषयों को सम्मिलित किया गया है। इन विषयों के शिक्षण उद्देश्य सम्मिलित होकर सामाजिक विज्ञान विषयों के शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं।

इतिहास शिक्षण का उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा के सामान्य लक्ष्यों के अनुरूप वर्तमान को स्पष्ट कर पाने के सक्षम, अतीत के ज्ञान से अवगत कराना होता है। यह सामाजिक तथ्यों के निष्पक्ष एवं प्रभावी जाँच कर पाने एवं सामाजिक मुद्दों के सन्दर्भ में सकारात्मक निर्णय कर पाने की क्षमता का विकास करने का प्रयास करता है। साथ ही इतिहास शिक्षण मानव एवं समाज में पाये जाने वाले परिवर्तनों की निरन्तरता, इसमे बढ़ते जा रहे जटिलता एवं पारिस्परिक अन्त: निर्भरता का बोध कराता है। यह अतीत की सभ्यताओं के अध्ययन द्वारा नागरिकता के दायित्वों का बोध कराने का प्रयास करता है। इतिहास शिक्षण का उद्देश्य ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक मानसिकता एवं अभिवृत्तियों का विकास करना होता है, जो छात्रों को नागरिकता का प्रशिक्षण प्रदान करती है। इसके द्वारा सांस्कृतिक रुचि का विकास जैसे विभिन्न कालों के इतिहास का अध्ययन, कला दीर्घाओं एवं संग्रहालयों तथा यात्राओं मे रुचि का विकास करने का प्रयास किया जाता है।

नागरिक शास्त्र शिक्षण का उद्देश्य उच्च प्रकार के नागरिक चरित्र का विकास करना एवं बेहतर नागरिक बनाना होता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए छात्र को स्थानीय, राज्य एवं केन्द्र तीनों स्तर के सरकारों के संगठन एवं कार्य के बारे में सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। युवा नागरिकों के लिए यह ज्ञान शासन में सक्रिय भागीदारी के लिए आवश्यक है नागरिकशास्त्र का शिक्षण प्राय: इस कारण से सफल नहीं सिद्ध हो पाता है क्योंकि उसमें शिक्षण का केन्द्र, सामुदायिक कल्याण न होकर, सरकार होता है जबकि सरकार सामुदायिक कल्याण के लिए होती है। सरकार के अतिरिक्त नागरिकता के आदर्श, अभिरुचि एवं आदतें जिनकी छात्रों के जीवन में सक्रिय भूमिका होती है, उनका विकास महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। छात्रों को स्वतन्त्र चिंतन एवं नागरिक मुद्दों पर निष्पक्ष निर्णय हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यह निर्णय पूर्वाग्रह एवं भावनाओं से परे होना चाहिए।

यदि अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो अर्थ के सामाजिक व्यवस्था से सम्बधित है, तो इसके अध्ययन का महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि हमारी अधिकतर जन समस्यायें प्रकृति से आर्थिक होती है। माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र शिक्षण का उद्देश्य, पर्यवेक्षण के द्वारा आधुनिक आर्थिक सिद्धान्तों का अध्ययन एवं अवबोध द्वारा वर्तमान क्रियाकलापों का अध्ययन है। छात्रों के दैनिक जीवन में आर्थिक सिद्धान्तों के प्रयोग का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। व्यापार, करारोपण, सार्वजनिक व्यय, जीवन लागत ऐसे मुद्दे हैं जिनका छात्रों को एक नागरिक के रूप में सामना करना होता है। अत: उनमें इनके प्रति दायित्वपूर्ण भूमिका के निर्वहन की क्षमता विकसित की जानी चाहिए।

विद्यालयों में भूगोल अध्ययन का केन्द्र, मानव एवं पर्यावरण के मध्य पाये जाने वाला सम्बन्ध होता है। अत: इसके अध्ययन का उद्देश्य इस बात से अवगत होना होता है कि मनुष्य कैसे रहता है? कैसे कार्य करता है? भौतिक परिस्थितियाँ किस प्रकार उसके जीवन, विचारों एवं

परस्पराओं को प्रभावित करती हैं? किस प्रकार एक क्षेत्र में निवास करने वाला मनुष्य, अन्य क्षेत्र के निवासियों को प्रभावित करता है? यह अध्ययन व्यक्तियों, समूहों, राष्ट्रों के मध्य, बेहतर समझ को विकसित करने वाला होना चाहिए। तथ्यों को भौगोलिक दृष्टिकोण से देखने की क्षमता विकसित की जानी चाहिए।

सामान्य रूप से माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान विषय की शिक्षा निम्न उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में दी जा सकती हैं।

१. छात्रों में सामाजिकता के गुणों का विकास करना-

मनुष्य जीवन से लेकर मृत्यु तक का समस्त जीवन समाज में ही व्यतीत करता है, अतः उसे एक सफल सामाजिक प्राणी बनने के लिए उसे सामाजिक सम्बन्धों, मूल्यों, आदर्शों आदि को जानना आवश्यक होता है। अतः सामाजिक विज्ञान विषय का सर्वोपरि उद्देश्य, छात्रों को सुसंस्कृत और सुसभ्य सामाजिक प्राणी बनाना है जिसके अध्ययन द्वारा वह धीरे-धीरे सामाजिक गुणों को ग्रहण करता है।

२. सामाजिक चिन्तन के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास करना-

माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान विषय शिक्षण का एक प्रधान उद्देश्य छात्रों में सामाजिक चिन्तन के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास कराना है जिससे समाज के बारे में वह व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त कर सके तथा वह सामाजिक बुराइयों और कुरीतियों से दूर रह सके।

३. आदर्श नागरिकता के गुणों का विकास करना-

सामाजिक विज्ञान शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्रों में आदर्श नागरिकता के गुणों का विकास करना है जिससे वह आदर्श नागरिक बन सके। आदर्श नागरिकता, प्रजातंत्र की सफलता, सुरक्षा और स्थायित्व के लिए आवश्यक है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) के अनुसार लोकतंत्र में नागरिकता एक चुनौतीपूर्ण दायित्व है जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को प्रशिक्षित किया जाता है। इसमे बहुत से बौद्धिक सामाजिक तथा नैतिक गुण निहित है जिनके अपने आप विकसित होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

जोरोलीमेक (1963) के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य, सम्पूर्ण विद्यालयी कार्यक्रम के अनुसार ही, लोकतान्त्रिक नागरिक का विकास करना होता है।''

ई.बी. वेस्ले (1958) के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य, छात्रों में ऐसी

सूझ, दक्षता तथा अभिवृत्तियों का विकास करना है जो प्रजातन्त्र के एक नागरिक में होनी आवश्यक होती है।''

स्पष्ट है कि इन सामाजिक गुणों के विकास के लिए छात्रों को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता होती है और छात्रों को यह प्रशिक्षण मुख्य रूप से सामाजिक अध्ययन विषय के माध्यम से दिया जाता है तथा इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर ही सामाजिक अध्ययन विषय के पाठ्यक्रम में नागरिक शास्त्र से सम्बन्धित अध्यायों को रखा गया है, जिससे छात्र सरकार के स्वरूप, संविधान और राष्ट्र के प्रति अपने दायित्व, मौलिक कर्त्तव्यों और अधिकारों, प्रशासनिक ढ़ांचें, मतदान, चुनाव के अपराधीकरण जैसे गम्भीर चुनौतियों को समझ सके तथा अपने दायित्वों के उचित निर्वहन हेतु तैयार हो सके।

४. राष्ट्रीय एकता की भावना का विकास कराना-

राष्ट्रीय एकता किसी राष्ट्र के व्यक्तियों के बीच समान हित के आधार पर विकसित हम की वह भावना है जो उन्हे क्षेत्र, जाति, भाषा, संस्कृति और धर्म आदि की भिन्नता होते हुए भी अपने राष्ट्र से बाँधती है और वे राष्ट्रहित में अपने व्यक्तिगत हितों को त्याग देते हैं। इस भावना के विकास में सामाजिक विज्ञान विषय का महत्त्वपूर्ण योगदान है। सामाजिक विज्ञान विषय छात्रों में राष्ट्रीय बोध की भावना का विकास करती है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही सामाजिक विज्ञान विषय के पाठ्यक्रम में भारत के इतिहास, भूगोल, अर्थव्यवस्था तथा नागरिक शास्त्र जैसे विभिन्न विषयों को स्थान दिया है। सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, स्वस्थ राष्ट्रीयता की भावना का विकास करता है एवं संकीर्ण राष्ट्रीयता से बचाता है। क्योंकि संकीर्ण राष्ट्रीयता की भावना नागरिकों में अनेक दुर्गुण उत्पन्न करती है तथा मानव जाति को युद्ध के मुँह में ढकेल देती है।

५. मानसिक शक्तियों का विकास करना-

सामाजिक विज्ञान विषय द्वारा छात्रों में एक विशेष प्रकार की मानसिक शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके अध्ययन से छात्रों की स्मरण, कल्पना, तर्क निर्णय आदि मानसिक शक्तियों के विकास में बहुत सहायता मिलती है।

६. आर्थिक क्रिया कलापों का ज्ञान प्रदान कराना-

माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान विषय का प्रमुख उद्देश्य मानव के भौतिक गतिविधियों अर्थात आर्थिक क्रिया-कलापों की जानकारी प्रदान करना है और इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही पाठ्यक्रम में मानव के आर्थिक क्रिया-कलापों से सम्बन्धित अध्यायों को स्थान दिया गया है ताकि उसके अध्ययन के माध्यम से छात्रों को अपने आर्थिक दायित्वों का बोध हो सके

और वे राष्ट्र के आर्थिक विकास में अपने भूमिका का सार्थक ढंग से निर्वहन कर सकें।

७. मानव जीवन में पर्यावरण के महत्त्व से छात्रों में परिचित कराना-

सामाजिक अध्ययन विषय का एक मुख्य उद्देश्य छात्रों को पर्यावरण सुरक्षा में छात्रों की भूमिका से अवगत कराना है और इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही पाठ्यक्रम में पर्यावरण से सम्बन्धित अध्यायों को पर्याप्त महत्त्व दिया गया है। सुरक्षित पर्यावरण, मानव जीवन के लिए अपरिहार्य दशा है अतः इसकी सुरक्षा का परमदायित्व भी मानव समाज पर है।

८. अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास करना-

सामाजिक विज्ञान विषय का एक अन्य मुख्य उद्देश्य छात्रों में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना है। आज का युग वैश्वीकरण का है तथा ''वसुधैव कुटुम्बकम'' की भावना का विकास हो रहा है। अतः छात्रों में इस अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध के विकास के लिए सामाजिक समस्याओं और घटनाओं को स्थान दिया गया है।

९. अतीत के अनुभवों से परिचित कराना-

छात्रों को अतीत के अनुभवों से परिचित कराने हेतु सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में इतिहास, संस्कृति और भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इतिहास को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि इतिहास मानव द्वारा अतीत में किये गये मानवीय क्रिया कलापों का तिथिक्रमिक, गवेषणात्मक और उद्देश्यपूर्ण अध्ययन है जिसका मुख्य उद्देश्य अतीत में मानव द्वारा किये गये गलतियों से शिक्षा देना और अच्छे कार्यों का कारण सहित व्याख्या करना जिससे हम उससे सीख ले सके।

माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान शिक्षण का महत्त्व -

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने आज मानव समाज में महान परिवर्तन ला दिये है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप समाज के आकार स्वरूप में व्यापक परिवर्तन आ गया है तथा मानवीय सम्बन्ध पूर्व की अपेक्षा जटिल हो गये हैं। समाज में व्यवस्थित होने के लिए सामाजिक विषयों का ज्ञान आवश्यक है।

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का बहुमुखी विकास करना होता है। बहुमुखी विकास सामाजिक अध्ययन के द्वारा ही हो सकता है। एक सामाजिक प्रक्रिया होने के कारण शिक्षा का यह उत्तरदायित्व है कि वह अपनी विभिन्न संस्थाओं विशेषतः विद्यालयों के माध्यम से छात्रों में इस योग्यता का विकास करें कि वह जटिल समाज में सुखद जीवन व्यतीत कर सके। विद्यालय का

दायित्व है कि वह छात्रों में सहयोग, सहानुभूति, सहिष्णुता, सामुदायिकता, सुनागरिकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध जैसे गुणों का विकास करे। इन गुणों का विकास सामाजिक अध्ययन के द्वारा सहज ढंग से हो सकता है। वर्तमान युग प्रजातन्त्र का युग है। विश्व के अधिकांश देश प्रजातंत्रात्मक शासन प्रणाली अपना चुके हैं। प्रजातंत्रात्मक शासन प्रणाली की सफलता, सुनागरिकता पर आधारित है। सुनागरिकता का विकास सामाजिक अध्ययन के द्वारा ही हो सकता है।

सामाजिक अध्ययन के महत्त्व को वैयक्तिक एवं सामाजिक दोनों दृष्टिकोण से स्पष्ट किया जा सकता है। वैयक्तिक दृष्टिकोण से सामाजिक विज्ञान बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा व्यक्ति में विभिन्न सामाजिक गुणों जैसे सहयोग, सहकारिता, सहिष्णुता, निष्पक्षता का विकास किया जाता है जो व्यक्ति के सामाजिक चरित्र के लिए आधार का काम करते है। सामाजिक विज्ञान के शिक्षण के द्वारा व्यक्ति की मानसिक शक्तियों का विकास होता है एवं साथ ही साथ उसे दैनिक जीवन में आने वाली व्यवहारिक समस्याओं के समाधान खोज पाने में भी सक्षम बनाने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक अध्ययन के द्वारा व्यक्ति में विभिन्न सामाजिक आदतों तथा कुशलताओं का विकास करके, उसे अपने उत्तरदायित्वों के निर्वाह के योग्य बनाया जा सकता है। इसके अध्ययन के उपरान्त व्यक्ति अपने वातावरण मे सुव्यवस्थित होने में समर्थ हो जाता है।

सामाजिक दृष्टिकोण से भी सामाजिक अध्ययन बहुत महत्त्वपूर्ण है। सामाजिक अध्ययन के द्वारा छात्रों मे स्वस्थ्य एवं निष्पक्ष दृष्टिकोण विकसित किया जा सकता है जिससे उनमें हीनता अथवा श्रेष्ठता की अनुभूति, जो सामाजिक जीवन के लिए घातक होती है, के विकास को रोका जा सके। यह सहयोगिता की भावना एवं प्रवृति का विकास करता है जो सामुदायिक जीवन के लिए आवश्यक है। यह विषय छात्र को देश की संस्कृति एवं विरासत से अवगत कराते हुए उनके मन में देश के प्रति प्रेम तथा सम्मान की भावना जागृत करता है। सामाजिक अध्ययन का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। इसमें सम्पूर्ण राष्ट्र के भौतिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक पक्ष से सम्बन्धि त जानकारी होती है, जिससे छात्र अपने देश की समस्याओं एवं संभावनाओं से न केवल अवगत होते हैं अपितु उनके समाधान खोजने के लिए भी तत्पर होते हैं। सामाजिक विज्ञान का शिक्षण मानव विकास के क्रम से भी अवगत कराता है तथा साथ ही साथ वर्तमान सम्यता के समक्ष उपस्थित खतरों जैसे प्रदूषण, आतंकवाद से भी अवगत कराते हुए छात्रों को उनके समाधान ढूंढने के लिए प्रेरित करता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक अध्ययन एक महत्त्वपूर्ण विषय है जिसके द्वारा ही किसी बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है जो कि शिक्षा प्रणाली का आवश्यक तत्त्व है। इसके द्वारा ही हम भावी नागरिक को अपने समाज में सफलतम ढंग से व्यवस्थित होने, अपनी संभावनाओं से अवगत होने एवं सर्वाधिक उपयुक्त ढंग से विकसित होने का अवसर प्रदान

कर सकते हैं जिससे वह समाज को अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान दे सके एवं समीक्षात्मक चिन्तन के द्वारा प्रजातांत्रिक समाज में अपनी भूमिका का निर्वहन सही ढंग से कर सके। इस विषय के अध्ययन से विद्यार्थियों में सदाचार, मनुष्यता तथा देश भक्ति के भाव जागृत होते हैं, जिससे राष्ट्र की प्रगति निश्चित रूप से होती है। इस विषय का अध्ययन इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इससे निम्न योग्यताओं का विकास बालक में होता है।

१. **सामूहिक जीवन के महत्त्व का ज्ञान**- सामाजिक अध्ययन एक सामाजिक शास्त्र है जिसका सम्बन्ध सामाजिक व्यवहार, सामाजिक जीवन तथा सामाजिक उन्नति से है। इसकी शिक्षा से विद्यार्थी सामूहिक जीवन के महत्त्व को समझ जाते हैं। सामाजिक अध्ययन की शिक्षा व्यक्ति में स्वार्थ, त्याग की भावनाएँ भरती है जिससे व्यक्ति में मनुष्यता तथा सहायोग की भावनाएँ आती हैं।

२. **प्रजातान्त्रिक मूल्यों का विकास**- आज का युग प्रजातांत्रिक है जनता की मान्यता है कि वर्तमान सरकार का निर्माण कुछ लोगों पर निर्भर नहीं है वरन् सम्पूर्ण जनता पर निर्भर है। यह विषय प्रजातन्त्रात्मक राज्य के नागरिकों को अधिकार और कर्तव्यों का ज्ञान कराता है।

३. **वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास**- इस विषय में विद्यार्थी को समाज सम्बन्धी क्रियाओं का क्रमबद्ध रूप से अध्ययन करने का अवसर मिलता है। विद्यार्थी नागरिकों की समस्या पर विचार करता है और फिर उनको कार्य रूप में बदलने की कोशिश करता है।

४. **व्यवहारिक उपयोगिता**- आज का युग प्रयोजनवाद का युग है। जरूरी है कि जीवन में उपयोगिता हो। इस उपयोगिता का सम्बन्ध धनोपार्जन से नहीं है, बल्कि उस ज्ञान को प्राप्त करने से है जिससे मनुष्य अपने जीवन को शांत और सुखमय बना सके। इसके अतिरिक्त सामाजिक अध्ययन छात्र-छात्राओं को इस योग्य बनाता है कि वे परिवार और समाज के महत्त्व को समझें और उनके प्रति अपने उत्तरदायित्वों का ठीक प्रकार निर्वाह करें।

उपसंहार-

किसी राष्ट्र के विद्यालय उसके जीवन के अंग होते है जिनका विशेष कार्य उसकी आध्यात्मिकता को दृढ़ करना, उसकी ऐतिहासिकता को चिर-स्थायी रखना, उसके भूतकालीन गौरव को प्राप्त करना तथा भविष्य को अच्छा बनाना होता है। यह कार्य सामाजिक विज्ञान विषय के प्रभावी शिक्षण द्वारा ही किया जा सकता है। माध्यमिक स्तर, शिक्षा की औपचारिक व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव होता है जिससे गुजर कर देश के भावी नागरिक अपने लिए जीवन-क्षेत्र का चयन करते हैं। इस स्तर पर सामाजिक विज्ञान नाम से अनिवार्य रूप से सम्मिलित विषय, वस्तुतः विभिन्न सामाजिक विज्ञानों का सरलीकृत रूप होता है जिसे शिक्षण के उद्देश्य से पुनर्गठित किया

जाता है। इस विषय के शिक्षण का उद्देश्य छात्र-छात्राओं में उन वाँछनीय क्षमता एवं गुणों का विकास करना होता है जिससे वह वर्तमान वैश्विक युग में जटिल सामाजिक व्यवस्था के साथ सामंजस्य स्थापित कर सकें, मानव विकास क्रम को समझ सकें, पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति संवेदनशील हों एवं आर्थिक स्वालम्बन प्राप्त करते हुए संसाधनों का समुचित प्रयोग कर सकें। वर्तमान मानव सभ्यता के अस्तित्व की सुरक्षा के लिए सामाजिक विज्ञान का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसके शिक्षण में विभिन्न सामाजिक विज्ञान को समन्वित एवं सरलीकृत रूप छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है एवं छात्रों का विकास इस ढंग से किया जा सकता है कि माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे समाज, राष्ट्र, विश्व के एक कुशल एवं सहयोगी सदस्य के रूप में अपने दायित्वों से न केवल अवगत हों, अपितु सफलतापूर्वक उसका निर्वहन भी कर सकें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी., 2014, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, शिप्रा पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
2. कोचर, एस.के., 2003, द टीचिंग आफ सोशल स्टडीज, स्टरलिंग पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नयी दिल्ली।
3. गर्ग, भँवर लाल, 2012, सामाजिक विज्ञान शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. त्यागी, जी.एस.डी., 2013, सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. पाण्डेय, राम सकल, 2008, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
6. भारद्वाज, दिनेश चन्द्र, 2014, राधा प्रकाशन मन्दिर, आगरा।
7. सिंह, रामपाल, 2000, सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
8. शर्मा, आर.ए., 2005, सामाजिक विज्ञान शिक्षण, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।

■

A practical understanding of job satisfaction in North Eastern Railway and its review of literature: A view

Dr. Subhash Kumar Gupta*

Abstract: Job satisfaction is one of the most crucial but controversial issues in industrial Psychology and behavioral management in organization. It ultimately decides the extent of employee motivation through the development of organizational climate or environment satisfaction is specific subset of attitudes held by organizational members. It is the attitude one has towards his or her job. Stated another way, it is one's effective response to the job. Job satisfaction in a narrow sense means attitudes related to the job. It is concerned with such specific factors has wages, supervision, steadiness of employment, conditions of work, social relation of the job, prompt settlement of grievances, fair treatment of employer and other similar items. Job satisfaction is related to different Socio-economic and personal factors, such as: Age, Sex, Incentives, Working Environment, Education, duration of work etc.

Keywords: Job satisfaction, Personnel's, Organization, Working conditions, Fringe Benefits and Performance.

Introduction: The North Eastern was formed on 14th April 1952 by combining two Railway systems (Oudh and Tirhut Railway and Assam Railway) and Cawnpore-Achnera section of the BB & CIR. It was bifurcated into two Railway Zones on 15th Jan. 1958 – North Eastern Railway and North East Frontier Railway. Presently, North Eastern Railway has three Divisions at Varanasi, Lucknow and Izatnagar. It has Headquarter at Gorakhpur. This Railway, being a passenger oriented system, provides reliable transportation facility to the people of Uttar Pradesh, Uttaranchal and Western Bihar and also gives and impetus to

*Assistant Professor, Department of Commerce, Maharana Pratap P.G College, Jungle Dhusan, Gorakhpur, U.P.

the socio-economic and cultural development of the region. This Railway also caters to the transportation needs of neighbouring country Nepal. North Eastern Railway employee's under different categories. It has separate department to deal with the employees' problems and tries to manage them effectively. This paper is devoted to a practical understanding of job satisfaction in North Eastern Railway.

Job satisfaction is a general attitude which is the result of many specific attitudes in three areas, namely

(i) Personal Factors; (ii) Factors in job; and (iii) Factors controlled by the management. These factors can never be isolated from each other for analysis. The approach which since to be opted is that job satisfaction is the favorableness or unfavourableness with which employees view their works. It results when job requirements suit to the wants and expectation of the employees.

However, a more comprehensive approach requires that many additional factors be included before a complete understanding of job satisfaction can be obtained. Such factors, such as; the employee's age, health, temperament, desires and level of aspiration should be considered. Further, his family relationships, social status, recreational outlets, activity in organizational labour-political or purely social, contribute ultimately to the job satisfaction.

Definition of job satisfaction:

Job satisfaction is the feeling of pleasure and achievement which an employee experience at their job, when the work is worth doing, or the degree to which their works gives them satisfaction.

According to Cranny, Smith, & Stone, 1992, "Managers, supervisors, human resource specialists, employees, and citizens in general are concerned with ways of improving job satisfaction".

According to Paul Specters (1985) "Job Satisfaction is liking of one's job and finding fulfillment in what you do. It combines an individual's feeling and emotion about their and how their job effect their personal lines". Therefore, Job satisfaction is such a phenomenon which depends not only from the job or organization but also it depends upon one's personal, social, psychological, academic & economic condition.

Objectives of the Study

The objective of the study is as follows:

1. To identify the review of Literature of job satisfaction.
2. To identify the factors which influence the job satisfaction of employees.

3. To identify the impact of employees' job satisfaction on their performance.
4. To identify the Measuring of Job Satisfaction Gorakhpur Headquarter of NER.
5. To identify the main causes of job dissatisfaction Gorakhpur Headquarter of NER

Research Methodology: Answer to the scientific problem or research problem can be achieved through proper formulation of research methodology. Research methodology is nothing but systematic observation or otherwise obtaining data, evidence or information as part of research study. The research design for this paper is descriptive in nature.

Tools for Data Collection: There are two distinct tools that are used for the data collection and are as follows:

1.Primary data collection 2.Secondary data collection

1. **Primary data collection:** Primary data collection is nothing but the gathering of information by us like through the questionnaires and interviews. The primary data is the information which is assembled for the foremost time and possesses the nature of being genuine and fresh.

2. **Secondary data collection:** Secondary data collection is the gathering of the data from the people except gathering from the researcher and few examples of the secondary data collection are like records of an organization, surveys etc.

Sample Size:- In this research study we have used Random sampling method. Data collected from the respondent as per our convenience and respondents convenience .Finally data collected from 450 Personnel's of Gorakhpur Headquarter of NER .

Theories of Job Satisfaction:

1. The hierarchy of needs
2. Theory of motivator-hygiene
3. Model of job characteristics
4. The approach of disposition

Review of Literature: Work has been done to understand the relationship between work environment and job satisfaction all around the world in different contexts over the years. The study is gaining more and more importance with the passage of time because of its nature and impact on the society. The findings of a Danish study suggest that a firm can increase its productivity through the improvement of physical dimensions of work environment (internal climate) and may have a positive impact on firms' productivity (Buhai, Cottony, & Nielseny, 2008).

Herzberg et al. (1959) developed motivational model for job satisfaction and through research he found that the job related factors can be divided into two categories, Hygiene factors and motivation factors. Hygiene factors can not cause satisfaction but they can

change dissatisfaction into no dissatisfaction or short term motivation, where motivational factors have long lasting effect as they raise positive feelings towards job and convert no dissatisfaction into satisfaction. In the absence of hygiene factors (that are working conditions, supervision quality and level, the company policy and administration, interpersonal relations, job security, and salary) the employees chances of getting dissatisfied increase[1].

Black burn and Robinson (2008) relating to self efficacy of teachers of agricultural education states that teachers in their early career of teaching are more efficient classroom management[2].

Organ and Ryan (1995) viewed that job satisfaction is one of the significant indicator for different characteristics of work behavior such as organizational citizenship, absenteeism and turnover. It is also the predictor of employee's feeling towards the work[3].

Sundarrajan and Minnelkodi (2001) evident teachers having more than 20 years of experience have less job satisfaction than those who are below 20 years of experience[4].

Another study by Catillo & Cano (2004) on the job satisfaction level among faculty members of colleges showed that if proper attention is given towards interpersonal relationships, recognition and supervision, the level of job satisfaction would rise.

Husne Demirela et.al, (2008) has observed that there are many studies in India and abroad that examine the Job satisfaction of the teachers. These studies dealt with job satisfaction and the factors which affect job satisfaction such as salary, gender, administration, working conditions mostly in schools, government colleges and universities[5].

Baah and Amoako (2011) described that the motivational factors (the nature of work, the sense of achievement from their work, the recognition, the responsibility that is granted to them, and opportunities for personal growth and advancement) helps employees to find their worth with respect to value given to them by organization. Further, this can increase motivational level of employees which will ultimately raise internal happiness of employees and that the internal happiness will cause satisfaction. Hygiene factor can only cause external happiness but they are not powerful enough to convert dissatisfaction into satisfaction but still its presence is too much important. According to them the Herzberg Two Factor Theory, both Hygiene and Motivation factors are linked with each other, as Hygiene factors move employee from Job dissatisfaction to No Job dissatisfaction, whereas motivation factors moves employees from no job dissatisfaction to job satisfaction **(Herzberg et al., 1959)**[6].

Sell and Cleal (2011) developed a model on job satisfaction by integrating economic variables and work environment variables to study the reaction of employees in hazardous work environment with high monetary benefits and non- hazardous work environment and

low monetary benefits. The study showed that different psychosocial and work environment variables like work place, social support has direct impact on job satisfaction and that increase in rewards does not improve the dissatisfaction level among employees.

The supervisor's availability at time of need, ability to interlink employees, stimulate creative thinking and knowledge of worth of open mindedness in view of workers, and ability to communicate with employees, are the basic supervision traits. Results revealed that with good and effective supervision, employees' satisfaction level was high whereas with poorer communication ability, dissatisfaction level among employees was high **(Schroffel, 1999)**.

Bakotic & Babic (2013) found that for the workers who work under difficult working conditions, working condition is an important factor for job satisfaction, so workers under difficult working conditions are dissatisfied through this factor. To improve satisfaction of employees working under difficult working conditions, it is necessary for the management to improve the working conditions. This will make them equally satisfied with those who work under normal working condition and in return overall performance will increase. A study in telecom sector by **Tariq et al (2013)** revealed that there are different variables like workload, salary, stress at work place and conflicts with family due to job leads an employee towards dissatisfaction that further results in turnover. At final stage these independent factors impacts negatively on organizational performance which is negatively influenced by these factors[7].

The roles of Workers in Job Satisfaction:

If the job satisfaction is an advantage to the worker then the worker try to do his/her level best in the job. The below parameters are the suggestions that aid the worker in Finding the job satisfaction:

1. The worker should advance the skills of communication.
2. The worker should prove the creative the creative skills.
3. The worker should prove the initiative skills.
4. The worker should accept the variety of the people.
5. The worker should learn to avoid the stress.

What are Benefits of Job Satisfaction?

The benefits of job satisfaction are as follows:

1. Job satisfaction and employee turnover
2. Job satisfaction and productivity
3. Job satisfaction and safety
4. Job satisfaction and union activities

5. Job satisfaction and absenteeism
6. Few other effects of job satisfaction.

The effects of low Job Satisfaction:

The effects of low job satisfaction are as follows:

1. Lack of productivity
2. Poor overall morale
3. The job stress
4. High employee turnover rates

Factors Relating to Job Satisfaction

Job satisfaction is derived from many interrelated factors. Every factor has it's own importance and which can not be neglected. All these factors are subject to change from time to time and therefore study of these factors is important. These factors are:

1. Personal Factors

i. **Sex** : In most of the investigations on the subject, it is revealed that generally women are satisfied with their job than man. This may be because of multiple role of women when they take position outside home. It was found that, women prefer to work with friendly people, good social position in spite of less pay.

ii. **Age:** Studies have found different results in different groups on the relationship of age with job satisfaction. Some feel that age has little relationship with job satisfaction but this relationship has importance in some job situations. In some groups job satisfaction is higher with increasing age in other groups it is lower.

iii. **Education:** In this relationship some studies show that there is a tendency for the more educated employees to be less satisfied and conversely the less educated employees to be more satisfied. But, other studies shows no relationship at all and certain variables such as; companies advancement policy in relation to education have to be considered.

iv. **Time of Job**: Several studies show that job satisfaction is higher in first few days then falls slowly.

2. Factors in job

i. **Type of Work**: The most important factor in the job is the type of job. Studies have shown that in job causes greater job satisfaction than the routine work. Other studies have shown that a majority of factory employees to be dissatisfied where as a minority of professionals were dissatisfied.

ii. **Skill Required:** Where skill exists to considerable degree, it tends to become the first source of satisfaction to the employees. Satisfaction in condition of work or in wages became prominent only where satisfaction in skill has materially decreased.

iii. **Occupational Status** : Occupational status shows a vary high correlation with intelligence, income and year of education. It has been found that employees are more dissatisfied in the jobs which have less social status and prestige.

iv. **Responsibility:** Responsibility also plays a major part in an industry .Thus studies on responsibility among factory managers have been found more significance leading them to job satisfaction.

3. Factors controlled by the management

i. **Wages:** Wages are the most important factor of the job satisfaction. Higher the wages more the job satisfaction, but this is not necessarily lead to cover all employees' satisfaction. Studies show that in some cases salary was rated well blow in job satisfaction, but security and opportunities for advancement by highly educated class of people is much higher than salary.

ii. **Working Condition:** Comfortable working conditions are ranked an important factor also. Better the working condition less will be fatigue and more will be job satisfaction.

iii. **Benefits:** Other benefits have been ramped as an important factor also. Since studies show that highly educated employees having a good pay give more importance to benefits and facilities.

iv. **Security** : All the studies show that employees want a steady work The higher will be the job satisfaction when there is a job security and vice -versa. But studies also show that security is also less important to better educated persons.

v. **Opportunity for Promotion:** Studies show that after years in the job people will give more importance to advancement than pay. Job satisfaction is more ebullient where there are ample opportunities for career advancement.

Measuring of Job Satisfaction Gorakhpur Headquarter of NER.

Table No. 1

Main Factors of Satisfaction	Overall Satisfaction %
Fringe Benefits	70.67
Human Resource Policy	82.67
Labour welfare	68.67
Work conditions	33.33

Measuring of Job Satisfaction Figure No.1

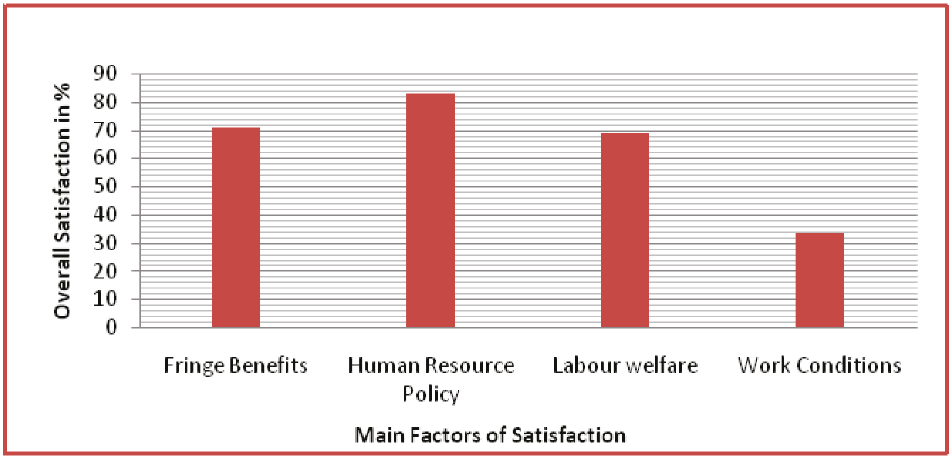

The main causes of job dissatisfaction Gorakhpur Headquarter of NER

Table No.2

Main Causes of Job Dissatisfied?	**% Dissatisfied with Aspect of Job**
Pay	24
Promotion	42.67
Security	14.67
Work Conditions	50.67
Education facility	24.00
Employee Welfare Fund	23.33
Medical facility	36.67
Accommodation facility	25.33

What are the main causes of job dissatisfaction? Figure No.2

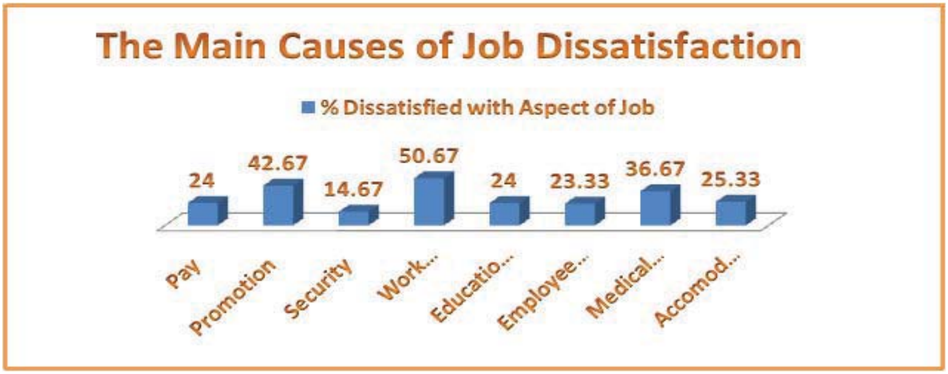

The Impact of Satisfied and Dissatisfied Employees on the Workplace

❖ One theoretical model—the exit–voice–loyalty–neglect framework—is helpful in understanding the consequences of dissatisfaction.

Exit and Neglect behavior include our performance variables- Productivity, Absenteeism and Turnover.

Voice and Loyalty behavior include- Constructive behavior that allow individual to tolerate unpleasant situations or to revive satisfactory working conditions.

	Constructive	Destructive
Active	Voice	Exit
Passive	Loyalty	Neglect

Job Satisfaction and Job Performance

❖ **HAPPY WORKER————————> More Productive Worker**

❖ JOB SATISFACTION – PERFORMANCE CONTROVERSY:

* Satisfaction causes performance: S -> P

* Performance causes satisfaction: P -> S

* Reward causes both performance & satisfaction: R -> P & S

❖ Organizations with more satisfied employees tend to be more effective than organizations with fewer.

Job Satisfaction and Customer Satisfaction

❖ Customer satisfaction is a very important requirement for many firms.Their performance gets marked by keeping their customers satisfied and happy.

❖ Satisfied employees increase customer satisfaction and loyalty.

❖ Since satisfied employees have high retention rate, customers are more likely to encounter familiar faces and receive experienced service. All these qualities build customer satisfaction and loyalty.

Conclusion:

After analyzing the whole situation the researchers concludes it is proved that Gorakhpur Headquarter (NER) of Personnel's are satisfied in Research Survey .Personnel's satisfied in major items example of fringe benefits (70.67%) ,Human Resource Policy (82.67%) and Labour welfare (68.67%) but only satisfied in working conditions (33.33%) . So, Personals of Gorakhpur Headquarter are satisfied.

Suggestions:

The following suggestions and recommendation being preferred by the researchers based on the finding of the study are worth considering:

1. There is a need to further improve these facilities by way of having modern equipments in the hospital and clinics and by providing quality medicine in these hospitals and clinic of Gorakhpur Headquarter.
2. NER should design Transfer policy should be need based for effective operation of Indian Railways.
3. The Indian Railways should also pay attention on most importantly Staff Benefits Fund because this fund is to be mainly utilized for education of staff and their children, grant for scholarships for technical and higher education, recreational and amusement of the staff and their children, grant to Railway institutions & club, sports and other tournaments, relief distress among the Railways employees, grant to maintenance of Railway employees.

References

1. Herzberg, F., Mausne, B., & Snyderman, B. (1959). The Motivation to Work. Jhon Wiley. [16] Clark, A. E. (1997). Job satisfaction and gender: Why are women so happy at work? Labour economics, 4(4), 341-372.
2. Hair, J. F., Black, W. C., Babin, B. J., & Anderson, R. E. (2010). Exploratory Factor Analysis. In Multivariate Analysis (7th ed., pp. 90-151). Pearson Prentice Hal.
3. Organ,D. and Ryan,K.(1995).A Metaanalytical Review of attitudinal and dispositional predictors of organizational citizenship behavior.Personnel Psychology.48,775-802.
4. Pronay,B. (2011).Job Satisfaction of Non-Government College Teachers in Bangladesh.Journal of Education and Practice.4(2), 87-91
5. Chandrasekar, K. (2011, January). Workplace Environment and Its Impact Organizational Performance in Public Sector organizations.
6. International Journal of Enterprise Computing and Business Systems, 1(1), 1-19.
7. Herzberg, F., Mausne, B., & Snyderman, B. (1959). The Motivation to Work. Jhon Wiley.

■

नाथ साहित्य में प्रतीक विधान

सन्तोष कुमार सिंह*

सारांश: भारतीय साहित्य में प्रतीक शैली के अनेक रूपों का प्रयोग होता रहा है। कवि या कलाकार प्रतीकों का प्रयोग तभी करता है जब उसे यह प्रतीत होने लगता है कि उसकी अनुभूति सामान्य भाषा में प्रकट नहीं हो पा रही है। नाथ साहित्य में साधना पद्धति तथा हठयोग की प्रमुखता है। अत: नाथ साहित्य में जीव, आत्मा, ब्रह्म, माया के साथ-साथ हठयोग से सम्बन्धित क्रियाओं के लिए अनेक प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। नाथ-साधकों का बल सरल-सहज एवं अहिंसात्मक जीवन पर अधिक रहा है इसलिए दैनन्दिन जीवन में इनसे सम्बन्धित प्रतीकों का प्रयोग भी पर्याप्त हुआ है। प्रस्तुत आलेख में नाथ साहित्य के प्रतीक विधान को सोदाहरण दिखाने का प्रयत्न किया गया है।

बीज शब्द : साधना पद्धति, हठयोग, कुण्डलिनी, पिंगला, इड़ा, सुषुम्ना, ब्रह्मरन्ध्र, वज्रयान, ज्ञानामृत, ऊर्ध्वमूल, सहस्रार, प्राणवायु, त्रिकुटी।

कवि या रचनाकार अपने अभीष्ट भावों के स्पष्टीकरण अथवा सम्प्रेषण हेतु प्रतीकों का सहारा लेता है। साहित्य में प्रतीक विधान अनेक रूपों में आयत्त होता रहा है। वस्तुत: जब रचनाकार की अनुभूति सामान्य भाषा में अपने को प्रकट करने में असमर्थता का अनुभव करने लगती है तो वह प्रतीकों के सहारे अपने को व्यक्त करने की कोशिश करती है। "शुद्ध काव्य में कवि और वर्ण्य-विषय की सत्ता पृथक रहती है और कवि उस पृथक वस्तु से सम्बन्धित अपनी अनुभूतियों या विचारों की अभिव्यक्ति करता है। दोनों अभिन्न नहीं हो सकते। विषय किसी स्थूल रूप में उसके समक्ष उपस्थित नहीं रहता अत: उसके सामने विषय की केवल उज्ज्वल या अत्यधिक उभरी रेखाएँ शेष रह जाती हैं। उनके आधार पर ही उसे समग्र दृश्य समग्र अनुभूति को उपस्थित करना होता है। अत: संकेतों की आवश्यकता होती है। ये संकेत ही प्रतीक हैं, यद्यपि ये संकेत से अधिक सामर्थ्य रखते हैं।"[1] भावों के स्पष्ट प्रकटीकरण के लिए ही प्रतीक पद्धति का आश्रय लिया जाता है। मूर्धन्य विचारक स्पर्जन का मत है, "सच्चे प्रतीक के लिए आवश्यक है कि वह वस्तु, उस वस्तु के अंशत: समान अवश्य हो जिसका वह प्रतीक है।"[2]

*प्राचार्य, राधिका महाविद्यालय करवल-मझगाँवा, गगहा, गोरखपुर

नाथ सम्प्रदाय के योगियों ने अपने धार्मिक सिद्धान्तों और यौगिक साधना की अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए कविता का आश्रय लिया है। उनकी काव्य रचना उनके लिए साध्य नहीं थी बल्कि साधना थी। इनकी योग साधना और हठयोग पद्धति की सूक्ष्मता को सामान्य भाषा में व्यक्त करना असम्भव था अत: योग साधक नाथ-सन्तों ने संवेदनयुक्त उपदेशों के लिए सांकेतिक भाषा अर्थात् प्रतीक योजना का आश्रय लिया है। गोरखनाथ ने अपनी विशिष्ट रचना 'गोरखबानी' में प्रकृति के विभिन्न अंगों को प्रतीक रूप में चित्रित किया है। वर्षा और कृषि के माध्यम से ज्ञान को अंकुरित होने के अमूर्त व्यापार का वर्णन इस प्रकार किया है-

"उत्तर देस में मेह धड़क्या, दक्षिण आचल छाया।
पूरब देस थी पाणिग बिछूही, पछिम खेत्र में पाया
मन पवना धोरी जोतावो, सतनां सातीड़ा समधावो
दया धर्म नां बीज अणावो, इणीं परिशेत्रे जावो।।"[3]

गुरु गोरक्षनाथ के उपदेशात्मक वचनों पर जब साधक को विश्वास हो जाता है कि खम्भे के बिना स्थित आकाश ही में तेल और बत्ती के बिना ज्ञान का प्रकाश सिद्ध हो गया तब साधक के लिए रात-दिन का प्रश्न नहीं रह जाता क्योंकि वह सदा ज्ञान के प्रकाश में विचरण करता रहता है। उपर्युक्त विरोधमूलक प्रतीक गोरखनाथ की इन पंक्तियों में परिलक्षित होते हैं-

थंभ बिहूंणी गगन रची ले तेल बिहूंणी बाती।
गुरु गोरष के वचन पति आया तब घौस नहीं तहां राती।।[4]

'गोरखबानी' में मुख्य रूप से यौगिक साधनाओं की प्रक्रिया तथा सिद्धि आदि के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया गया है। जैसे- ब्रह्मरन्ध्र के लिए गगन मण्डल तथा सहस्रार चक्र के लिए कुआँ जैसे प्रतीकों का वर्णन किया गया है।

"पाताल की गंगा ब्रह्माण्ड चढ़ाइबा, तहां बिमल बिमल जल पीया।"[5]

\+ ++ ++ ++ ++ ++

"गगन मंडल में ऊंधा कूवां, तहां अमष्टत का बासा।।"[6]

षडचक्र भेदन की साधना पद्धति के माध्यम से योगी को ज्ञान होने, लक्ष्य प्राप्त करने तथा ब्रह्म तक पहुँचने का मार्ग बताया गया है। इसमें प्रतीकों का इस प्रकार सामंजस्य स्थापित किया गया है-

"उलटिया पवन षट चक्र बेधिया, ताते लोहे सोषिया पांणी।
चंद सूर दोऊ निज धरि राष्या, ऐसा अलष बिनाणीं।।"[7]

अर्थात् प्राणवायु को उलट कर छः चक्रों को बेध लिया। उससे तप्त लोहे अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र ने पानी को सोख लिया। चन्द्रमा अर्थात् इड़ा नाड़ी और सूर्य अर्थात् पिंगला नाड़ी दोनों को अपने घर अर्थात् सुषुम्ना में निमज्जित कर दिया। नाथ साहित्य में साधना पद्धति तथा हठयोग की प्रमुखता है। नाथ साहित्य में जिन प्रतीकों के प्रयोग हुए हैं, वे इस प्रकार हैं–

सांकेतिक अर्थ	-	**प्रतीक**
पिंगला	–	सूर्य, यमुना।
इड़ा	–	चन्द्र, गंगा।
सुषुम्ना	–	सरस्वती, घर।
इन्द्रियाँ	–	पंचमकार, पंचदेव, समंदर, पंचबेल।
मन	–	ऊँट, मछली, मृग, कौआ, कूकर, असाधु।
माया	–	वेश्या, बाँझ, कामिनी, ऊँट, खरहा, शश, बूढ़ी, बाघिन, सास
कुण्डलिनी	–	पाताल की गंगा, देवी, धरती, योगिनी, गागरी।
आत्मा	–	ब्रह्मचारी, गाय, घर का गुसाईं, बाघ, पनिहारी, हंस।
ब्रह्म	–	पुरुष, विज्ञानी, बालक, हीरा, भील, शिकारी।
ब्रह्मरन्ध्र	–	ब्रह्माण्ड, औंधा कुआँ, अधरा, ताते लोहा, दसवां द्वार, शून्य द्वार।
श्वांस	–	भुजंगम।
जीव	–	हंस, कौआ, मायाधीन पुरुष।

नाथ सम्प्रदाय में योग सम्बन्धी बहुत सी बातें थीं जो केवल सम्प्रदाय के मान्य शिष्यों को ही बतलाई जाती थीं। इस प्रकार हठयोग का परम्परागत रूप, ब्रह्मानन्द के मिलन का आनन्द स्पष्ट करने के लिए प्रतीक रूप में सुरक्षित रह गया था। इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना नाड़ियाँ, कुण्डलिनी, षटचक्र, त्रिकुटी, सहस्रदल कमल का चन्द्र, ब्रह्मरन्ध्र, उससे द्रवित होने वाला अमृत, कुण्डलिनी द्वारा षटचक्र वेध होने तथा सहस्रदल कमल तक पहुँचने पर अनहद नाद और अजपा जाप की सिद्धि यही विविध शब्दों, रूपकों और प्रतीकों में स्पष्ट हुआ है।[8]

नाथ साहित्य में मुख्य रूप से योगपरक रचनाओं में प्रतीकों का बहुतायत से प्रयोग किया गया है। हठयोग साधना के लिए इड़ा और पिंगला नाड़ियों को रोक कर सुषुम्ना मार्ग से प्राणवायु को संचरित किया जाता है। हठयोग में इड़ा नाड़ी के लिए सूर्य और पिंगला के लिए चन्द्र प्रतीक का वर्णन मिलता है। 'हठयोग प्रदीपिका' के अनुसार– सूर्य सामान्य जीवन में जीवन और प्रकाशदाता है पर हठयोग के साधकों के लिए यह बात गलत है, क्योंकि वास्तव में सूर्य ही मृत्यु का कारण है, क्योंकि चन्द्रमा से जो अमृत झरता है, उसे सूर्य ग्रस लेता है, उसका मुँह बन्द कर

देना ही योगी का परम कर्तव्य है, अमृत के ग्रास से ही जीव जरा और व्याधियुक्त हो जाता है।[9] सहस्रार चक्र में स्थित गगन मण्डल में औंधे मुँह के कुण्ड से निरन्तर अमृत रस स्रवित होता रहता है। तालु के नीचे चन्द्र कुण्ड से स्रवित होने वाले इस अमृत का पान साधक जिह्वा को उलट कर करता है। हठयोग प्रदीपिका में जिह्वा को उलटकर ब्रह्मरन्ध्र की ओर ले जाने के इस क्रिया को 'गो-मांस भक्षण' की प्रतीकात्मक शैली में अभिव्यक्त किया गया है। 'गौ' जिह्वा का नाम है और तालु के समीप ऊर्ध्व छिद्र(ब्रह्मरन्ध्र) में जिह्वा का प्रवेश ही 'गोमांस-भक्षण' है, यही महापातकों का नाशक है। तालु के ऊर्ध्वछिद्र में जिह्वा के प्रवेश से उत्पन्न हुई ऊष्मा से उत्पन्न हुआ जो सोमरस चन्द्रमा से झरता है अर्थात् भृकुटियों के मध्य के वामभाग में स्थित चन्द्रमा से बिन्दुरूप सार गिरता है वही अमर वारुणी है, जिसका पान करना बड़े पुण्य का फल है।[10]

पीठ में स्थित मेरुदण्ड जहाँ सीधे जाकर पायु और उपस्थ के मध्य भाग में लगता है, वहाँ एक स्वयंभू लिंग है जो एक त्रिकोण चक्र में अवस्थित है। इसे अग्नि चक्र कहते हैं। इसी त्रिकोण या अग्निचक्र में स्थित स्वयंभू लिंग को साढ़े तीन वलयों या वृत्तों में लपेट कर सर्पिणी की भाँति कुण्डलिनी अवस्थित है।[11] यह महाकुण्डलिनी नामक शक्ति सम्पूर्ण सृष्टि में प्रसिद्ध है। प्राणवायु को सुषुम्ना में प्रवेश कराने के लिए कुण्डलिनी को जागृत करना अति आवश्यक होता है।

इसी प्रकार 'गोरखबानी' में कुण्डलिनी का प्रतीकात्मक वर्णन सर्पिणी के रूप में मिलता है। जैसे-

मारो-मारो स्रपनी निरमल जल पैठी,
त्रिभुवन डसती गोरषनाथ दीठी।

माती-माती स्रपणी दसों दिसि धावै,
गोरषनाथ गारडी पवन वेगि ल्यावै।।[12]

गोरखनाथ की कल्पना के अनुसार तीनों लोक को डसने वाली सर्पिणी कुण्डलिनी ही है और उन्होंने त्रिभुवन को डसती हुई एक सर्पिणी को देखा भी है। सर्पिणी कहती है कि 'मैं अजला हूँ फिर भी ब्रह्मा, विष्णु, महेश सभी को अपने वशीभूत कर लेती हूँ।'

कुण्डलिनी सुषुम्ना के मार्ग से होती हुई जिन षटचक्रों का भेदन करके सहस्रदल कमल में पहुँचती है, वे षटचक्र क्रमश: इस प्रकार हैं-

मूलाधार	-	चार दल
स्वाधिष्ठान	-	छ: दल
मणिपूरक	-	दस दल

अनाहद	–	बारह दल
विशुद्ध	–	सोलह दल
आज्ञा	–	दो दल

इन चक्रों का स्थान क्रमशः गुदा स्थल का मध्य भाग पेड़ू, नाभिदेश, हृदय, कण्ठ और त्रिकुटी पर है। प्राणवायु जब सुषुम्ना पथ से षट्चक्रों का भेदन करता हुआ तालु मूल में सिर तक स्थित सहस्रार के ब्रह्मरन्ध्र की ओर उन्मुख होता है तब कुण्डलिनी पूर्ण रूप से जागृत हो जाती है और त्रिकुटी पर उससे स्फोट होता है जिसे योगियों की भाषा में नाद कहते हैं। यह नाद ही अखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त अनहद नाद का व्यष्टि में व्यक्त रूप है। प्राण स्थिर होकर शून्य पथ से निरन्तर उस अनहद-नाद का श्रवण करने लगता है।

प्राचीन काल से ही सिद्धों, नाथों और सन्तों के साहित्य में वैदिक परम्परा के प्रतीकों का प्रयोग मिलता है। इनमें मुख्य रूप से वृक्ष विषयक प्रतीक का किसी-न-किसी रूप में वर्णन होता रहा है। वैयक्तिक एवं धार्मिक स्तर में अन्तर आ जाने पर भी इसके मूल स्वरूप में कोई अन्तर नहीं आया है। भावुक चिन्तकों के लिए यह सदैव प्रेरणा और अभिव्यक्ति का स्रोत रहा है तथा इस वृक्ष का प्रतीकात्मक प्रयोग नाथ साहित्य में इस रूप में मिलता है, जो ब्रह्म के लिए प्रयुक्त हुआ है।

'तत बेली सो तत बेली सो, अवधू गोरखनाथ जाणीं।
डालन मूल पुहुप नहीं छाया, विरचि करे बिना पाणीं।।'[13]

अर्थात् इस बेल की न शाखाएँ हैं, न जड़ है और न छाया है। बिना पानी के ही यह बढ़ती रहती है। इसका मूल शशधर के समान है जो सहस्रार में स्थित है, सूर्य जैसे पत्ते हैं, (यहाँ चन्द्रमा ज्ञानामृत का और सूर्य माया का प्रतीक है), यह माया ऊर्ध्वमूल और अधःशाख है।

सिद्धों के साहित्य में प्रतीकात्मक शब्दावली का पर्याप्त प्रयोग हुआ है तथा इनके पदों में प्रतीक शैलीगत चमत्कार दिखाने के लिए प्रयुक्त हुआ। प्राणवायु के लिए सास, पवन को घोड़ा तथा पवन निरोध को ताला-कुंजी, मन के लिए चोर तथा शून्य व सहज आदि उपमानों का वर्णन मिलता है। वज्रयानी सिद्धों की सहज साधना का नाथपन्थी साहित्य पर भी स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है।

सिद्धों ने पवन को घोड़ा मानकर उसे वश में करने का रूपक प्रस्तुत किया है। सिद्ध साहित्य में पवन रूपी घोड़ा का उदाहरण इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है-

'एहु मग मेल्लह पवण तुरंग सुचंचल।
सहज सहावे णे वसई होइ णिचवल।।'[14]

नाथपन्थी योगियों के साहित्य में भी घोड़ा और सवार रूपक का चित्रण मिलता है-

'सहज पलाण पवन करि घोड़ा लै लगांम चित चबका।
चेतनि असवार म्यान गुरु करि और तजौ सब डबका।।'[15]

गोरक्षनाथ ने इस पद के माध्यम से साधक को उपदेश दिया है कि उस परब्रह्म रमता राम से चौगान का खेल खेलने के लिए सहज को जीव, पवन को घोड़ा और लय को लगाम बनाओ, चेतन (आत्मा) को सवार बनाओ और इस प्रकार सब उपायों को छोड़कर सवारी करते हुए गुरु ज्ञान तक पहुँचो, उसे प्राप्त करो। इसी प्रकार सन्त कवियों ने भी पवन का घोड़ा, लय का लगाम आदि रूपकों का चित्रण किया है।

सिद्धों के अनुसार प्राणायाम द्वारा पवन के बन्ध को अध और ऊर्ध्व मार्ग में ताला लगाकर योग क्रिया की जाती है। सिद्धों ने पवन-बन्ध का रूपक ताला-कुंजी के उपमानों से प्रस्तुत करते हुए कहा है कि-

'पवण गमण दुआरे दिढ़ ताला बिदिज्जइ।'[16]

इसी प्रकार ताला-कुंजी के प्रतीक नाथों के साहित्य में भी देखने को मिलते हैं। गोरखबानी में पवन-बन्ध का रूपक ताला-कुंजी को दो अर्थों में प्रयुक्त किया गया है-

'अरधै उरधै लाइलै कूंची, थिर होवै मन तहां थाकी ले पवनां।
दशवां द्वार चीन्हिले, छूटै आंवा गमनां।।'[17]

एक साधक के लिए वासनाभिभूत मन ही योग साधना मार्ग में अवरोध उत्पन्न करता है। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह के विकार से ग्रस्त मन के लिए यौगिक साहित्य में चोर शब्द का वर्णन मिलता है। गोरखबानी में इस चोर से बचने के लिए साधक को सचेत करते हुए, गुरु गोरखनाथ ने उपदेष्ठा दिया है कि-

'काया हमारै सहर बोलिये, मन बोलिये हुजदार।
चेतनि पहरै कोटवाल बोलिये, तौ चोर न झंकै द्वार।।'[18]

आध्यात्मिक साधना में शून्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है, इसी के माध्यम से निर्वाण की प्राप्ति सम्भव है। 'शून्यावस्था को प्राप्त करने के बाद साधक को किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती है। वहाँ पहुँचने पर गिर-कन्दराओं तथा जगत् का मायाजाल टूट जाता है। वहाँ सर्वत्र विमलता तथा शुद्धता दीखती है। शून्य को पद्म भी माना जाता है। उसमें चौंसठ दल होते हैं, उसी कमल का वर्णन सिद्धों ने इस प्रकार किया है-

'एक सों पदुमा चौषठि पाखुड़ी।
तहिं, चढ़ि नाचअ डोम्बिबा पुड़ी।।'[19]

नाथपन्थियों ने शून्य को सहस्रार में स्थित ब्रह्मरन्ध्र के रूप में तथा गगन मण्डल को भी शून्य मण्डल के रूप में वर्णित किया है, जैसे–

‘गगन मंडल में सुंनि द्वार।
बिजली चमके घोर अन्धार।।’[20]

‘सुन्नि मंडल तहां नीझर झरिया।
चंद सुरज से उनमनि धरिया।।’[21]

मन या चित्त को उसके चंचल स्वभाव से मुक्त करना साधक के लिए अति आवश्यक है और जब यह सरल होकर ‘सहज’ में लीन हो जाता है तब वह सांसारिक बन्धनों से मुक्त होकर सहज साधक बन जाता है, इसीलिए सिद्धों ने सहज को बहुत महत्त्व दिया है, वे अपनी साधना से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु के साथ सहज विशेषण जोड़ते हैं, जैसे– सहज ज्ञान, सहज तत्त्व, सहज स्वरूप, सहज सुख, सहज पथ, सहज समाधि तथा बुद्ध को सहज संवर और शून्यता या नैरात्म को सहज सुन्दरी के नाम से वर्णित करते हैं।[22] सिद्धों ने सहज और शून्य का प्रयोग एक ही अर्थ में किया है, जैसे–

‘कन्ध मूअ अताअत्तण इन्दी, सहज सहावें सअल विवन्दी।
सहजै भावाभाव ण पुच्छह, सुण्ण तहि समरस इच्छिअ।।’[23]

नाथपन्थियों के साहित्य में भी ‘सहज’ को विशेष महत्त्व दिया गया है, परन्तु शून्य की भाँति सहज का भी नाथों ने अपने ढंग से अलग अर्थ में व्याख्या की है। गोरखनाथ के अनुसार सहज जीवन कैसा होना चाहिए, इसका उपदेश देते हुए कहा है कि–

‘हसिबा खेलिबा रहिबा रङ्ग, काम क्रोध न करिबा सङ्ग।
हसिबा खेलिबा गाहिबा गीत, दिढ़ करि राज़ि आपना चीत।।’[24]

‘अवधू सहजै लैणा सहजै दैणा सहजै प्रीती त्यौ लाई।
सहजै सहजै चलैगा रै अवधू, तौ बासण करैगा समाई।।’[25]

‘हबकि न बोलिबा हबकि न चलिबा, धीरे धरिबा पांव।
गरब न करिबा सहजै रहिबा, भणत गोरख रांव।।[26]

विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते हैं कि नाथ साहित्य में विविध अनुशासन के प्रतीकों का व्यापक प्रयोग हुआ है।

सन्दर्भः

1. डॉ. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय, 'नाथ और सन्त साहित्य', पृ. 582
2. स्पर्जन, 'मिस्टिसिज्म इन इंग्लिश लिटरेचर', पृ. 9
3. गोरखबानी, पृ. 125
4. वही, पृ. 68
5. वही, पृ. 2
6. वही, पृ. 9
7. वही, पृ. 33
8. सन्त काव्यः डॉ. रामकुमार वर्मा-आधार-हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, द्वितीय खण्ड, पृ. 230
9. हठयोग प्रदीपिका, 3/77
10. वही, 3/48/48-49
11. कबीरः डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी; पाँचवाँ परिवर्धित संस्करण-1955, पृ. 44
12. गोरखबानी, पृ. 139-140
13. वही, पृ. 106, 107
14. सिद्ध साहित्य, पृ. 462
15. गोरखबानी, पृ. 103
16. दोहाकोज़, पृ. 44
17. गोरखबानी, पृ. 117
18. गोरखबानी, पृ. 120
19. चर्यागीतिकोज़, सम्पादक-डॉ. बागची, पृ. 33
20. गोरखबानी, पृ. 60
21. गोरखबानी, पृ. 20
22. सिद्ध साहित्य, पृ. 179
23. दोहा कोज़, सम्पादक-डॉ. बागची, पृ. 1
24. गोरखबानी, पृ. 7
25. गोरखबानी, पृ. 256
26. गोरखबानी, पृ. 27

■

नाथपन्थ का जीवन दर्शन

समीर कुमार पाण्डेय*

सार-संक्षेप : नाथपन्थ के जीवन दर्शन की विशिष्ट मान्यता है गुरु परम्परा। गुरुमुख से प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है, उसमें प्रामाणिकता तथा विश्वसनीयता होती है। गुरु शिष्य का सदैव शुभचिन्तक होता है। गुरु शिष्य के आत्मबोध को और भी प्रकाशित करता है जिससे समाज का बड़ा भाग लाभान्वित हो। गुरु का जीवन-दर्शन परोपकार से परिपूर्ण होता है। वह शिष्यों को अपना सर्वस्व देकर सन्तुष्ट होता है। भारतीय जीवन-दर्शन गुरु के माध्यम से समाज के लिए नवीन प्रगतिशील दृष्टिकोण उपस्थित करता है। उसकी कामना है कि गुरु ने जिस सेवा समर्पण, त्याग और आध्यात्मिकता की ऊँचाई को प्राप्त किया वह शिष्यों के माध्यम से समाज को लाभान्वित करता रहे।

बीज शब्द : गुरुगोरखनाथ, नाथपन्थ, भारतीय जीवनदर्शन, रामचरितमानस, गोरखबानी, गुरुमुख, प्राणायाम।

नाथपन्थ सिद्ध सन्तों की वह उज्ज्वल परम्परा है जिसने मानव-जीवन को नवीन स्वर्णिम प्रभात दिया। अमंगल मार्ग का विनाश कर मंगल-पथ का प्रदर्शन किया। मानव मात्र की एकता का मन्त्र फूँका। गुरु परम्परा नाथपन्थ के जीवन-दर्शन की विशिष्ट मान्यता है। स्वामी विवेकानन्द कहते हैं- "जो समाज गुरु द्वारा प्रेरित है, वह अधिक वेग से उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। किन्तु जो समाज गुरुविहीन है, उसमें भी समय की गति के साथ गुरु का उदय तथा ज्ञान का विकास होना उतना ही निश्चित है।"[1] नाथपन्थ के साधु-सम्प्रदाय ने अनेक विसंगतियों भरे समाज को वह जीवनदर्शन दिया जहाँ सबकी उन्नति सुनिश्चित हो। कर्म की स्वतन्त्रता तथा आचरण की पवित्रता हो। स्वामी विवेकानन्द आत्मा को परमगुरु मानते हुए कहते हैं-'तुमको अन्दर से बाहर विकसित होना है। कोई तुमको न सिखा सकता है न आध्यात्मिक बना सकता है। तुम्हारी आत्मा के सिवा और कोई गुरु नहीं है।'[2] गुरुमुख से प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है, उसमें प्रामाणिकता तथा विश्वसनीयता होती है। गुरु शिष्य का सदैव शुभचिन्तक होता है। गुरु शिष्य के आत्मबोध को और भी प्रकाशित करता है जिससे समाज का बड़ा भाग लाभान्वित हो। गुरु का जीवन-दर्शन

*असिस्टेण्ट प्रोफेसर, शिक्षा संकाया, सन्त तुलसीदास पी.जी. कॉलेज, कादीपुर, सुल्तानपुर (उ.प्र.)

परोपकार से परिपूर्ण होता है। वह शिष्यों को अपना सर्वस्व देकर सन्तुष्ट होता है। 'गुरु की कृपा से, शिष्य बिना ग्रन्थ पढ़े ही पण्डित हो जाता है।'[3] भारतीय जीवन-दर्शन गुरु के माध्यम से समाज के लिए नवीन प्रगतिशील दृष्टिकोण उपस्थित करता है। उसकी कामना है कि गुरु ने जिस सेवा समर्पण, त्याग और आध्यात्मिकता की ऊँचाई को प्राप्त किया वह शिष्यों के माध्यम से समाज को लाभान्वित करता रहे। गुरु कौन? चेला कौन? इस तथ्य का समाधान स्वयं गुरु गोरखनाथ करते हैं। वे कहते हैं-

अधिक तत्त से गुरु बोलिये हीण तत्त ते चेला।
मन मानैं तौ संगि रमौ नहीं तौ रमौ अकेला।।[4]

जिसमें तत्त्व (ज्ञान, साधना, तपस्या आदि) की प्रधानता है वह गुरु है जिसमें तत्त्वबोध की अल्पता है वह चेला है। दोनों एक भाव हों तो एक साथ रहें, नहीं तो अकेले रहो/रमो। जब गुरुदेव अकेले रमो की बात करते हैं तो वे बड़ी महत्त्वपूर्ण बात करते हैं- 'सत्य, न्याय का सदैव पक्षधर रहना चाहिए, चाहे अकेला ही रहना पड़े।' यह जीवन-दर्शन विषय तत्त्व आज अति प्रासंगिक और उपयोगी है। समाज में विसंगति तभी फैलती है जब कथनी और करनी में अन्तर होता है। जब कथनी और करनी में एकता होती है तभी सामाजिक समरसता बढ़ती है। महायोगी गुरु गोरखनाथ कहते हैं-

कथणी कथैं सों सिष्य बोलिए, वेद पढ़ै तो नाती।
रहणी रहै सो गुरु हमारा, हम रहता का साथी।।

जो केवल कहता फिरता है, वह शिष्य है। जो वेद का पाठ-मात्र करता है, वह नाती है। जो आचरण करता है, वह हमारा गुरु है और हम उसी के साथी हैं।[5]

आचरण व्यक्ति को महान बनाता है, कथन नहीं। वह शब्दजाल व्यर्थ है जिसमें अर्थ गौरव नहीं। आचरणहीन व्यक्ति का समाज में महत्त्व, सम्मान नहीं रह जाता। सतगुरु शिष्य का तो भला करता ही है साथ ही वह शिष्य के माध्यम से समाज का उद्धार करता है। कबीर ने कहा है-

सतगुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपकार।
लोचन अनंत उघाड़िया, अनंत दिखावणहार।।[6]

भारतीय संस्कृति के यात्रा-पथ में गुरु-शिष्य परम्परा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। गुरु की प्रधान विशेषता है कि वह शिष्य के अज्ञान-अन्धकार को मिटाकर वहाँ सत्य ज्ञान का प्रकाश भरता है। सत्य ज्ञान के आलोक से भरपूर शिष्य समाज के असज्जन को सज्जन बनाने में समर्थ हो जाता है। सहजोबाई का कथन है-

'सहजो' गुरु दीपक दियो, रोम रोम उजियार।
तीन लोक दृष्टा भये, मिट्यो भरम अंधियार।।[7]

सांसारिक भेदभाव जिसे दूसरे शब्दों में सामाजिक विसंगति कह सकते हैं, से विग्रह-कलह ही उत्पन्न होता है। जहाँ भेदभाव होगा वहाँ विग्रह होगा ही। वेदव्यास का कथन है- 'संसार में विग्रह का मूल भेदभाव ही है।'[8] गुरु गोरखनाथ शिवावतार हैं। शिव ऐसे समाज के पोषक हैं जहाँ सर्वसमाज के लोग रहते हैं। जहाँ अमृत (मस्तक पर स्थित चन्द्रकला में) महा विष (कण्ठ में) एक साथ निवास करते हैं, जहाँ योग तथा भोग की स्थिति रहते हुए भी योग की ही प्रधानता रहती है। शिव के विषय में पार्वती ने रामचरितमानस में कहा है-

'मोरे जान सदा सिव जोगी।'
अज अनवद्य अकाम अभोगी।।

गुरु गोरखनाथ शिव की भाँति सर्वजन के देवता हैं। गुरु हैं अतएव प्रणम्य हैं। जो सबके अन्तःकरण में विचरने वाले अन्तर्यामी पुरुष हैं, जिन्हें गुह्य कहा गया है, जो स्वयं प्रकाशरूप हैं, प्रणव (ॐकार) जिनका नाम है, जो परम अक्षर अर्थात् जीव के भी परम कारण हैं, उन मंगलकारी गुणगान देव भगवान् शिव को मैं प्रणाम करता हूँ।[9] कोई भी समाज तब तक शक्ति-सम्पन्न नहीं हो सकता जब तक वह शारीरिक रूप से मजबूत न हो। वस्तुतः शान्ति वहीं होती है जहाँ शक्ति रहती है। स्वस्थ व्यक्ति ही समाज को सुरक्षा, संरक्षा और प्रगति प्रदान कर सकता है। प्राणायाम के माध्यम से शारीरिक तथा आध्यात्मिक मजबूती मिलती है। प्राणायाम से चित्त शुद्ध हो जाता है और विशुद्ध चित्त में अन्तःप्रकाश स्वरूप शुद्ध आत्मतत्त्व का साक्षात्कार होने लगता है।[10]

नाथपन्थ के सन्तों ने प्राणायाम के माध्यम से मानव-जीवन को सदुपयोगी बनाने में अति महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। वायुपुराण का कथन है- 'प्राणायाम के चार प्रयोजन जानने चाहिए- शान्ति, प्रशान्ति, दीप्ति और प्रसाद।'[11] स्वस्थ और समुन्नत समाज के लिए उक्त चारों तत्त्वों की अति आवश्यकता होती है, जो सार्वकालिक हैं। नाथपन्थ के योगियों ने समाज को अर्थपूर्ण दिशा दी, उन्होंने उसे योगी माना, "जो बुरा-भला कहने पर दुःखी नहीं होता, पटु कहे जाने पर आनन्दित नहीं होता, सुगन्धि से तथा आनन्ददायक वस्तुओं से आकर्षित नहीं होता, सुन्दर स्त्री में अनुरक्त नहीं होता, अन्त्येष्टि क्रिया के पश्चात् स्नान से घृणा नहीं करता तथा सदा उदासीन भाव से रहता है, वह कोई योगीश्वर सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान है।"[12] योगी पोथी पढ़कर ज्ञान प्राप्त नहीं करता। वह संसार में रमता है। संसार को पढ़ता है, देखता है और जहाँ कहीं उसे खराबी नजर आती है वह दूर करने का प्रयत्न करता है। गुरु गोरखनाथ कहते है-

वेदे न सास्त्रे कतेबे न कुरांणे पुस्तके न बंच्या जाई।
ते पन जांनां बिरला जोगां और दुनी सब धंधै लाई।।[13]

व्यर्थ के वाद-विवाद से व्यक्ति का समय नष्ट होता है, अनायास ही बुद्धि विकृत होती

है। अतएव गुरु गोरखनाथ कहते हैं कि व्यर्थ के वाद-विवाद से दूर रहना ही श्रेयस्कर है।

कोई बादी कोई बिबादी जोगी कौं बाद न करना।
अठसठि तीरथ समंदि समावैं यूँ जोगी कौं गुरुमुखि जरनौं।।[14]

यदि समाज से वाद-विवाद समाप्त हो जाय, सर्वत्र संवाद हो जाय तो परमात्मा का प्रसाद सुख एवं सौजन्य के रूप में सबको मिलने लगेगा। 'जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना' रामचरितमानस का यह प्रसिद्ध कथन है। दम्भ, क्रोध और प्रदर्शन सामाजिक रोग है। गुरु गोरखनाथ इनसे दूर रहने को कहते हैं।

हबकि न बोलिबा, ठबकि न चालिबा, धीरैं का धरिबा पांव।
गरब न करिबा सहजैं रहिबा, भणत गोरख रांव।।[15]

जिस समाज में विनम्रता, सुजनता तथा सहयोगिता होगी, वही प्रगति करेगा, अन्यथा अवनति के अन्ध कूप में गिर पड़ेगा। गुरु गोरखनाथ के उक्त वचन में सामाजिक दर्शन का स्वस्थ मानवीय अध्याय प्रतिबिम्बित हो रहा है।

सन्दर्भः

1. विवेकानन्द (विवेकानन्द साहित्य, भाग 10, पृ. 160)
2. विवेकानन्द (विवेकानन्द साहित्य, भाग 10, पृ. 214)
3. विवेकानन्द (विवेकानन्द साहित्य, भाग 10, पृ. 218)
4. गोरखबानी (सबदी 161)
5. गोरखबानी (सबदी 271)
6. कबीर ग्रन्थावली
7. सहजोबाई
8. लोके भेदमूलो हि विग्रहः। वेदव्यास (महाभारत, सभापर्व, 146.28)
9. अन्तश्चरं पुरुषं गुह्यसंज्ञं प्रभास्वन्तं प्रणदं विप्रदीपम्।
   हेतु परं परमस्याक्षरस्य शुभं देवं गुणिनं संनतोऽस्मि।। (हरिवंशपुराण- विष्णु पर्व 172.50)
10. जाबालदर्शनोपनिषद् (6.16)
11. प्रयोजनानि चत्वारि प्राणायामस्य विद्धि वै।
    शान्तिः प्रशान्तिर्दीप्तिश्च प्रसादश्च चतुष्टयम्।। (वायुपुराण - 2.21.4)
12. परम्परागत
13. गोरखबानी (सबदी 6)
14. गोरखबानी (सबदी 9)
15. गोरखबानी (सबदी 27)

नाथपन्थ का लोककल्याणकारी हठयोग

सलिलकुमार पाण्डेय*

सार-संक्षेप : हठयोग के महान साधक गुरु गोरखनाथ कहते हैं कि योगी को संसार में उसी तरह रहना चाहिए जैसे कमल पानी में रहता है। योगी अवधूत आँख से सब कुछ देखता है और कान से सब सुनता है पर वह मुख से कुछ कहता नहीं है। शरीर खूब भारी हो, पर यदि गुरु से भेंट न हुई तो वह शरीर दो कौड़ी की है। वे ज्ञान को गुरु मानते हैं, चित्त को चेला कहते हैं और मन को मित्र। यदि ये सब अनुकूल हैं तो व्यक्ति सबके साथ है (स्वयं में स्वस्थ है)। यदि ये सब नहीं तो व्यक्ति अकेला (अस्वस्थ) है।

बीज शब्द : हठयोग, गोरखनाथ, नाथपन्थ, योग, अध्यात्म, दर्शन, अग्निदीपन, बिन्दु-जय, नाड़ी-विशुद्धि, विरक्ति, आध्यात्मिकता।

हठ का तात्पर्य है बहुत आग्रहपूर्वक और बराबर यही कहते रहना कि अमुक बात ऐसी ही है अथवा ऐसे ही होगी या होनी चाहिए। दृढ़तापूर्वक की हुई प्रतिज्ञा या संकल्प हठ है।[1]

'हठयोग' योग का वह अंग या प्रकार है जिसका प्रचलन नाथपन्थियों ने अपनी साधना के लिए किया था और जिसमें ईश्वर प्राप्ति के लिए नेति, धौति क्रियाओं, कठिन मुद्राओं और आसनों का विधान किया गया। इसमें शरीर के अन्दर कुण्डलिनी और अनेक प्रकार के चक्रों का भी अधिष्ठान माना गया है। इसके सबसे बड़े आचार्य योगी मत्स्येन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) और उनके शिष्य गोरखनाथ माने जाते हैं।[2]

योग के विषय में अनेक मनीषियों ने गम्भीर चिन्तन-मनन किये हैं। यद्यपि 'योग' शब्द का सामान्य अर्थ जोड़ या संयोग होता है तथापि यह शब्द व्यापक अर्थों में व्यक्ति के परमात्मा के निकट जाने से है। "जीवात्मा का परमात्मा से संयोग ही योग कहा जाता है।"[3] मानव को सांसारिक भोग-लिप्सा में निरन्तर लगे रहना अच्छा लगता है, परन्तु मानव-जीवन का एकमात्र लक्ष्य भोग-लिप्सा ही नहीं है, बल्कि उसके आगे बढ़कर 'योग-साधना' है। योग-साधना से शारीरिक शक्ति तो बढ़ती ही है आन्तरिक ऊर्जा का भी विकास होता है जो अन्ततः परमात्मा के सान्निध्य

*प्रबन्ध सम्पादक, चेतनता, ग्राम-भिलोरा, पोस्ट-नौसड़, जनपद-गोरखपुर(उ.प्र.)

का कारण बनता है। स्वामी विवेकानन्द कहते हैं-"सभी योगी का ध्येय आत्मा की मुक्ति है और प्रत्येक योग समान रूप से उसी ध्येय की ओर ले जाता है।"[4] योग, भोग के आगे त्याग का पथ-प्रदर्शक होता है। राग की सीमा से परे विराग उत्पन्न करता है, स्वार्थ की संकृचित प्रवृत्ति के आगे परमार्थ का विस्तृत द्वार खोलता है। इतना ही नहीं वह स्व-सत्ता को परम सत्ता में समाहित कर देता है। वह समस्त प्रकृति के साथ व्यक्ति का तादात्म्य स्थापित करा देता है। अरविन्द का मत है-"जो कुछ उच्चतम तत्त्व है उसके साथ अपनी सत्ता को सभी भावों में एक हो जाना है-'योग'....समस्त प्रकृति और सभी जीवों के साथ एक हो जाना ही योग है।"[5]

भारतीय मान्यता है कि व्यक्ति परमात्मा का अंश है। उसे परमात्मा से सान्निध्य करना ही चाहिए, इसी में जीवन की सार्थकता है। चिदानन्द सरस्वती का कथन है-"योग का अर्थ है ससीम आत्मा का असीम आत्मा से मिलन। जीव की एकदेशीय चेतना का परमात्मा में विलय ही योग है।"[6] योगी की महत्ता साधारण शब्दों में नहीं कही जा सकती।

उसके क्रियाकलाप असाधारण होते हैं, उसमें आध्यात्मिकता तथा दार्शनिकता के भाव कूट-कूट कर भरे होते हैं। योग का पथ काँटों से भरा है, उस पथ पर चलना कठिन कार्य है, पर योगी अनेक संकटों का सामना करने में समर्थ होता है। योगी के लक्षण के विषय में ध्यान विन्दु उपनिषद् का मन्तव्य है-"बीजाक्षर परम बिन्दु है, उसके ऊपर 'नाद' स्थित है, जो सशब्द है। उसके अक्षर ब्रह्म में लय हो जाने पर ही शब्दहीन परमपद की स्थिति है। अनाहत शब्द से भी परे जो है, उसको जो योगी जान लेता है, पा लेता है, उस योगी के सभी संशय नष्ट हो जाते हैं।"[7]

योगी की एक निश्चित, कुछ शब्दों में सीमित परिभाषा नहीं की जा सकती है। योगी सांसारिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों, मान्यताओं को अच्छी तरह समझता है तभी उपयुक्त से सान्निध्य तथा अनुपयुक्त से दूरी करता है। वेदव्यास का विचार है-"जो ज्ञान और विज्ञान से तृप्त हो चुका है, जो सबसे उच्च स्थान में स्थिर हुआ है, जो जितेन्द्रिय है तथा जिसकी दृष्टि में मिट्टी, पत्थर और सोना समान है, उस यात्री का योग सिद्ध हुआ ऐसा कहते हैं।"[8]

तटस्थता, निष्पक्षता तथा पारदर्शिता योगी के लक्षण हैं। उसका इन्द्रियों तथा परिस्थितियों पर विशेषाधिकार होता है। भर्तृहरि ने कहा है-"योगी व्यक्ति विरक्तिरूपी स्त्री के साथ बड़े वैभवशाली राजाओं की तरह सुख और शान्तिपूर्वक सोता है। पृथ्वी ही उसकी सुन्दर शैय्या है, भुजलता ही बड़ा तकिया है, आकाश ही वितान है, अनुकूल पवन ही उसका पंखा है, चन्द्रमा ही उसका प्रकाशमान दीपक है।"[9]

हठयोग से मानव की आन्तरिक प्रवृत्तियों की कुवासनाएँ समाप्त होती हैं, जिस प्रकार

भगवान् का कच्छप रूप सर्वस्व का आधारभूत है उसी प्रकार हठयोग सम्पूर्ण योगों का आधार –स्तम्भ है। स्वात्माराम योगीन्द्र कहते हैं–"हठयोग तो सम्पूर्ण तापों से तप्त मनुष्यों का आश्रय स्थल मठ है। हठयोग सम्पूर्ण योगों से युक्त मनुष्य के लिए कच्छपरूप भगवान् के समान आधारभूत है।"[10] हठयोग सबके लिए लाभकारी होता है। दृढ़ संकल्पयुक्त कार्य सबके लिए लाभकर होता है। हठयोग युवक में ऊर्जा, वृद्ध तथा रोगी आदि में आशा का संचार करता है। दूसरे शब्दों में हठयोग अपने लक्ष्य की प्राप्ति में बहुत सहायता करता है। योगीन्द्र का मत है– "युवा हो, वृद्ध हो, अतिवृद्ध हो, रोगी हो या दुर्बल हो सब योगांगों में आलस्य न करते हुए अभ्यास से सिद्धि प्राप्त कर लेते है।"[11]

हठयोग शरीर में कान्ति का संचार करता है। मुख पर प्रसन्नता उत्पन्न करता है, वाणी–विकार को दूर कर उसमें माधुर्य, लालित्य एवं प्रभाव विकसित करता है। नेत्रों की निर्मलता को चिरस्थायी बनाने में हठयोग का विशेष महत्त्व है। हठयोग से रोगों का अभाव होता है। हठयोग की विलक्षणताओं के विषय में योगीन्द्र का मत है–"देह की कृशता, मुख पर प्रसन्नता, वाणी की स्फुटता, नेत्रों की निर्मलता, रोग का अभाव, बिन्दु–जय, अग्निदीपन तथा नाड़ी–विशुद्धि ये हठयोग के लक्षण हैं।"[12]

हठयोग के महान साधक गुरु गोरखनाथ कहते हैं कि योगी को संसार में उसी तरह रहना चाहिए जैसे कमल पानी में रहता है। योगी अवधूत आँख से सब कुछ देखता है और कान से सब सुनता है पर वह मुख से कुछ कहता नहीं है। शरीर खूब भारी हो, पर यदि गुरु से भेंट न हुई तो वह शरीर दो कौड़ी की है। वे ज्ञान को गुरु मानते हैं, चित्त को चेला कहते हैं और मन को मित्र। यदि ये सब अनुकूल हैं तो व्यक्ति सबके साथ है (स्वयं में स्वस्थ है)। यदि ये सब नहीं तो व्यक्ति अकेला (अस्वस्थ) है।

हठयोग में अनेक प्रकार के आसनों की चर्चा मिलती है जो दैहिक तथा आध्यात्मिक उन्नति में परम सहायक है। नाथपन्थ के सन्तों ने जिस हठयोग की अवधारणा दी वह लोककल्याणकारी तथा मानवता का पथप्रदर्शक है। हठयोग की समसामयिक उपयोगिता से विश्व आकर्षित हो रहा है।

सन्दर्भः

1. वर्मा, रामचन्द्र - मानक हिन्दी कोश, पृ. 512
2. वही
3. 'जीवात्म परमात्म संयोगम् योगम्।' - पिंगलि सूरन्ना (कलापूर्णोदयमु, 5 । 142)
4. विवेकानन्द साहित्य, तृतीय खण्ड, पृ. 31

5. अरविन्द, भागवत मुहूर्त

6. चिदानन्द सरस्वती - विश्वसूक्ति कोश, पृ. 901 पर उद्धृत

7. ध्यानविन्दु उपनिषद् 2-3

8. ज्ञानविज्ञान-तृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
   युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकांचनः।। (गीता 6-8)

9. मही रम्या शय्या विपुलमुपधानं भुजलता।
   वितानं चाकाशं व्यजनमनुकूलोऽयमनिलः।।
   स्फुरद्दीपश्चन्द्रो विरतिवनितासंगमुदितः।
   सुखं शान्तः शेते मुनिरतनुभूतिनृप इव।। (भर्तृहरि-वैराग्यशतक)

10. अशेषतापतप्तानां समाश्रयमठो हठः।
    अशेषयोगयुक्तानामाधारकमठो हठः।। (स्वात्माराम योगीन्द्र-हठ प्रदीपिका 1-10)

11. युवा वृद्धोऽतिवृद्धो व व्याधितो दुर्बलोऽपि वा।
    अभ्यासात् सिद्धिमाप्नोति सर्वयोगेष्वतंद्रितः।। (स्वात्माराम योगीन्द्र-हठ प्रदीपिका 1-64)

12. वपुः कृशत्वं वदने प्रसन्नता नादस्फुटत्वं नयनं सुनिर्मले।
    अरोगता बिन्दुजयोऽग्निदीपनं नाड़ीविशुद्धिर्हठयोग-लक्षणम्।। (स्वात्माराम योगीन्द्र-हठ प्रदीपिका 2-78)

कला, कलाकार और व्यवसाय

दीप्ति गुप्ता* वेदप्रकाश मिश्र**

सार-संक्षेप : कला की खोज की नहीं जाती है बल्कि कला स्वयं खोज लेती है उचित पात्र को। यह अनायास ही मनुष्य को अपनी ओर लेकर चली जाती है। कला में आकर्षण है हम इसका आनन्द तो सामान्यत: प्राप्त कर सकते हैं पर इसको साधने के लिये अभ्यास करने के लिये एक विशेष विधि से और जीवनशैली से होकर गुजरना पड़ता है। यद्यपि हम अत्याधुनिक शिक्षण पद्धति से किसी भी कला को विषय की तरह अध्ययन कर सूचनाएँ एकत्र कर सकते हैं। सम्भव है कि अभ्यास कर के उन सूचनाओं को अनुकरणात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में भी सफलता प्राप्त कर लें किन्तु यह कला का कृत्रिम रूप होगा जो किसी मनुष्य को मानसिक तौर पर एक क्षणिक आनन्द तो प्रदान कर सकेगा पर यह यात्रा मनुष्य के मानस पटल तक ही सीमित रह जायेगी। आत्मा से आत्मा तक कला की यात्रा पूर्ण हो तो वह सदियों तक जीवित रहती है।

बीज शब्द : कला, कलाकार, भावाभिव्यक्ति, आत्मबोध, सात्विकता, प्रतिस्पर्धा, महत्त्वाकांक्षा, स्वरलहरी, कृत्रिमता, तटस्थता, सम्प्रेषण।

कला सूक्ष्म होने के साथ ही अनन्त भावाभिव्यक्तियों का सरल-सहज माध्यम है। सुनने में यह जितना विचित्र जान पड़ता है उससे कहीं अधिक यथार्थ है। श्रोता या दर्शक के लिये कला की उपस्थिति जितनी आनन्ददायक है कलाकार के लिये ठीक उतनी ही कठिन और असाध्य प्रक्रिया है कला को किसी अन्य अर्थात श्रोता के समक्ष उपस्थित करने का प्रयास। कला का स्वाभाविक और प्रकृति प्रदत्त होना एक अलग व अनिश्चित विषय है जिसपर अनेक कारकों का प्रभाव भी पड़ता है। कला कितनी मात्रा में, किस रूप में, किस व्यक्ति में है, या फिर है भी कि नहीं, यह कलाकार के निजी खोज और अनुभूति पर निर्भर करता है। कला सामान्य नहीं है यह ठीक वैसे ही है जैसे किसी के दोनों कान होने पर भी वह सुन नहीं सकता, या फिर कण्ठ होने पर भी गा नहीं सकता यद्यपि बोल सकता है। अपने पैरों पर चल तो सकता है पर नाचकर भाव

*असिस्टेण्ट प्रोफेसर, बी.एड्. विभाग, महाराणा प्रताप पी.जी. कॉलेज जंगल धूसड़, गोरखपुर

*शोध छात्र, एन.ई.टी./जे.आर.एफ, संगीत एवं मंचकला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

की अभिव्यक्ति नहीं कर सकता। अर्थात् कला कृत्रिमता और तकनीकी होने से जितनी दूर होगी उतनी ही अधिक स्वाभाविक, प्रभावी और आकर्षक होगी। तटस्थता कला के लिये सर्वाधिक सुचालक मनोदशा है। जितनी तटस्थता होगी कलाकार और श्रोता में कला का उतना ही स्वच्छन्द और सुगम सम्प्रेषण आत्मा पर हो सकेगा। कला स्वत:स्फूर्त है यह सिद्ध करने के लिये यथोचित उदाहरण है कुमार जी के द्वारा निर्मित राग जो लोक संगीत की धुनों से स्वत:स्फूर्त हुए। “प्रकृति का साहचर्य असाधारण सांगीतिकता तथा प्रयोगशील मानस इन तीनों के संयोग से उद्‌भूत हैं ये सारे राग।”

कला की खोज की नहीं जाती है कला स्वयं खोज लेती है उचित पात्र को। यह अनायास ही मनुष्य को अपनी ओर लेकर चली जाती है। कला में आकर्षण है हम इसका आनन्द तो सामान्यत: प्राप्त कर सकते हैं पर इसको साधने के लिये अभ्यास करने के लिये एक विशेष विधि से और जीवनशैली से होकर गुजरना पड़ता है। यद्यपि हम अत्याधुनिक शिक्षण पद्धति से किसी भी कला को विषय की तरह अध्ययन कर सूचनाएँ एकत्र कर सकते हैं। सम्भव है कि अभ्यास करके उन सूचनाओं को अनुकरणात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में भी सफलता प्राप्त कर लेवें किन्तु यह कला का कृत्रिम रूप होगा जो किसी मनुष्य को मानसिक तौर पर एक क्षणिक आनन्द तो प्रदान कर सकेगा पर यह यात्रा मनुष्य के मानस पटल तक ही सीमित रह जायेगी। आत्मा से आत्मा तक कला की यात्रा पूर्ण हो तो वह सदियों तक जीवित रहती है। प्राय: हम देखते हैं कि कोई सुगम संगीत बार-बार सुनने से स्मरण हो जाता है तो व्यक्ति उसे गुनगुना लेता है या शादी-व्याह में नाचकर हर्ष व्यक्त करता हुआ व्यक्ति अपने हर्ष और उल्लास को व्यक्त कर पाता है परन्तु यहाँ कला बहुत प्राथमिक स्तर पर होती है। सम्भव है यह अनुकरण मात्र हो कला बोध नहीं किन्तु साथ ही यह भी है कि यह कला कृत्रिम भी नहीं है लेकिन जैसे ही मनुष्य कला बोध की ओर अग्रसर होता है जो अनुभव करता है कठिनाइयाँ और फिर यह कठिनाई जब सरल नहीं होती तो यह अनुभव प्राप्त होता है कि इससे बेहतर तो पाक कला या लेखन कला इत्यादि मे मनुष्य बेहतर है तो क्यूँ न उसका अभ्यास करें और उसकी साधना कर निपुणता प्राप्त करें लेकिन ऐसा वर्तमान समय में नहीं होता है। एक बार हम निकल पड़े तो मानो कि हम वापस नहीं जा सकते चाहे हमें जीवन भर इस संघर्ष और कुछ भी असम्भव नहीं के सिद्धान्त को हठपूर्वक सिद्ध करने में जीवन यापन करना पड़े पर मनुष्य कला बोध जैसी अनुभव के साथ न जाकर हठपूर्वक कला को साधने में और कलाकार बनने की होड़ में लग जाता है। जो सकारात्मक दृढ़संकल्प का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हो सकता है किन्तु सर्वोत्कृष्ट कलाकार बनने का उदाहरण नहीं सिद्ध होता। कला के लिये हठ नहीं आत्मबोध होना चाहिये। अमुक कला के लिये स्वयं को समर्पित करना एक बात है और अमुक कला अमुक व्यक्ति में अनायास ही वास करती हो स्वाभाविक हो तो यह दूसरी बात है। खास तौर पर वही कलाकार कहलाने योग्य है जिसमें कला स्वयंस्फूर्त और प्रकृति प्रदत्त

हो। कलाकार वह है जो सरलता और स्वाभाविकता से ही अप्रत्यक्ष विषय को प्रत्यक्ष कर सके, सूक्ष्मता को विस्तार दे सके, भाव की अभिव्यक्ति कर सके। कलाकार का विद्वान होना आवश्यक नहीं है और यह भी आवश्यक नहीं कि हर जानकार कला में निपुण हो। जानकार व्यक्ति कलाकार होने का अभिनय कर सकता है। कला और विषय में जो अन्तर निहित है वही विद्वान और कलाकार में भी है। कला का किसी मनुष्य में होना निर्भर करता है आत्मज्ञान और निरन्तर जीवन के अनुभवों से अपने भीतर की यात्रा में चलते रहकर भावाभिव्यक्ति का वह माध्यम खोजने में सफल होना जो उसका अपना स्वत:स्फूर्त हो। कला जितनी आत्मीय होगी उतनी ही सरल-सहज होगी और प्रभावी भी। "कला में सबसे पहले होना चाहिये विचार। सिर्फ सुन्दर गला है, इसलिये गाता हूँ- इससे काम नहीं चलेगा। कोयल की आवाज़ कितनी मीठी होती है, पर उसे हम गायिका कहते हैं क्या? यह कटु सत्य से लबालब भरा प्रश्न कितना कुछ स्पष्ट करता है।"

कला का विस्तार मानव संस्कृति के साथ ही होता आया है जिसके अनेक चरण हैं, अनेक प्रकार हैं और अनेक स्तर भी। सम्पूर्ण कलाओं में ललित कला के अन्तर्गत आने वाले संगीत कला का जब गहन अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि यह सर्वाधिक सूक्ष्म और असीमित कला है जिसका विस्तार और सौन्दर्य क्षेत्र अनन्त है। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि अन्य कलाओं का विस्तार और सौन्दर्य क्षेत्र कम है। कला के इन प्रकारों में कलामूल्यों पर जितनी चर्चा और विचार-विमर्श की जाय कम ही है। प्राचीन काल से लेकर सामगान, पुराणों में संगीत, बौद्धकालीन संगीत, मुगलकालीन संगीत और आधुनिक संगीत से अब तक की ऐतिहासिक यात्रा में इस ललित कला का इतिहास बहुत विस्तृत व व्यापक रहा है। एक सामान्य मनुष्य इस कला से आकर्षित होता है उसको यह बोध होता है कि यह गुण तो उसमें भी है। अनायास ही यह कला उससे अभिव्यक्त होती है तो वह कला के इस सूक्ष्म सागर में अर्थात् अपने ही भीतर निरन्तर गोते लगाकर पता लगाना प्रारम्भ कर देता है कि यह क्या है जो सूक्ष्म से स्थूल या प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष होना चाहता है। प्रतिदिन बारम्बार उसको समझने का प्रयास करने लगता है और फिर जाने-अनजाने कलाकार होने की राह पर निकल पड़ता है। और फिर अपनी साधना, अभ्यास और मेहनत के फलस्वरूप परिष्कृत कला के माध्यम से समाज के समक्ष वह प्रत्यक्ष और स्थूल कला प्रस्तुत करता है जो समाज के लिये एक नयी दुनिया होती है और समाज इस नयी दुनिया का साक्षात्कार कर आनन्दित होता है। कलाकार के विलक्षण प्रतिभावान होने के बावजूद वह नित्य प्रति अपनी प्रतिभा का बोध स्वयं को करवाता रहता है और अपनी प्रतिभा का आकलन भी करता रहता है और उसकी वृद्धि के लिये निरन्तर अभ्यासरत रहता है। कला किसी न किसी रूप में सबमें विद्यमान है किन्तु कला शैशवावस्था में होती है उसका पोषण करना पड़ता है जिसके लिये उचित मार्गदर्शन की भी आवश्यकता होती है। बाहर से भीतर की यात्रा है कला - काया से आत्मा तक की यात्रा। ऐसे

में इसका व्यवसायीकरण होना दुखद तो है ही।

लोकोक्तियाँ, कहावतें या मुहावरे हमारे आम बोलचाल का तो हिस्सा हैं ही साथ ही इनको हिन्दी व अन्य भाषा के साहित्यों में भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त भी है। यह तो सर्वविदित है अधिकांशत: विषय या कला के शास्त्रों की लेखन परम्परा मौखिक परम्परा के बाद ही प्रारम्भ होती है। संगीत कला को लेकर हमारे समाज में अनेक मुहावरे व लोकोक्तियाँ पायी जाती हैं जैसे- भैंस के आगे बीन बजाना, नाच न जाने आँगन टेढ़ा, अपना-अपना राग अलापना, इत्यादि ऐसे ही अत्यन्त ही प्रसिद्ध लोकोक्तियों में से एक है 'भूखे भजन न होय गोपाला राखो अपनी कण्ठी माला' यह कहावत/लोकोक्ति प्राय: सुनने में आ जाती है। कलाकार होने के साथ-साथ एक मनुष्य सामान्य जीवन के प्राथमिक आवश्यकताओं के लिये भी संघर्ष करता है। कलाकार के मन में कला को व्यवसाय बनाकर जीविकोपार्जन के लिये प्रथम विचार जब आये होंगे वह स्थिति की कल्पना करने से ज्ञात होता है कि वह बहुत गम्भीर और विचित्र मनोदशा रही होगी। ठीक वैसे ही जैसे एक अध्यापक ज्ञान देने के लिये उसके बदले किसी प्रकार का भुगतान नहीं चाहता वह उसका कर्तव्य होता है कि वह प्राप्त ज्ञान को देकर स्वयं को कृतार्थ करे ठीक वैसे ही जैसे तरुवर फल देने के लिये किसी से कुछ नहीं लेता। और प्राचीन काल में ऐसे ही समाज की स्थापना रही है ऐसा ऐतिहासिक अध्ययन के अनुसार ज्ञात होता है। कालक्रम में सामाजिक विकास ने एक यात्रा पूरी की है। वाहन का नाम था 'परिवहन' जिसके दो पहिये थे-सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों पहिये एक साथ चले और रास्तों में अनेक थपेड़ों से होकर यहाँ तक यह गाड़ी आयी है। बदलते परिवेश ने देने मात्र की प्रक्रिया को लेन-देन में बदल दिया और तत्पश्चात यह लेन-देन व्यवसाय में कब रूपान्तरित हो गया यह समाज को भी ज्ञात न हुआ परन्तु उसका दुष्परिणाम किसी से अज्ञात नहीं है। सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि कला भी इस व्यवसायीकरण से अछूती नहीं रह सकी। आज के परिवेश में कला का व्यवसायीकरण कितना प्रासंगिक है इस पर अनेक विचार और तर्क हो सकते हैं सबके अनुसार। कला के इतिहास का अध्ययन करने पर हम प्रारम्भिक अवस्था की कल्पनात्मक दृश्य का अवलोकन करें तो निश्चित ही कला का व्यवसायीकरण नहीं हुआ था। प्राचीन काल में संगीत या कलाएँ जीवन जीने के लिये आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये सहायक थे और सब अपनी कला में पूर्णता हासिल कर उसको समाज की सेवा में अर्पित करते थे। और इस तरह सबका काम एक दूसरे की कला से चलता था। जैसे पाक-कला, वास्तुकला, लेखन, मूर्ति कला, इत्यादि। 'भूखे भजन न होय गोपाला', 'घोड़ा घास से दोस्ती करेगा तो खायेगा क्या?' 'नाच न जाने आँगन टेढ़ा', 'भैंस के आगे बीन बजाना' इत्यादि कहावतें अपने आप में वर्तमान कला समाज की अनेक सच्चाइयों को व्यक्त करते हैं। व्यक्तिगत तौर पर सामान्य मनुष्य के लिये (अर्थात् जिनका पेशा या व्यवसाय कला व संगीत से पृथक है) जितना उचित प्रतीत होती है, उतनी

ही एक पेशेवर संगीतकार या कलाकार के लिये अनुचित भी प्रतीत होती है। किसी गायक या वादक संगीतकार के लिये कला जीविकोपार्जन का एक मात्र माध्यम है ऐसे में व्यावसायिक तौर पर तो उसे पहले गाना होगा अर्थात् पहले कर्म करना होगा फिर कर्म के फलस्वरूप उसकी अपनी प्राथमिक आवश्यकताएँ पूर्ण करने हेतु आवश्यक संसाधन प्राप्त हो सकेंगे। अब यदि कोई कलाकार इस सिद्धान्त को जीवन के लिये स्वीकृति दे तो निश्चित ही उसका जीवन आनन्दमय हो परन्तु कला का स्तर वैसा ही होगा जैसा अत्यधिक बढ़ा हुआ कद्दू देखने में तो आश्चर्यजनक और अद्भुत लगता है परन्तु उसकी सब्जी उतनी ही बेस्वाद। ठीक उसी तरह संगीत या कला का भी परिवर्तित स्वरूप कृत्रिमतायुक्त और चमत्कारयुक्त होगा परन्तु उसके रसास्वादन में बहुत ही खोखलापन होगा। यही कारण है कि आजकल हमारी परम्परा, संस्कृति का दोहन हो रहा है क्योंकि न तो कलाकार को कला की सूक्ष्मता का बोध है और न ही श्रोता को। यहाँ एक बात बहुत आवश्यक हो जाती है कि क्या श्रोता भी अभ्यास करे कलामूल्य और कला की सूक्ष्मता को समझने का? तो इसके लिये यही कहना कि कतार में खड़े होकर जब हम कोई चीज़ प्राप्त करते हैं तो निश्चित ही उसकी महत्ता स्वयं से ही अधिक निर्धारित कर देते हैं। किन्तु इस पूर्वाग्रह को निर्मित होने देने से पूर्व आवश्यक है कि क्या सचमुच वह हमारी बौद्धिकता सिद्ध करता है या मात्र एक भीड़ का हिस्सा। ठीक उसी तरह एक कहानी है- एक मूर्तिकार ने दो मूर्तियाँ बनायी एक जैसी। दोनों दूर से एक जैसी थीं पर एक की क़ीमत दूसरे से कम थी। एक सज्जन जो मूर्ति खरीदने आये थे उन्होंने कहा कि ये एक जैसी दो मूर्तियों का दाम अलग-अलग किस कारण से? मूर्तिकार ने कहा- एक मूर्ति में खोट है, आपको नहीं पता चलेगा किन्तु मुझे पता है और मैं अपना नुकसान करना कला के नुकसान करने से बेहतर समझता हूँ। वह सज्जन इस आदर्शवाद की पाठशाला से न जाने कौन सी मूर्ति ले गये होंगे। वह प्रत्येक मनुष्य उस सज्जन की जगह पर खुद को खरीददार समझकर कल्पना कर सकते हैं। अर्थात् अभिप्राय मात्र यह है कि कला महान है उसको महान रहने दें कलाकार-और श्रोता महान हों न हों उनका अस्तित्व क्षणिक है। कला का जीवन और अस्तित्व दोनों बड़ा है।

भारतीय कला के अन्तर्गत लिखित सुदीर्घ ऐतिहासिक परम्परा का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल से वर्तमान समय तक कला का यथोचित प्रयोग मानव जाति ने भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है। मोक्ष, भक्ति, ध्यान, योग, चिकित्सा, मनोरंजन कुछ प्रमुख क्षेत्र हैं जहाँ संगीत कला का प्रयोग किया जाता है। सर्वप्रथम संगीत का प्रयोग वैदिक काल में यज्ञ आदि के लिये किया गया तत्पश्चात यह भक्ति योग ध्यान के मार्ग से होकर वर्तमान समय में मनोरंजन करने मात्र की स्थिति तक आया। यद्यपि अल्प रूप में पुरानी धारणाएँ और मान्यताएँ पूर्णतः खत्म नहीं हुई हैं परन्तु अधिकाधिक तो विलुप्तप्राय ही हो गयी हैं। मध्यकाल में जब संगीत राजदरबारों

में होने लगा तो इसका प्रयोग मात्र राजा की प्रशंसा के लिये होने लगा और उसके फलस्वरूप संगीतकारों को जीवन की राज्यकोष से धनधान्य प्राप्त होने लगे और निःसन्देह यहाँ संगीत की प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हो गयी। जिसका दुष्परिणाम यह हुआ कि संगीत साधकों की लालसा और दरबार का सम्मान प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा ने संगीत को एक नया आयाम दे दिया और इस तरह के उदाहरण हम तानसेन के जीवन से जुड़ी किंवदन्तियों में अवश्य देख सकते हैं जहाँ पत्थर का पिघलना और दीपक जलना इत्यादि प्रतिस्पर्धाएँ हुईं। प्रतिस्पर्धा से संगीत के आत्मा का ह्रास हुआ होगा कि नहीं, यह तो नहीं पता किन्तु संगीत की शुद्धता और सात्विकता अवश्य प्रभावित हुई होगी इन प्रतिस्पर्धाओं के दौरान। तात्कालिक संगीत के गुरु स्वामी हरिदास जी ने अकबर के सामने नहीं गाकर जो सिद्ध किया वह निश्चित ही समझने और अध्ययन योग्य है वर्तमान कलासाधकों और श्रोताओं के लिये।

सामान्य तौर पर यदि देखा जाय तो मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं (रोटी, कपड़ा और मकान) की आपूर्ति के बिना जीवन की अन्य द्वितीयक भौतिक आश्यकताओं जैसे- मनोरंजन, खेल, नाटक, नृत्य इत्यादि करने की आवश्यकता अधिक नहीं जान पड़ती। जैसे कि यदि किसी व्यक्ति को अत्यधिक भूख लगी है और वह भूख से व्याकुल है तो पहले उसको भोजन चाहिये। किसी निर्वस्त्र मनुष्य को सर्वप्रथम पहनने योग्य वस्त्र चाहिये और फिर किसी बेघर मनुष्य को रहने के लिये आवास जहाँ वह अपना स्थायी सामाजिक जीवन यापन कर सके। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति तो नहीं होगी कि प्राथमिक आवश्यकताओं की आपूर्ति के बिना कोई भी व्यक्ति ढोलक-झाल बजाकर कीर्तन गाने का चयन करेगा और इसको कोई बुद्धिमत्ता व स्वाभाविक मानसिकता भी सिद्ध कर दे। कोई भी व्यक्ति सर्वप्रथम अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं के लिये ही संघर्ष करता है चाहे वह आदिमानव की जीवन शैली जी रहा हो या फिर अत्याधुनिक तथा वैज्ञानिक युग में जी रहे विकसित मानव का जीवन यापन कर रहा हो।

कला मूल्यों के सापेक्ष प्रायः यह अधिक उचित लगता है कि कला और भौतिक जीवन एक दूसरे से भिन्न हों तो बेहतर होगा और कला मूल्यों का संरक्षण भी भविष्य में इसी बात पर निर्भर होगा कि कला और जीविकोपार्जन एक दूसरे से पृथक हैं या कला जीविकोपार्जन के लिये प्रयोग हो रही है। कलाकार की कला उसके जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये प्रयोग नहीं की जा सकती, कला मावन जाति की एक विशेष प्रकार की आवश्यकता थी जिसके लिये किसी प्रकार का भुगतान श्रोता को नहीं करना होता मात्र इसके कि आनन्द प्राप्त कर के हृदय से धन्यवाद करे। पर्याप्त होगा कि कलाकार को भी कला के बदले मात्र इतनी ही अपेक्षा हो कि कोई कलामूल्यों को समझने का प्रयत्न कर रहा है और कला को उचित सम्मान प्रदान कर रहा है। कला स्वच्छ निर्मल गंगा की तरह सबके लिये सामान्य अविरल बहने वाली सरिता जैसी है।

कलाकार वृक्ष के समान है और कला उसकी छाया में गिरने वाला मधुर फल किन्तु यह विचार पूर्णत: अप्रासंगिक हो चुकी है आज के दौर में। और इस कला के व्यवसाय का बाजारीकरण बहुत पहले प्रारम्भ हो चुका था जिसका वर्तमान समय में हम दुष्परिणाम देख सकते हैं। आज अनेक विधाओं में स्वयंसिद्ध कलाकारों की अगणित संख्या इस बात का प्रमाण है कि कला का बाजारी करण होने से कितना विनाश हुआ है।

नि:स्वार्थ भाव से कला को प्रस्तुत कर रहे कलाकार को आनन्दित होना चाहिये। आभार व्यक्त करना चाहिये ईश्वर का इस दैवीय गुण से सँवारने के लिये और आभार व्यक्त करना चाहिये श्रोताओं का कि उन्होंने कला का सम्मान किया मर्यादित ढंग से सुनकर, कला के मूल्यों को समझा और आदर भाव से कला के सागर में डूबते और आनन्दित होते चले गये। श्रोता को भी ईश्वर व कलाकार के सापेक्ष उतना अधिक आभारी होना चाहिये और आदर भाव रखना चाहिये। कला बहुत सरल और स्वाभाविक नहीं होती इसका बोध दोनों ही पक्ष को बराबर होना चाहिये। कला का कोई मूल्य भुगतान कर सकने में समर्थ नहीं है कम से कम यह ज्ञान होना आवश्यक है प्रत्येक पक्ष को चाहे वह इस क्षेत्र में जिस भी तरह से योगदान दे रहा हो। कलाकार कला का व्यवसाय करके अपना जीवनयापन नहीं कर सकेगा। यदि ऐसा होगा तो वहाँ कला, कलाकार, और कलामूल्य एक साथ मृत्यु को प्राप्त हो जाएँगे। जीवनयापन के लिये कलाकार सामान्य मानव की तरह ही अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये प्रयत्न करे साथ ही कला मूल्यों को समझने वाले सुधी कलापारखी यदि उसके इस द्विमार्गी पथ पर कर रहे प्रयत्न में सहायता भर करें तो भी पर्याप्त होगा। अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किये गये श्रम के बाद जब शाम को थक कर चूर बैठा कलाकार जब कोई गीत गायेगा तो नि:सन्देह स्वयं को और सम्पूर्ण प्रकृति की थकान उस स्वर से दूर हो जायेगी। स्वाभाविक रूप से अनायास मुखरित हो उठे उस गीत में वह परम आनन्द प्राप्त हो सकेगा जो व्यवसायी संगीत में नहीं हो सकता। और जब वह पुन: सवेरे जग कर नये सवेरे और अवसर के लिये भजन आदि गाकर ईश्वर का आभार व्यक्त करेगा तो आस-पास के लोग भी अनायास इस प्रात:कालीन स्वरलहरी में मग्न होकर सकारात्मकता और उत्साह से परिपूर्ण हो जाएँगे। कोई कुम्हार जब उसे अपने हाथों से बना बर्तन देगा तो वह सार्थक और स्नेहपूर्ण सम्मान सिद्ध होगा। लेकिन यह सब क्या सम्भव है वर्तमान समय में? यह बड़ा अन्तरद्वन्द्वयुक्त प्रश्न है। खैर इतना समझना पर्याप्त है कि कलाकार को श्रोता और श्रोता को कलाकार की आवश्यकता वैसे ही है जैसे भक्त को भगवान् की रहती है और भगवान् को भक्त की, अर्थात् दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

समय के साथ ही कला, कलाकार और कलामूल्य सबमें आमूलचूल परिवर्तन होते ही रहेंगे। और अब कला भी व्यवसाय का एक प्रमुख हिस्सा हो चुकी है। कलाकार के लिये व्यक्तिगत

तौर पर व्यवसायीकरण का सकारात्मक परिणाम अवश्य हुआ है परन्तु कलामूल्यों के लिये परिणाम नकारात्मक ही अधिक प्रतीत होता है। और कलामूल्यों की रक्षा करना कलाकार के लिये निश्चित ही बेहद परिश्रमजनक और कठिन होता जा रहा है। निरन्तर चल रही परिवर्तन की गाड़ी रुकेगी तो नहीं जिसके एक तरफ सकारात्मक परिणाम तथा दूसरी ओर नकारात्मक परिणाम लगभग समान रूप में विद्यमान हैं, किन्तु इसकी गति को अवश्य धीमा करके सही दिशा प्रदान की जा सकती है। प्रश्न अनेक हैं, प्रत्येक पक्ष के उत्तर भी हैं। समस्या यह है कि समाधान को उचित परिणाम प्राप्त करने हेतु प्रयोग भी करना दुष्कर कार्य है। चिश्ती परम्परा के संगीत की मर्यादा में कहा गया है कि गायक संगीतजीवी न हो और सच्चरित्र हो तथा श्रोता इन्द्रियजयी हो और वासना के वशीभूत होने वाला न हो।

संगीत कला के अनेक रूप हमारे समक्ष मौजूद हैं आज के अत्याधुनिक दौर में। किन्तु प्राचीन काल से मुख्यत: दो ही पृथक स्वरूपों में संगीत पाया जाता है एक देशी संगीत और दूसरा शास्त्रीय संगीत या मार्गी संगीत। दोनों के अलग-अलग विकसित होने से दोनों में अनेक प्रकार का अन्तर परिलक्षित होता है और वह अन्तर आज भी स्पष्टत: अपने स्थान पर यथावत स्थित है। वर्तमान समय में कला, कलाकार और उसके व्यवसायीकरण को रोकने का कोई विकल्प तो नहीं निकाला जा रहा है किन्तु इस व्यवसायीकरण में कला और उसके मूल्यों का पूर्णत: विनाश न हो ऐसा विकल्प यदि शीघ्र ही न अपनाया गया तो आने वाली पीढ़ी के लिये हमारे पूर्वजों की यह धरोहर मात्र एक कहानी होकर रह जायेगी। संगीत ही नहीं अपितु शिक्षा व अन्य कलाओं में भी कृत्रिमता और प्रतिस्पर्धा को कम कर इसके मूल्यों को समझना और आने वाली पीढ़ी को समझाना होगा। कला और शिक्षा का व्यवसायीकरण होने का एक सबसे गन्दा उदाहरण जिससे इस लेख का समाप्त होना दुर्भाग्य भी है और आवश्यक भी "भोजपुरी लोकगीतों में अश्लीलता"।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची:-

1. आचार्य वृहस्पति, मुसलमान और भारतीय संगीत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-1974
2. शर्मा, डॉ. पंकज माला, सामगान उद्भव व्यवहार एवं सिद्धान्त, कात्यायन वैदिक साहित्य प्रकाशन, होशियारपुर, प्रथम संस्करण-1996
3. बापट, डॉ. विजय, रसास्वाद, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्रथम संस्करण-2991
4. निरगुणे, वसन्त, लोक संस्कृति, संस्करण-पंचम आवृति 2012
5. पोतदार, वसंत, कुमार गंधर्व, मेधा बुक्स, नवीन शहादरा, दिल्ली, संस्करण-2006

■

भारत में महिला सशक्तिकरण : दशा एवं दिशा

हनुमान प्रसाद उपाध्याय*

सार-संक्षेप : किसी भी देश या समाज के विकास में यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि यहाँ पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की स्थिति क्या है? इस प्रकार महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया से है, जिसमें महिलाओं के लिए सर्वसम्पन्न और विकसित होने हेतु सम्भावनाओं के द्वार खुलें, नये विकल्प तैयार हों; भोजन, पानी, घर, गृहस्थी, शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएँ, शिशुपालन, प्राकृतिक संसाधन, सुरक्षा व्यवस्था, बैंकिंग सुविधाएँ, कानूनी हक और प्रतिभाओं के विकास हेतु पर्याप्त रचनात्मक अवसर प्राप्त हों। आधुनिक भारत विशेष रूप से स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से अब तक स्त्रियों की स्थिति में चौतरफा विकास हुआ है। आज जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकार स्त्रियों ने प्राप्त किया है। वर्तमान में स्त्रियाँ पुरुषों से पीछे नहीं हैं। हर व्यवस्था में उनकी सहभागिता देखी जा रही है।

बीज शब्द : सशक्तिकरण, अर्द्धांगिनी, साक्षरता, सर्वांगीण विकास, गृहस्थी, शिशुपालन, संयुक्त परिवार, अन्तर्विवाह, कुलीन विवाह, दहेज प्रथा।

स्त्री और पुरुष मानव समाज की आधारशिला हैं। किसी एक के अभाव में समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। इसके बावजूद स्त्रियों की स्थिति पुरुषों के बराबर नहीं मानी जाती रही। इनका मूल कार्य प्रजनन, घर की देखरेख और पुरुषों के अधीन रहना माना गया। समाज में सदियों से उन्हें निम्न स्थिति में रहना पड़ा।

किसी भी देश या समाज के विकास में यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि यहाँ पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की स्थिति क्या है? इस प्रकार महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया से है, जिसमें महिलाओं के लिए सर्वसम्पन्न और विकसित होने हेतु सम्भावनाओं के द्वार खुलें, नये विकल्प तैयार हों; भोजन, पानी, घर, गृहस्थी, शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएँ, शिशुपालन, प्राकृतिक संसाधन, सुरक्षा व्यवस्था, बैंकिंग सुविधाएँ, कानूनी हक और प्रतिभाओं के विकास हेतु पर्याप्त रचनात्मक अवसर प्राप्त हों।

*विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, महाराणा प्रताप पी.जी. कॉलेज जंगल धूसड़, गोरखपुर

विभिन्न युगों में भारतीय स्त्रियों की स्थिति :- यद्यपि हमारे भारतीय समाज में स्त्रियों को बहुत ही आदर्श रूप में प्रस्तुत किया गया है, हिन्दू दर्शन में स्त्रियों को अर्द्धांगिनी के रूप में चित्रित किया गया है[1], देवियों के विभिन्न रूपों-सरस्वती, लक्ष्मी, काली, दुर्गा आदि का स्त्री रूप में ही वर्णन मिलता है और यहाँ तक कि भारत को 'भारत माता' के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता है।[2] परन्तु व्यवहार में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों के समान नहीं देखी गयी तथा उन्हें उचित सम्मान नहीं मिला। भारतीय समाज के विभिन्न युगों में स्त्रियों की स्थिति एक समान नहीं रही। उनकी स्थिति उतार-चढ़ाव की कहानी बयान करती है। जो प्राचीन से लेकर वर्तमान तक अलग-अलग है।

वैदिक काल ईसा पूर्व 15 वीं सदी से लेकर 7वीं सदी तक माना जाता है। इनमें स्त्रियों की स्थिति निम्न नहीं थी। उन्हें पुरुषों के समान समझा जाता था। घरेलू जीवन में आजादी थी और उन्हें अर्द्धांगिनी माना जाता था। उत्तर वैदिक काल जो 600 ईसा पूर्व तक माना जाता है उनमें नारियों के सम्मान में कुछ कमी आयी। धर्मशास्त्र काल में स्त्रियों की स्थिति में और गिरावट आयी। मध्यकालीन भारत में (11वीं सदी-16वीं सदी तक) मुगलों का साम्राज्य था। भारतीय संस्कृति की मुगलों से रक्षा करने के लिए बाल विवाह, पर्दाप्रथा तथा सती प्रथा आदि का प्रचलन बढ़ा। स्वतन्त्रता पूर्व 18वीं सदी के अंत से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति तक भारतीयों ने समाज सुधार के अनेक प्रयास किये। किन्तु अंग्रेजी सरकार की दमनकारी नीतियों के कारण अशिक्षा, महिलाओं की पुरुषों पर निर्भरता, संयुक्त परिवार प्रथा, बाल विवाह, वैवाहिक कुरीतियाँ जैसे-अन्तर्विवाह, कुलीन विवाह, विधवा विवाह निषेध, दहेज प्रथा, विधवा विवाह पर नियन्त्रण आदि ने महिलाओं की स्थिति को गिराने में सहयोग दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय स्वतन्त्रता आन्दोलन में स्त्रियों ने गाँधी जी के नेतृत्व में निर्णायक भूमिका निभायी। भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति विभिन्न समयों में अलग-अलग रही है, विशेषकर 1947 के बाद से उनकी स्थिति में काफी सुधार आया है। आज जीवन के हर क्षेत्र में पुरुषों के बराबर दिखती है।[3]

आधुनिक भारत में स्त्रियों की स्थिति- आधुनिक भारत विशेष रूप से स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से अब तक स्त्रियों की स्थिति में चौतरफा विकास हुआ है। आज जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकार स्त्रियों ने प्राप्त किया है। वर्तमान में स्त्रियाँ पुरुषों से पीछे नहीं हैं। हर व्यवस्था में उनकी सहभागिता देखी जा रही है। आज स्त्रियों की स्थिति में शिक्षा महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही है क्योंकि स्कूल, कॉलेज व विश्वविद्यालय स्तर पर इनकी संख्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि देखी जा सकती है। जहाँ 1901 में स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत 0.6 था, वहीं 1931 में 2.93 प्रतिशत हुआ। फिर 1961 में 12.95 प्रतिशत और 1991 में वह प्रतिशत 29.42 हो गया तथा आज 2011 की जनगणना के अनुसार महिलाओं की साक्षरता का प्रतिशत काफी बढ़

गया है।[4] आज की स्त्रियाँ सभी प्रकार की शिक्षा से जुड़ी हैं चाहे वह व्यावसायिक हो या यान्त्रिकी, सामाजिक हो या चिकित्सीय। स्त्रियों की स्थिति में चौतरफा सुधारात्मक परिवर्तन हो रहा है। हाँ, इतना अवश्य है कि यह परिवर्तन गाँवों की तुलना में नगरों में तथा निम्न वर्ग की तुलना में मध्यम व उच्च वर्गों की स्त्रियों में अधिक देखे जाते हैं।

भारत में महिलाओं को सशक्त करने के लिए किये गये प्रयास- भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति में सुधार के क्रम में समय-समय पर विभिन्न सामाजिक आन्दोलनों का विशेष योगदान रहा है। इस सन्दर्भ में राजाराम मोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महर्षि कवै आदि ने प्रारम्भ में अधिक रुचि ली। भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन ने भी स्त्रियों की स्थिति में सुधार का कार्य किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतीय संविधान निर्माताओं ने भारत के संविधान में स्त्री व पुरुषों की समानता का प्रावधान किया। संविधान के अनुच्छेद 14 में कानून के समक्ष समानता का अधिकार प्राप्त है। अनुच्छेद 15(3) में महिलाओं को संरक्षण का अधिकार, अनुच्छेद 16 नौकरी का अधिकारी अनुच्छेद 19 में विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त है। अनुच्छेद 23-24 में भारतीय संविधान द्वारा नारी क्रय-विक्रय तथा बेगार प्रथा पर रोक लगायी गयी है। अनुच्छेद 39 (घ) में स्त्री व पुरुष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन का प्रावधान किया गया है।[5] महिलाओं के लिए अनेक सामाजिक कानूनों का निर्माण करके उनकी स्थिति में सुधार का कार्य किया गया है। विशेष विवाह अधिनियम 1954 द्वारा किसी भी धर्म या जाति के स्त्री पुरुष न्यायालय की सहायता से विवाह कर सकते हैं। हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 द्वारा जम्मू कश्मीर को छोड़कर सभी जातियों के स्त्री पुरुषों को विवाह एवं तलाक का अधिकार है, हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956, स्त्रियों व लड़कियों को अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956 तथा दहेज प्रथा अधिनियम 1961, 1984 और 1986 धाराओं में संशोधन कर उसे और कठोर बनाया गया है।

भारतीय महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने में विभिन्न महिला संगठनों का भी योगदान रहा है। इनमें मुख्य संगठन हैं- भारत महिला परिषद् (1904), भारत स्त्री महामण्डल (1910), भारतीय महिला संघ (1917), भारतीय महिला राष्ट्रीय परिषद् (1925) एवं कस्तूरबा गाँधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट हैं। इन संगठनों ने दो रूपों में कार्य किया। पहला-स्त्रियों को समाज के अनुकूल बनाया और दूसरा-पुरुषों के समान सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करना।

भारत सरकार द्वारा महिलाओं के कल्याण के लिए बनाये गये कार्यक्रम- भारत सरकार द्वारा महिलाओं के कल्याण के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिससे महिलाओं की स्थिति में उत्तरोत्तर विकास हो रहा है जैसे समाज कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार 1979, मातृत्व लाभ अधिनियम 1961-1976, पीड़ित नारियों के लिए पुनर्वास केन्द्र, 31 जनवरी

1922 को राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया गया। जिसके द्वारा शीघ्र ही महिलाओं को न्याय दिलाने का प्रावधान। 30 मार्च 1993 को राष्ट्रीय महिला कोष का गठन करके गरीब महिलाओं को भरण सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास किया जाता है। भारतीय संविधान में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है और 55 प्रतिशत का मामला संसद में विचाराधीन है।[6]

आज महिलाओं की स्थिति में अत्यधिक सुधार हुआ है। उनको अपना जीवन साथी चुनने का अधिकार प्राप्त है। आर्थिक क्षेत्र में वे पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य कर रही हैं। महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा तथा रोजगार आदि अन्य समस्याओं के समाधान पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। महिलाएँ पुरुषों के समान मानी जा रही हैं। महिलाएँ आज राजनीति के क्षेत्र में सड़क से संसद तक तेजी से कार्य कर रही हैं। वे महिला नेतृत्व, ग्रामप्रधान, ब्लाक प्रमुख, विधायक, मन्त्री, लोकसभा अध्यक्ष, प्रधानमन्त्री और राष्ट्रपति जो कि देश का सर्वोच्च पद है, को सुशोभित कर चुकी हैं और कर रही हैं। महिलाओं को शिक्षा तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में राजनीतिक क्षेत्र में, सामाजिक तथा आर्थिक आदि क्षेत्रों में जहाँ राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तर पर सरकारों द्वारा आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जा रहा है वहीं इनका अनेक क्षेत्रों में शोषण भी किया जा रहा है। महिला से छेड़खानी, उनका मजाक उड़ाना, उनके साथ बलात्कार करना आम बात हो गयी है।[7] 2012 में राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो (NCRD) के आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक 3 मिनट पर एक महिला का उत्पीड़न, प्रत्येक 12 मिनट पर एक महिला के साथ छेड़छाड़, प्रत्येक 48 मिनट पर एक यौन उत्पीड़न, प्रत्येक 71 मिनट पर एक दहेज हत्या तथा प्रत्येक 92 मिनट पर एक महिला के साथ बलात्कार किया जाता है। 16 दिसम्बर 2012 को दिल्ली में चलती बस में सामूहिक दुष्कर्म की घटना को कौन नहीं जानता है? पूरे देश मे आग लग गयी थी और आरोपियों को फाँसी की माँग की। अब समय आ गया है जब देश को अपनी नैतिकता तय करनी होगी।[8]

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश अल्तमस कबीर ने 2 जनवरी 2013 को दिल्ली के साकेत न्यायालय परिसर में प्रथम फास्ट ट्रैक अदालत का उद्घाटन किया था जिसमें सुनवाई के लिए आने वाला पहला मुकदमा 16 दिसम्बर 2012 का सामूहिक दुष्कर्म मामला था। जिसमें सभी 4 अपराधियों को अदालत ने 13 सितम्बर 2013 को मौत की सजा सुनाई। यदि इसी प्रकार के फास्ट ट्रैक अदालतों द्वारा महिलाओं के विरुद्ध अपराध करने वालों को सजा दी जाय तो हो सकता है कि अपराध में कमी आये।[9]

अत: इस प्रकार स्पष्ट होता है कि भारत में महिला सशक्तिकरण की अवधारणा बहुअर्थी है जिसके आयाम ही बहुकोणीय हैं। किसी एक दृष्टि अथवा उसके व्यक्तित्व के किसी एक पहलू से उसे शक्तिशाली नहीं बनाया जा सकता है। उसका सर्वांगीण विकास करके ही देश की मुख्य

धारा से उसे जोड़ा जा सकता है। महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण तथा उनके सशक्तिकरण की दिशा में लगातार किये गये प्रयासों के फलस्वरूप आज देश के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की दशा एवं दिशा में उत्तरोत्तर सुधार हो रहा है। जिससे भारतीय समाज का भविष्य उज्ज्वल दिखाई दे रहा है।[10]

संदर्भ-सूची

1. मनुस्मृति- टीकाकार पं. हरि गोविन्द शास्त्री, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी 1970, पृ. 286
2. आहूजा राम: भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1995
3. दुबे, श्यामाचरण : भारतीय समाज, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, 2001
4. श्री निवास, एम.एन. : आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1969
5. भारत का संविधान- पृ. 7 जनरल लॉ पब्लिकेशन 107 दरभंगा कालोनी, इलाहाबाद
6. हिन्दुस्तान समाचार पत्र, हिन्दी दैनिक 11 अक्टूबर पृ. 1 व 9
7. अमर उजाला दैनिक समाचार पत्र 25.01.2013 पृ. 1 व 9
8. अमर उजाला दैनिक समाचार पत्र 11 दिसम्बर 2013 पृ. 6
9. डॉ. प्रभावती जड़िया, हिन्दू नारी कार्यशाला के बदलते आयाम प्रथम संस्करण, 2003
10. प्रसाद, गोपी कृष्ण : भारतीय सामाजिक संस्थाएँ, भारती भवन, पटना, 1989

■

Internal And External Linkages of Naxalites : Threats to India's Internal Security

Praveen Kumar Singh*

ABSTRACT: *To be successful, insurgent/militant movements have a variety of requirements, most of which can be grouped in two categories - human and material. In general, insurgents must need outside support of all kinds when they cannot obtain this support domestically. Safe havens, whether inside the country where the insurgent/ militant operate or across international boundaries, are essential to the success of any insurgent/militant movement. Sanctuaries protect the group's leadership and members; provide a place where insurgent/militant can rest, recuperate, and plan future operations; serve as a staging area from which to mount attacks; and, in some cases, function as an additional base for recruitment, training, dissemination of propaganda, and contact with the outside world. Without safe havens, insurgent/militant are constantly susceptible to security forces.Similarly, the Maoist movement in India has also been receiving support from Maoist parties in the Philippines, Iran, Turkey, the US, UK, Italy, Peru and Greece. This expansion is part of a well thought-out strategy to broaden their ties to include groups that would help them enhance their influence, strengthen their capacities and enrich their coffers.*

Key-words : *Dissemination, insurgent, propaganda, security forces, influence, spontaneous, sympathizers,recruitment.*

INTRODUCTION

Naxalite movement, an expression of socio-economic and law &order problem was born in 1967 in asmall place, Naxalbari in West Bengal. The young and fiery ideologies of the Marxist-Leninist movement in India formed the CPI (M-L), envisioning a spontaneous mass upsurge all over India.After four decades, it was the year 2006, when Prime Minister Manmohan Singh warned, "Naxalism as the greatest threat to India's internal security." The credit for the survival of the movement for over 40 years must go to the government, which has failed awfully in addressing the causes and conditions that sustain the movement.

*Assistant Professor, Department of Defence & Strategic studies DDU Gorakhpur University Gorakhpur

To be successful, insurgent/militant movements have a variety of requirements, most of which can be grouped in two categories - human and material. In general, insurgents most need outside support of all kinds when they cannot obtain this support domestically. Safe havens, whether inside the country where the insurgent/militant operate or across international boundaries, are essential to the success of any insurgent/militant movement.

Sanctuaries protect thegroup’s leadership and members; provide a place where insurgent/militant can rest, recuperate, and plan future operations; serve as a staging area from which to mount attacks; and, in some cases, function as an additional base for recruitment, training, dissemination of propaganda, and contact with the outside world. Without safe havens, insurgent/militant are constantly susceptible to security forces.

There are numerous reports in open-source media in India and elsewhere that link Naxalites to a number of militant and criminal groups throughout South Asia. These groups interact with Maoists from Nepal, secessionists in India’s restive northeast, ISI-backed Islamists from Bangladesh, criminals from Myanmar and the Liberation Tigers of Tamil Eelam (LTTE) in Sri Lanka.

The linkages among the Naxalites/Indian Maoists and other insurgent/terrorists groups (internal or external) can be understood under following heads:

1. Regional linkages
2. Extra-regional/ International linkages
3. Internal linkages

These linkages of Naxalites with other terrorist/insurgent groups operating within or outside the Indian territory range between, on the one hand, forging bilateral ties to floating broad fronts and, on the other, sending formal messages and ‘revolutionary’ greetings during conferences to exchanging tactical skills and weapons. Reportedly, Indian Maoists also have formal, fraternal ties with similar groups operating in other parts of the world.

1. Regional linkages -

(a)CPI (Maoist) and CPN (M) -

A variety of linkages have been reported between the Communist Party of India (Maoist) and the Maoists of Nepal, the origin of which can be traced back to the year 1995 (a year before the Communist Party of Nepal-Maoist launched its people’s war) when the Nepalese Maoists and the then People’s War Group (PWG) had their first meeting. This was followed by issuing of joint statements by the two parties on number of occasions. To express its solidarity with the Naxal factions, the politbureau of the CPN-M, on 25 January, 2002, condemned the Indian government’s proscription of the then Peoples War (PW) and

the Maoist Communist Centre of India (MCCI) under the now defunct POTA, 2002 and expressed its resolve to work together with the Indian Maoists to oppose the ban as well as to build opinion against it.[1] Since then the Nepali Maoists have been extending full support and cooperation to their counterparts in India not only on ideological basis but also for arms procurement, drug trade, training and resource mobilization. Together, these parties wish to form a Compact Revolutionary Zone (CRZ) extending from Pashupati, Katmandu in the north to Tirupati, Andhra Pradesh in the south traversing through the states of Bihar, West Bengal, Jharkhand, Chhattisgarh, Madhya Pradesh, Maharashtra, Karnataka, Orissa and Andhra Pradesh.[2] They are also reported to have formed the Indo-Nepal Border Regional Committee (INBRC) to 'coordinate their activities' in north Bihar and all along the Indo-Nepal border. The porous, open border between India and Nepal has facilitated smooth coordination between the two groups. Over the years, this association has evolved into a strategic alliance with a steady exchange of men and material, extension of training facilities and safe havens, and facilitation and procurement of arms and explosives.

While Nepal's Maoist party, which abandoned its armed struggle in 2006 and returned to mainstream politics after contesting and winning an election two years later, denies supporting the Indian Maoists in their anti-state activities, it however admits having ideological sympathy for them. Over and above all this, the Nepalese Maoists have been conducting propaganda for the Indian Maoist groups and possibly funds are being channeled to the Naxalites from international sympathizers through CPN (Maoists). Similarly, there are also evidences that indicate that Indian Naxalite elements too publicise the activities of the Maoists of Nepal.

(b) Naxalites & THE ISI -

Pakistan's Inter-Services Intelligence (ISI), in its attempts to rope in India-based militant groups, has found the Indian Maoists more than suitable for its agenda. For this, the ISI has made use of underworld dons like Dawood Ibrahim and Chhota Shakeel to facilitate the linkage. Naxals are now part of the ISI's "Karachi Project" that aims to bleed India, both militarily and economically, without leaving any evidence of its involvement. Reportedly, ISI has also facilitated contacts between the Maoists and anti-India Islamic terror groups like the Lashkar-e-Tayyeba (LeT) and Jaish-e-Muhammed (JeM) based in Pakistan; Harket-ul-Jihad-al-Islami (HuJI) based in Bangladesh and those that operate in India like the Indian Mujahideen and Students Islamic Movement of India (SIMI).[3] The Indo-Nepal and Indo-Bangladesh borders are used extensively by these Islamic groups as transit routes to reach out to the Naxals in India. The ISI is also using the Naxals' local network in pushing counterfeit currencies all over India. These external contacts have opened a wider world for the Naxals in terms of new ways of fund raising that include trafficking of drugs and counterfeit

currency, arms procurement and training. Some of the training camps are located in Bangladesh funded by the ISI and run by Bangladeshi left extremist groups.Recently Bangalore police arrested two Maoists and seized pistol, visa, passport and 25 Lack Rupees and this revealed the linkage between a person named Altaf residing in Dubai who is acting as an anchor between Maoists and Pakistani Islamic Terrorist groups. ISI had engaged Dawood Ibrahim and through his accomplice Chhota Shakeel to engage Maoists - that is Naxalite leaders in India - and instigate them to commit terrorist acts. The Maoists were leaving to Dubai to get trained in organizing terror activities in India. Many news papers of 13th Aug 2010 published this story without much importance. Many journalists shows sympathy towards Maoists could be the reason behind it.[4]

STRATFOR sources in India also claim that the Pakistani intelligence has established business relationship with Naxalites to sell arms and ammunition and has lately tried to use Naxal bases for anti-Indian activities. There is evidence that the ISI is providing weapons and ammunition to the Naxalites in exchange for money or services, mostly through third parties like the United Liberation Front of Assom (ULFA) or the ostensible Bangladeshi militant leaders like Shailen Sarkar. The Naxalite leaders in India, on the other hand, deny any linkages with ISI or Pakistan but have very publicly pledged their support for Pakistan ISI sponsored separatist movements in the Indian state of Jammu & Kashmir.[5] The involvement of the ISI and some militant groups of northeast India in facilitating the drug trade for the Naxals is also reported by the intelligence agencies. It is important to note here that the Naxal dominated areas are not only rich in minerals and inhabited by tribals, also popular drug cultivating tracts (cannabis and poppy in particular) especially in the states of Madhya Pradesh, Maharashtra, Chhattisgarh, Bihar, Jharkhand, Orissa and Andhra Pradesh.

At the same time, the Naxals are a bit cautious in their liaison with the jihadist groups because of the long-term consequences. Moreover, the ideology and objectives of these groups are quite different. Therefore, the Naxal leadership is said to be in favour of "specific and need-based exchanges" with these groups that could be restricted to "consequential solidarity".

(c) LTTE Links-

The linkages of Naxalites with Sri Lankan Liberation Tigers of Tamil Eelam (LTTE) date back to 1990s, when it was reported by the Indian intelligence agencies that PWG used to acquire weapons especially AK-47 series rifles from this organization. The LTTE had apparently imparted land-mine know-how and IED-related manufacturing techniques to the erstwhile PWG. The outfit was also reported to have acquired AK-47s and sten guns from the LTTE in 1991.[6] In the present context, the sources also claim that the remnants of LTTE, after being defeated in May 2009 by the Sri Lankan government after decades of struggle, are providing training to the Naxalites in guerilla war tactics for which the LTTE were known including surprise 'hit-and-run' tactics and jungle warfare. The location of these LTTE-Maoist training centers is thought to be the remote parts of central and southern India, already under the complete control of the left-wing extremists.[7] The Naxalite presence in Tamil Nadu with the discovery of a training camp organized by former PWG Naxals in the Periyakulum forests of Theni district on 25 June 2007, which is also believed to have strong sympathy for the LTTE, has led security agencies to suspect a renewed nexus between the Naxals and the LTTE.[8] Nearly 100-200 LTTE cadres, who escaped from Sri Lanka during Eelam War IV, are estimated to be hiding in the jungles of central India and training Maoist cadres inter alia in suicide attacks.

In the meanwhile, it is worth mentioning that New Delhi has for now ruled out any deeper strategic ties between CPI (Maoist) and LTTE, such as them launching a combined war against the state pointing to the lack of an effective LTTE leadership in the wake of its defeat but the security officials who are monitoring coastal areas for infiltration by the LTTE in the state of Andhra Pradesh, Tamil Nadu and Orissa, feel that the joint expertise of the two insurgent groups could form a potent mixture.

(d) Coordination Committee of the Maoist Parties and Organisations of South Asia (CCOMPOSA) -

External linkages of Naxals also exist in the form of umbrella organisations at regional and global levels. Prominent among them is CCOMPOSA, formed in July 2001. The Maoist groups of four South Asian countries, India, Nepal, Bangladesh and Sri Lanka, have joined hands to form CCOMPOSA to advance "Peoples War" in South Asia. The objective of the

Committee is to unify and coordinate the activities of Maoist parties and organisations in South Asia and spread protracted 'Peoples War' in South Asia. So far, the Committee has met five times in June 2001, August 2002, March 2004, August 2006 and in March 2011. The committee accepted Charu Mazumdar as its moving force and acknowledged him as true heir of Mao Tse Tung. This probably indicates that CPI (Maoist) is likely to emerge as the leading revolutionary party in South Asia. The implications are likely to be similar to those of Compact Revolutionary Zone, but on a larger canvas. The last conference at an undisclosed location in Nepal was attended by the Proletarian party of Purba Bangla-CC, the Communist Party of East Bengal (ML) (Red Flag), the Balgladesher Samyobadi Dal (ML) (all from Bangladesh), the Communist Party of Bhutan (MLM), Communist Party of Nepal (Maoist), Communist Party of India (Maoist), Communist Party of India (ML), Naxalbari and Communist Party of India (MLM). The Communist Party of Ceylon (Maoist), which attended the meeting, is not a signatory to the resolution, thereby indicating that it was invited as an observer to the conference. At a time when the relevance of SAARC is being widely questioned, the political leadership in South Asia can hardly afford to ignore this Maoist quest for redemption in the region. When CCOMPOSA was formed it was seen as just another Maoist platform. But, last four years, show that it has established itself as the principal coordinator of Maoist Movements in different parts of the region. The fourth CCOMPOSA meeting, through its political resolution, vowed to strengthen and expand relations among the Maoist organizations in the region and to assist each other to fight the foes in their respective countries.[9]

2. **International Linkages -**

(a) Revolutionary International Movement (RIM)–

The erstwhile Peoples' War Group maintained constant touch with Maoist groups of 27 countries through Revolutionary International Movement. The party also participated in an international seminar held in December 1996 at Brussels to express and promote solidarity among the revolutionary movements in different countries. Indian Left Wing Extremist sympathisers living in foreign countries have been co-opted to publish and circulate Vanguard International Bulletin published by Vanguard Multimedia Publishing Foundation. A Turkish Maoist organization is known to have undertaken the task of publishing PWG activities through an internet website.

(b) Linkages with Left Wing (Maoist) organizations in Philippine and Turkey–

The Maoist movement in India has also been receiving support from Maoist parties in the Philippines, Iran, Turkey, the US, UK, Italy, Peru and Greece. According to a senior intelligence official from Andhra Pradesh, Kobad Ghandy, Polit Bureau member of the CPI

(Maoist), who was arrested in September 2009 in New Delhi, visited Canada and the United Kingdom in 2005 to forge linkages with like-minded people and organisations. He visited Toronto, Vancouver and Edmonton in Canada, for five weeks, and London, Birmingham and Bradford in UK for a week. He is said to have distributed 400 CDs containing two Maoist propaganda films-Blazing Trail and Bhoomkal-and a few documents of the outfit. Kobad Ghandy, incidentally, was also the head of the Central Propaganda Bureau (CPB) of the CPI (Maoist). According to former Chief of the SIB, during these visits abroad, Kobad Ghandy raised funds to the tune of 2, 06,000. [10] Some of the above mentioned peer groups have been organizing public protests in Europe against "Operation Greenhunt", and conducting propaganda campaigns.[11] This expansion is part of a well thought-out strategy to broaden their ties to include groups that would help them enhance their influence, strengthen their capacities and enrich their coffers.

(c) Friends of Indian Revolution (FOIR)–

FOIR is another umbrella organization whose representatives abroad seek to raise finances in several countries, especially that of the west, for the cause of Indian 'revolution'. Then there are also bodies like International Conference of Marxist-Leninist Parties and Organisations (ICMLPO) and International Communist Movement (ICM) that link groups located all over the world stretching from Peru to Philippines. They sustain fraternal ties and jointly conduct programmes that are mutually beneficial.[12]

There is also a renewed attempt on the part of CPI (Maoist) to internationalise the alleged state brutalities of 'Operation Green hunt'. To express solidarity in support of the people's war in India, an international conference was held at Hamburg, Germany in the month of November, 2012.[13]

All these external linkages have, no doubt, served one important purpose. They have given Naxalites visibility and propaganda in different parts of the world. Thus, they have been able to mobilize international political support from fraternal groups.

3. Internal Linkages-

From the various recoveries and facts it comes to notice that Naxals have well established linkages with other Insurgent groups and few Muslim fundamental organisations active in India. These links provide the movement with not only psychological support, but also with material support in form of money and weapons. In the past, the PWG's over-grounded cadres, including those in Delhi, had helped the outfit to form ties with secessionist and terrorist groups and eventually procure arms from few of these groups based in India's North-east region.[14]

(a) North-East Insurgent Groups-

It is now well known that the Indian Maoists have good network with several key militant groups of the northeast India that commenced roughly since the mid-1990s. In fact, with some groups like People's Liberation Army of Manipur, the exact modalities of working – formal, semi-formal and informal – are spelled out through "memoranda of understanding".[15] These linkages range from getting arms, ammunitions, communication devices to training from the northeast militant groups like National Socialist Council of Nagaland (NSCN-IM), anti-talk faction of the United Liberation Front of Assam (ULFA) led by Paresh Barua, People's Liberation Army (PLA), People's Revolutionary Party of Kangleipak (Prepak), Revolutionary People's Front (RPF), Kamtapur Liberation Organisation (KLO), Gorkha Liberation Tiger Force (GLTF), Gurkha Liberation Organisation (GLO), Adibasi National Liberation Army, Adivasi People's Army (APA), and National Democratic Front of Bodoland (NDFB).[16] Maoists, in turn, are said to be providing explosives (ammonium-nitrate) and funds to these northeast groups.[17] Chinese small arms mainly find their way to the 'Red Corridor' mainly through these groups.Also, it is through the northeast groups that the Maoists have good access to militant smuggler groups of Myanmar.[18]

The mutual support between Naxals and northeast insurgent groups is not just restricted to material, but extends to moral aspects as well. While Naxals have strongly supported "people's movements" of the northeast, the northeast insurgent groups have stood by "Indian revolutionaries". "Enemy's enemy is a friend" is the guiding maxim in this case as well. ULFA leader Paresh Baruah once remarked, "The Indian colonial government is also viewed as an enemy by the Maoists. Our enemy is also the same and so there is an understanding with them."[19] Yet, what is more alarming for India's security are the attempts being made by the Maoists to infiltrate districts of Assam and Arunanchal Pradesh in collusion with local insurgent groups being backed by Pakistan's ISI. The presence of Maoists is especially felt in pockets of Tinsukia, Dibrugarh, Lakhimpur, Dhemaji, Sivasagar, Golaghat and Karbi Anglong districts of Assam and Lohit (adjoining Tinsukia) and Lower Dabang district of Arunachal Pradesh. The hub of Maoists activities is said to be in Sadiya area, situated in Assam-Arunachal Pradesh border. Governments of Assam and India have recently admitted to this.[20]The northeast India has now become a new "strategic area"[21] for the Maoists.

Therefore, apart from military utility of training, arms procurement and sanctuary, the Maoists also found parts of the northeast of India as a new zone of "revolution" to establish what they call as "base areas". In this regard, two major causes are being exploited: deprivation among the tea workers of Assam and anti-dam sentiments in Arunachal Pradesh.[22] Since there is political vacuum in both cases, Maoists are more than willing to fill them.

Interestingly, adivasis in tea gardens are descendants of migrants from present-day Jharkhand, Bihar, Odisha, Chhatisgarh and Madhya Pradesh from the days of the British times. The Maoists have already set up local committees in these areas. From there it will become easy for them to link up to southern parts of Bhutan, where Nepali refugees are populated. Indian Maoists already have well-established links with the Bhutanese Maoists at both bilateral and global levels. They are members of umbrella organisations like Coordination Committee of Maoist Parties and Organisations of South Asia (CCOMPOSA), Revolutionary International Movement (RIM), World People's Resistance Movement (WPRM) and International Communist Movement (ICM).

(b) J&K Terrorist Groups-

Vishwa Ranjan, the director-general of police of Chhattisgarh state, alleged that Naxalites have constantly been meeting with members of the outlawed Pakistani militant group Lashkar-e-Taiba (LeT). On 11 November, 2010, Mr. Ranjan said that two LeT operatives attended a Naxalite meeting in the month of April or May. While their presence at the meeting still needs to be corroborated the likely perception, according to the chief is that the Naxalites held the meeting to adopt a new policy and plans for increasing "armed resistance" in order to seize political power in India.[23]Besides, spokespersonsof CPI (Maoist) on many occasions have openly supported the action and cause of the J&K terrorist groups. The Lashkar-e-Taiba terrorists who carried out the attack on the American Centre at Kolkata in 2001 had escaped to Jharkhand and had taken refuge in a Naxalite sympathisers' house, in Ranchi. In return of this and similar other favours, the J&K terrorists who are well trained in handling of Improvised Explosive Devices (IEDs) and sophisticated arms, impart training to the Naxalite groups.

CONCLUSION–

Because of extensive linkages with both state and non-state actors within and without India, Left wing extremism (LWE) fails to strictly qualify as an "indigenous" movement. Major drivers for these linkages are arms, training, finance, ideology, drugs trade, and the plan to forge a broad front against the "common enemy" i.e., India, in achieving the overall objective of capturing power. These linkages are not only increasing in depth and quality but are also turning deadly.Naxals have deep linkages with their counterparts in Nepal (Communist Party of Nepal-M), not only on ideological basis as officially claimed by the CPN-Maoist; but also for arms procurement, drugs trade, training and sanctuaries and resource mobilization.

The linkages synthesized by Naxalite-Maoist groups with North-east insurgents and radical Islamic organisations, particularly for availing terror logistics; continue to be a key concern for the internal security of India. As far as the presence of Naxalites in the North-east is

concerned, they are just making a foray into the region. It is, therefore, important to nip it in the bud. The idea of the government of Assam to form a special task force on the lines of Andhra Pradesh's 'Greyhounds' and coordinated operations with neighbouring states like Arunanchal Pradesh are fine. But what is more important is a 'comprehensive development approach'. All Maoists want is a cause to exploit and they spread their influence wherever grievances exist.

In the current geo-strategic scenario, these apprehensions need to be taken care of on the war footing so as to prevent a strategic crisis which India may likely face in the future due to a three front security threat-from Pakistan, China and internal. To break these linkages should be part and parcel of India's counter-Naxal strategy. India has to commit its full diplomatic energy in a serious way both at bilateral and multilateral levels to make sure that the external sources of support to Maoists are disrupted permanently. India has set up more than 25 Joint Working Groups on counter-terrorism with various countries and regional organisations. These groups should be enhanced to target Naxals as well. At the same time, more vigilance should be mounted on Naxals interactions with other militant groups in India to identify and disrupt them. Now time has come that India should push aggressively for a global cooperation to ensure that no state or its agencies offer its territory to any terrorist group**.**

References –

1 P. V Ramana, "Marching CCOMPOSA, Limping SAARC, Article No. 855, 12 September, 2002, available at *http://www.ipcs.org/article/naxalite-violece/marching-ccomposa-limping-saarc-855.html,* accessed on 23 December, 2012.

2 "Nepal Maoists admit Link with Indian Naxals", *The Times of India*, 03 November, 2009.

3 Dr. N Manoharan, " No Longer "Indigenous": External Linkages of Indian Naxalites" in Gurmeet Kanwal and Dhruv C Katoch (Ed.) (2012), Naxal Violence The Threat Within,KW Publishers Pvt. Ltd., New Delhi, p. 123.

4 http://risingindian.blogspot.in/2010/08/maoists-and-naxalites-are-indias.html

5 Ben West, "Pakistan and the Naxalite Movement in India", *STRATFOR*, 18 November, 2010, available at *http://www.stratfor.com/weekly/20101117_pakistan_and_naxalite_movement_india*, accessed on 12 December, 2012.

6 S Gopal, "The Naxalite movement: Impact of External Networking", in P. V Ramana (Ed.)(2008), The Naxal Challenge Causes, Linkages, and Policy Options, Dorling Kindersley Pvt. Ltd, New Delhi, p. 108.

7 Siddharth Srivastava, "India probes Maoists' foreign links", 11 November, 2009, available at *http://www.atimes.com/atimes/south_Asia/kk11Df03.html* accessed on 21 January, 2013.

8 Devyani Srivastava, "Naxalite-LTTE nexus in Tamil Nadu: An Alliance in the Making", Article No. 2355, 14 August, 2007, available at *http://www.ipcs.org/article/naxalite-violence/naxals-ltte-nexus-in-tamil-nadu-an-alliace-in-the-making-2355.html*, accessed on 23 December, 2012.

9 Rajat Kumar Kujur, "CCOMPOSA: a Mirage or a Reality", Article No. 2142, 31 October, 2006, available at *http://www.ipcs.org/article/naxalite-violence/ccomposa-a-mirage-or-a-reality-2142.html,* accessed on 23 December, 2012.

10 P V Ramana, "Maoists' global web of linkages", *IDSA Comment*, 19 May, 2012, available at *http://idsa.in/idsacomments/Maoistsglobal weboflinkages_pvramana_19052012.*

11 Sudeshna Sarkar, "India's Maoist Revolt: Internal Crisis, External Reach", ISN Security Watch, 15 April, 2010, available at *http://www.isn.ethz.ch/isn/Digital-Library/Articles/Detail//?lng=en&id=115024,* accessed on 12 March, 2013.

12 Dr. N Manoharan, "No More "Indigenous": External Linkages of Left Wing Extremism", Article No. 1598, Centre for Land Warfare Studies (CLAWS), available at *http://www.claws.in/index.php?action=master&task=599&u_id=42, accessed on 22 December, 2012.*

13 Bibhu Prasad Routray, "Achievements against Naxals: Real and the Imagined", Voices, The New Indian Express, 13 February, 2013, available at *http: //www.newindianexpress.com/magazine/voices/articles1424573.ece.,* accessed on 27 February, 2013.

14 P V Ramana, "PWG's Emerging 'New' Global Linkages", in the online journal of the Institute of Peace and Conflict Studies, New Delhi, available at *http://www.ipcs.org/article,* accessed on 23 December, 2012. February 11, 2004, at *www.ipcs.com.*

15 "PLA, Naxals signed MoU in 2008 for fighting gov: cops", *The Indian Express,* 02 April, 2012.

16 Op. Cit. No. 3, p. 127.

17 Dr. N Manoharan, "Maoists' 'Look East Policy'", available at *http://www.vifindia.org/article/2012/may/25/maoists-look-east-policy,* accessed on 22 December, 2012.

18 "Naxals may be getting small arms from China: Home Secy", TNN, 9 November, 2009, available at *http://articles.timesofindia.indiatimes.com/2009-11-09/india/28083516_1_small-arms-chinese-arms-maoists,* accessed on 3 March, 2013.

19 Op. Cit. No. 16.

20 'Maoist-ISI Nexus a challenge to Assam Security, says Gogoi', *The Tribune*, Chandigarh, February, 2012.

21 To Maoists, the "strategic areas" are hilly regions with dense forest cover that have sufficient economic resources, a vast population and a vast forest area spreading over thousands of square kilometres. In such areas, the enemy is generally weak and these areas are very favourable for the manoeuvres of the people's army.

22 The district administration of Lower Dabang Valley district of Arunanchal Pradesh had reported that Naxalites have influenced the local Idu-Mishmi tribe of the area and had infiltrated the local anti-dam movement against the proposed 3,000 megawatt (MW) Dibang project. It is important to note here that the resultant dislocation and destruction of local populations and ecologies is expected to be large and has led to the strong opposition from the local population. "Development with Brutality", Editorials, *Economic and Political Weekly*, Vol. XLVI, No. 42, 15-21 October, 2011, p. 7.

23 Op. Cit. No. 4.

■

Living at the Edge: National Security Implications of Climate Change for India

Abhishek Singh*

ABSTRACT: *Climate change exactly does not fit into the mode of traditional threats to national security, such as war, terrorism, insurgency, or sabotage. Yet its non-violent and gradual dynamics of manifestation serve only to disguise its impact on livelihoods, social order, peace, and stability. Despite being the most profound of the environmental change problems confronting the world at large, with disproportionate impact on Asia and Africa, there is relatively little research that explores the implications of climate change for national security in India. This paper examines the possible connections between climate change and national security with particular reference to India. It further scrutinizes the key environmental trends that serve as 'stressors' for the transmission dynamics of security threats posed by climate change to the country. It concludes with a range of recommendations on how India could mitigate the security threats imposed by climate change.*

Key Words: *Climate Change, Extreme Weather, National Security, Stressors and Territorial Contiguity.*

1. INTRODUCTION

Climate change is evolving fast as the utmost crucial challenges of this century. The Fourth Assessment Report (AR4) of the Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC); IPCC AR4 has delivered enthralling evidence that climate change is advancing rapidly as a global risk with impacts far beyond just the environment (IPCC, Climate Change Report, 2007).

Recent projections and analytical studies indicates that the increasing global temperatures, arctic and glacial melt down, sea level rise and other climate change induced environmental degradation will give rise to extreme weather events and overstretch many

*Assistant Professor, Department of Defence & Strategic studies M. P. P.G. College Jungle Dhusan, Gorakhpur

societies' adaptive capacities within the coming decades thus increasing socio-economic vulnerabilities.

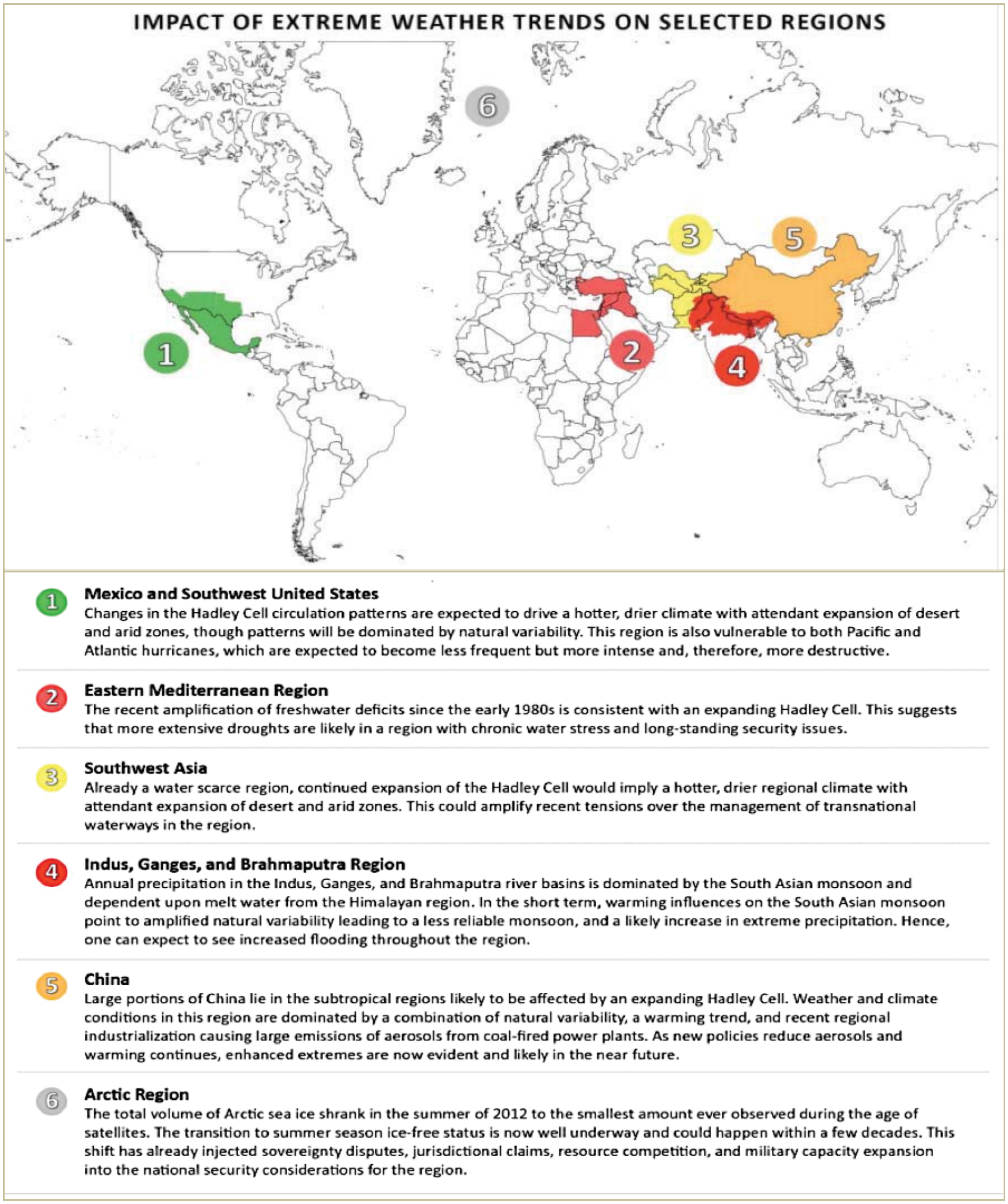

Figure 1: Impact of extreme weather trends on selected regions of world due to global climate change effect *(Source: Climate extremes: Recent trend with implications for national security, McElroy, M. & Baker, D. J. October 2007)*

Conferring to the IPCC, the likely range of global average surface warming over the period of this century vary from 0.3^0 C to 6.4^0 C, depending on the model used for simulation. The corresponding average rise in sea level ranges from 0.18m to 0.59m, excluding the impact of dynamic changes in the ice flow (Ibid). In southern Asia, the mean annual increase in temperature by the end of the century is projected to be around 3.8^0 C in the Tibetan plateau and 3.3^0 C in South Asia and 2.5^0 C in South East Asia (Christensen, J.H., B. Hewitson et al, 2007). Although, there is still an ongoing debate over the pace at which the temperature is expected to rise over the coming century, potential mechanisms by which the change will affect the region are clear. These are the changes to subcontinent's river systems that flow from the Tibetan plateau to the Indian Ocean, and, rising sea levels and their impact on river-deltas and low-lying islands (Brahma Chellaney, April 2007). In addition to this another mechanism relevant to the this study: extreme weather—cyclones, droughts, floods etc., that do not exclusively result from global warming but are both vitiated by it and complicate our response to the disasters it causes.

In the national and international security environment, climate change threatens to add new hostile and stressing factors. On the simplest level, it has the potential to create sustained natural and humanitarian disasters on a scale far beyond those we see today. The consequences will likely foster political instability where societal demands exceed the capacity of governments to cope.

Therefore, climate change acts as a threat multiplier for instability in some of the most volatile regions of the world. Projected climate change will seriously exacerbate already marginal living standards in many Asian, African, and Middle Eastern nations, causing widespread political instability and the likelihood of failed states. The effects will be worldwide and will impact all nations. The box below in figure 1 highlights some of the changes we expect to see in selected regions that are highly relevant to Indian national security interests too.

Although climate change is a global phenomenon, its threat and vulnerability differ not only from one continent to another, but also among sub-region, countries, and even communities. Despite its disproportionate impact on Asia, most extant studies on climate change and security have emerged specifically from developed countries. In this regard, exploring how climate change impacts on national security in India is crucial, partly because of two reasons. First, India's population, which is world's second highest after China and thus large population will be affected by this phenomenon in numerous ways. Along with this, the dynamics of its internal security and stability has regional and continental consequences. Second, the country is characterized with such negative human development indices like,

poverty and unemployment rate, wide income and gender inequality, prevalence of diseases, endemic corruption, and the existence of various boarder disputes. This prevailing situation foregrounds much of the internal security complex and dynamics that climate change is set to trigger or intensify in India.

In light of this, the article explores the consequences of climate change for national security in India with the following questions:

§ Is there any connection between climate change and national security; and if yes, how do we explain such linkage(s)?

§ Are there any distinguishable environmental trends that act as 'stressors' via which climate change undermines national security in India?

§ What measures could be adopted to mitigate or adapt to the challenges posed by climate change in India?

The remainder of this paper attempts to proffer answers to these questions.

2. CONCEPTUAL EXPOSITIONS

The concepts of climate change and national security are pivotal in this and hence the way in which they are understood here needs to be elucidated.

Climate change refers to any change in climate overtime, as a result of either or both natural variability and anthropogenic factors. Article 1 of the United Nations Framework Convention on Climate Change defines climate change as: 'a change of climate which is attributed directly or indirectly to human activity that alters the composition of the global atmosphere and which is in addition to natural climate variability observed over comparable time periods' (UNFCCC, 1992).

The subject of security is one of the basic pre-occupations of every individual, community, state or nation. Consequently, it is common to see references being made to human security, community security, state security, societal security, and national security among others. In this context, the paper is concerned about national security. For long, the idea of national security has been defined from a state-centric, militaristic, and strategic perspective. In this way, Lipman argues that a 'nation is secure to the extent that it is not in the danger of having to sacrifice core values, if it wishes to avoid war, and is able, if challenged, to maintain them by victory in such war' (Lipman, 1943). Thus, national security was implied in cryptic terms and equated with the security of the state or the nation. National security is an ensemble of two key elements: human security and physical/state security.

While the human security dimension focuses on improving the existential conditions of citizens of a nation/state by preventing or mitigating threats to human safety and survival,

the physical security dimension pivots on the protection of the territorial integrity of the state, including its vital national assets. David King, the UK Government's chief scientific adviser, considers climate change a bigger threat than terrorism to national security (Brauch, 2002). The German Ministry also published a report for the Environment, Nature Conservation and Nuclear Safety to look into the connection between climate change and security (BBC, 2007). Moreover, the Institute for Global Communications has developed a matrix of possible interaction between climate and security to look into the matter more precisely (table1)(Wisner, 2007).

	Direct impact	Indirect Consequences					Slow-onset
	Water	Food	Health	Mega-projects	Disasters	Bio-fuel	Sea level
Short term (2007-2020)	Local conflict over water	Failure to meet MDGs	Failure to meet MDGs	Long history of development-induced displacement from 1950s	Nation states begin to lose credibility due to inability to prevent large disasters	Isolated food – fuel competition & price spikes	Small number of displacements
Medium term (2021-2050)	Increased local & some international conflict over water	Significant displacement due to famine	Interacts with food production problems	Displacement of rural poor due to CDM & large scale dams & other state based mitigation & adaptation projects	Significant political unrest due to failure of DRR & inadequate recovery in many countries	Food-fuel competition increases & biodiversity erosion	Increasing displacement & national/ international tension
Long term (2051-2100)	Major international conflict over water	Major displacement & political upheaval	Major displacement due to epidemics	Major urban upheaval and other political fall out from mega-project displacement	Major upheaval with international implications due to unattended weather catastrophes	Major discontent due to food-fuel competition	Major international tensions due to population displacement

Table 1: Possible Interaction matrix between Climate and Security,

(Source: (Wisner,2007).

Ben Winser divided the climate change impacts into three categories direct impacts, indirect impacts and a slow onset of change. He tried to build connections in the short,

medium and long term. It is clearly indicated in table above that climate change will impact national security in the medium and long term. In this sense, national security is both qualitative and dynamic. In its qualitative sense, it encapsulates the unending drive of the state for improvement in the wellbeing of citizens as well as the protection of lives, property, and resources within its defined territorial boundary. It is dynamic in the sense that its broad contours oscillate with emergence of new threats or the transformation of old threats, which may come from within or outside the territorial borders of the state. In other words, as the political, economic, military, and social causes of threats change, so does the national security posture of a country change (Okodolor, 2004; Ezirim, 2008a).

3. IMPLICATIONS OF CLIMATE CHANGE

Whilst significant uncertainties persist regarding the extent and speed of climate change, the overwhelming global scientific consensus is that the Earth's atmosphere is warming rapidly, perhaps at an unprecedented rate, and that much of this warming is due to human activity. The UN Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC), the multilateral body charged with assessing the implications of climate change, predicts that global warming will trigger enormous physical and socio-economic changes. For the Indian subcontinent, the projected changes by IPCC, based on the General Circulation Model (GCM), which projects warming of 2-4.7 °C, with the most probable level being around 3.3 °C by the year 2100 (A1B scenario) (Solomon et al, 2007). Most scenarios project a decrease in precipitation during the internal dry period and an increase for the rest of the year. At the same time, an increase in heavy rain events is probable, particularly in the north of India. The global sea level rise of 0.1 to 0.9 meters is particularly expected to be high in the Indian Ocean, especially on the west coast.

Conversely, the projected climate change will affect India particularly severely. Its consequences include a rise in sea level, threatening areas such as the densely populated Ganges delta, changes in the monsoon rains, the melting of the glaciers in the Hindukush-Karakorum-Himalaya region (crucial for the water supply in the dry seasons), and the foreseeable increase in heavy rain events and intensity of tropical cyclones (Parry et al, 2007). Thus, the effect can be studies in two terms- Physical and Socio-economic effects:

3.1 PHYSICAL EFFECTS

The likely physical effects of climate change in India include: (1) higher average surface and ocean temperatures; (2) more rainfall globally from increased evaporation; (3) more variability in rainfall and temperature, with more frequent and severe floods and droughts; (4) rising sea levels from warming water, expanded further by run-off from melting continental ice fields; (5) increased frequency and intensity of extreme weather events such as hurricanes

and tornadoes; and (6) extended ranges and seasons for mosquitoes and other tropical disease carriers (IPCC, 2001a, 2001b). It can be expressed through the subsequent broad headings:

Glacial recession: The glaciers on the Tibetan plateau are the source of Asia's biggest rivers, including the Brahmaputra, the Indus, the Sutlej and several of the northern tributaries of the Ganges that irrigate the subcontinent. Geopolitically the source of most of these rivers, except the main Ganges, lies in China. The melting of the Himalayan glaciers as a result of the rise in the earth's temperature will first increase the drainage through the major river systems into the ocean, followed by reduction in the their volumes once the glaciers begin to disappear. It is projected that some of the mightiest Himalayan rivers might end up as seasonal, monsoon-fed rivers like those in southern India. The figure 2 shows the vulnerability of this geopolitically crucial region.

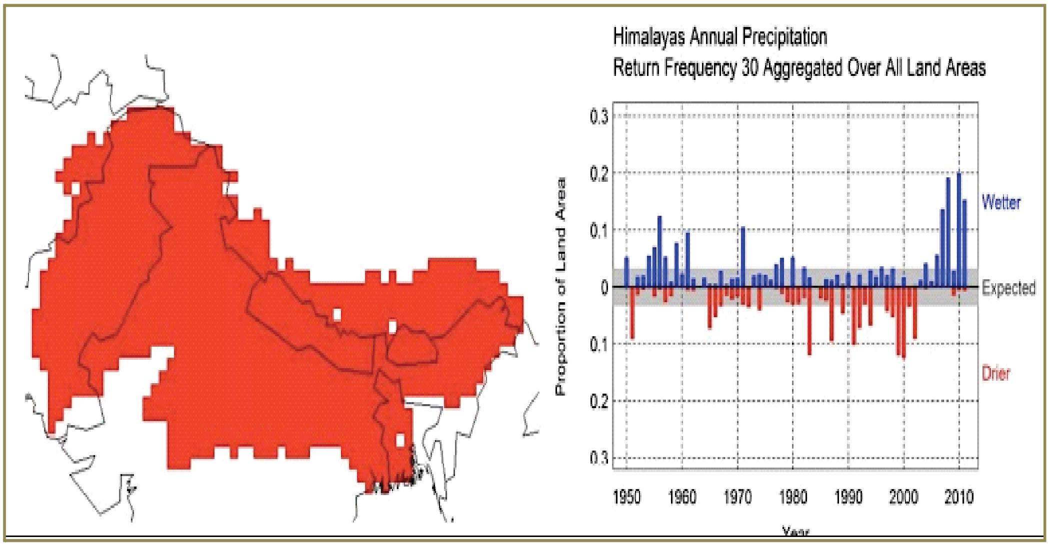

Figure 2. Trends in the Prevalence of Extreme Annual Precipitation in theIndus, Ganges, and Brahmaputra River Basins.

(Source: Climate extremes: Recent trend with implications for national security, McElroy, M. & Baker, D. J. October 2007)

(The chart in the figure 2 depicts the fraction of land area in the region experiencing extreme total annual precipitation from 1950 to present. The red bars show the fraction of land area experiencing dry anomalies defined as precipitation lower than what one would expect to see once every 30 years using a 1950-2010 climatology. The blue bars show the fraction of land area experiencing similarly defined wet anomalies. The gray area shows the expected proportions given a stationary climate.)

Figure 2 shows the results of an analysis of annual precipitation extremes restricted to the Indus, Ganges, and Brahmaputra River basins. These results clearly show an increase across the region in the prevalence of annual precipitation extremes over the past six years (2005-2011), consistent with the expected widespread increases in heavy precipitation events with increased warming (SREX). However, the results are consistent with theory regarding anthropogenic influences on the South Asian monsoon, namely that natural variability will be amplified and a common pattern will be a likely increase in extreme precipitation (SREX). If this trend continues, one would expect to see increased flooding throughout the region, consistent with recent large scale flooding along the Indus, Ganges, and Brahmaputra Rivers, which will definitely destabilize the national-international peace and security.

Sea levels rise: The rise in global sea levels due to the melting of polar ice caps and glaciers around the world is expected to result in the submergence of low lying areas: including river deltas, coastlines and small islands. This places highly populated regional cities like Karachi, Dhaka, Mumbai, Kochi and Mangalore at risk. The rise in ocean levels are likely to spur greater interstate and intrastate migration, especially of the poor and the vulnerable from the delta and coastal regions to the hinterlands. In addition, the coastline could advance inland across several heavily populated parts of Bangladesh, Sri Lanka, Myanmar and Pakistan (as indeed, several parts of India). An influx of outsiders would socially swamp inland areas and upset existing fragile ethnic balances in India provoking a backlash that strains internal and regional security. It should not be forgotten that many societies in the region are a potent mix of ethnicity, culture, and religion. India, for example, could face a huge refugee influx from the world's seventh most populous country, Bangladesh.

Bangladesh faces extinction from saltwater incursion, with the International Panel on Climate Change (IPCC) saying that country is set to lose 17 percent of its land and 30 percent of its food production by 2050. Bangladesh today faces a rising frequency of natural disasters. In addition to the millions of Bangladeshis that already have illegally settled in India, New Delhi would have to brace up for the potential arrival of tens of millions more people. "Climate refugees," however, would not all come from across India's borders. Within India itself, those driven out by floods, cyclones, and saltwater incursion would head for settlements on higher ground. In some cases, the effects of such refugee influxes would be to undermine social stability and internal cohesion locally.

Higher frequency of extreme weather events: India is one of the Asian countries that are vulnerable to the adverse consequences of climatic change. It has been noted that India is suffering from climate-induced drought, desertification, and sea level rise as a result of climate change. In India, environmental hazards, such as increasing drought, soil erosion, coastal flooding, and heat wave in different parts of the country serve as the stressors on

national security. Although the local people and communities have lived with these hazards for many years and have evolved ways of dealing with them, climate change is already exacerbating their impact with consequences for security and stability in India. The extent of vulnerability however depends not just on the physical exposure to climate change and the population affected but also on the extent of economic activity of the areas and capacity to cope with impacts. Natural ecosystems such as mangroves, grasslands and coral reefs are also likely to be affected by climate change.

3.2 SOCIO-ECONOMIC EFFECTS

Not all societal effects of climate change will be negative, but a number of adverse socioeconomic impacts are anticipated for India and other parts of world. These effects include: (1) shortfalls in water for drinking and irrigation, with concomitant risks of thirst, famine and food security; (2) changes and possible declines in agricultural productivity stemming from altered temperature, rainfall, or pest patterns; (3) increased rates and geographic scope of malaria and other diseases; (4) associated shifts in economic output and trade patterns; (5) changes and possibly large shifts in human migration patterns; and (6) larger economic and human losses attributable to extreme weather events, such as hurricanes.

India's is touted to emerge as a leading global player in future. India's economy is growing at a remarkable 5-7 % per annum (the present economic recession could lower this rate), and if this trend is sustained economic projections indicate that by 2035, India would become the world's third largest economy after China and the US (DCDC, 2007). Much would however depend upon how she manages her environmental, political and demographic challenges and importantly the emerging challenge of climate change and the unexpected shocks to the economy- increasing disasters. For countries with developing economies like India, the financial setbacks disasters inflict can be ruinous, in contrast to developed counterparts, as disasters disrupt short term financial and economic management, simultaneously necessitating substantial realignment in spending plans, adjustments in economic targets and shifts in economic policy, and have negative longer term consequences for economic growth, development and poverty reduction. The adverse impact on human security would bear on national security as well. Climate change could create chronic economic problems including unemployment. Unemployed youth could take to militancy, terrorism and organized crime. It could create fresh conflicts due to environmental reasons and also aggravate the existing conflicts.

India could also face bilateral problems with neighbouring countries due to climate change reasons. For instance, a large number of environmental refugees could come to India from Bangladesh thereby altering the demographic balance in the Indian states. Migrations

could also take place from Sri Lanka, Maldives and Nepal. Water sharing issues could arise between India and China, India and Bangladesh, India and Pakistan.

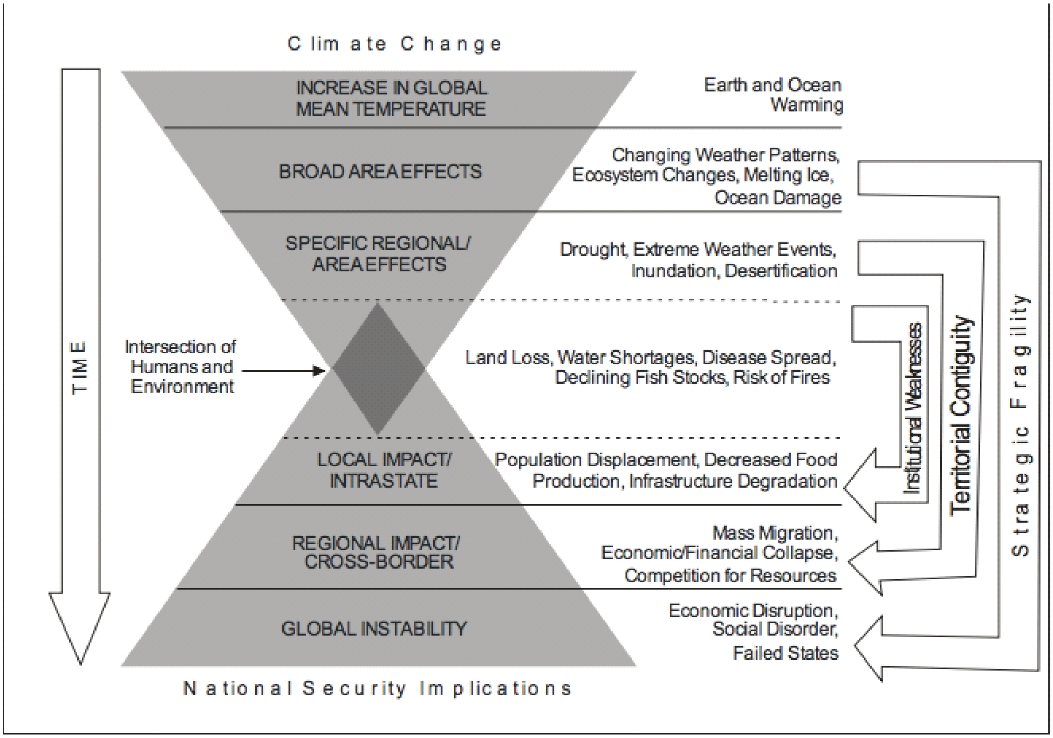

Figure 3: National Security Threats from Climate Change Continuum

(Source: Authors' modification of Maybee, 2008)

The above analysis in figure 3 demonstrates the climate change-national security nexus for a country or state. However, the connection between climate change and national security is complex, non-linear, and, at best, uncertain. Nevertheless, its implications for national security are more pronounced in states and regions of the world where environmental and natural resource challenges have added greatly to the matrix of political, socio-economic, religious, and cultural tensions threatening the survival of people and the stability or legitimacy of the nation. Thus, it is very accurate in its context for India scenario also.

4. CLIMATE CHANGE AND NATIONAL SECURITY IMPLICATIONS OF INDIA: CHANGING DYNAMICS

The relationship between climate change and security has become a subject of growing public debate and academic inquiry, leading to the outpouring of scholarly literature (Garcia, 2008; Maybee, 2008; Podesta & Ogden, 2007). States, as well as international and regional organizations, are equally engaging with issues surrounding the relationship between climate

change and security. On April 17, 2007, for instance, the United Nations Security Council held its first-ever debate on the impact of climate change on peace and security (UN Department of Public Information, 2007). This demonstrates the recognition by the international community that climate change is a serious threat to national and international security.

Global climate change, by its very nature, is a trans-national phenomenon. While its impacts will not respect political frontiers, the sources of climate-related problems and the those at risk from them might well be on different sides of national boundaries. This situation is further complicated when the boundaries themselves are unclear, contested or both. As states react to climate change issues in line with their self-interests, asymmetries in risk perceptions and the existence of unresolved inter-state disputes are likely to complicate ongoing conflicts. The following table 2 interposes the impact mechanisms of climate change against the ongoing conflict dynamics in South Asia.

Conflict system/ Impact mechanism	Glacial recession	Rising sea levels	Extreme weather	Net assessment
Jammu & Kashmir	High	-	Medium	Risk of war, motivated in part by the quest for water resources
India-China border	High	-	Medium	Risk of natural disasters in India, worsening India-China relations
Bangladesh 'ethnic invasion'	High	High	High	Risk of mass migration into India
Pakistani separatism	High	Medium	Medium	Risk of existential crisis in Pakistan, and of ethnic conflict
Sri Lankan civil war	-	High	Medium	Risk of mass migration, and of ethnic conflict
Nepal civil war	High	-	High	Risk of natural disasters and mass migration into India due to social unrest

Table 2: Impact of climate change on ongoing conflicts in the Indian subcontinent

(Source: Nitin Pai, 2008, Climate Change and National Security: Preparing India for New Conflict Scenarios)

5. STRATEGIC FRAGILITY AND BORDER CONFLICTS

5.1 INDIA-PAKISTAN STRATEGIC CONFLICTS

The Indus River system is the largest contiguous irrigation system on earth with a total area of 20 million hectares and an annual irrigation capacity of more than 12 million

hectares. The headwater of the basin is in India; thus India is the most powerful player (Chietigj Bajpaee, 2006). Currently, Pakistan, Bangladesh, and Nepal are engaged in water disputes with India. The Indus Water Treaty of 1960 settled some overarching issues, but frequent disagreements persist. (Pakistan now considers India in breach of the treaty for having caused "man-made river obstructions."). Climate change will exacerbate these tensions. Because of India's clear upper hand, Pakistan may resort to desperate measures in seeking water security. It is possible to envisage that a water deficient Pakistan will continue to adopt the proxy-war strategy in an attempt to secure a more advantageous territorial settlement. It is also possible that it might use its militant proxies to deter, threaten and sabotage water-management infrastructure in Jammu & Kashmir. Even if a bilateral consultative arrangement is in place, it is possible that an act of sabotage would trigger of events leading to another war between the two countries.

5.2 ENIGMATIC CHINA CONFLICTS

A new Great Game over water could unfold, given China's control over the source of most of Asia's major rivers—the Plateau of Tibet. Accelerated melting of glaciers and mountain snows would affect river water flows, although higher average temperatures are likely to bring more rainfall in the tropics. Tibet's water-related status in the world indeed is unique. No other area in the world is a water repository of such size, serving as a lifeline for nearly half of the global population living in southern and southeastern Asia and China. Tibet's vast glaciers, huge underground springs, and high altitude have endowed it with the world's greatest river systems. But China is now pursuing major inter-basin and inter-river water transfer projects on the Tibetan plateau, which threaten to diminish international river flows into India and other co-riparian states. China, as the upper riparian, could also decide to unilaterally divert the waters of the Himalayan rivers, particularly the Brahmaputra flowing into India. Such an act could severely affect the livelihoods of the population in Arunachal Pradesh and Assam. Brahma Chellaney warns that a mega-rerouting by China would "constitute a declaration of water war" over India and Bangladesh (Brahma Chellaney, 2007).

5.3 MASS MIGRATION AND CIVIL WARS WITH NEIGHBOURING STATES

India also faces bilateral problems with neighbouring countries due to climate change reasons. For instance, a large number of environmental refugees could come to India from Bangladesh thereby altering the demographic balance in the Indian states. Migrations could also take place from Sri Lanka, Maldives and Nepal. Rising sea levels in Sri Lanka's northern and eastern provinces could result in greater pressure on the ethnic Tamil population, leading to a range of conflict scenarios including massive ethnic killings. Similarly, the flooding and

drought could exacerbate the ethnic dimension of the Nepalese civil war resulting in mass killings. Extreme weather events such as cyclones, flash floods and unrelated natural disasters like earthquakes could precipitate the refugee crisis even more.

6. PREVENTIVE AND REMEDIAL MEASURES

The preceding analysis highlights some of the current environmental trends that offer the transmission dynamics of the security threats posed by climate change to India. Climate change is exacerbating these environmental trends and this could make existing situations of inequality, instability, and conflict in and outside the country more severe in the years ahead. Given that climate change is affecting people and communities in the country in various direct and indirect ways, the Indian government should begin to consider how best to prepare for the economic disruption, social disorder, and threats to peace and security that the climate change may trigger, sustain, or exacerbate in the country. In this astute, the following recommendations are presented:

- The security consequences of climate change should be fully integrated in the national security and national defense strategies in India to provide for proactive measures for responding to climate shocks that may come from within or outside India's territorial borders.
- Governments, at all levels (state and local), must intensify action on promoting environmental education and monitoring as key interventions strategies for mitigating and managing climate change-related disasters.
- There are needs for rapid movement across watery terrain indicates that the armed forces/paramilitary forces must be equipped and trained for amphibious operations. The integrated command headquarters could then work in collaboration with the National Disaster Management Authority (NDMA). Also, the personnel under the NDMA would need to be equipped and trained for managing refugee crises.
- India's armed forces must upgrade their capability to co-operate and inter-operate with the armed forces of other countries.
- India must consider reviewing its strategic doctrines to deter 'water wars'. India's current "no first use" nuclear doctrine threatens punitive retaliation upon a nuclear attack on Indian territories or on its forces.
- In addition to this the Indian government must begin to enforce stringent legislation for promoting environmental best practices.

7. CONCLUSION

Climate change is no respecter of persons, states, regions, or continents. The security

implications of climate change are as pervasive as they are unique in different parts of the globe. It will trigger profound global change, and these changes could pose genuine risks to international and national peace and security. Managing these changes well will require well-conceived actions within the system. Climate change could contribute to armed conflict and violence, due to inequality. Preventing large-scale humanitarian catastrophes from climate-related droughts, floods, crop failures, mass migrations, and exceptionally severe weather remains the most significant policy challenge.

UN's Intergovernmental Panel on Climate Change, in the latest report has warned, Asia is facing the brunt of climate change and will see severe stress on water resources and food-grain production in the future, increasing the risk of armed conflict among India, Pakistan, Bangladesh and China. India, like other developing economies, may lose up to 1.7% of its Gross Domestic Product (GDP) if the annual mean temperature rises by 1 degree Celsius compared to pre-industrialization level, hitting the poor the most. (Climate change may lead India to war: UN report, Vishwa Mohan, TNN | Apr 1, 2014).

To deal with these security implications, India needs to frame the concept of national security more broadly and redefine its defense planning and preparedness. Unconventional challenges from transnational terrorism to illegal refugee inflows already have become significant in India's security calculus. India also needs to build greater state capacity at federal, provincial, and local levels to tackle various contingencies and adapt to a climate change driven paradigm. Climate change holds the greatest risks for India in the agricultural sector, a sector that employs half of the Indian workforce and yet makes up just 18 percent of the GDP. The challenge of ensuring food security and social stability demands greater national investments in rural infrastructure and agriculture and also simultaneously requires finding a way to leapfrog to green technologies.

Given the uniqueness of the various parts of India, the security threat, posed by climate change, is contingent on a number of local political, socioeconomic, cultural, and demographic variables that may interact with the prevalent environmental stressor in the area.

Hence, it is crucial to introspect on how can India ease the threat that its resource constraints pose to stability? To a certain extent, its hands are tied (climate change, after all, is irreversible). However, two actionable policies come to mind. One is better integrating resource considerations into security policy and planning. India's navy, whose modernization is driven in part by the need to protect far-flung energy assets abroad, is on the right track. The other measure is for India to improve its resource governance, and to develop demand-side, conservation-based policies that better manage resources that are precious, but not yet

scarce. These actions would not eliminate India's security concerns. But they would certainly make them more manageable.

REFERENCES:

- Anonymous, 2007. Global warming 'Biggest Threats'. BBC News.
- Brahma Chellaney, April 2007. Climate Change and Security in Southern Asia: Understanding the National Security Implications, RUSI Journal, Vol. 152, No. 2. Available at: http://chellaney.spaces.live.com/blog/cns!4913C7C8A2EA4A30!254.entry, accessed on 16 January 2015.
- Brahma Chellaney, December 2007. Climate Change: A new factor in international security?, ASPI Strategy.
- Available at: http://www.aspi.org.au/htmlver/global_forces_2007/index.html. Retrieved on 17 January 2015.
- Brauch, G.H., 2002. Climate Change, Environmental Stress and Conflict, In: Federal Ministry for the Environment. Nature Conservation and Nuclear Safety, ed. Climate Change and Conflict, pp. 9-112.
- Chietigj Bajpaee, 22 August 2006. "Asia's Coming Water Wars," Power and Interest News Report.
- Climate change may lead India to war: UN report, Vishwa Mohan, TNN | Apr 1, 2014.
- Christensen, J.H., B. Hewitson et al, 2007. Regional Climate Projections, Climate Change 2007: The Physical Science Basis. Contribution of Working Group I to the Fourth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on Climate Change [Solomon, S., D. Qin, M. Manning, Z. Chen, M. Marquis, K.B. Averyt, M. Tignor and H.L. Miller (eds.)]. Cambridge University Press, Cambridge, United Kingdom and New York, NY, USA. pp 854.
- DCDC (The Development, Concepts and Doctrine Centre), 2007. The DCDC Global Strategic Trends Programme 2007-2036. Third Edition. DCDC, Shrivenham, SWINDON, UK, SN68RF. Available online at http://www.mod.uk/DefenceInternet/AboutDefence/Organisation/AgenciesOrganisations/DCDC.
- Ezirim, G.E., 2008a. Xenophobia and Citizens' Diplomacy: Call for Reassessment of Nigeria's Afrocentric Foreign Policy. International Journal of Communication, 9, pp. 267-281.
- Garcia, D., 2008. The Climate Security Divide: Bridging Human and National Security in Africa. African Security Review, 17(3).
- IPCC, Climate Change 2007: Synthesis Report. Contribution of Working Groups I, II and III to the Fourth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on Climate Change [Core Writing Team, Pachauri, R.K and Reisinger, A.(eds.)]. IPCC, Geneva, Switzerland.
- Ibid, Table SPM.1, in Summary for Policymakers.
- Lipman, W., 1943. U.S. Foreign Policy: Shield of the Republic. Little Brown: Boston, pp.123.
- Maybee, S.C., 2008. National Security and Global Climate Change. Joint Force Quarterly, 49(2), pp.98.

- McElroy, M. and Baker, D.J., 2012. Climate extremes: Recent trends with implications for national security. Harvard University Center for the Environment, pp.6-99.
- Nitin Pai, 2008. Climate Change and National Security: Preparing India for New Conflict Scenarios. Available at: file:///Users/csingh/Downloads/Climate_change_and_national_security_-_Preparing_India_for_new_conflict_scenarios-_Nitin_Pai-_April_2008-libre.pdf. Accessed on 21 January 2015.
- Okodolor, C., 2004. National Security and Foreign Policy: Towards a Review of Nigeria's Afro-Centric Policy. Nigerian Forum, 25(7-8), pp. 211.
- Parry M.L., O.F. Canziani, J.P. Palutikof and Co-Authors 2007 IPCC, 2007: 'Technical Summary'. Climate Change 2007: Impacts, Adaptation and Vulnerability. Contribution of Working Group II to the Fourth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on Climate Change, M.L. Parry, O.F. Canziani, J.P. Palutikotf, P.J. van der Linden and C.E. Hanson, Eds., Cambridge University Press, Cambridge, UK, pp. 23-78.
- Podesta, J. & Ogden, P., 2007. Global Warning: The Security Challenges of Climate Change.
- Retrieved from: http://www.americanprogress.org. Accessed on 24 January 2015.
- Solomon, S., D. Qin, M. Manning, R B Alley, T. Berntsen, N.L. Bindoff, Z. Chen, A., Chidthaisong et al., IPCC, 2007. 'Technical Summary'. In: Climate Change 2007: The Physical Science Basis. Contribution of Working Group I to the Fourth Assessment Report of the Intergovernmental Panel on Climate Change [Solomon, S.,D. Qin., M. Manning, Z. Chen, M. Marquis, K.B. Averyt, M. Tignor and H.L Miller(eds)], Cambridge University Press, Cambridge, UK and New York, USA. pp. 19-71.
- UN Framework Convention on Climate Change, 1992.
- Retrieved from: http://unfccc.int/resource/docs/convkp/conveng.pdf. Accessed on 11 January 2015.
- UN Department of Public Information, 2007. Security Council holds first-ever Debate on Impact of Climate Change on Peace, Security. 17 April.
- Retrieved from: http://www.un.org/News/Press/docs/2015/sc9000.doc.htm. Accessed on 21 January 2015.
- Wisner B. Fordhem M. Kelman L. Johnstan R.B. and Weiner D., 2007. Climate Change and Human Security. Institute for Global Communication.

■

Interaction Energy Calculation For Selected Pyridine Molecules

Shailendar Kumar Thakur*

ABSTRACT: *Some molecules of pyridine derivatives are selected for study of their liquid crystalline behavior. According to the interaction energy their phase behavior is correlated and discussed. These are very helpful to determine the molecular structure and their their synthesis for desired application for uses. The multi-center multi-pole expansion method is applied for calculation of interaction energy.*

Key Words: *mesophases, phase transition temperature, Intermolecular interaction, multicentre-multipole, GAMESS VERSION = 30 SEP 2019 (R2)*

1.0 Introduction

Liquid crystal or mesogens are having large range of application in various fields, these days have attracted the attention of scientists working in this field [1]. These mesogens are very sensitive to the external parameters. This sensitivity makes them useful in various applications such as display devices, photonic crystals, sensors, bio-medical applications etc [2-4]. There are three type of thermotropic liquid crystals Nematic, Cholesteric and Smectic Liquid crystals [5]. The molecular phase behavior and appearance of phase sequences are decided by their internal interactions [1, 2]. The study of small mass liquid crystal molecular arrangement can provide the clue about physics of self-organization processes [5].

There are many ways to control the physical properties of the molecular systems for examples to introduce various polar and non polar groups in terminal, variation in side chain in molecular systems [9]. Such a modification modifies the interaction energies of interacting molecular systems. Our aim of study is by calculating the pair interaction energies of molecules for various configurations with interaction energy terms by variation in position and orientation of molecule to examine the range of energy components that appearing in various phases. These energies are further used to analyze the phase morphology. The computation strategy

*Assistant Professor, Department of Physics, M.P.P.G. Jangal Dhushan, Gorakhpur

to calculate interaction energy at various configurations of a molecular pair and methodology are documented at other places in detail [6-8, 11].

I have selected four types of pyridine derivative molecules. These pyridine derivatives have variety of core and chain lengths. V.F. Petrove et al [9] have given a large number of 2, 5 di- substituted pyridine derived molecular systems with the variation of phase sequences here we have selected the four type of molecules 4-butyl-(5-cyclohexane)-2-methyl pyridine (Pd-1), 4-hexan-1-4-di-nitro-4-cyclohexane-1-butoxy-4-phenyl(Pd-2),4-hexane-1-nitro-4-Cyclohexene-1-butoxy-phenyl (Pd-3) and 5-hexane 1-3-di-nitro-4-phenyl-1-butoxy-phenyl (Pd-4) in bracket the short name of different compounds are given and I use these name in rest of text. These compounds are very suitable to study about physics of mesophase formation. These days the smectic phase are growing the centre of study of scientists as theses molecules are finding more suitable in new type of memories devices that are readable optically and displays with video rates [12].

These calculations generated a large amount of data that are summarized for space economy.

2.0 RESULT AND DISCUSSION

2.1 Geometry Optimization

The geometry of all the molecules are optimized with help of GAMESS VERSION = 30 SEP 2019 (R2) [10]. Geometry optimization, frequency analysis and calculation of electrostatic properties were carried out using the hybrid density functional theory B3LYP with 6-31G** basis set without any constraint and is given below with numbering scheme.

(Abbreviation: Cr-crystal phase, Sm - smetic phase N-nematic phase, I-isotropic phase.)

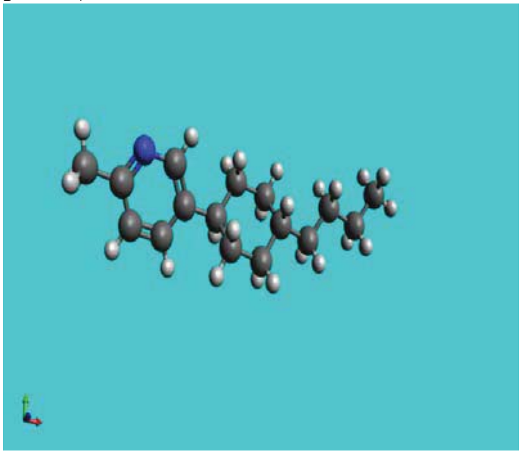

(a) Pd-1 (Cr-20°C-I)

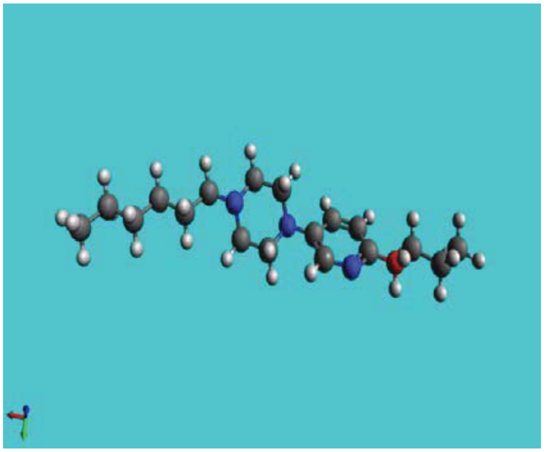

(b) Pd-2 (Cr-20.8-Sm-54.5-SmA-83.4-I)

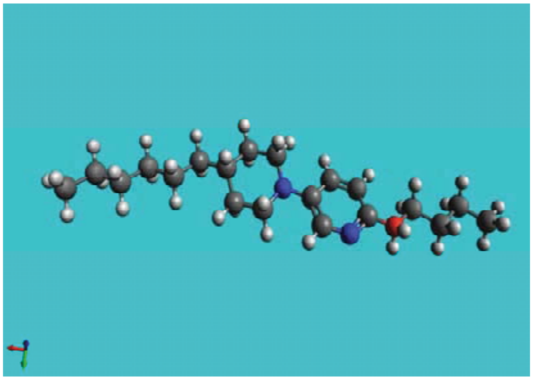

(c) Pd-3 (Cr-40.4-SmB-78-I)

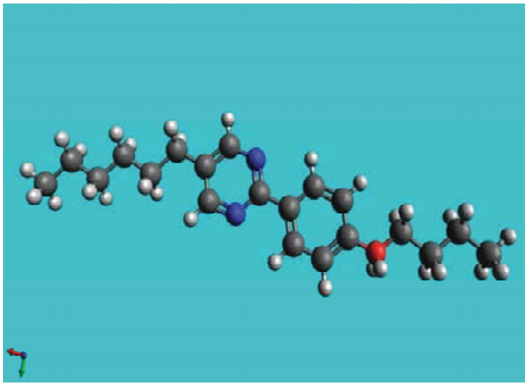

(d) Pd-4 (Cr-40.4-N-53-I)

The important bond lengths, angles and the dihedral angles are given in the following tables (table1-4) for all the studied molecules. Obviously the molecules are strongly deviated from the plane structure except Pd-4 and Pd-3 molecules.

2.2 Interaction energy calculation:

The interaction energy is given as $E_{tot} = E_{el} + E_{pol} + E_{dis} + E_{rep}$ all the energies are expressed in term of kcal/mol [11], it includes electrostatic (E_{el}), polarization (E_{pol}), dispersion (E_{dis}) and repulsion (E_{rep}) energy terms. We have tabulated the energy components of all the studied molecules. The (E_{el}) electrostatic energy terms includes monopole-monopole interaction term (E_{qq}), monopole-dipole interaction term (E_{qmi}) and dipole-dipole interaction term E_{mimi} [11].

(a) Pd-1 molecule:

Table 1. Various interaction energies (kcal/mol) of molecule Cpd-1 and their configurations.

Configurations	Eel=Eqq+Eqmi+Emimi	E=Edisp+Epol	Erep	Etot
stacking -1	1.5342	-6.752	1.3429	-3.8748
stacking -2	-8.3967	-16.0907	6.5481	-17.9394
Plane side -1	-1.3872	-9.697	2.9842	-8.1001
plane side -2	-13.7251	-17.4066	10.1477	-20.984
Terminal side-1	-2.0300	-2.744	1.4186	-3.3555
Terminal side-2	-0.9116	-2.4738	1.5823	-1.8031

The stacking configurations are parallel and anti-parallel having large energy difference. Stacking-2 and plane side-2 are anti-parallel having high energy while stacking-1 and plane

side-1 are anti-parallel with low energy (fig.-2& table1)

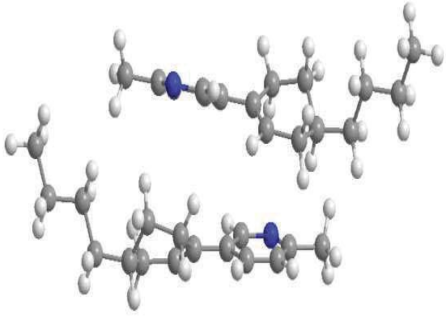

(a) Stacking-1 Configuration.

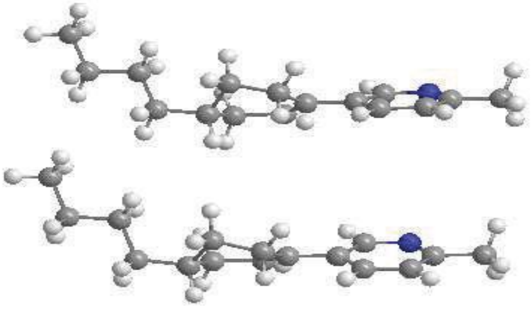

(b) Stacking-2 Configuration.

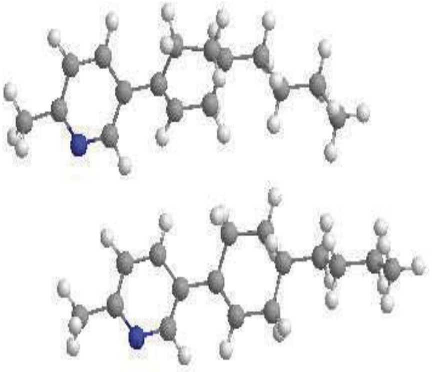

(c) Plane side-1 configuration.

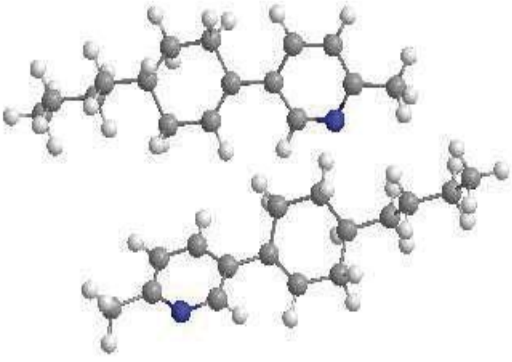

(d) Plane side-2 configuration.

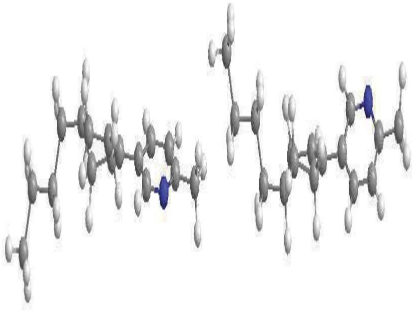

(e) Terminal side-1configuration.

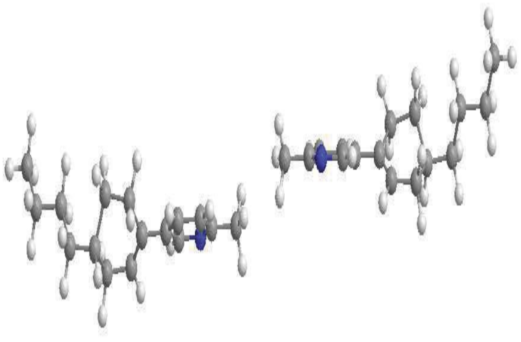

(f) Terminal side-2 configuration.

Fig 2. Various configurations for the Pd-1 molecule.

(b)Pd-2 molecule:

Table 2. Various interaction energies (kcal/mol) and their configurations for Pd-2.

Configurations	E1=Eqq+Eqmi+Emimi	E2=Epol+Edisp	Erep	Etot
Stacking-1	-4.1189	-20.0987	3.2041	-21.0135
Stacking-2	-2.5732	-20.8057	6.8744	-16.5045
Plane side-1	4.0292	-16.7434	3.3769	-9.3373
Plane side-2	-11.2397	-16.7668	2.3824	-25.6242
Terminal side-1	-4.3631	-2.9721	2.4795	-4.8557
Terminal side-2	-3.8636	-1.3931	0.602	-4.6548

The Pd-2 molecule is comparatively large than the Pd-1 molecule and having two smectic phases. In this molecule the cyclohexan ring has nitrogen substituted at the two connecting points of cyclohexane ring. The geometry of molecule is also deviated from the plane structure (fig.1 (b) & table 2).

The two stacking configurations have small energy difference that indicates the proper stacking. In plane side interaction this difference is more. One of the plane side energy is relatively high (negative) than the other stacking and plane side configuration energies (table 2). The monopole-monopole interaction energy in stacking-2 and plane side-1 is positive. Monopole-dipole interaction energies except stacking-1 are very favorable and the dipole-dipole interaction energy except stacking side-2 is positive.

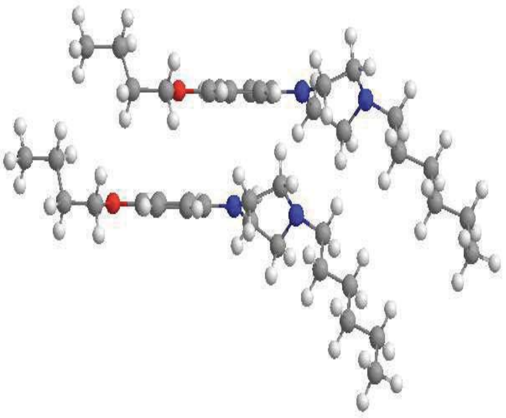

(a) Stacking-1 configuration.

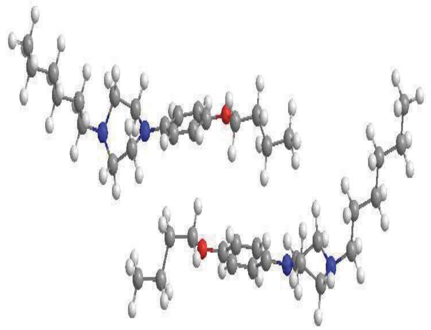

(b) Stacking-2 configuration.

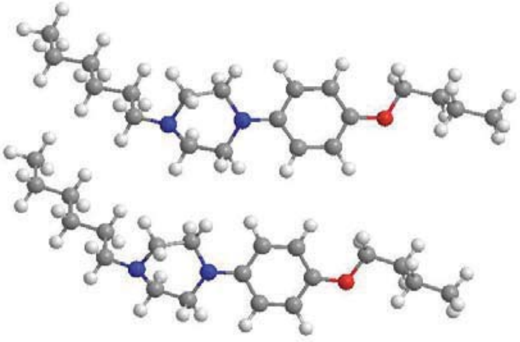

(b) Plane side-1 configuration.

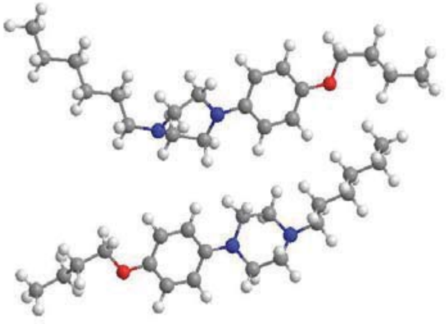

(d) Plane side-2 configuration.

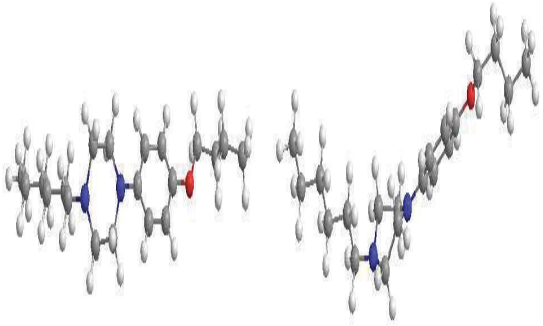

(e) Terminal side-1 configuration.

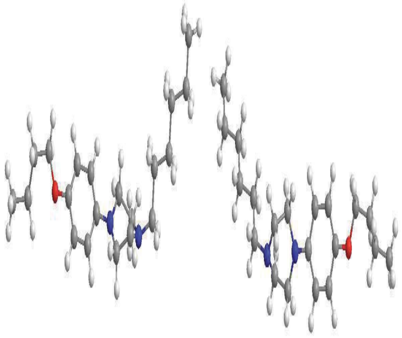

(f) Terminal side-2 configuration.

Fig.3. Various configurations for Pd-2 molecule.

(c)Pd-3 molecule

Table 3. Various interaction energies (kcal/mol) of molecule Pd-3 and their configurations.

Configurations	Eele=Eqq+Eqmi+Emimi	E2=Epol+Edisp	Erep	Etot
Stacking 1	-8.0042	-19.8182	6.5129	-21.3095
Stacking 2	-30.6716	-28.3626	8.0732	-50.9611
Plane side 1	-6.0491	-11.9636	3.2206	-14.7921
Plane side 2	-9.7109	-12.9939	2.3055	-20.3993
Terminal side 1	-3.1467	-1.1259	0.2038	-4.0688
Terminal side 2	-1.1430	-2.9610	0.9451	-3.1589

This molecule has single nitrogen in cyclohexene ring at the one of the connecting points. The nitrogen in Pd-3 is connected to phenyl-carbon while in Pd-2 molecule one of the nitrogen is providing local charge density. In Pd-3 molecule one of the stacking configuration energy is quite high. The high stacking interaction with moderate plane side interaction energy (table7 & fig.4 (b)) causes the molecule to arrange in specific way. The monopole-dipole interaction energy for all the stacking and plane side interaction is positive also in stacking-2 configuration the dipole-dipole interaction energy is positive while the monopoe-monopoe interaction energies are negative and large. These energies are long range and plays effective role for the stability and formation of mesophase. This molecule comes to smectic phase at 40°C although it cannot be directly indicated from the interaction energies. The high stacking energy indicates the formation of mesophase a bit large span of thermal temperature range.

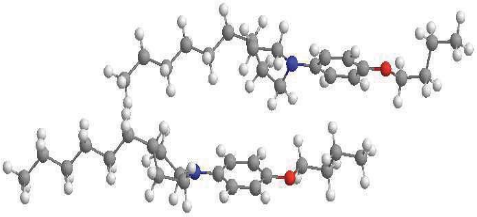

(a)Stacking-1 configuration.

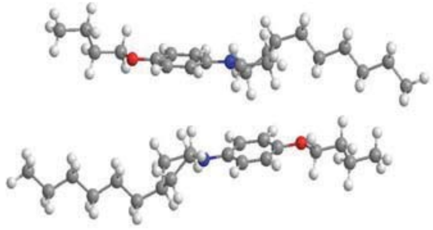

(b) Stacking-2 configuration.

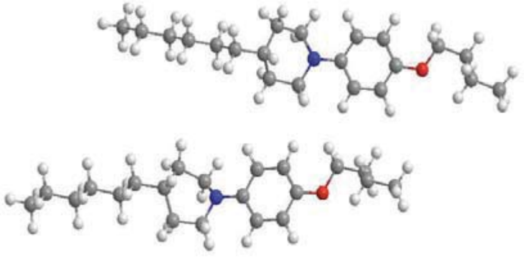

(c) Plane side-1 side configuration.

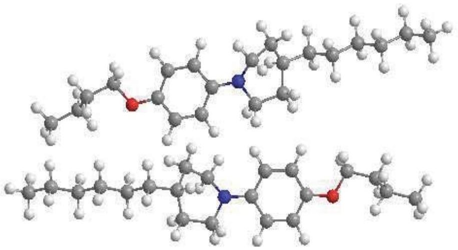

(d) Plane side-2 side configuration.

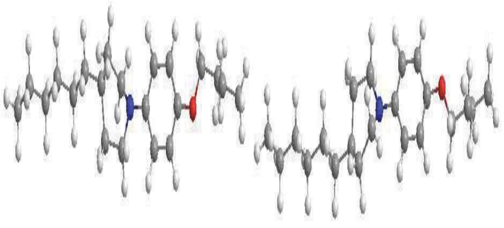

(e)Terminal side-1 configuration.

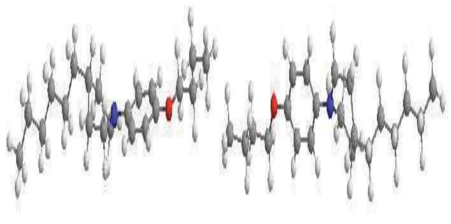

(f) Terminal side-2 configuration.

Fig.4. Various configurations for Pd-3 molecule

(d) Pd-4 molecule

Table 4. Various interaction energies (kcal/mol) of molecule Pd-4 and their configurations

Configurations	Eele=Eqq+Eqmi+Emimi	E=Epol+Edisp	Erep	Etot
Stacking 1	-5.8829	-23.6052	10.3704	-19.1176
Stacking 2	-8.4767	-24.763	10.6834	-22.5563
Plane side 1	-2.7401	-12.0103	3.8654	-10.885
Plane side 2	-4.6555	-13.1211	4.3602	-13.4165
Terminal side 1	-0.6153	-0.9214	0.1633	-1.3734
Terminal side 2	-0.1672	-1.3681	0.2775	-1.2579

This molecule is nematic. From the table 8 it is obvious that the long range interaction energy is effectively favorable. The formation of nematogen is possible only that the molecule should be in liquid state along with orientational arrangement in specimen. The electrostatic energies component monopole-dipole interactions are positive. For the nematic phase long range interactions are favorable (negative) while the monopole-dipole interactions are positive in magnitude of moderate value also the similar pattern exist in dipole-dipole interaction in this molecule. From the figure 8 it is obvious that in two stacking configurations the ring-ring overlapping each other. Also plane side the N···H interaction provide the molecular alignment along the particular direction in bulk specimen because these interactions are observed in the both of the in-plane interactions.

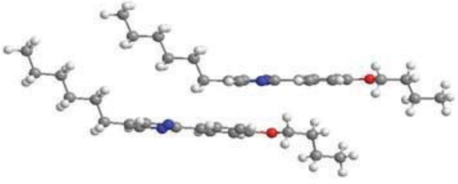

(a) Stacking-1 configuration.

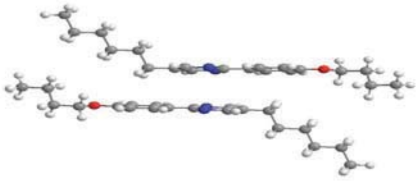

(b) Stacking-2 configuration.

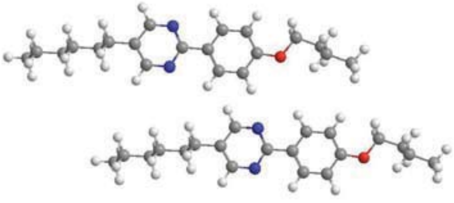

(a) Plane side-1 configuration.

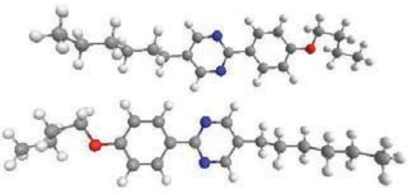

(d) Plane side-2 configuration.

(e) Terminal side-1 configuration.

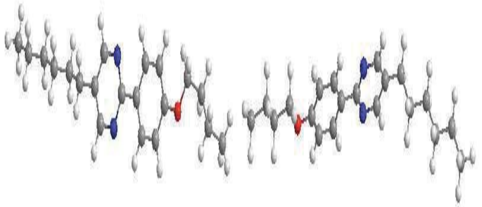

(f) Terminal side-2 configuration.

Fig.5. Various configurations for Pd-4 molecule.

In Pd-1 molecule from table 4 and figure 2 it is obvious that the stacking -2 and plane side-2 are preferred configurations at absence of thermal energy. These two orientations are parallel and anti-parallel to each other. In bulk specimen all the configurations are present. Those molecules which are in specimen having plane side-1 and stacking -1 configuration form weak interactions zone for parallel and anti-parallel orientation. For a little rise in temperature the parallel or anti-parallel orientations are disturbed. It is also supported by Eqq. Thus by the interaction energy study it is hard that molecule can form any mesophase.

In Pd-2 molecule, except one of the plane side configuration, all the other plane and stacking configurations energetically plausible to form the smectic configuration. The Eqq for configurations stacking -2 and planeside-1 is positive with large magnitude. This may be the cause that molecule has isotropic phase.

In Pd-3 molecule the stacking-2 configuration is energetically very favorable and in this interaction nitrogen from one of the molecule and ring of another molecule is interacting together. It is preferred configuration present in crystal and smectic-B phase. Eqq in plane side and stacking configurations is negative and Eqmi is positive and magnitude is a bit large. Presence energetic cause of nematic phase in this molecule is very small.

In Pd-4 molecule all the plane side and stacking configurations Eqq is negative and Eqmi is positive in one configuration it's magnitude is moderate. This molecule has proper ring-ring interaction. The presence of two nitrogen in ring provides extra stability for ring – ring interactions. So the nematic phase is present here.

Table 5. Comparison of various energy (kcal/mol) and molecule phase sequences.

Compound (phase transition temperature)	Electrostatic	Short range repulsion energy	Polarization and dispersion energy
Pd-1(Cr-20°C-I)	-24.91	24.02	-55.1641
Pd-2(Cr20.8-Sm54.5-SmA-83.4-I	-22.129	18.9193	-98.179
Pd-3 (Cr-40-SmB-78-I)	-58.7251	21.2611	-77.1472
Pd-4(Cr-40-N-53-I)	-22.5377	29.7202	-75.786

In table 5 I have summarized the electrostatic, short range repulsion and short range attraction energy for all the molecules. In nematic phase the value of short range repulsion terms is higher than the electrostatic long range attraction term. In isotropic and the smectic phase the electrostatic attraction energy high than the repulsion energy. While in all the cases dispersion energy plays dominant role. For small molecule the dispersion interaction are weak and unlikely to form ordered phase at room temperature. At distance of 3 to 4 of inter molecular separation the dispersive attraction energy in between two large molecules is fairly large than kT (k is Boltzmann constant and T is absolute temperature) at room temperature so the molecule can be in a condensed phase due to London dispersion force. In the entire studied molecule the dispersion plays dominant role but itself this force cannot distinguish the formation of different phases.

The short range repulsive forces originated from the Pauli exclusion force, when the electron cloud of two molecule approaches each other too closely. In properly stacked molecule where the electron–electron interactions are feasible this interaction is high and creates the fluctuation. The dispersion forces are also created by correlation of fluctuating dipole formed by motion of electron around nucleus so these two forces creates an fluctuating environment and causing the nematic flow. In studied nematic phase molecular interaction energy is appearing in this way (table 5) it may not be case for all nematic phase but there should be a particular span of short range repulsion and long range attraction energy in which molecule have the behavior of nematic phase. Strong electrostatic attraction ceases the fluctuation. This is observed in the case of Pd-2 and Pd-3 molecules. In the case of Pd-1 the attractive force is slightly grater than the repulsive force so here the fluctuation is present due to dispersion and short range repulsion interactions in less strength but overall the condense phase environment dominant due to mild dispersion energy. The dispersion energy is comparatively small in magnitude with respect to all other molecule studied here. Due to less strength of dispersion energy (I have discuss the causes of not formation of alignment of molecular system in this case above) molecular alignment is not favored. Thus the phase remains liquid and order is not maintained.

In the case of two interacting molecules (have various sites of active atoms) if there are many local strong interactions are available then the molecular alignment is strong and interaction formed the stacked layered structure. In this case the smectic phases are more likely. Although in all the smectic phases this type of interaction need not to be present. The strong attractive (dispersion) interaction is sufficient to form the case of smectic phase. In the studied case the two molecules Pd-2 and Pd-3 are forming smectic phase the attractive interaction (long range and short range) are dominant and do not casus the intermolecular fluctuation up to permissible level to form the nematic flow.

2.0 Conclusion

All the selected molecules are pyridine derivatives. In non-mesogenic molecule the asymmetry of interaction energy is major deciding factor in the studied case. In nematic phase the positive contribution of short range forces is greater than the electrostatic attraction energy and the contribution of dispersion energy range plays very crucial role. In smectic and nematic phase the attractive and dispersion energies are important factor. Thus the electrostatic interaction along with the short range energy components is the deciding factor for mesophase formation For any pair of molecular configuration interaction the , or is positive then the stability of perfect stacking or plane side interaction become weak. The further investigation on other molecular systems is required to know the better insight as how the interactions are deciding the phase of a molecule and phase morphology with in a molecular system.

References:

[1] Georgiy V. Tkachenko, (editor) *New Developments in Liquid Crystals* I-Tech, Vienna, Austria,2009.

[2] Maurice Kleman and Oleg D. Laverntovich, *Soft matter physics: An introduction*, Springer-verlag New York, Ch.-2 (2003) 61-66.

[3] Rolando Ferrini, Liquid Crystals into Planar Photonic Crystals, *New Developments in Liquid Crystals* edited by Georgiy V. Tkachenko, I-Tech, Vienna, Austria, 2009.

[4] Gerardo A. López Muñoz and Gerardo, A. Valentino OrozcoThree Dimensional Temperature Distribution analysis of Ultrasound Therapy Equipments Using Thermochromic Liquid Crystal Films in *New Developments in Liquid Crystals* edited by Georgiy V. Tkachenko, I-Tech, Vienna, Austria, 2009.

[5] P.G. de Gannes, J.Prost, Physics of Liquid Crystals, 2nd, Oxford University PressOxford (1993) 5-20, 512-517.

[6] M.Roychoudhury, S.K.Thakur, *mol.cryst.liq.cryst.* 548 (2011) 192–208.

[7] M.Roychoudhury, S.K.Thakur, Pankaj Gaurav, *J. Molecular Liquids*, 161 (2011)55-62.

[8] S.K.Thakur and M.Roychoudhury, *Mol.Cryst.Liq.Cryst. in press* P.ID."LM144"

[9] V.F. Petrove and A.I. Pavluchenko, *Mol.Cryst.Liq.Cryst.* 383 (2002) 63-79.

[10] GAMESS VERSION = 30 SEP 2019 (R2) "General Atomic and Molecular Electronic Structure System" M.W.Schmidt, K.K.Baldridge, J.A.Boatz, S.T.Elbert, M.S.Gordon, J.H.Jensen, S.Koseki, N.Matsunaga, K.A.Nguyen, S.J.Su, T.L.Windus, M.Dupuis,

J.A.Montgomery J.Comput.Chem. 14, 1347-1363(1993) doi:10.1002/jcc.540141112"Advances in electronic structure theory: GAMESS a decade later" M.S.Gordon, M.W.Schmidt Chapter 41, pp 1167-1189, in"Theory and Applications of Computational Chemistry, the first forty years" C.E.Dykstra, G.Frenking, K.S.Kim, G.E.Scuseria, editors Elsevier, Amsterdam, 2005.

[11] P.Claverie, Elaborations of approximate Formulas for Interactions Between Large Molecules: Applications in Organic Chemistry in *Inter Molecular Interactions From Diatomic to Biopolymers,* B.Pullman (eds.), J. Wiley & Sons Ltd., (1978) 217-226.

[12] Iam-Choon Khoo *Liquid Crystals, Second Edition* (2007) John Wiley & Sons, Inc. 221.

■

Sanskrit Women Poetesses : A Glimpse

V. Ramanathan*

ABSTRACT: *The civilizational state Bhârata has had a long intellectual tradition. Composing poetry is considered to be a strong indicator of a sharp intellect. A society that is in war or a nomadic society or a society that has no patrons for art cannot produce poetry. This is something common for different civilizations that have existed on the face of this earth. Our country is indeed unique as the intellectual tradition has been held high by scholars drawn from both the genders. Right from the Vedic times, contribution by the women in all aspects of intellectual engagement is well known and documented. Poetry too bears umpteen insignia of women's contribution.*

Key-words: *Civilization, Vedic times, Intellectual engagement, Contribution, Madhuravadi, Nilotpal.*

The civilizational state *Bharata* has had a long intellectual tradition. Composing poetry is considered to be a strong indicator of a sharp intellect. A society that is in war or a nomadic society or a society that has no patrons for art cannot produce poetry. This is something common for different civilizations that have existed on the face of this earth. Our country is indeed unique as the intellectual tradition has been held high by scholars drawn from both the genders. Right from the Vedic times, contribution by the women in all aspects of intellectual engagement is well known and documented. Poetry too bears umpteen insignia of women's contribution.

Although women's contribution in Indian languages other than Sanskrit is very well known, in this paper a brief glimpse of few Sanskrit poetesses is presented. The objective of this paper is only to give a very brief flavor of these poetesses, their work. By no means this is aimed to give an extensive or comprehensive account for which the readers are requested to refer to the scholarly works by renownedSanskritists like Prof. V.Raghavan, Prof. J. B. Chudhury and Prof.SrikanthaSastri [1-4].

* Department of Chemistry, IIT (BHU), Varanasi - 221005 (U.P.), युगपुरूष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की 51वीं एवं राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज की 6ठवीं पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित सप्त दिवसीय व्याख्यान माला के छठवें दिन (22 अगस्त 2020) दिया गया व्याख्यान

It must be mentioned that there have been several popular names like *MiraBai* from Rajasthan, *LalDed* or *Lalleshwari* from the region of Kashmir, *Agal* from Tamil Nadu and *Akka Mahadevi* from Karnataka all of them have been very popular for their poems in their respective languages. In this paper a glimpse is presented of those poetesses who wrote in Sanskrit.

It must also be mentioned that in the last few decades (post 1950s) there have been a renewed interests in these poetesses. Although it is a welcome gesture to renew interests in these poetesses but in the literature we often find them being scrutinized through the western sociological lens of modernism, post modernism and feminism. In the true tradition of intellectual freedom there is of course no taboo for such research but at times they appear to be agenda driven rather than an expository work [5-8]. Analysis in these lines or rebutting the feminist analysis, although important, is avoided here as it is beyond the scope and expertise of this author.

In this paper I will be introducingVijjika,Vikamitanimba, MadhuravaGiMangalamba, and Accamma along with a brief account of their life and few of their works as an illustration.

Vijjika

She was discovered in a very mysterious manner. In the1920s one scholar named *Ramakrishna Kavi* published for the first time a play titled *Kaumudimhotsava* and the portion which mentioned the author was eaten by the worms. So there was a long debate amongst scholar as to who was its author [9,10] and finally it was concluded that *Vijjika* was the author. She is known by several other names like *Vidyâka, Vijja, Vija, Vijjaka, Vijayakâ, Vijjaka(ka), Bijjaka(ka), Bijjaka, Bijaka, Bijjika, Vijjaka, Vijjaka, Bijaka*. It has been estimated she lived somewhere between 7th and 9th century in the current era. There are some 38 poems that are attributed to her. She is known for her boldness and frankness with which she has dealt several themes with seamless ease. One of the popular verses of *Vijjika* is the following:

नीलोत्पलदलश्यामाम्विज्जिकाम्मामजानता
वृथैवदण्डिनाप्रोक्तासर्शुक्लासरस्वती

Nilotpalauyamamvijjikammamajanata

VrthaivadaGinaproktasarshuklasarasvati

Meaning: "Unbeknownst of me Vijjika, the one with a complexion like that of a blue lily, DaGî has called Sarasvati as the one who is wholly white."

This one verse is enough to demonstrate the braveness of *Vijjika* to have composed such a retort to a giant like *Dandi* who has been certified as a great poet by none other than

goddess *Sarasvati* herself (in a lore that has come to us through generations, there was once a competition to select the best poet where goddess *Sarasvati* herself was the judge. At the end of the competition, she pronounced the verdict कविर्दण्डि कविर्दण्डि कविर्दण्डि न संशयः : meaning there is no poet greater than *Dandi* himself). And in one of his composition, *Dandi* paid his obeisance to goddess *Saraswati* by calling her 'सर्शुक्लासरस्वती' (*sarshuklasarasvati*) which has angered *Vijjika* and she composed the above poem.

Her mastery of the language can be gauged by looking at the way she has described nature so vividly in her work Kaumudîmahotsava. In this work, she says:

केनापिचम्पकतरोबतरापितोअसि
कुयामपामरजनांतिकवातिकायाम्
यत्रप्ररूढनवशाकविवृद्धलोभात्
भोभग्नवाटघटनोचितपल्लवोअसि

kenapicampakatarobatarapito'si

kugramapamarajanantikavamikayam |

yatrapraruhanavauakavivrddhalobhad

bhobhagnavamaghamanocitapallavo'si ||

Meaning: "Oh Campaka Tree, by whom where you planted in a little garden in the vicinity of wicked people of a vile village? Oh! Where, from greed that has increased by a newly born branch, you are a sprout that is suited with the exertion of a fractured fig tree." (Translation taken from Ref. 11)

In another place she captures the beauty of nature in the following words:

उन्निद्रकोकनदरेणुपिषांगितांगा
गायंतिमंजुमधुपाद्यगृहदीर्धिकासु
एतत्चकास्तिचरवेर्णवबंधुजीव
पुष्पच्छदाभमूउदयाचलचुम्बिबिम्बम्

unnidrakokanadareGupiuaEgitaEga

gayantimanjumadhupagrhadirghikasu|

etaccakastica raver navabandhujiva

pucpacchadabhamudayacalacumbibimbam||

Meaning: The bees, whose bodies are dyed saffron by the pollen of the full-blown red waterlilies, hummed sweetly in the long, oblong pond that is home. And that disk of the

sun—that kisser of the Udayamountains who is beautiful like a collection of blossoms of the new Midday Flower—shone. (Translation fromRef 11)

As said before, there are 38 poems attributed to *Vijjika* and above were only a glimpse to show her mastery of the language. In *Vijjika* we definitely see the courage and conviction with which she has created her works, free from any kind of stigma associated with her gender. The fact that her work has survived the test of time also shows the manner in which the society not only accommodated such poetesses but also encouraged them.

Vikamitanimba

She belonged to the *Pravarapura* region of Kashmir and lived around 7th century CE. She was the daughter of one *Bahama*, another great Sanskrit scholar. Her name's literal meaning is 'the one with broad hip' which indicates that she must have been a courtesan. Many great poets like *Rudrama, Vamana, Bhoja, Ruyyaka, Jalhanda, UarEgadhara* and *Rajashekhara* have paid richtributes to this poet. There is an interesting episode associated with her life that has come down to us through another aesthetician *Namisadhu*. *Vikamitanimba* was the prime student of the well-known grammarian *Govindaswami*. Even though she was copiously blessed with the art of language, her personal life was filled with sorrows. Contrary to her prowess in Sanskrit, through twisted fate, she was married off to an imbecile who was thick tongued and could not pronounce the words correctly. *Namisadhu* records this in his commentary of *Rudrama's* work called *Kâvyamala* in the following verse:

कालेमाषम्सस्येमासम्वदतिशकासमयस्यसकाशम्
उष्ट्रेलुम्पतिषम्वारम्वातस्मैदत्ताविकटितनिम्बा

Kalemacamsasyemasamvadatisakasamyasyasakasam

UstrelumpaticamvaratvaatasmaidattaVikamitanimba

Meaning:"He juxtaposes 'ca' and 'sa' whereby pronounces mâcam wrongly for 'month' and 'mâsam' wrongly for 'pulses.' Further he confuses 'úa' for 'sa' and wrongly says 'úakâsam' for 'sakâúam.' He has absolute trouble in getting the pronunciation of co-joined consontants in words like 'ucmra' as it is not sure whether he will drop the half consonant 'ca' or the other half consonant 'ra'and ends up pronouncing either 'umra' or 'ucma.' It is indeed to such an imbecile that the illustrious Vikamitanimbâ was given in marriage."

This verse captures two sentiments in itself. First, a ridicule on the person who is unable to pronounce the consonants correctly. Secondly, it narrates the disproportionate agony faced by *Vikamitanimba* as she was married to someone who was absolutely of no match to her dexterity with language.

As said earlier too, fate was harsh to *Vikamitanimba* as she did not have a normal

happy life. She could not stay longer with her husband and hence ran out of the house and the wedlock. She reached the city of *Kasi* and ended up getting shelter in prostitute's house. Her father, worrying about her whereabouts and he too reached *Kasi* and was further pained to see her in a prostitute's house. He was indeed crestfallen and in order to console him, *Vikamitanimba* composed the following verse spontaneously:

तातबाहटमारोदीरेषावैकर्मणोगतिः
दुविधातोरिवस्माकम्गुणोदोषायकल्प्यते

TataBahtmarodiraicavaikarmanogatih

Duvidhatorivasmakamgunodocayakalpyate

Meaning: "Oh father Bâhama, please do not weep. All these are the consequences of fate. Our fate is just like the 'Duc' dhatu that gets converted to 'Doca' by virtue of 'Doda'."

Like the previous one, this too is a power packed verse as it encloses several layers of complexity and dimensions of *Vikamitanimba*'s personality. The gist of this verse is clear that she is consoling her father. But the metaphor that she uses to console is not only remarkable but also exhibits her erudition in *Panini* grammar. The root verb '*Duc*' gets converted to '*Doca*' as a consequence of a *Paniniansutra* 7.3.86 due to its '*Guda*.' Besides the display of her scholarship, her maturity and emotional equipoise is also amply displayed here for she, despite being the daughter and hence younger, takes in the role of consoling her own father. No wonder poetries of utmost eloquence have flown through such lofty mind.

Madhuravadi

Madhuravadi was one of the brilliant scholars in the grand court of *RaghunathaBhupa* (1600-1634 CE), the king of Thanjavur. She is also referred by the name *Sukhavadi*. It is surmised that both these names were not her original ones; rather they were bestowed unto her owing to her scholarship and melodious voice. She belonged to the *devadasi* lineage. She was a scholar par excellence who commanded respect from her contemporaries like *YajnanarayanaDixita*, *RajacuamaniDikshita*, *Venkamamakhi* etc. and the king honored her with a '*kanakabhiueka*' (showering with gold coins, gold flowers etc.).She had acquired mastery over several fields of knowledge. She was an *Asukavayitri* who could compose 100 verses in just *ardhaghamika* (12 minutes). She could engage in scholarly discussions while simultaneously playing music in the *vina*.

Although she belonged to Mysore and stayed in Thanjavur, she was at ease with six languages and was a *uatavadhani* (*Avadhana* is the art of concentration and simultaneously engaging with verbal gymnastics with people around. A *uatavadhani* engages simultaneously with 100 people at a time). It is indeed unfortunate that not all her works are available today.

She is credited with composing *Ramayana* called *Nriramayanakavyasaratilakam* which is the adaptation of the *AndhraRamayana* written by the king *RaghunathaBhupa* himself. Among her lost works are *Naisadha* which is an adaptation of *Sriharsa'aNaisadhiyaCarita*and *Kumarasambhava Kavya* in Telugu which is a rehash of the famous Sanskrit play by *Kalidasa*. She was adept in inventing new metres to suit the narration.

She has used exquisite language to describe the nature, the city of Ayodhya, various seasons and the different forests and mountains in her *Sriramayanakavyasaratilakam*. She has also made use of various *alankara* in her composition. The following verse show how she has handled *upama*, the ornamentation of comparison:

सख्यावतासार्वपथीनधीभिसन्शोधिताचेत्कवितासभायाम्
कस्तूरिकाचंदनकुंकुमाद्यैरउद्वर्तितांगीयुवतीवदिव्येत्

Sakhyavatasarvapathinadhibhisanshodhitacetkavitasabhabhayam

Kasturikachandanakumkumadyairudvartitangiyuvativadivyet

Meaning: "If poetry is critically examined by scholars who are well versed in all sastra it will shine forth in the court of the learned like a young lady having a charming complexion due to the application of musk, sandal-paste, Kumkurn etc."

In another place *Madhuravani* uses the *ullekhaalankara* where one object is compared to many things in order to convey the multiple roles that object plays or the multiple manners in which that object functions. In the following verse, the *Yupastambha* or the sacrificial pole erected in Ayodhya is described by the poetess in the following manner:

तोत्रायितादुष्कृतकुञ्जराणांकूटायितापुण्यकुलाचलानाम्
शाखायिताप्राक्तनवाक्तराणाम्यज्ञार्पितायाविभातियूप

Totrayitaduckrtakunjaranamkutayitapunyakulacalanam

Sakhayitapraktanavaktaranamyajnarpitayavibhatiyupa

Meaning: "The Yupastambha erected at the sacrificial ground in Ayodhya shone llke (i) Ankusa which kills the elephants (ii) Summit of sacred mountains and (iii) the branches of the vedic tree"

Given that *Madhuravani*was a *satavadhani*, solving cryptic puzzles was something that came quite natural to her. One such example is the cryptic puzzle posed to her the court which was: '*kimtesantanapadapayante*' **'किमतेसंतानपादपायंते'** along with the additional constraint that she must use only the seven letters which occur in the phrase itself, ie., '*ka-ta-sa-na-pa-da-ya*.' *Madhuravani* came up with a solution immediately and composed the

following verse:

कतिकतिनकुसत्पय:किम्तेतुकदापिनायकायंत
कौपादपास्तुसंत्यपिकिम्तेसंतानपादपायंते

Kati katinakusatpaya:kimtetukadapinayakayante

Kaupadapastusantyapikimtesantanapadapayante

Meaning:"Are there not several kings here? Yet none can match (Raghunatha) Nayaka

Even though there are several trees on this earth, can they ever match the glory of the divine Santâna tree that adorns the heavens?" (Translation taken from Ref 12)

She not only solved the cryptic puzzle but also produced a eulogy for the king.

Mangalamba and Accamma

Mangalamba and *Accamma* are mother and daughter and they belong to a scholarly family where almost every member excelled in their own volition. *Mangalamba*was the wife of one *RatnakhemaSrinivasaDiksita* who was an *Avadhani* himself and was adept in 6 languages. They had a son by name *RajacumaniDiksita* who was also a renowned scholar. He authored many poems, plays, a few treatises on poetics and philosophy and a long poem titled, '*RukminiKalyanam*.'

RatnakhemaSrinivasaDiksita and *Mangalamba* had a daughter named *Accamma* who was also proficient in Sanskrit and adept in composing poetry in an extempore manner. *Accamma* was given in marriage to another giant in the field of Sanskrit and *Siva-advaita* philosophy, Sri*AppayyaDiksita*.

It was a usual feat during their time for scholars to visit their house uninformed and demand to debate with *RatnakhemaSrinivasaDiksita* and eventually face defeat. Once when *Accamma* was cleaning the front-yard of their house she noticed that a group of men had come to their doorstepand were apparently not aware of the prowess of her father. She did not let go of this rendezvous to impress upon them the might of her father. Hence she spontaneously composed the following verse and used a metre that was aligned with her act of cleaning the front-yard of the house (the pace of sprinkling water).

विपश्चितामपश्चिमेविवादकेलिनिश्चले
सपत्नजित्ययत्नतः तुरत्नखेटदीक्षिते
बृहस्पतिः क्वजल्पतिक्वसर्पतीहसर्पराट्
असंमुखस्तुषणमुखश्चतुर्मुखोऽपिदुर्मुखः

Vipaschitamapaschimevivadakelinischale

Sapatnajityayatnata:turatnakhemadiksite

Brhaspati:kvajalpatikvasarpatihasarparat

Asammukhastucanmukhaschaturmukhopidurmukhah

Meaning:”He (RatnakhemaSrinivasaDikshita) is unshakeable and invincible in debates. Even the mighty Brahaspati fears to debate because when the debate commences, Brahaspati starts blabbering and even the mighty Adisesa (Patanjali) too bites dust and quickly withdraws to his burrows, the six faced baEmukha cannot stand in front and the four faced Brahma too gets disfigured in front of my father RatnakhemaSrinivasaDikshita.” (Translation taken from Ref 12)

Accamma’s brilliance can be gauged through another verse which too she composed impromptu. Her father felt something unusual outside the house and hence asked his daughter, *Accamma* to peep out and find out what was going on. Dutifully *Accamma* went out and on her return composed the following verse in *Sikharini*metre as a response to her father:

तुरुष्कोनिष्काशीतुरगखुरकुद्दालदलितः
क्षमाधूलीपालीचलुकितचतुस्सिन्धुसलिलः
स्वदोर्लीलाभग्नप्रतिभटवधूटीपरिकरः
प्रतस्थेकार्तान्तीम्दिशमितिहिवार्तासमजनि

Turuckonickasituragakhurakuddaladalitah

Ksamadhulipalicalukitacatussindhusalilah

Svadorlilabhagnapratibhamavadhumiparikarah

Pratasthekartamtimdisamitihivartasamajani

Meaning: “The Muslim king of the northern province, out of his greed for money, has made his cavalry raise dust from the earth, which has turned the waters of the sea muddy. He has even emptied the seas, reducing them to just a fistful of water with his mighty shoulders he has snatched away honour from his enemies’ wives. It is heard that he is now advancing towards the Southern direction and hence this commotion.”(Translation taken from Ref 12)

If this was *Accamma*, her mother *Mangalamba* was no less. I conclude this brief essay by quoting one of her compositions that would suffice to give us a glimpse of her scholarship. *Mangalamba* was a regular member in scholarly debates called *vakyarthavidvatsabha*. During one such scheduled debate, she appeared late to the assembly. Her husband, *RatnakhemaSrinivasaDiksita*, questioned her on the reason for her delay. *Mangalamba* composed the following verse in *Sragdhara*metre instantaneously in response to her husband’s query:

वेणीभूतेषुकेशेष्वतसिफणिधियाद्रष्टुमागत्यकेकी

पश्चादारभ्ययोद्धुम्प्रतिशिखिमनसातेषुविस्रम्सितेषु
भूयोधमिल्लितेषुप्रकटघनधियानर्तनायोज्जजृम्भे
तन्नृत्तालोकनाम्नेप्रियसखममभूमण्डनश्रीविलम्बः

Venibhutecukesenvatasiphanidhiyadracmumagatyakeki
paucadarabhyayoddhumpratisikhimanasatecuvisramsitecu
bhuyodhamillitecuprakamaghanadhiyanartanayojjajrmbhe
tannrttalokanamnepriyasakhamama bhunmaGanaurivilambah

Meaning: "While I was getting ready to attend this debate, a peacock mistook my braided hair for a black snake and rushed to grab it. I got scared and unbraided my hair, which the peacock mistook for a rival peacock and got ready for a fight. I started braiding my hair again and this time the peacock mistook it for dark clouds and started dancing. I got late watching it dance while I was getting ready."(Translation taken from Ref 12)

The above excerpts from the works of these poetesses give us enough indication about the sociopolitical milieu in which the ancestors of *Bhârata* lived and honed their intellectual skills. With these examples, it would indeed be very wrong to say that Indians did not allow women to advance in the field of intellectual engagement or were kept away from education. There are more such women poetesses in literature and it is my ardent request to the enthused reader to refer the scholarly words in the bibliography and explore furthermore.

References:

1) V. Raghavan, 1958, *The Indian heritage: an anthology of Sanskrit literature* **(2nd rev. enl. ed.). Bangalore: The Indian Institute of World Culture.**

2) Chaudhuri, Jatindra B. and Roma Chaudhuri. 1939*Sanskrit Poetesses: Part A (Select Verses); With aSupplement on Prakrit Poetesses*, The Contribution of Women to Sanskrit Literature (Vol. 2). Calcutta

3) Chaudhuri, Jatindra B. 1943 *The Camatkâra-taraEgiGî of Sundarî and Kamalâ; and thePrâGapraticmhâ of their husband Ghanaúýâma; commentaries on the Viddhaúâlabhañjikâof Râjaúekhara*, The Contribution of Women to Sanskrit Literature (Vol.1) Calcutta Oriental Press.

4) Sastri, S. Srikantha.1942 "Some Forgotten Sanskrit Poets of KarGâmaka." *Annals of the BhandarkarOriental Research Institute* 23 no.1/4: 415-423.

5) Shah, Shalini.2008 "Poetesses in Classical Sanskrit Literature: 7th to 13th Centuries CE" *IndianJournal of Gender Studies* 15, no.1: 1-27.

6) Shah, Shalini. 2009*Love, Eroticism, and Female Sexuality in Classical Sanskrit Literature: Seventh-Thirteenth Century*. New Delhi: Manohar Publishers & Distributors.

7) Selby, Martha Ann. 1991 "Desire in the Language of Desire." *Indian Literature* 34, no.1: 89-109.

8) Tharu, Susie and Ke, Lalita, editors. 1991*Women Writing in India: 600 B.C. to the present* (Vol.

1).New York: The Feminist Press at the City University of New York.

9) Dasgupta, S.N. 1947ed. *A History of Sanskrit Literature: Classical Period* (Vol. 1.). Calcutta: Calcutta, University Press.

10) Sternbach, Ludwik. 1974*Subhasita, Gnomic and Didactic literature*. Wiesbaden: Otto Harrassowitz.

11) Kathryn Marie Sloane Geddes 2018, Voices from the Margins: Aesthetics, Subjectivity, and Classical Sanskrit Women Poets**;** MASTER OF ARTS thesis submitted to THE facultyof graduate and postdoctoral studies (Asian Studies) The University Of British Columbia(Vancouver)

12) Úatâvadhâni Dr. R. Ganesh 2019, Stories Behind Verses, Published by PrekshaPratishthana, Bangalore (English Adaptation by Arjunbharadwaj and B. N. ShashiKiran)

■

Helicopter Money - A Fiscal Stimulus

Dr. Rahul Mishra*

ABSTRACT : *With no quick escape in sight for COVID-ravaged economies, authorities the world over are going back to the drawing board to find strategies to deal with this nightmare. One such strategy doing the rounds is 'helicopter money'. It basically means non-repayable money transfer from the Central bank to the government. It seeks to goad people into spending more and thereby boost the sagging economy.*

Key-words: *Helicopter Money, optimum, dumping money, currency.*

Introduction

In the economic world, a buzz word naming 'helicopter money' is in discussion over since last decade. Recently the economic crisis created due to corona virus pandemic all over the world, this term is being analyzed more seriously by different authorities as a policy tool to inject cash into the economy and combat fiscal crisis arising due to such phenomenal situation.

Well known American Economist and a Noble Laureate, Milton Friedman first introduced the concept of 'helicopter money' in his book "The Optimum Quantity of Money" in the year 1969. This coined term basically denotes a helicopter dropping money from the sky, but it is not so…then what is it? – Just imagine; one day you get up in the morning and see a message in your mobile that your bank account is being credited with some extra sum of money, then what will happen? Although it is an imaginary situation, rather it is quite possible through helicopter money. Friedman used the term to signify 'unexpectedly dumping money onto a struggling economy; with an intention to shock it out of a deep slump.' Although this particular term was propounded in 1969, but it was popularized by Ben Bernanake, (Ex-Chief of American Federal Reserve) in his speech given in the year 2002.

Generally, helicopter money is the term used for a large sum of new money in the

* Assistent Professor - Department of Commerce, M.P.P.G. College Jungle Dhusan, Gorakhpur

form of extra currency that is printed and distributed among the public, to stimulate the economy during a recession or a period when interest rates fall to zero. It is also referred to as a helicopter drop, in reference to a helicopter scattering supplies from the sky. Basically, helicopter money is directly given to consumers by the concerned government. The objective behind this is that people spend more and more so that economy can restrengthen. As purchasing power of the consumers rises, it results in increasing demand and thus strengthens the economy at large.

Helicopter money is an unconventional monetary policy tool aimed at bringing a flagging economy back on the track. It involves printing large sums of money and distributing it among the general public to stimulate the economic growth. Under such a policy a Central Bank directly increase the money supply and, via the government distribute the new cash to the population with the aim of boosting demand and inflation. The basic principle behind helicopter money is that, the central banks want to increase inflation and output. Therefore, this assumption implied that the influx of money in the economy will be used to purchase goods and services.

Difference between Helicopter Money and Quantitative Easing

Helicopter money should not be confused with quantitative easing, because both aim to boost consumer spending and increase inflation. In case of helicopter money, currency is distributed to the public and there is no repayment liability. Whereas in case of quantitative easing, it involves the use of printed money by central banks to buy government bond. Here the concerned government (whether state govt. or central govt.), has to pay back for the assets that the central bank buys.

Thus quantitative easing also involves the use of printed money by the central banks to buy government bonds. But not everyone views the money used in QE as helicopter money. It sure means printing money to monetize government deficits, but the government has to pay back for the assets that he central bank buys. It is not the same as bond-buying by central banks in which bank-owned assets are swapped for new central bank reserves.

Following three different balance sheets easily reflects the effect of quantitative easing in the economy.

GOI – Treasury Balance Sheet	
Liabilities	Assets
Bonds held by the Central Bank	Value of future Tax revenue
Bonds held by the public	Account at Central BankOther Assets

RBI – Central bank's Balance Sheet

Liabilities	Assets
Currency	Treasury Bills or Bonds
Govt.'s Account	
Accounts of the Commercial Banks (Reserves)	Other Assets
Equity Capital	

Consolidated: Consolidated Balance Sheet of the Government

Liabilities	Assets
Bonds held by the public	Value of future Tax revenue
CurrencyAccounts of the Commercial Banks (Reverses)	Other Assets
Central Bank Equity	
Capital	

Pros and cons of helicopter money

Pros

Helicopter money does not rely on increased borrowing to fuel the economy, which means that it doesn't create more debt and interest rates can remain unchanged.

Generally, helicopter money boosts spending and economic growth more effectively then quantitative easing because it increases aggregate demand – the demand for goods and services – immediately.

While government money drops that come from debt might not boost consumer spending, due to the debt needing to be repaid, it is often thought that 'money finance' will stimulate the economy.

Cons

Unlike quantitative easing, using helicopter money as a tactic is not reversible, and many argue that it's not a feasible solution to revive the economy.

A country's central bank sets its interest rates to reach economic growth targets.

However, a helicopter drop means a central bank cannot use interest rates to recover any costs, because the money is not linked to a borrowed asset (loan).

Instead, the money is given directly to the public. This may lead to over-inflation and cause damage to the central bank's financials.

One of the main risks associated with helicopter money is that it could lead to a significant devaluation of the currency in on the foreign exchange market.

As more money is printed and supply increases, the value of the domestic currency could significantly decrease.

It could also discourage speculators from buying the currency as it is less likely to perform well.

When it should be used?

Helicopter money is a tool to be adopted during fiscal crises when conventional monetary policies are not efficient enough to help the economy to recover. Economies mainly consider it as an alternative to fight back deflation. The principles of economics states that, 'when the economic crisis of any country is on its top then helicopter money is the last option to be used'. But, in the recent past, whenever the alternative of helicopter money is being adopted the worst results are being come out.

While talking about helicopter money, the first picture which came in our mind is of the countries like Zimbabwe, Venezuela, etc. where countless printing of domestic currency is done in such a way that it creates hyperinflation and eventually intrinsic value of their currency is worthless. Even if, printing currency notes by the central bank of developed countries which adopt Dollars and Euros, for this purpose is not less than a manic idea.

Rather, the other aspect of the picture is that, we are facing an unprecedented situation of corona virus pandemic and this idea of helicopter money is being suggested by various experts and specialists. The situation created during corona crisis it is suppose to be that some countries in the world including Japan and USA may use helicopter money in their economic process. It is such because, in the upcoming period due to lack of market demand if the businesses and consumers stop their buying process or reduce it then it will adversely affect the whole economy of the nation. To check upon this situation many central banks of the world including Europe can make efforts in this regard, so that rate of economic development can expedite.

Many educationists say that Indian government has the alternative of practicing helicopter money policy in this present scenario. According to Noble Laureates, like Esther

Duflo and Abhijit Banerjee recommendation, "aggressive quantitative easing (QE) and generous direct benefit transfers (DBTs) are needed to tackle the slowdown caused by Covid-19."

Helicopter Money in Indian Economy

Recently, the Telangana Govt. has suggested the concept for the state governments to revive economic growth. The state government asked the RBI to release 5% of GDP as helicopter money. Apart from this, Confederation of Indian Industry (CII) has also recommended a similar arrangement in which direct cash transfer of Rs. 5000 will be made by the central government in to accounts of all adults who have annual income below Rs. 5 lakhs. The industry body also recommended that the cash transfer for more vulnerable sections including senior citizens can be raised to Rs. 10000. The body suggests this move as a one-time measure to boost demand in its action note on COVID-19 submitted to PMO.

It is here worth to be mentioned that, India's GDP is about 3 lakhs crores US dollar and its 5% is 15 thousands crores US dollar (i.e. near about 11 lakhs crores of rupees). U P Govt. on 10 April 2020 transfers Rs 1000 to each bank account of 481755 daily wages workers including street vendors and rickshaw pullers. In the same way Delhi Govt. also give financial assistance of Rs. 5000 to each and every auto-taxi and e-rickshaw drivers. Under the Central Govt. scheme of Ujjwala Yojana 8 crores beneficiaries get 5000 crores of rupees in their respective bank accounts directly for the purpose of buying three months LPG (cooking gas) cylinders. These all incidents are some notional instances of helicopter money introduced by the state as well as central government.

Is Helicopter Money Good for Economy?

The present discussion on helicopter money has many other dimensions also. Nevertheless, Milton Friedman theory suggests simply that central banks print currency notes and government spends it, rather some economists believe that the policy regarding helicopter money is to be flexible enough in adoption. Although, it is the prime responsibility of the central banks to make arrangements for money supply in the economy but, there are many other avenues which can increase the flow of liquidity into the system that should be opted rather they are complicated enough. Many people assumes that recently the steps taken towards neutralizing the effect of economic slowdown in Europe and America are in a sense typical example of helicopter money because the motive behind tax rebate policy intends to make more disposable income available for the people to nudge them to spend more and more.

Due to helicopter money the supply of money is instantly increases in the economy

and it leads toward the hyperinflation which means, intrinsic value of currency and trust of people declines rapidly. If the government injects nearly 11 lakhs crores in the economy as a financial package combating COVID-19 crisis then a huge supply of money came into the market and it will leads towards a situation creating more problems for poor and marginal peoples to whom government wants to help through financial support in the form of helicopter money. Thus helicopter money is a double edged sword and government requires enough consciousness before implementing such policies.

Concluding Remarks

Money financed fiscal interventions are a powerful tool. The caveats mentioned above suggests that policymakers should resort to them only in emergency situations, when other options are bound to be ineffective or trigger undesirable consequences, current or future (e.g. debt crisis down the road). Unfortunately, that emergency is currently upon us, provoked by the corona virus. If ever, the time for helicopter money is now.

References

1. Helicopter Money – Let it Rain! Astellon capital, June 2016.
2. Why helicopter money is a 'Free Lunch'? – Economonitor, www.economonitor.com
3. "The case of helicopter money" – Financial Times, 5 May2016.
4. "Helicopter money and basic income: friends and foes? Basic Income News 25 March 2017.
5. Milton Friedman (March 1968). "The Role of Monetary Policy" (PDF), American Economic Review, Archived from the original on 5 June 2016.
6. Sandbu Martin (2016) – "Helicopter money: if not now, then when?
7. Gali, Jordi (17 March 2020). "Helicopter money: The time is now" Centre for Economic Policy Research. Archived.
8. Helicopter money and debt-financed fiscal stimulus; one and the same thing? www.nbb.be. Retrieved 11 Feb 2017.
9. Mario Dradhi: 'Helicopter money is a very interesting concept' 10 march 2016 via YouTube.
10. Direct benefit transfer need of the hour: Abhijit Banerjee, Esther Duflo, 9 April 2020, from business-standard.com
11. Baldwin, R and B Weder Di Mauro (2020), Economics in the time of COVID-19, e-books, CEPR Press.
12. Gasper, V and P Mauro (2020), 'Fiscal Policies to protect people during the Corona Virus outbreak", IMF Blog, 5 March.

■

नाथ साहित्य का भारतीय संस्कृति में योगदान

अंजना राय*

सार-संक्षेप : गोरखनाथ के साथ नाथ साहित्य के विकास में प्रायः सभी कवियों ने अपनी रचनाओं में गोरखनाथ प्रवृत्त भावों का अंकुरण किया है, उपदेशात्मक तथा खण्डन-मण्डन से परिपूर्ण साहित्य की रचना करते हुए इन्होंने गोरखनाथ की हठयोग साधना में व्याप्त ईश्वरवाद का ही प्रचार किया है, यही ईश्वरवाद भक्तिकाल में कबीर आदि में आकर रहस्यवाद का रूप धारण कर लेता है। स्पष्ट है कि सम्पूर्ण नाथ-साहित्य पर गोरखनाथ का ही अमिट और विशिष्ट प्रभाव रहा है। अतः गोरखनाथ और उनकी रचनाओं के माध्यम से नाथ-साहित्य के महत्त्व को स्पष्ट किया जा सकता है।

बीज शब्द : हठयोग, ईश्वरवाद, ब्रह्माण्डवाद, कुण्डलिनी-जागरण, वाकसंयम्, कौल-पद्धति, प्रेमाख्यानक, आत्मतत्त्व, मत्स्येन्द्रनाथ।

नाथ साहित्य का आरम्भकर्ता गुरु गोरखनाथ को माना जाता है। नाथ साहित्य के आरम्भ के साथ हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम शिव भक्त परम्परा की शुरुआत हुई। भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे अधिक शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ जी का भक्तिमार्ग ही था। जिसके समय निर्धारण का सर्वमान्य मत नवीं-दसवीं शताब्दी है। नाथ साहित्य का पर्याप्त प्रभाव भक्तिकाल के साहित्य पर दिखायी देता है।[1] इसमें भी हिन्दी सन्त काव्य पर इसका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है।[2]

सिद्धों की भोगप्रधान योग-साधना की प्रवृत्ति ने एक प्रकार की स्वच्छन्दता को जन्म दिया जिसकी प्रतिक्रिया में नाथ सम्प्रदाय शुरू हुआ। नाथ-साधु हठयोग पर विशेष बल देते थे। वे योग मार्गी थे। नाथपन्थ की दार्शनिकता सैद्धान्तिक रूप से शैवमत के अन्तर्गत है और व्यावहारिकता के दृष्टिकोण से हठयोग से सम्बन्ध रखती है। जीवन को कर्मकाण्ड के जाल से मुक्त कर सहज रूप की ओर ले जाने का श्रेय नाथों को ही है।[3]

नाथ साहित्य में 'नाथ' शब्द का अर्थ है- 'मुक्ति देने वाला'[4] स्पष्ट है कि नाथपन्थ अपनी हठयोग पद्धति द्वारा मानव-मन को सांसारिक आकर्षणों और भोग-विलास से मुक्त करने पर जोर

*स्वतन्त्र शोध अध्येता, गोरखपुर

देता है और यही कारण है कि सम्पूर्ण नाथ-साहित्य में प्रमुख रूप से तीन बातों पर जोर दिया गया है- (1) योग मार्ग, (2) गुरुगरिमा, तथा (3) पिण्ड ब्रह्माण्डवाद। नाथपन्थ के योगमार्ग में हठयोग की प्रमुखता है[5]। क्योंकि हठयोग जटिल प्रक्रिया है, अतः गुरु[6] के अभाव में इसे सम्भव नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार गुरु की महत्ता स्वयं सिद्ध है।[7] नाथपन्थी पिण्ड में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की कल्पना स्वीकार करते हैं।[8]

गोरखनाथ के साथ नाथ-साहित्य के विकास में जिन अन्य योगियों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिये उनमें निम्न कवियों और उनकी रचनाओं का उल्लेख किया जा सकता है:

1. मत्स्येन्द्रनाथ : ज्ञानकारिका, कुलानंद, कौलज्ञान निर्णय, अकुलवीरतंत्र
2. जालंधरनाथ : विमुक्तमंजरी गीत, हुंकारचित बिंदु भावना क्रम
3. चौरंगीनाथ : प्राणसंकली
4. चर्पटनाथ : चतुर्भवाभिवासन
5. गोपीचंद : सबदी
6. भर्तृनाथ : वैराग्य शतक
7. ज्यालेन्द्रनाथ : अप्राप्य
8. गहिणीनाथ : अप्राप्य

वास्तव में उपर्युक्त सभी योगियों ने अपनी रचनाओं में गोरखनाथ प्रवृत्त भावों का अंकुरण किया है, उपदेशात्मक तथा खण्डन-मण्डन से परिपूर्ण साहित्य की रचना करते हुए इन्होंने गोरखनाथ की हठयोग साधना में व्याप्त ईश्वरवाद का ही प्रचार किया है, यही ईश्वरवाद भक्तिकाल में कबीर आदि में आकर रहस्यवाद का रूप धारण कर लेता है। स्पष्ट है कि सम्पूर्ण नाथ-साहित्य पर गोरखनाथ का ही अमिट और विशिष्ट प्रभाव रहा है। अतः गोरखनाथ और उनकी रचनाओं के माध्यम से नाथ-साहित्य के महत्त्व को स्पष्ट किया जा सकता है।

यद्यपि गोरखनाथ के सन्दर्भ में अधिकांश ऐतिहासिक जानकारियाँ अनुपलब्ध हैं लेकिन राहुल सांकृत्यायन[9] जहाँ उन्हें सन् 845 के आस-पास का मानते हैं, वहीं हजारी प्रसाद द्विवेदी[10] उन्हें नौवीं शती का, जबकि रामचन्द्र शुक्ल[11] तेरहवीं शती के आस-पास का मानते हैं। सामान्यतः उनके ग्रन्थों की संख्या 40 के आस-पास मानी गयी है। मिश्र बन्धुओं[12] ने गोरखनाथ के संस्कृत ग्रन्थों की संख्या नौ मानी है। हजारी प्रसाद द्विवेदी[7] ने अट्ठाइस पुस्तकों का उल्लेख किया है। डॉ0 पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने 'गोरखबानी' (1930) नामक जिस संकलन का सम्पादन किया है उसके

अनुसार गोरखनाथ ने चौदह रचनाएँ लिखी थीं- 'सबदी' 'पद', 'प्राण संकली', 'शिष्याहरसन', 'नरवे बोध', 'अभैमात्रा जोग', 'आतमबोध', 'रोमावली', 'ग्यानतिलक', 'पन्द्रह तिथि', 'सप्तवार', 'मछीन्द्र गोरखबोध', 'ग्यानचौंतीसा' एवं 'पंचमाला'। लेकिन इसी प्रकार 'सिद्ध-सिद्धान्त पद्धति', 'गोरक्षसंहिता, 'अमरौघशासन' और 'महार्थमंजरी' को भी कुछ लोग गोरखनाथ द्वारा रचित मानते हैं लेकिन उनकी अनेक रचनाएँ उनके शिष्यों द्वारा भी लिखी गयी प्रतीत होती हैं। गोरखनाथ ने संस्कृत के साथ देशज भाषा में भी लिखा।[13]

गोरखनाथ से पूर्व उत्तर भारत राजनीतिक रूप से जहाँ विभिन्न टुकड़ों में बँटा था वहीं धार्मिक दृष्टि से भी उस समय अनेक मान्यताएँ-परम्पराएँ व्याप्त थीं। गोरखनाथ ने अनेक पन्थों के आचार्यों से शास्त्रार्थ कर न केवल उन्हें प्रभावित किया बल्कि अपने नाथपन्थ की ओर आकर्षित भी किया। फलतः शैव, शाक्त, बौद्ध, जैन तथा वैष्णव के साथ अनेक सम्प्रदायों का विलय उनके नाथपन्थ में होता जा रहा था। इस प्रकार गोरखनाथ ने समकालीन युग में व्याप्त अनेक मतभेदों[14] को समाप्त कर देश को धार्मिक एकसूत्रता में पिरोने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया। शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमान्वित भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ।[14] भारतवर्ष के कोने-कोने में उनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं।

गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं में गुरु-महिमा, इंद्रिय-निग्रह, प्राण-साधना, वैराग्य, मनः साधना, कुण्डलिनी-जागरण, शून्य समाधि आदि के वर्णन के साथ ब्रह्मचर्य, वाक्संयम, शारीरिक-मानसिक पवित्रता, ज्ञान के प्रति निष्ठा, बाह्य आचरण का अनादर, आंतरिक शुद्धि और मद्य-मांस के पूर्ण बहिष्कार पर जोर दिया है।[15] इंद्रिय-निग्रह पर बल देते हुये वे नारी को चारित्रिक पतन का प्रमुख कारण मानते हैं और उससे दूर रहने की सलाह भी देते हैं-

"चंद्री का लड़बड़ा जिभ्या का फूहड़ा, गोरख कहे ये परतषि चहड़ा।"

इस संबंध में डॉ. शिवकुमार ने कहा है "सम्भव है कि गोरखनाथ ने बौद्ध विहारों में भिक्षुणियों के प्रवेश का परिणाम और उनका चारित्रिक पतन देखा हो तथा कौल पद्धति या वज्रयान के वाममार्ग में भैरवी और योगिनी रूप नारियों की ऐन्द्रिक उपासना में धर्म को विकृत होते देखा हो।"

साहित्यिक देन के आधार पर हम नाथ साहित्य को तीन वर्गों में बाँट सकते हैं।

1- जीवन दृष्टि से योगदान (दार्शनिक)

2- भाषा के विकास की दृष्टि (भाषा वैज्ञानिक)

3- काव्यरूपों की दृष्टि से योगदान (काव्यशास्त्रीय)

विचारों की दृष्टि से नाथ-साहित्य का योगदान निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत देखा जा सकता है :

(1) वैदिक दर्शन के विरोधियों तथा पक्षधरों को मध्यवर्गी विचारधारा से प्रभावित किया है। बौद्ध धर्म तथा शांकर अद्वैत को विचारों के धरातल पर समीप लाकर नाथों ने अपनी योग साधना से शैव तथा शाक्त दर्शन को भी मिलाने का कार्य किया है।

(2) इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, सुरति, निरति, सूर्य एवं चन्द्र नाड़ियों आदि के अशास्त्रीय प्रयोग को लोकशास्त्रीय हठयोगी पारिभाषिक शब्दावली में समाविष्ट करके शरीर में ही सृष्टि की कल्पना की।[17]

(3) ब्रह्म कर्मकाण्डीय साधना की अपेक्षा आन्तरिक, सहज अथवा हठयोगी साधना पर बल दिया है, जिसका प्रभाव कबीर आदि सन्तों की वाणी में देखा जा सकता है। 'महाकुण्डलिनी' अथवा 'पराशक्ति' तो सारे संसार में व्याप्त है। कुण्डलिनी शक्ति मनुष्य के शरीर में ही व्याप्त है। उसी की साधना करने से मनुष्य आत्मतत्त्व को पहचान लेता है।

(4) ब्रह्म सृष्टि को मिथ्या बताकर लोगों को शांकर अद्वैत के मायावाद के निकट लाने का कार्य भी नाथों ने किया।

(5) शिव तथा शक्ति की एकता दिखाकर नाथों ने एक नई तथा वांछनीय विचारधारा से लोगों को भारतीय जीवन दर्शन से जोड़ने का अनुपम कार्य किया। गुरु गोरख तथा उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ के वार्तालाप से यह तथ्य स्पष्ट किया जा सकता है कि नाथों ने शिव एवं शक्ति को कैसे मिलाकर प्रस्तुत किया है।

गुरु गोरख पूछते हैं :

"स्वामि! कहाँ बसे शक्ति और कहाँ बसे सीव?
कहाँ बसे पवना, कहाँ बसे जीव?
कहाँ होइ उनका परचाल है?"

गुरु मत्स्येन्द्रनाथ उत्तर देते हैं :

"अवधू! अर्धे बसै सक्ति, अर्धे बसै सीव
मध्य बसे पवनि, और अन्तर बसै जीव।
सारे सरीर होत उनका परचाल है।"

भावार्थ यह है कि वेदान्तीय वाक्यों का अनुवाद करके यह स्थापना की गई कि "मैं ही ब्रह्म हूँ और सारा संसार ब्रह्ममय है।" शिव तथा शक्ति तो शरीर के आधे-आधे भाग में व्याप्त हैं।

इसी विचारधारा ने आगे चलकर शिव का अर्धनारीश्वर रूप भी बनाया। दर्शन की रहस्यात्मक शास्त्रीय मान्यताओं को नाथों ने उन बोलियों में अभिव्यक्त किया जिससे प्रभावित होकर कबीरादि सन्तों की रहस्योक्तियों तथा विरोधाभासी कथन की उलटबाँसियों की प्रेरणा मिली।

भक्ति काल की चारों धाराओं के चारों प्रमुख कवियों पर गोरखनाथ के योगमार्ग का प्रभाव देखा जा सकता है। एक ओर हिन्दी के सन्त काव्य तथा सूफी कवियों के प्रेमाख्यानक काव्यों में योग साधना की अतिव्याप्ति मिलती है तो दूसरी तरफ हिन्दी के रामकाव्य पर भी भगवान् शिव के अभिन्न रूप गोरखनाथ और उनकी साधना पद्धति की झलक स्पष्टत: परिलक्षित होती है। तुलसी जी की उक्ति "गोरख जगायो जोग" से इस कथन की सहज पुष्टि हो जाती है। वहीं सूर ने निर्गुण के खण्डन तथा सगुण के मण्डन में जिस योग और योगी का बिम्ब खड़ा किया वह गोरखपन्थी ही है।

भारतीय कृष्ण-गाथाओं में उद्धव कृष्ण का सन्देश लेकर गोपियों के समक्ष प्रस्तुत होते हैं किन्तु जायसी की कृति में यह कार्य गोरखनाथ द्वारा किया गया। यह जायसी के नाथपन्थ से प्रभावित होने का ही उदाहरण है कि उन्होंने कृष्ण-गाथाओं की प्राचीन परम्परा को तोड़ कृष्ण कथा का एक नया स्वरूप हमारे समक्ष प्रस्तुत किया तथा गोरखनाथ के द्वारा गोपियों को योगमार्ग की शिक्षा दिलवाई। गोरखनाथ के योग तथा कृष्ण के भोग की तकरार भी इसी रचना में बिम्बित हुई-

"सुनि कै उठा कनु सो भोगी।
देखौं कइस सिद्ध वह जोगी।।
भगति सहँस दस को है भए।
भगति कहत गोरख पै गए।।"

हिन्दी के मुस्लिम कवियों ने जिनकी रचनाओं में सूफी-आध्यात्मिकता देखने की चेष्टा की जाती है, अपने प्रेमाख्यानकों में नायकों को प्राय: योगी वेश में ही प्रस्तुत किया है। उन्होंने योगी वेश का जो स्वरूप उपस्थित किया है, वह नाथपन्थी योगियों का ही है।[21] जायसी भारतीय संन्यासियों एवं यौगिक क्रियाओं से पूर्णरूपेण परिचित थे। उन्होंने यह सब 'नाथ पन्थियों' से ही सीखा था। एक योगी को साधना के लिये यौगिक परिवेश की आवश्यकता होती है। उसका परिवेश कैसा होना चाहिये, यह नाथपन्थी योगियों की परम्परागत बात है। महाकवि जायसी उनकी परम्पराओं तथा योग-साधनाओं से भली-भाँति अवगत थे। पद्मावत के 'योगी खण्ड' में जब नायक रतनसेन नायिका पद्मावती (ब्रह्म) के अद्भुत सौन्दर्य के बारे में सुनता है तो राजपाट छोड़ योगी-वेश धारण कर लेता है। उन्हें संसार के प्रति विराग का भाव उत्पन्न हो जाता है तथा वह भी नाथ सम्प्रदाय के योगियों की भाँति रूप धारण कर पद्मावती रूपी ब्रह्म की प्राप्ति के लिए साधना में लीन हो

जाते हैं। सींगी, सेली, मेखला, बाघम्बर, खप्पर, विभूति-रमाना, दण्ड लेना तथा गले में रुद्राक्ष की माला पहनना नाथपन्थी योगियों के लिये आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य भी होता है। पद्मावत में रतनसेन का योगी वेश-विन्यास भी इसी प्रकार का था-

"तन बिसंभर मन बाउर लटा।
अरुझा प्रेम, परी सिर जटा।।
चन्द्र बदन और चन्दन देहा।
भसम चढ़ाई कीन्ह तन खेहा।।
मेखल सिंधी, चक्र धंधारी।
जोगबाट रुदराछ अधारी।।"[22]

कबीर एवं सूरदास के काव्यों में योगियों की वेशभूषा का उल्लेख भी इसी रूप में हुआ है।

आधुनिक काल में भी आकर यह प्रभाव कम नहीं हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'चन्द्रावली' नाटिका में जोगन का वेश-विन्यास और अधिकांश कथ्य नाथ-सम्प्रदाय के अनुरूप ही हैं।

वस्तुत: गोरखनाथ की रचनाओं के साथ-साथ समस्त नाथ साहित्य एवं चिन्तन पर दृष्टि डालने से यह बात स्वयमेव ही स्पष्ट होने लगती है कि भक्तिकालीन सन्त साहित्य न केवल भावपक्ष के स्तर पर बल्कि कला पक्ष के दृष्टिकोण से भी नाथ-साहित्य से प्रेरणा और ऊर्जा ग्रहण करता है। अन्धविश्वास पर जोरदार प्रहार करना, हिन्दू धर्म की कट्टरता, जाति-पांति, कर्मकाण्ड एवं सामाजिक रूढ़ियों के खिलाफ आवाज उठाने, आमजन की भावनाओं की अभिव्यक्ति करने, षट्चक्र भेद कर कुण्डलिनी शक्ति जागृत करने के साथ प्रतीकात्मक शैली में रचनाएँ करने जैसे अनेक ऐसे महत्त्वपूर्ण आधार-बिन्दु हैं जो इस धारणा की पुष्टि करते हैं कि भक्तिकालीन सन्त साहित्य की पृष्ठभूमि आदिकालीन नाथ-साहित्य के समय ही तैयार हो चुकी थी। फलत: आदिकालीन नाथ-साहित्य का विकास भक्तिकालीन सन्त साहित्य के रूप में होता है। इसी साहित्य का विकास भक्तिकाल में ज्ञानमार्गी सन्त काव्य के रूप में हुआ। इसने परवर्ती सन्तों के लिये श्रद्धाचरण प्रधान पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी।

नाथ साहित्य ने न केवल हिन्दी साहित्य के आने वाले युग के अग्रगामी की भूमिका निभायी बल्कि समाज को भी अपने साहित्य के माध्यम से काफी हद तक प्रभावित किया। नाथ सम्प्रदाय के विकासवादी विचारों को अपने द्वारा लिखी गयी रचनाओं के माध्यम से नाथ योगियों ने समाज में फैलाने का कार्य किया, जिसके माध्यम से न केवल समाज में फैली भिन्न-भिन्न धार्मिक विचारधाराओं में एकता स्थापित हुई, अनेक धार्मिक मतों को मानने वालों में सामंजस्य स्थापित हुआ, बल्कि समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों और कुरीतियों पर प्रहार भी हुआ जिसमें अन्धविश्वास, भेदभाव की भावना, कर्मकाण्ड आदि को शामिल किया जा सकता है।

इस तरह नाथ साहित्य हिन्दी साहित्य के इतिहास में आदिकाल में पर्याप्त महत्त्व रखते हुए भारतीय सामाजिक परिवेश के लिये भी महत्त्वपूर्ण है और इसका योगदान अक्षुण्ण है। वर्तमान परिवेश में नाथ-साहित्य का अध्ययन न केवल भारतीय समाज को दृढ़ता प्रदान करेगा बल्कि भारतीय संस्कृति की पुनर्प्रतिष्ठा को एक मजबूत आधार मिलेगा।

सन्दर्भ:

1. डॉ. रामकुमार वर्मा : 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' पृ. 51
2. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी : 'नाथ सम्प्रदाय' हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1950.
3. डॉ. कल्याणी मलिक : नाथ सम्प्रदाय, इतिहास दर्शन और साधना प्रणाली पृ. 1 (गोरखनाथ नाथ सम्प्रदाय के परिप्रेक्ष्य में डॉ. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय के पृ. 3 से उद्धृत)
4. गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह पृ. 49 व 51 पर शक्ति संगम तंत्र से (पृ. 1 डॉ. नागेन्द्र नाथ उपाध्याय गोरखनाथ सम्प्रदाय के परिप्रेक्ष्य में)।
5. डॉ. कोमल सिंह सोलंकी : नाथपन्थ और निर्गुण संत काव्य, पृ. 190.
6. ललिता सहस्रनाम पृ.-15 (डॉ. द्विवेदी-नाथ सम्प्रदाय-ग्रन्थावली- 6 से उद्धृत, पृ. 43).
7. राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला 190 - राजस्थान के नाथ सम्प्रदाय और साहित्य : लेख-योगी आदित्यनाथ : नाथों की साधना पद्धति, पृ. 24.
8. डॉ. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय : गोरक्षनाथ : नाथ सम्प्रदाय के परिप्रेक्ष्य में, पृ. 135.
9. राहुल सांकृत्यायन
10. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : 'नाथ सम्प्रदाय' हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1950.
11. रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास।
12. मिश्र बन्धु : हिन्दी साहित्य का इतिहास।
13. डॉ. बहादुर सिंह : 'हिन्दी साहित्य का विकास' पृ. 26.
14. डॉ. रांगेय राघव : गोरखनाथ और उनका युग।
15. डॉ. विनीता कुमारी : 'हिन्दी सन्त-साहित्य के प्रेरणास्रोत।
16. उत्तरी भारत की सन्त परम्परा : परशुराम चतुर्वेदी पृ. 61 (नाथपन्थ और निर्गुण सन्त काव्य, डॉ. कोमल सिंह सोलंकी, पृ. 188 से उद्धृत)।
17. हठयोग प्रदीपिका, 1.1 तथा उसकी टीका, वही 3.15 तथा उसकी टीका, योगबीजम्। 83-90.
18. गोरख संवाद
19. गोरख संवाद
20. शिव सहाय पाठक : 'कान्हावत' साहित्य भवन इलाहाबाद, 1981.
21. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल : योगी खण्ड, पद्मावत्, साहित्य भवन झाँसी, 1961.
22. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल : वही.

■

'नाथ' शब्द का निहितार्थ

रामदरश राय*

सार-संक्षेप : प्रभु अथवा ईश्वरवाची 'नाथ' शब्द ब्रह्म और गुरुबोधक प्रत्यय भी है। स्वामी अथवा शरणदाता का अर्थबोधक 'नाथ' पद और भी अनेक पर्यायता के संकेतन करता है। परन्तु नाथपन्थ के समुद्भव के पश्चात् यह शब्द नाथपन्थीय वाक्-संस्कृति में अन्तर्भुक्त होकर पन्थकोश का एक प्रमुख पारिभाषिक पद-प्रत्यय बन चुका है। शैव-सम्प्रदाय के प्रकोष्ठ से उपजा 'नाथ' शब्द वैष्णव-सम्प्रदाय में भी गौरव-गरिमा के साथ प्रयुक्त और प्रतिष्ठित है, यथा- 'हे नाथ नारायण वासुदेव'। प्रत्येक नाथयोगी के नामान्त में 'नाथ' पद का प्रयोग उसकी योगगरिमा का अभिसूचक है। आदिनाथ से लेकर महन्त योगी आदित्यनाथ तक विशाल नाथ-नामिका प्रमाण है।

बीज शब्द : नाथ, भुवनत्रय, अन्तर्प्रसुप्त, आधिभौतिक, आधिदैविक, त्रिशक्तिबीज, परमतत्त्व, कदलीदेश, पन्थ, उपाधिमूलक, आईपन्थ, योगधारा।

'नाथ' शब्द का वाचिक अर्थ है स्वामी अथवा पति। लक्षित अर्थ है रक्षक अथवा शरणदाता। व्यंजक अर्थ है प्रभु-ईश्वर-ब्रह्म-अधीश्वर-परमतत्त्व अथवा मोक्षदाता। कोशग्रन्थ, धर्मग्रन्थ, साहित्यग्रन्थ और नाथपन्थी सिद्धान्त ग्रन्थ अपने-अपने अर्थ-प्रक्षेप लगभग यही करते हैं।

स्वामित्व सूचक 'नाथ' शब्द का अंगीकरण पाशुपत शैवमत के विकास-प्रतीक नाथ-सम्प्रदाय में तो हुआ ही, भागवतकार ने **'हे नाथ नारायण वासुदेव'** कहकर इस शब्द का शक्तिबीज वैष्णव-सम्प्रदाय में भी अभिलक्षित कर लिया। अर्थात् **स्वामी-अधिष्ठाता और ईश्वरसूचक यह शब्द प्रभुता-सम्पन्न होकर महापुरुषवाची हो गया। इस शब्द की अर्थश्री देवत्व अथवा अतिमानवत्व में अनुस्यूत हो उठी। आदिनाथ शिव से नवनाथ गोरखनाथ की यह प्रदीर्घ परम्परा योगी आदित्यनाथ तक सजीव बनी हुई है।**

दरअसल, 'गोरक्षसिद्धान्त-संग्रह' की एक श्लोक-कारिका में 'नाथ' शब्द की ध्वन्यात्मक व्युत्पत्ति और आक्षरिक अर्थ-मीमांसा की गयी है। वहाँ 'ना' का अर्थ ' अनादि रूप' और 'थ' का

*अनद्यतन आचार्य, हिन्दी विभाग, दी.द.उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

अर्थ 'स्थापित होना' बतलाया गया है। 'नाथ' का पद्गत अर्थभाष्य करते हुए उसे मोक्षदान में दक्ष माना गया है। 'नाथ' पद को ब्रह्मवाची अर्थछाया में देखते हुए उसे भुवनत्रय का औद्भविक कारण और परमतत्त्व का आध्यात्मिक अभिरक्षक कहा गया है। भारतीय धर्मजीवन और लोकमंगल की आकाँक्षा से भरकर यह शब्द नाथपन्थ में पहुँचा और गोरक्षनाथ आदि अन्य नाथयोगियों की नामावली में जुड़कर एक पन्थविशेष का विशिष्ट संवाहक अध्याय बन उठा। परमतत्त्ववाची 'नाथ' शब्द 'ब्रह्म' और 'गुरु' जैसे महत् पदों में समाविष्ट होकर गरिमान्वित हो उठा। कालान्तर में 'नाथ' शब्द में उपाधिमूलक अलंकरण हासिल कर अपनी इयत्ता अनन्तगुना बढ़ा ली। 'नाथ' शब्द गुरुबोधक बन उठा और धर्मग्रन्थों-पुराणग्रन्थों में वर्णित गुरु-पद का वरेण्य पर्याय भी। 'नाथपन्थ' अथवा 'नाथपरम्परा' में विद्यमान 'नाथ' शब्द की अन्तर्प्रसुप्त इसी गुफा-वीथिका में ज्ञान की महाज्योति जलाने का स्तुत्य प्रयास गोरखनाथ प्रभृति प्राचीन नाथसन्तों ने किया है, जिसकी युगज्योति लेकर युवा संन्यासी आदित्यनाथ के योगचरण गत्वर हैं।

निर्गुणोपासक सन्तों ने 'नाथ' शब्द का प्रयोग परमतत्त्व के अर्थबोध में किया है। स्वामी रामानन्द ने अपनी रचना 'रामरक्षा' में 'नाथ' को 'निरंजन' और प्राण-पिण्ड माना है तो उनके शिष्य सन्त कबीर ने अलख निरंजन, राम, गोविन्द, विष्णु, खुदा, करीम, गोरख, महादेव और सिद्ध मानते हुए उसे आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक, त्रिशक्तिबीज के रूप में देखा है। 'नाथ' शब्द का अर्थविस्तार 'नाथसिद्ध' शब्दरूप तक पहुँचा है। अमरकोश के अनुसार 'नाथसिद्ध' शब्द देवयोनिवाचक है। वस्तुतः जो सन्त-साधक तप-त्याग और योग का अवलम्ब लेकर जीवनकाल में ही मोक्षदशा में पहुँच जाते हैं उन्हें सिद्ध कहते हैं। बुद्ध अथवा बौद्धधर्म की अवधारणा में जीवन में ही माया-मोह से मुक्त हो जाना मोक्ष है। कबीर और अन्य निर्गुण ज्ञानमार्गी सन्तों ने भी मायामुक्त मानव-जीवन को मोक्षद्वार पर खड़ा देखा है और उसे ही ज्ञानी अथवा सिद्ध की कोटि में मान्य ठहराया है। श्रीमद्भगवद्गीता, कालिदास और तुलसीदास तथा तमाम पुराणग्रन्थों ने सिद्धपुरुषों के प्रसंग उठाये हैं। ज्ञानमण्डित-अध्यात्मगर्भित महापुरुषों-विरक्तों को सिद्ध मानते हुए उन्हें मोक्षप्राप्त सन्त-महासन्त, साधु-वैरागी कहा गया है। मंगलविधायक, लोकदृष्टि के संवाहक नाथपन्थी योगियों की सिद्धि-प्रसिद्धि ने उन्हें 'नाथसिद्ध' की उपाधि सौंपी। 'गीता', 'पातंजल-योगदर्शन' और 'उत्तरी भारत की सन्त परम्परा' जैसे धर्म-अध्यात्मचेता ग्रन्थ अपने निष्कर्ष में 'नाथसिद्ध' और 'नाथयोगी' शब्दों को एक दूसरे का पर्याय मानते हैं। बौद्ध-साहित्य में प्रणीत 'नाथसिद्ध' शब्द कालान्तर में 'नाथपन्थ' का अर्थविस्तार पा गया। 'योग' और 'योगीभावना' की उपासना के कारण आगे चलकर नाथपन्थ में 'नाथयोगी' पद की अर्थवत्ता प्रमुख-प्रधान हो गयी।

'नाथपन्थ' को 'नाथसम्प्रदाय' के नाम से भी जानते हैं। सम्प्रदाय अथवा पन्थ ज्ञानसाधना, अध्यात्मसाधना और परमतत्त्वबोध के धर्मपीठ होते हैं। मोक्षप्राप्ति के, ईश्वरीय साक्षात्कार के आनुष्ठानिक केन्द्र होते हैं। महाशक्ति-शिवशक्ति के आराधना-तीर्थ भी। विष्णुशक्ति को जोड़कर कालान्तर में नाथपन्थ ने अपनी अखण्ड व्याप्ति बना ली। शिव के अर्द्धनारीश्वर रूप को अंगीकार

कर अपने पन्थ में स्त्री यानी योगिनियों को गौरव प्रदान की। पर्वतांचल में कदलीदेश (स्त्रीदेश) की परिकल्पना और मत्स्येन्द्रनाथ तथा गोपीनाथ आदि और भी योगियों का पहुँचना-लौटना नाथपन्थ के इस रहस्य-दर्शन का एक उपखण्ड है। नाथपन्थ, औघड़पन्थ, अमरपन्थ, स्वामीपन्थ, कबीरपन्थ, अगमपन्थ, गोरखपन्थ आदि पान्थिक नाम हैं। इसी तरह रुद्रसम्प्रदाय, शैवसम्प्रदाय, शाक्तसम्प्रदाय, श्रीसम्प्रदाय, राधावल्लभीसम्प्रदाय, रामावतसम्प्रदाय और नाथसम्प्रदाय जैसे नाम मत या पन्थ के संवाहक बने। प्रत्येक पन्थ व सम्प्रदाय का कोई-न-कोई संस्थापक प्रतिनिधि अथवा संवाहक-द्रष्टा रहा है। सभी के अपने-अपने तत्त्वसिद्धान्त बने जिसने पन्थ अथवा सम्प्रदाय अथवा मत का अभिनव शुभारम्भ किया।

'नाथपन्थ' के प्रस्थानिक बीज-बिन्दु हैं 'शिव'। शिव अर्थात् शिवनाथ। शिवनाथ अर्थात् आदिनाथ शिव। शिव के डमरू-निनाद से बाह्यनाद अर्थात् नादब्रह्म की उत्पत्ति हुई। यही नादब्रह्म का शब्दकायिक रूपान्तरण है - 'नाथपन्थ'। 'नाथ' भी ब्रह्मवाची उपाधि है, एक पुरापुरुषवाची विशेषण है। दीक्षित योगियों अथवा अवधूतों के नाम के अन्त में जुड़कर एक पूर्ण नाथपन्थी-अभियान अर्जित करता है, जैसे आदिनाथ, शिवनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, अवेद्यनाथ, आदित्यनाथ आदि। 'नाथ' एक पद और उपाधि भी है जो सिद्ध या पूर्ण योगी-व्यक्ति को प्रदान किया जाता है। नाम में नाथान्त का होना मात्र नाथपन्थी कहलाना नहीं है। अपितु 'नाथत्व' की गरिमा भी बनाये रखना इस उपाधि-पद की महिमा है। देखने और सुनने में बहुत मिलता है कि तमाम गृहस्थ-मायाग्रस्त लौकिक मनुष्य भी नाथान्त नामधारी हैं, जैसे-विश्वनाथ, महानाथ, प्रेमनाथ, अनुपमनाथ, उमानाथ, पार्वतीनाथ, तरह-तरह के बहुत-से नाथ। परन्तु ये नाथान्तनामी नाथपन्थी नाथ नहीं हैं, संसारी हैं, संग्रही हैं। नाथपन्थ की अपनी पन्थीय गरिमा है, मर्यादा है, साधना और सिद्धि के सिद्धान्त हैं। विश्वकल्याण की आत्म-अभिलाषा है। यह दुर्गम मार्ग की एक कठिन यात्रा है। उपनिषद् ने भी तत्त्वज्ञान को कठिन साधनामार्ग बतलाया है। 'कठोपनिषद्' में गुरु द्वारा शिष्य को ब्रह्मबोध का पथ दुर्गम और अगम्य बतलाते हुए उसे लोक-दृष्टान्त में क्षुरे की तीक्ष्ण धार कहा गया है – ''क्षुरस्यधारा निशितः दुरत्यया दुर्गं पथः।'' आशय यह कि नाथपन्थ और उसका योगमार्ग कठिन से कठिनतर है। दृढ़निश्चयी आत्मसाधक ही इस पथ को पकड़कर पार हो पाते हैं। गोरख के सिद्धान्तपथ और साधनात्मक उपदेशमार्ग तथा सामाजिक मंगलबोध से प्रभावित होते हुए भी कदाचित् कबीर को नाथपन्थ का नाथयोगी रूप ग्राह्य नहीं हो सका। कबीर कह उठे थे कि **''आधा चलकर पीछा फिरिहौ इहै जगै में हाँसी।''** योग, नाथपन्थी हठयोग में उतरकर पीछे लौट पड़ना कबीर की दृष्टि में जगहँसायी (उपहास) कराना है। कबीर निर्गुण-निराकार की ज्ञानसाधना तो चाहते थे किन्तु योग की कठिन यात्रा में निडर प्रवेश नहीं। यह कठिन यात्रा सिर्फ और सिर्फ गोरख और उनके योगी शिष्य पूरी कर सके। परम्परा के अद्यतन पड़ाव योगी आदित्यनाथ हैं।

नाथपन्थ में योगियों के साथ-साथ योगिनियों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। वैदिककाल

में स्त्री-संन्यास पर प्रतिबन्ध था जिसे बौद्धधर्म ने तोड़ा। बौद्ध-भिक्षुणियों के निर्वाध प्रवेश ने बौद्धधर्म के तपतेज को ठण्डा बना दिया। कहा भी जाता है कि स्त्री-प्रवेश के कारण बौद्धधर्म का पतन हो गया। गढ़वाल की नाथपन्थी शोध-परम्परा में गोरखनाथ को स्त्री-शिष्य-परम्परा को उद्धारक माना गया है। शैव-सम्प्रदाय में भी स्त्री-शिष्याएँ 'नाथन' और 'योगिन' के रूप में दिखती हैं। स्त्री-शिष्य-परम्परा की प्रवर्तिका योगिन विमलादेवी रही हैं जिन्हें गोरखनाथ जी की शिष्या होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। नाथ-सम्प्रदाय के इस योगिनपन्थ को 'आईपन्थ' और ध्वनिपरिवर्तन से 'माईपन्थ' कहा गया।

'नाथ-गुरु' को जो आदर और श्रद्धा प्राप्त है वही प्रतिष्ठा 'नाथन' पदधारी 'स्त्री-योगिन' को प्राप्त थी। मुण्डित सिर, छिद्रित कान और गेरुआ रंग छिड़का वस्त्र धारण कर गोरख-सम्प्रदाय में स्त्रियाँ योग-दीक्षा लेती थीं। नाथसिद्ध-सम्प्रदाय की कृष्णावती-गाथा में ये प्रमाण मिलते हैं। पहाड़ की लोकगाथाओं में यहाँ तक उल्लेख मिलता है कि 'जोगन' अथवा 'नाथन' को सम्मिलित किये बिना किसी नाथ को दीक्षा नहीं दी जाती थी। कुसुम नौटियाल के अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध में पृष्ठ २५ से ६५ के मध्य मिले दो अनुच्छेद कहते हैं – ''कहले भैरों की जोत प्रकाशित करना, जोगिनी की तरफ स्थापित करना, ऊपर की थापना, बीच में त्रिशूल बनाना, जोगिनी की तरफ हनुमान उसके ऊपर चन्द्रमा-सूर्य-बाकी तारा, कल्पतरु बनाना। जोगली पीर गद्दी बिछौना हुक्म ढलवा में माँगना। ढलवा साथ में जोगिणह से आँखिया माँगना। मुरला चलाना। मन्त्र बोलकर अगर जोगिणी से लेना।

उल्लेखनीय तथ्य है कि अधिकांश मन्त्रों में स्त्रियों की हुँकार अधिक वर्णित हुई है। 'राड़ी बामड़ी' से लेकर 'खसणी', लूणा चमारिन', 'हेणी वैरागिनी', 'वेणी विप्तल्या' का वर्णन मिलता है। इनके अतिरिक्त घवटा जोगिणी, ओड़ी जोगिणी, जोड़ी जोगिणी, ताड़ी जोगिणी, माड़ी जोगिणी, वीर पर जोगिणी, तिलपट जोगिणी, सिला जोगिणी, पाताल जोगिणी, भोली जोगिणी, धर्मा जोगिणी, इजया-विजया राणी, रेणावती रानी, कन्या कुमारी आसापुरी माई, मातंगी देवी, कापड़ी माता, माता तुरषणी, माता कौलावती, हिंगोला माई, सोनी लुवानी, काँवेर देश की कामदन राणी, पद्मा नागणी आदि का वर्णन विभिन्न पाण्डुलिपियों में मिलता है। साथ ही महरी, गुजरी, स्वर्ग की आँखरें, नागलोक की नागणें, मन्दोदरी, पार्वती, सीता, कुन्ती, द्रौपदी, कौसल्या के भी उदाहरण विभिन्न स्थानों में मिलते हैं।''

यह नाथन-नामावली पुष्ट साक्ष्य देती है कि आरम्भिक अवस्था में नाथ-सम्प्रदाय में स्त्री-शिष्याओं को सम्मानित स्थान प्राप्त था। जाति-भेद, वर्ग-भेद नहीं था। राजा-रंक, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र सभी वर्गों की स्त्रियाँ योगिन अथवा नाथन पद पाने की हकदार थीं। इन योगिनों की आदर्श पुराण-वर्णित त्यागमूर्ति श्रेष्ठ स्त्रियाँ थीं, जैसे पार्वती, मन्दोदरी, तारा, कुन्ती, सीता, कौसल्या, द्रोपदी आदि। योगिनों को 'धर्मायोगिणी', 'कन्याकुमारी', 'माई-माता' और 'स्वर्ग की आँखरें' जैसे सम्मानबोधक महत्त्व प्राप्त थे।

नाथयोगी और प्रचण्ड वैरागी नवनाथ नाथपन्थ के मेरुदण्ड हैं। शताधिक नाथों और पन्थीप्रमुख नवनाथों के वैरागी-वितान की छाया में सम्पूर्ण नाथ-परम्परा अनवद्य-अखण्ड और वर्तमान बनी हुई है।

उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक भारत के सभी भू-प्रान्तों में नाथ-परम्परा की धड़कन-व्याप्ति लक्षित की जा सकती है। हिमालय से कन्याकुमारी तक और असम (कामरूप-कमच्छा) से पंजाब की सरहद तक नाथपन्थी योगी-साधकों के आश्रम-मठ, गुफा-टीले पर्याप्त गिनती में मिलते हैं। नये शोध तो नाथपन्थ की परिव्याप्ति विश्व के तमाम देशों में देख चुके हैं। **नेपाल, तिब्बत, चीन, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, श्रीलंका, थाइलैण्ड, मॉरीशस और अब अमेरिकी कुछ देशों में भी नाथपन्थी विचारसाधना के सूत्र-स्रोत अन्वेषित हो चुके हैं। आज नाथपन्थ को वैश्विक पन्थ के रूप में देखना किंवदन्ती व अत्युक्ति नहीं है।**

यह अवश्य है कि हिमवत शैल-भूखण्डों में और पश्चिम-पूर्व में फैले उत्तरांचल में नाथपन्थ की व्याप्ति और सुख्याति अधिक है। हिमवतखण्ड, केदारखण्ड, कश्मीरखण्ड, कामरूपखण्ड आदि नाथोपाधि योगसाधकों के सिद्ध-प्रसिद्ध क्षेत्र रहे हैं। इसी तरह देश के अन्य सम्भागों अथवा खण्डक्षेत्रों में नाथों की साधना के प्रतीक-अवशेष अभी शेष हैं। उन्हें कदलीवनखण्ड, कूर्मादिखण्ड, काशीखण्ड, अवन्तीखण्ड, कुरुखण्ड, मरुखण्ड, बंगखण्ड और समुद्रखण्ड पर्यन्त खोजा जा सकता है। तमाम क्षेत्रों में नाथपन्थी योगी समूह में भिक्षाटन करते, योगमार्ग पर चलते इस पन्थ और सम्प्रदाय को पीढ़ी-दर-पीढ़ी चरैवेति में जोड़ते रहे हैं। इन घुमन्तू लघुयोगियों के पान्थिक अथवा सम्प्रदायगत योगदान को अनदेखा करना पीठाधीश्वर योगी-संन्यासी और मठ-मन्दिर के महन्तों के लिए उचित न होगा। सर्वविदित है कि दीमकों की मौन कर्मनिष्ठा ने रत्नाकर को महर्षि वाल्मीकि बना दिया। पुष्प का आश्रय पाकर अबल-अपरबल लघुजीव पिपीलिका भी शिवशिखर पर आरूढ़ होकर चन्द्रमा का स्पर्श पा लेती है। कथ्य यह कि समूहबद्ध योगिवृन्द ही नाथपन्थ के ध्वजवाहक नहीं हैं। नाथपन्थ की अखण्ड जययात्रा में रमता योगियों और इतस्ततः बिखरे-सिकुड़े योगियों का अग्निबीज अधिक तापदायक बना है। स्थान-स्थान पर पन्थ का अलख जगाने में चिमटाधारी योगी-संन्यासी कभी पीछे नहीं रहे। आशय यह कि साधना-समुद्र की तरह नाथपन्थ की योगतरंगें सम्पूर्ण आर्यभूमि का गगन-चुम्बन करती हैं।

'हठयोग' 'नाथयोग' की आधारशिला है। 'हठयोग प्रदीपिका' में वर्णित है कि **कुण्डलिनी जागरण के निमित्त हठपूर्वक शिव के निवास स्थान सहस्रार चक्र तक पहुँचने की शिवयोग-प्रक्रिया 'हठयोग' है।** 'योगदर्शन' के आठों प्रभेद (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि) योगसाधना में सर्वमान्य हैं, नाथसाधना में भी। बौद्ध और जैन धर्म के बाद छठवीं शताब्दी से अस्तित्व में आये नाथमत को प्रभावशाली स्वरूप में नौवीं-दसवीं शताब्दी में देखा गया, जब उस समय के सबसे प्रभावशाली संगठनकर्ता योगनायक गुरु गोरखनाथ

का मार्गदर्शन नाथपन्थ को प्राप्त हुआ। एक धर्मनायक के रूप में भारतभूमि से उभरे गोरख में अपूर्व संगठन-शक्ति दिखी और उनकी योगशक्ति की भक्तिछाया में बैठना, विश्रान्ति का अनुभव करना युगधर्म बनता गया। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे मनीषी साहित्येतिहास लेखक को कहना पड़ा, **"शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमान्वित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। भारतवर्ष के कोने-कोने में उनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं। भक्ति-आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरक्षनाथ का योग-मार्ग ही था। भारतवर्ष की कोई भाषा नहीं है जिसमें गोरक्षनाथ-सम्बन्धी कहानियाँ न पायी जाती हों।......गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े नेता थे।"** (नाथ-सम्प्रदाय)

'नाथपन्थ' का संगठन और संयोजन गोरखनाथ के हाथ में आने के बाद 'नाथ'नामी विशेषण पदवीवाची और उपाधिवाची प्रत्यय में परिवर्तित हो गया। प्रत्यय की तरह नामान्त में शामिल होकर गौरवास्पद बन उठा। गोरक्ष के पूर्ववर्ती और परवर्ती नाथ-नामान्त इतिहास-मिथक और युगरीति बनने लगे। केदारनाथ, बदरीनाथ, वैद्यनाथ, मंजुनाथ, अमरनाथ, रामनाथ, शिवनाथ, नागनाथ, सोमनाथ, जगन्नाथ, द्वारकानाथ, रंगनाथ, हरिहरनाथ, मुक्तिनाथ, सारनाथ, रुद्रनाथ, भोलानाथ, शंकरनाथ, तुंगनाथ, उमानाथ, पार्वतीनाथ, विश्वनाथ, काशीनाथ आदि नाम नाथपन्थी नामों के प्रभाव में प्रकट होने लगे। पन्थ और पन्थ से बाहर सर्वत्र 'नाथ' नाम को लोकस्वीकृति मिलने लगी। गोरक्ष के समकालीन और उत्तरवर्ती नाथों की विशाल परम्परा अस्तित्व में आने लगी। पूर्ववर्ती और उत्तरवर्ती सभी नाथयोगी नाथपन्थ के प्रमुख प्रवर्तक गोरखनाथ की नाथ-परम्परा में विलीन दिखने लगे। 'नवनाथ' भी गोरक्ष के उदय के कारण इतिहास और लोक में मान्य हुए।

नाथपन्थ के इतिहासबद्ध और मिथकश्रुत नाथयोगी हैं- आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, जालन्धरनाथ, गोरखनाथ, कानीफनाथ (कृष्णपाद), चौरंगीनाथ, गोपीचन्दनाथ, चर्पटीनाथ, भर्तृहरिनाथ, गहिनीनाथ, अमरनाथ, निवृत्तिनाथ, मुकुन्दराजनाथ, रतननाथ, नागनाथ, चुड़करनाथ, मल्लिकानाथ, नामदेव, ज्ञाननाथ, चोलीनाथ, एकनाथ, सत्यनाथ, धर्मनाथ, देवलनाथ, गरीबनाथ, जसनाथ, परबतनाथ, पृथ्वीनाथ, अजयपाल, चामरीनाथ, दत्तात्रेय, सोहिरोबानाथ, अमृतनाथ, मस्तनाथ, शान्तिनाथ, शीलनाथ, बालनाथ, सुन्दरनाथ, ब्रह्मनाथ, गम्भीरनाथ, दिग्विजयनाथ, अवेद्यनाथ और सम्प्रति आदित्यनाथ।

नाथपन्थ की योगधारा में उपधारा के रूप में दिखने वाले योगी-संन्यासी और भी हैं। उनके योगदान-अवदान भी न्यून नहीं हैं, मगर वे नाथ-परम्परा के विस्तृत इतिहास और अध्ययन के पृष्ठ हैं।

■

नाथपन्थ का सामाजिक सरोकार

प्रदीप कुमार राव*

महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त- भारत के धर्माकाश में बारह प्रमुख धर्माचार्य कौन हैं?

श्रीरजनीश (ओशो)- भारत के धर्माकाश में चमकते, 12 सितारे हैं- कृष्ण, पतंजलि, बुद्ध, महावीर, नागार्जुन, शंकर, गोरख, कबीर, नानक, मीरा, रामकृष्ण, कृष्णमूर्ति।

महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त- तो फिर ऐसा करें, सात नाम मुझे दें।

श्री रजनीश (ओशो)- कृष्ण, पतंजलि, बुद्ध, महावीर, शंकर, गोरख, कबीर।

महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त- आपने पाँच नाम किस आधार पर छोड़े।

श्री रजनीश (ओशो)- नागार्जुन बुद्ध में समाहित हैं। कृष्णमूर्ति भी बुद्ध में समाहित हैं। रामकृष्ण, कृष्ण में लीन हो गए। मीरा-नानक कबीर में समाहित हैं।

महाकवि- अगर पाँच की सूची बनानी पड़े।

श्रीरजनीश- कृष्ण, पंतजलि, बुद्ध, महावीर, गोरख। क्योंकि कबीर को गोरख में लीन किया जा सकता है। शंकर तो कृष्ण में सरलता से लीन हो जाते हैं।

महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त- अगर चार ही रखने हों?

श्री रजनीश (ओशो)- कृष्ण, पतंजलि, बुद्ध, गोरख। महावीर बुद्ध से बहुत भिन्न नहीं हैं।

महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त- बस एक बार और........। आप तीन व्यक्ति चुनें।

श्रीरजनीश (ओशो)- अब असम्भव है।

* महावीर छोड़े जा सकते हैं। गोरख को नहीं छोड़ा जा सकता।
* गोरख से इस देश में एक नया ही सूत्रपात हुआ।
* गोरख एक शृंखला की पहली कड़ी हैं। उनसे एक नए प्रकार के धर्म का जन्म हुआ।
* भारत की सारी सन्त परम्परा गोरख की ऋणी है।
* गोरख सबसे बड़े आविष्कारक हैं।
* गोरख के पास अपूर्व व्यक्तित्व था, जैसे आइंस्टीन के पास व्यक्तित्व था।

(महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त एवं श्री रजनीश (ओशो) का यह संवाद श्री रजनीश की पुस्तक 'मरो ए योगी मरौ' में विस्तार से प्रकाशित है। महायोगी गोरक्षनाथ के सम्बन्ध में श्री रजनीश के विचार को यह पुस्तक विस्तार से प्रस्तुत करती है।)

बीज शब्द : वैचारिक अधिष्ठान, रूढ़िवादिता, धर्मान्धता, अजपा-जप, ॐकार-जप, योगमार्ग, स्वसंवेद्य, स्वरूपस्थिति, राष्ट्रवाद, कार्यसंस्कृति।

*प्राचार्य, महाराणा प्रताप पी.जी. कॉलेज, जंगल धूसड़, गोरखपुर(उ.प्र.) 273014।

महायोगी गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित नाथपन्थ के नाथसिद्धों, नवनाथों और चौरासी सिद्धों का आविर्भाव तथा विचारकाल सामान्य: नवीं शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी ई. तक माना जाता है। यह युग भारतीय धर्म-साधना में उथल-पुथल का युग था ही, सामाजिक-राजनीतिक परिवेश में भी भारत की सनातन संस्कृति के प्रतिकूल अनेक विकृतियाँ एवं चुनौतियाँ उभर चुकी थीं। इस्लाम एक पान्थिक शक्ति के साथ-साथ आक्रमणकारी राजनीतिक ताकत के रूप में भारत में प्रवेश कर रहा था। भारत के धार्मिक-आध्यात्मिक जीवन में तन्त्र-मन्त्र, टोने-टोटके प्रभावी होते जा रहे थे। बौद्ध साधना पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ चुका था। बौद्ध, शाक्त, शैव और वैष्णव सम्प्रदायों के बीच आपसी मतभेद एवं कटुता बढ़ती जा रही थी।

महात्मा बुद्ध ने जिस वैचारिक अधिष्ठान पर बौद्ध मत का प्रतिपादन किया, लगभग हजार वर्ष बीतते-बीतते वह वैचारिक आन्दोलन भी उन्हीं रूढ़ियों, कुरीतियों, पाखण्डों का शिकार हुआ जिनके गर्भ से उसका जन्म हुआ था। आचार-विचार की शुद्धता तार-तार हो रही थी। वामाचार, तन्त्रवाद एवं अनाचार का शिकार बौद्ध मत तामसी-विलासी-कामुकतापूर्ण कलुषित जीवन का शिकार हुआ। परिणामत: बौद्ध मत से सामान्य-जन का विश्वास डिगने लगा।

बौद्ध मत के ह्रास एवं पतन की परिस्थितियों में वैदिक मत की विविध धाराएँ अपनी पुनर्प्रतिष्ठा के प्रयत्न में सफल होने का प्रयत्न कर रही थीं। विशेषकर वैष्णव-शैव मत अपने नए कलेवर, वैचारिक शुद्धता और आत्मा-परमात्मा के सम्बन्धों पर विविध दार्शनिक व्याख्याओं के साथ वैदिक संस्कृति को लोकप्रिय बनाने में प्रयत्नरत थे। किन्तु इस प्रयत्न में भारतीय समाज में रूढ़िगत स्वरूप में विकसित होने वाली जाति-व्यवस्था सबसे बड़ी बाधा थी।

पूर्व मध्ययुग अर्थात् छठवीं शताब्दी ईस्वी से बारहवीं शताब्दी ईस्वी के कालखण्ड में भारत में कई इस्लामी आक्रमण हुए। यह युग भारत के तेजी से बदलते सामाजिक परिवेश का भी युग है। इसी युग में भारतीय समाज में धार्मिक एवं उपासना पद्धतियों के नाम पर पाखण्ड एवं आडम्बर बढ़े तो दूसरी तरफ जातियों में उपजातियों का तेजी से निर्माण हुआ। जाति व्यवस्था ऊँच-नीच एवं छुआ-छूत की विकृति का शिकार हो चुकी थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्ण जन्माधारित जाति में रूढ़ हो ही रहे थे, इनमें भी विखण्डन एवं विभाजन की प्रवृत्ति हावी थी। अनेक विदेशी जातियों के भारतीय समाज मे ंसमन्वीकरण ने भी जातीय विखण्डन एवं उपजातियों के निर्माण में भूमिका निभायी। इस युग की जाति-व्यवस्था पर अलबरूनी के किताबुलहिन्द एवं चन्दवरदाई के पृथ्वीराजरासो में विस्तृत विवरण मिलता है।

यह युग जातीय विखण्डन के कारण जातीय अस्तित्व एवं शुद्धता को लेकर काफी संवेदनशील युग है। ब्राह्मण अपनी सांस्कारिक शुद्धता, रूढ़िवादिता और धर्मान्धता को अपनी विशिष्टता एवं श्रेष्ठता का आधार मानते थे तो क्षत्रिय अपने शौर्य-पराक्रम की श्रेष्ठता के अहंकार

में डूबे थे। वैश्यों के बीच से कायस्थ जाति का उद्‌भव हो चुका था और वे शासन-प्रशासन में अपनी लिखा-पढ़ी के आधार पर जगह बना चुके थे। जातीय श्रेष्ठतावाद से भारतीय समाज में ऊँच-नीच की एक गहरी खाई बनती जा रही थी। ब्राह्मण-क्षत्रिय पौरोहित्य एवं राज्य के बल पर अपनी श्रेष्ठता पूरे समाज पर जबरन थोप भी रहे थे। समाज में इनके द्वारा घोषित शूद्र के अन्तर्गत आने वाली वे जातियाँ जिनके कौशल एवं परिश्रम पर समाज जी-खा रहा था वे नीच और अछूत घोषित की जा रही थीं।

देबल एवं लक्ष्मीधर ने ब्राह्मणों की अनेक उपजातियों का उल्लेख किया है। अत्रिसृमति तथा मिनतकसार ने ब्राह्मणों की दस श्रेणियों- देवा, मुनि, हिज, राज्य, वैश्य, शूद्र, मरजरा, पशु, म्लेच्छ तथा चाण्डाल- का उल्लेख किया है। क्षेत्रीय आधार पर भी ब्राह्मणों की अनेक उपजातियाँ, यथा बंगाल में वन्ध्यधतिया, चम्पहटिया, इकिया, बरेन्द्र, वैदिक का उल्लेख है। द्राविड़ और उत्कल से आए दक्षिणत ब्राह्मण कहलाए। बिहार में मैथली, साकद्वीपी, गवावाल, मग, गौड़; उत्तर प्रदेश में कन्नौजिया, सरयूपारीय तथा कश्मीर के कश्मीरी ब्राह्मण कहे जाने लगे थे। स्पष्ट है कि जातियों के अन्दर भी ऊँच-नीच का भाव प्रबल होने लगा था।

क्षत्रियों की भी उत्तर भारत में ही 36 जातियों का उल्लेख मिलने लगता है। अलबरूनी लिखता है समाज में ब्राह्मणों के बाद क्षत्रियों का दूसरा स्थान था। इब्नखुदवर्दा के अनुसार क्षत्रिय दो वर्ग सवकफुरिया तथा कहरिया में विभाजित थे। क्षत्रियों में भी ऊँच-नीच की भावना घर कर गयी थी। इसी प्रकार वैश्यों एवं शूद्रों में भी अनेक जातियों एवं उपजातियों का विकास हो चुका था। जैन पुस्तक प्रशस्ति संग्रह के अनुसार गुजरात तथा राजस्थान में ही श्रीमाली, प्रागवत, उपकेश, घरकटा, पल्लखाल, मोधा, गूजर, नागर, दिसवाल, औद, दुम्बाल वैश्यों की प्रमुख जातियाँ थीं। अलबरूनी की मानें तो ग्यारहवीं शताब्दी तक वैश्यों और शूद्रों में कोई अन्तर नहीं रह गया था।

अभिदान चिन्तामणि, देसीनमामला तथा विजयन्ती जैसे ग्रन्थों में शूद्र कहे जाने वाले मजदूर, लोहार, पत्थर काटने वाले, शंख बनाने वाले, कुम्हार, जुलाहा, बढ़ई, चर्मकार, तेली, ईंट बनाने वाले, स्वर्णकार, जौहरी, ताँबे का काम करने वाले, चित्रकार, बोझा ढोने वाले, भिश्ती, दर्जी, धोबी, कलाल, मदिरा बेचने वाले, माली, घूम-घूम कर वस्त्रों के विक्रेता, शिकारी, चाण्डाल, नर्तक, अभिनेता इत्यादि का उल्लेख मिलता है। वैजयन्ती के अनुसार शूद्रों की 64 जातियाँ थी।

उपर्युक्त जातियों, उपजातियों और उनके बीच ऊँच-नीच के प्रबल होते भाव के बीच भारतीय समाज में विखण्डनकारी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी। देश की पश्चिम सीमा स्थानीय राजपूतों के जातिकुलाभिमान, पारस्परिक कलह एवं संघर्ष से अव्यवस्थित हो उठी थी। हिन्दू समाज के समक्ष नष्ट होती सामाजिक परम्परा को कायम रखने एवं युगानुकूल विकसित करने का प्रश्न था तो मुस्लिम उलेमा अपने रीति-रिवाज का प्रचार-प्रसार कर इस्लाम के प्रभुत्व को बनाए रखने हेतु

प्रयत्नशील थे। इससे समाज और राष्ट्र-निरन्तर कमजोर हो रहा था।

बौद्ध युग के बाद यह युग एक बार फिर सामाजिक क्रान्ति की दहलीज पर खड़ा था। भारत के धार्मिक-आध्यात्मिक जीवन में उथल-पुथल के साथ-साथ जाति व्यवस्था में ऊँच-नीच एवं छुआ-छूत से आक्रान्त समाज में एकरसता की डोर कमजोर होती जा रही थी। समाज विखण्डन का शिकार हो रहा था। एक तरफ बौद्धमत का पतन और दूसरी तरफ जाति-व्यवस्था में ऊँच-नीच, छुआ-छूत जैसी विकृतियों से पीड़ित भारतीय समाज एक ऐसे धार्मिक-आध्यात्मिक नायक को खोज रहा था जो एक बार फिर सहज जीवन का ऐसा मार्ग दिखाए जो उसे लौकिक जीवनानन्द के साथ पारलौकिक जीवन का मार्ग भी प्रशस्त करे। भारतीय संस्कृति की सर्वाधिक प्रमुख विशेषता स्वयं-शुद्धिकरण की है। भारत के धार्मिक-आध्यात्मिक-सामाजिक जीवन में जब-जब जटिलता, कर्मकाण्ड, पाखण्ड, रूढ़िवादिता प्रभावी हुई, इनके विरुद्ध भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों के पुनर्जागरण हेतु भारतीय समाज खड़ा हुआ। इन्हीं परिस्थितियों में समय-समय पर समाज का नेतृत्व करने के लिए महापुरुषों का अभ्युदय हुआ। समय-समय पर समाज का मार्गदर्शन करने हेतु वैचारिक आन्दोलन चले और कुछ वैचारिक आन्दोलन पान्थिक स्वरूप ग्रहण कर संगठित स्वरूप में भारतीय संस्कृति के वाहक बने। महायोगी गोरखनाथ का अभ्युदय एवं उनके द्वारा प्रवर्तित नाथपन्थ इन्हीं परिस्थितियों की उपज था।

नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ इस जाति व्यवस्था के ऊँच-नीच एवं छुआ-छूत जैसी कुरीतियों के विरुद्ध तनकर खड़े हुए। इन विषम सामाजिक परिस्थितियों में भारत की जनता को कर्त्तव्यबोध कराने वाले महायोगी गोरक्षनाथ ने नाथपन्थ के रूप में जिस संगठन को खड़ा किया वह सामाजिक परिवर्तन और जन-मानस के अनुरूप था। इसमें एक तरफ ईश्वरवाद की एक निश्चित अवधारणा थी तो दूसरी तरफ धार्मिक अन्धविश्वासों, कुरीतियों एवं रूढ़ियों पर करारा प्रहार भी था। युग-धर्म के अनुसार उन्होंने जाति-पाति की कट्टरता, धार्मिक उन्माद एवं कथनी-करनी में अन्तर इत्यादि बुराइयों के विपरीत आवाज बुलन्द की और स्नेह-सहयोग, त्याग-तपस्या, सहनशीलता के शान्तिपूर्ण सन्देश दिए। उन्होंने घोषित किया कि ये कुरीतियाँ शास्त्र-सम्मत नहीं हैं। उन्होंने सभी के लिए योग का एक ऐसा सहज मार्ग प्रतिपादित किया, जो बिना भेद-भाव के ईश्वर का साक्षात्कार करा सकता था और जिस पथ पर चलकर सभी मोक्ष के अधिकारी थे।

महायोगी गोरखनाथ ने एक नया एवं अद्‌भुत सामाजिक वर्गीकरण का सिद्धान्त दिया। उन्होंने जातीय विभाजन को अस्वीकार करते हुए मनुष्यों का केवल दो वर्ग स्वीकारा है। योगबीज में कहा गया है कि देहधारी मनुष्य दो प्रकार के हैं। एक वे हैं, जो योगहीन होने के कारण अपक्व (कच्चे) देहवाले हैं और दूसरे योगाभ्यास से युक्त पक्व (पक्के) देहवाले हैं।

अपक्वाः परिपक्वाश्च द्विविधा देहिनः स्मृताः।

अपक्वाः योगहीनास्तु पक्वा योगेन देहिनः।। (योगबीज, 34)

अजपा-जप नाथपन्थ का वह मन्त्र है जो अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष सभी को चाहे-अनचाहे एक समान रूप से उपलब्ध है। श्वास सभी मानव एक जैसे लेते हैं। नाथपन्थी दर्शन के अनुसार हर जीव 'ह'कार ध्वनि के साथ श्वास (प्राणरूप में) बाहर छोड़ता है और 'स'कार ध्वनि के साथ (अपान रूप में) श्वास भीतर खींचता है। इस प्रकार हर मानव हंस-हंस मन्त्र का जप स्वतः दिन-रात मिलाकर इक्कीस हजार छः सौ बार करता है। यथा-

हकारेण बहिर्याति सकारेण विशेत् पुनः।
हंसहंसेत्यमुं मन्त्रं जीवो जयति सर्वदा।।
षटशतानि त्वहो रात्रे सहस्राण्येक विशंतिः।
एतत्संख्यान्वितं मन्त्र जीवो जयति सर्वदा।।

(गोरक्षशतक, 42-43)

महायोगी गोरखनाथ कहते हैं कि यह अजपा गायत्री है, जिसका स्वतः जप होता रहता है। यह जप संकल्पमात्र से ही मोक्ष प्रदान करता है। इस जप को करने के लिए किसी प्रकार के अतिरिक्त टंट-घंट, कर्मकाण्ड, विधि-विधान, व्यय इत्यादि की कहाँ जरूरत है। मात्र संकल्प ही पर्याप्त है। महायोगी के इस अजपा-गायत्री-जप ने हर जीव को एक समान मोक्ष का अधिकारी बना दिया। उपासना की इतनी सहज विधि कहीं अन्यत्र दुर्लभ है।

गोरक्षशतक में ही 'ॐकार जप' का उल्लेख मिलता है। अजपा गायत्री की ही तरह यह मन्त्र-जाप भी सहज-सरल-सर्वग्राही और बिना किसी भेद-भाव के सभी के लिए करणीय है। गोरक्षशतक के अनुसार चाहे बाह्य शौच से युक्त हो, चाहे अशौच की स्थिति में हो, ॐ-प्रणव का सदा जप करते रहने से जीव उसी तरह पापकर्म मे लिप्त नहीं होता, जैसे कमलपत्र पानी में रहकर भी जल से लिप्त नहीं होता। वाणी से प्रणव-ॐ का जप करना चाहिए। शरीर से उसके चिन्तन में तत्पर रहना चाहिए और मन से उसका नित्य स्मरण करना चाहिए।

पद्मासनं समारुह्य समकायशिरोधरः।
नासाग्रदृष्टिरेकान्ते जपेदोङ्कारमव्ययम्।।
वचसा तज्जपेद बीजं वपुषा तत्समभ्यसेत्।
मनसा तत्स्मरेन्नित्यं तत्परं ज्योतिरोमिति।।
शुचिर्वाप्यशुचिर्वापि यो जपेत् प्रणवं सदा।
न स लिप्यति पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा।।

(गोरक्षशतक 83, 88, 89)

इस प्रकार महायोगी गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित योगमार्ग योगियों, गृहस्थों एवं प्रत्येक मानव (स्त्री-पुरुष) के लिए सर्व-सुलभ था। यह उपासना की ऐसी पद्धति थी जो पूर्णत: व्यय-रहित एवं विभेद-रहित थी। सभी के लिए नाथपन्थी योगमार्ग के द्वारा स्वस्थ रहते हुए लौकिक एवं पारलौकिक जीवन का चरम लक्ष्य प्राप्य था। योगमार्ग सामाजिक समरसता का महामन्त्र बना।

नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरक्षनाथ ने योग-साधना के साथ-साथ आम-जन के लिए जीवन के सहज मार्ग का अनवरत उपदेश किया है। समत्व एवं ममत्व के साथ एकरस समाज के मनोविकास का निरन्तर प्रयत्न गुरुश्री गोरक्षनाथ की बानियों में दिखायी देता है। जाति-पाति, मत-मजहब, पथ-पन्थ की सभी सीमाओं से परे मानव-शरीर और आत्मा को केन्द्र बिन्दु मानते हुए गोरखनाथ कहते हैं कि मानव शरीर में ही भगवान् का वास है। अत: अन्त:साधना ही मूल है। अलख निरंजन स्वसंवेद्य परमशिव अपने ही भीतर हैं। अपना शरीर ही ज्ञान स्वरूप गुरु अनादि शिव का अधिष्ठान है। शरीर स्थित आत्मा ही सर्वश्रेष्ठ देवता है। इड़ा, पिंगला के संगम स्थान सुषुम्ना में साक्षात् भगवान् जगन्नाथ का निवास है। दसवें द्वार ब्रह्मरन्ध्र पर परमशिव केदारनाथ निवास करते हैं, यही केदारधाम है। योग के द्वारा शरीर-आत्मा को साधकर हर कोई मोक्ष प्राप्त करने का अधिकारी है। यथा-

गुरदेव स्यंभेदव सरीर भीतरिये।
आत्मां उत्तिंम देव ताही की न जांणौ सेव।
आंन देव पूजि-पूजि इमही मरिये।।
नवे द्वारे नवे नाथ, तृबेणीं जगन्नाथ, दसवें द्वारि केदारं।।
जोग, जुगतिसार तौ भौ तिरिये पारं।
कथंत गोरषनाथ विचारं।।

(गोरखबानी, पद-9)

स्वर्ग-नरक और मुक्ति के सन्दर्भ मे ंमहायोगी गोरक्षनाथ ने ऐसा सहज मार्ग प्रतिपादित किया जो सभी के लिए सर्व-सुलभ था। महायोगी ने समाज का मार्गदर्शन करते हुए कहा कि युक्ताहारविहारयुक्त संयमित जीवन ही शरीर का सुख है, यही स्वर्ग है। असंयमित तथा आहार-विहार-व्यतिक्रमजन्य रोगाक्रान्त अवस्था ही दु:ख है, यही नरक है। अपने संकल्प की पूर्ति के रूप में फलप्राप्ति की भावना से किए गए कर्म ही बन्धन हैं और संकल्प शून्य इच्छारहित सहज-स्वाभाविक अवस्था ही निर्विकल्पता है, यही मुक्ति अथवा कैवल्य है। यद्यपि अज्ञानी की दृष्टि में निद्रादिरूपता ही स्वरूपस्थिति कही गयी है, तथापि यह शुद्ध-बुद्ध आत्मबोधरूप प्रपंचातीत अवस्था ही आत्मजागृति हैं, इससे शान्ति प्राप्त होती है, यही जीव-मुक्ति है। इस तरह सभी देहों में विश्वरूप परमात्मा-परमेश्वर अखण्ड-स्वरूप घट-घट में चित्तस्वरूप व्याप्त है। यथा-

यत्सुखं तत्स्वर्गं, यद्दु:खं तन्नरकं, यत्कर्म तद्बन्धनं,
यन्निर्विकल्पं तन्मुक्ति: स्वरूपदशायां निद्रादौ स्वात्मजागर:
शान्तिर्भवति। एवं सर्वदेहेषु विश्वरूप परमेश्वर:
परमात्माऽखण्डस्वभावेन घटेघटे चित्स्वरूपोतिष्ठति।

(सिद्धसिद्धान्तपद्धति, 3.13)

नाथपन्थ के योगियों ने बार-बार कहा कि पाप-पुण्य हमारे कर्मों के आधार हैं। परमात्मा को स्मरण करते रहने मात्र से मोक्ष-मुक्ति पाया जा सकता है। योग के सहज मार्ग के द्वारा अपने शरीर के भीतर ही निर्वाण अर्थात मुक्ति पाया जा सकता है। महायोगी गोरखनाथ कहते हैं कि सातो द्वीप और नवखण्ड एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड हमारे शरीर में ही विद्यमान हैं। अलख-निरंजन परमेश्वर, सूर्य, चन्द्रमा हमारे शरीर में ही हैं। बाह्यवृत्तियों को समेट कर अपने शरीर के भीतर ही परब्रह्म का साक्षात्कार करना चाहिए।

पाप पुंन करम का बासा। मोष मुक्ति चेतहु हरि पासा।
जोग जुक्त जब पाओ ग्यांना। काया षोजौ पद नृबाना।।
सप्तदीप नवखंड ब्रह्मण्डा। धरती आकास देवा रवि चंदा।
तजिबा तिहुँ लोक निवासा। तहाँ निरंजन जोति प्रकासा।।

(प्राणसंकली, 2-3)

लगभग एक हजार वर्ष पहले जबकि इस्लाम अभी भारत में अपनी जड़ जमाने के प्रयत्न कर रहा था। धार्मिक आधार पर हिन्दू-मुस्लिम टकराहट की अनुगूँज सुनाई पड़ने लगी थी। हिन्दू-मुस्लिम के बीच की विभाजन रेखा को समाप्त करने के प्रयत्नस्वरूप नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी के स्वर बार-बार मुखरित हुए। गोरखनाथ ने उपदेश देते हुए कहा कि-

उतपति हिन्दू जदणां जोगी अकलि पीर मुसलमांनी।
ते राह चिन्हो हो काजी मुलां ब्रहमा बिस्न महादेव मांनी।। (सबदी-14)

महायोगी गोरखनाथ ने इस्लाम-अनुयायियों को मुहम्मद साहब के उपदेशों के सार-तत्त्व को ग्रहण करने का उपदेश देते हुए कहा कि, हे काजी! परमात्मा के सन्देशवाहक रसूल मुहम्मद साहब का नाम रटने की बजाय उनके विचार की गहनता को समझो। मुहम्मद के हाथ में लोहे या धातु का बना शस्त्र नहीं था, अपितु प्रेम-मय शक्ति का भाव-शब्द था। यथा-

महंमद-महमंद न करि काजी महमंद का विषम विचारं।
महंमद हाथि करा जे होती लोहै घड़ी न सारं।।

(सबदी- 9)

नाथपन्थ का अपने अभ्युदय काल से ही उपासना की जटिलता, धार्मिक आडम्बर, पाखण्ड का प्रबल विरोधी स्वर था। जाति, पन्थ, क्षेत्र, लिंग इत्यादि के समस्त विभेदों के विपरीत सामाजिक एकता एवं समरता को नाथपन्थी योगी समर्पित थे। स्पष्ट है कि महायोगी गोरक्षनाथ ने कर्मकाण्ड-पाखण्ड मुक्त उपासना पद्धति दी जो जाति-पाति, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब सभी के लिए एक समान सहज रूप से सुलभ था। वस्तुतः यह नाथपन्थ की एक सामाजिक क्रान्ति थी। ऐसी सामाजिक क्रान्ति जो हर व्यक्ति को हँसते-खेलते जीवन का सूत्र दे रही थी। गोरक्षनाथ की सबदी जन-जन के ओठों पर गूँज रही थी। यथा-

हसिबा षेलिबा रहिबा रंग। काम क्रोध न करिबा संग।।
हसिबा षेलिबा गाइबा गीत। दिढ़ करि राषि आपनां चीत।
हसिबा षेलिबा धरिबा ध्यांन। अहनिसि कथिबा ब्रह्म गियांन।
हसै षेलै न करै मन भंग। ते निहचल सदा नाथ के संग।।

(सबदी7-8)

नाथपन्थ ने समरस समाज की स्थापना में धार्मिक-आध्यात्मिक दर्शन का न केवल प्रतिपादन किया अपितु सभी जातियों के लिए धर्म-अध्यात्म-योग को सुलभ बना दिया। गोरखनाथ के इसी अभियान का परिणाम था कि भक्ति आन्दोलन में नीच कही जाने वाली जातियों के भक्त ताल ठोककर आगे आए। नाथपन्थ में भी नीच कही जाने वाली जातियों के लोग बड़ी संख्या में दीक्षित हुए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है कि 84 सिद्धों में बहुत से मछुए, चमार, धोबी, डोम, कहार, लकड़हारे, दर्जी तथा और बहुत से शूद्र कहे जाने वाले लोग थे। यहाँ तक कि बड़ी संख्या में इस्लाम के अनुयायी भी नाथपन्थ में दीक्षित हुए। नाथपन्थ के प्रभाव में ही भारत में सूफी मत में योग-ध्यान विकसित हुआ। महायोगी गोरक्षनाथ एवं नाथपन्थी योगियों ने भारतीय जाति व्यवस्था में कोढ़ की तरह व्याप्त जाति व्यवस्था के ऊँच-नीच, छुआ-छूत के विरुद्ध जो अभियान चलाया उसी का परिणाम था कि भारत की सामाजिक-राष्ट्रीय चेतना में एकता के सूत्र बचे रहे।

राष्ट्रीय-सामाजिक एकता की पुनर्प्रतिष्ठा समय की माँग थी। धर्म-अध्यात्म के सात्विक स्वरूप की पुनर्स्थापना के साथ उसके प्रति सामाजिक आस्था उत्पन्न करना भारतीय संस्कृति की सनातन धार्मिक-आध्यात्मिक परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए अपरिहार्य था। दु:ख से मुक्त आनन्द एवं सुख की खोज में भटकती मानवता को सर्वस्वीकार्य पथ चाहिए था। भारत की सनातन संस्कृति में सर्वप्रतिष्ठित जीवन-मूल्य 'सदाचरण' को समाज में प्रतिष्ठा चाहिए थी। महायोगी गोरखनाथ इसी कार्य हेतु भारत की पावन भूमि पर अभ्युदित हुए। यह महायोगी भारत में अपनी यौगिक क्षमता का चमत्कार दिखाने नहीं समाज बदलने ही आया था। इस महायोगी ने भारतीय समाज में सदाचरण

पर आधारित योग-केन्द्रित जन-सामान्य के लिए सुलभ मोक्ष-मार्ग के दार्शनिक-व्यावहारिक अधिष्ठान पर उसी सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात किया जो उससे हजार वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध-महावीर जैन ने प्रारम्भ की थी। दया-करुणा परपीड़ाहरण के साथ सामाजिक विकृतियों के खिलाफ तनकर खड़े गोरखनाथ ने विश्व-बन्धुत्त्व, विश्वप्रेम, सहानुभूति, मानव-मानव की समानता, जीव-मात्र के जीवन की पवित्रता, न्याय एवं स्वतन्त्रता के अधिकार, सत्य का आदर, नि:स्वार्थ सेवा, मानव जाति की एकता, ब्रह्माण्ड की एकता, मानवजाति को उच्च से उच्चतर सभ्यता की ओर ले जाने वाले धार्मिक-आध्यात्मिक दर्शन का प्रतिपादन किया। गोरखनाथ और उनके नाथपन्थी योगियों ने मानव-जाति को सिखाया-आत्मसंयम आत्मतुष्टि से श्रेष्ठ है, बलिदान योग से महान है, आत्म विजय दूसरों की विजय से श्रेष्ठ है; आध्यात्मिक उन्नति भौतिक उन्नति से महान है, विश्वप्रेम सर्वनाशी पाशविक शक्ति से कहीं श्रेष्ठ है; आत्मा के शाश्वत हित में संसार की बड़ी से बड़ी वस्तु का त्याग श्रेष्ठतर है। महायोगी गोरखनाथ ने न केवल वैचारिकी एवं दर्शन का प्रतिपादन किया अपितु योगियों की एक ऐसी श्रृंखला खड़ी की जिन्होंने उनके विचार-दर्शन को लोकभाषा में जन-जन तक पहुँचाया। जातियों में ऊँच-नीच एवं भेद-भाव की दीवारें तोड़ दी। सभी के लिए ईश्वर तक जाने का एक योग-मार्ग प्रतिष्ठित कर दिया। धर्म-अध्यात्म का द्वार सभी के लिए एक समान रूप से खोल दिया। पूजा-पाठ अथवा उपासना पद्धतियों की जटिलताएँ समाप्त कर दी। तन-मन को स्वस्थ रखते हुए ऐहिक जीवन के आनन्द के साथ पारलौकिक जीवन के प्रश्नों का सहज उत्तर प्रस्तुत किया। सदाचरण एवं लोक-कल्याण को धर्म-अध्यात्म का मूलमन्त्र बनाया। वस्तुत: महायोगी गोरखनाथ ने इस धरती पर भारत की सनातन संस्कृति को पुनर्जीवन दिया। भारत में एक नयी सामाजिक क्रान्ति को जन्म दिया।

मानव-जीवन के परम-लक्ष्य मोक्ष अर्थात् मुक्ति के लिए नाथपन्थ ने योगाधारित तन-मन की जो साधना विकसित की, लोक-कल्याण उस साधना का प्रबल पक्ष है। नाथपन्थ ने सुसभ्य, सुसंस्कृत, स्वस्थ समाज की रचना को ही लोक-कल्याण का स्थायी मार्ग माना। नाथपन्थी योगियों का मानना है कि समरस-संवेदनशील समाज लोक-कल्याण को समर्पित होगा। ऐसा समाज सेवा-भावी होगा। सेवा-भावी समाज दु:ख से मुक्त आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का समाज होगा। इसी सामाजिक परिवेश में नाथपन्थी योग-साधना अपने चरम-लक्ष्य तक पहुँची। वस्तुत: नाथपन्थ ने सेवा-साधना के बल पर लोक-कल्याण और योग-साधना के द्वारा मोक्ष का मार्ग प्रशस्त किया।

नाथपन्थ के योगियों ने नाथपन्थ की सामाजिक-राष्ट्रीय समर्पण की परम्परा को अनवरत बनाए रखा। सामाजिक समरसता एवं भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई। नाथपन्थ के मठ-मन्दिर सेवा-साधना के केन्द्र बने रहे। उत्तर-प्रदेश के गोरखपुर में स्थित श्रीगोरक्षपीठ एवं श्रीगोरखनाथ मन्दिर नाथपन्थ का सर्वोच्च केन्द्र है। यह नाथपन्थ के आचार-विचार

का साक्षात् स्वरूप प्रस्तुत करता है।

श्रीगोरक्षपीठ एवं श्रीगोरक्षनाथ मन्दिर के महन्तों की अद्यतन यशस्वी परम्परा इस बात की साक्षी है कि महायोगी गोरक्षनाथ एवं नाथपन्थ के सामाजिक समरसता एवं राष्ट्रीय एकता-अखण्डता के सिद्धान्त आज भी नाथपन्थ के योगियों के आचरण-व्यवहार का हिस्सा है। श्रीगोरक्षपीठ के आधुनिक शिल्पी योगिराज बाबा गम्भीरनाथ जी (ब्रह्मलीन 1917 ई.) ने श्री गोरक्षपीठ की स्वतन्त्रता आन्दोलन में सक्रिय भूमिका बनाए रखी। इससे पूर्व इस मठ के महन्त श्री गोपालनाथ जी महाराज (1855 ई.-1880 ई.) अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तार किए जा चुके थे। योगिराज बाबा गम्भीरनाथ जी के मार्गदर्शन में पले-बढ़े महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज स्वतन्त्रता आन्दोलन के सक्रिय सिपाही थे। उन्होंने साधु-संन्यासियों को मठ-मन्दिर से बाहर निकलकर समाज-राष्ट्र के लिए कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने नाथपन्थ के योगियों को संगठित किया तथा 'अखिल भेष बारह पन्थ योगी महासभा' की स्थापना कर उन्हें एक मंच पर लाए। सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध योगियों को जन-जागरण का संदेश दिया और उन्हें समाज के बीच जाने हेतु प्रेरणा दी। परतन्त्र भारत को स्वतन्त्र कराने के अभियान में पहले कांग्रेस के साथ कार्य किया। कांग्रेस की मुस्लिम तुष्टीकरण नीति के विरुद्ध कांग्रेस छोड़कर हिन्दू महासभा की सदस्यता ग्रहण कर स्वतन्त्रता संग्राम में अनवरत सक्रिय रहे। आजाद भारत में उन्होंने भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में अपनी कर्मयोगी संन्यासी की भूमिका का सफलतापूर्वक निवर्हन किया और युग प्रवर्तक कहलाए।

वस्तुतः श्रीगोरक्षपीठ एवं श्रीगोरखनाथ मन्दिर की महन्त-परम्परा सेवा एवं योग साधना का समन्वित नाथपन्थी प्रतिमान बना। ऐसा प्रतिमान जो भारत की सनातन संस्कृति का भी प्रतिनिधित्व करता है। इस पीठ ने बीसवीं शताब्दी में शिक्षा एवं स्वास्थ्य को मानव-सेवा का प्रस्थान बिन्दु मानकर अपनी युगानुकूल भूमिका का विस्तार किया। गो-सेवा इस पीठ का प्रारम्भ से ही अधिष्ठान रहा है। शिक्षा एवं स्वास्थ्य को श्रीगोरक्षपीठ ने जन-सेवा का आधार माना। महन्त दिग्विजयनाथ जी ने 1932 ई. में महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् की नींव रखी। 1948 ई. तक महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् ने प्राथमिक से लेकर उच्चशिक्षा तक की शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना कर दी। भारतीय संस्कृति के अनुरूप विकसित ये शिक्षण संस्थाएँ भी आजाद भारत में शिक्षण-संस्थान का मॉडल बनीं। गोरखपुर विश्वविद्यालय की स्थापना इसी सेवा-साधना के संकल्प का परिणाम था। इस क्षेत्र में प्रथम महिला महाविद्यालय (महाराणा प्रताप महिला महाविद्यालय, जो विश्वविद्यालय की स्थापना का हिस्सा बन गया) तकनीकी शिक्षा के लिए प्रथम पॉलीटेक्निक (महाराणा प्रताप पॉलीटेक्निक, गोरखपुर 1956 ई.) प्रथम आयुर्वेदिक कालेज (दिग्विजयनाथ आयुर्वेदिक कालेज-1971 ई.) की स्थापना का श्रेय श्रीगोरक्षपीठ को ही है। वर्तमान में श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा संचालित लगभग चार दर्जन सेवा-संस्थानों में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक की शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थाएँ, चिकित्सा

एवं चिकित्सा शिक्षा के संस्थान, तकनीकी ज्ञान-विज्ञान के संस्थान, कृषि के वैज्ञानिक विकास हेतु कृषि विज्ञान केन्द्र, गो-सेवा एवं दरिद्र नारायण सेवा जैसी संस्थाएँ संचालित हैं। मानव-पशु-पक्षी सहित सेवा के सभी आयामों पर श्रीगोरखनाथ मन्दिर कार्य करता है। श्रीगोरक्षपीठ दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में गुणवत्तायुक्त शिक्षा एवं गाँव के गरीब, मजदूर, असहायों तक नि:शुल्क चिकित्सा पहुँचाने में अहर्निश जुटा हुआ है। प्रतिवर्ष लगभग 750 छात्र-छात्राओं एवं खिलाड़ियों को छात्रवृत्ति, लगभग 500 संस्कृत विद्यार्थियों के नि:शुल्क छात्रावास में रहकर वस्त्र, भोजन एवं पढ़ाई की सम्पूर्ण व्यवस्था, प्रतिवर्ष लगभग 5000 रोगियों का नि:शुल्क उपचार, लगभग 2000 गरीबों का नि:शुल्क आँख का ऑपरेशन तथा गरीब एवं असहायों की आर्थिक सहायता श्रीगोरक्षपीठ की सेवा-साधना अभियान का हिस्सा है। वस्तुत: दीन-दुखियों की सेवा भी श्रीगोरक्षपीठ के महन्त की साधना है। श्रीगोरक्षपीठ की यही साधना सामाजिक समरसता का मजबूत आधार-स्तम्भ बनता है।

युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के बाद 29 सितम्बर 1969 ई. को इस पीठ के पीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज हुए। 08 फरवरी 1942 ई. को ही महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज ने श्री अवेद्यनाथ जी महाराज को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। उत्तराधिकारी के रूप में 1940 से ही श्री अवेद्यनाथ जी महाराज नाथपन्थ की यशस्वी परम्परा के पथिक बन चुके थे। सामाजिक समरसता एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को अपना पूरा जीवन समर्पित करने वाले महायोगी गुरु श्री गोरक्षनाथ के इस प्रतिनिधि योगी ने भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक परिवर्तन में अद्वितीय भूमिका निभाई। पाँच बार उत्तर प्रदेश की विधान सभा में विधायक तथा भारत की लोकसभा के चार बार सांसद रहते हुए उन्होंने भारतीय राजनीति को एक नयी परिभाषा दी। 1980 में मीनाक्षीपुरम् में हुए धर्म-परिवर्तन से दु:खी इस संन्यासी ने राजनीति से संन्यास की घोषणा करते हुए भारत के गाँव की गलियों में घूम-घूम कर छुआ-छूत एवं ऊँच-नीच के विरुद्ध जन-जागरण अभियान चलाया। वे श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन को भारत की सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अस्मिता से जोड़कर उसका सफल नेतृत्व करते हुए भारत में एक अपने तरह की अलग सामाजिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक क्रान्ति के अगुवा बने। पटना के हनुमान मन्दिर में दलित पुजारी बनाने, काशी के डोमराजा के घर भोजन करने, श्रीरामजन्मभूमि के शिलान्यास की पहली ईंट दलित से रखवाने जैसे अपने मौलिक प्रयोगों से उन्होंने भारत में सामाजिक समरसता एवं राष्ट्रीय एकता-अखण्डता का जो संदेश दिया, उसने इस नाथपन्थ के योगी को एक विशिष्ट सन्त के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई और राष्ट्रसन्त की उपाधि प्राप्त की।

महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज ने बसन्त पंचमी 1994 को अपना उत्तराधिकारी अपने शिष्य श्री योगी आदित्यनाथ जी महाराज को बनाया। 14 सितम्बर, 2014 को योगी आदित्यनाथ जी महाराज नाथपन्थ की इस सर्वोच्च पीठ के पीठाधिपति बने। नाथपन्थ की यशस्वी परम्परा को आगे

बढ़ाने वाला एक ऐसा 'आदित्य' मिला जो प्रातः सूर्य की शीतल लालिमा तथा दोपहर के समय तपते प्रखर सूर्य के ताप को एक साथ साधकर चलने वाला सिद्ध तपस्वी है। नाथपन्थ योग-अध्यात्म में तपा यह संन्यासी वास्तव में अपने गुरु की प्रतिध्वनि 'अवेद्य' को परिभाषित करता है। कोई यह दावा नहीं कर सकता कि वह महन्त योगी आदित्यनाथ को पूर्णतः जानता है। मध्य रात्रि के 12 बजे शयन कक्ष में जाने वाला यह तपस्वी ब्रह्ममुहूर्त में 3 बजे से अपनी अगली दिनचर्या प्रारम्भ कर देता है। नाथपन्थ की सभी पान्थिक परम्पराओं का निर्वहन करते हुए भारत की सामाजिक समरसता एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की एक-एक कड़ी को मजबूत करने की अद्‌भुत सिद्धि के धनी इस संन्यासी को दुनिया आज भारत के सबसे बड़े और सर्वाधिक समस्याग्रस्त प्रदेश उत्तर-प्रदेश को सुशासन, सुव्यवस्था और सुविकास के पथ पर तेजी से अग्रसर करते हुए देख रही है। भारत की राजनीति में एक नयी कार्य-संस्कृति को जन्म देने वाले माननीय प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी का राजनीतिक प्रतिरूप बनता हुआ नाथपन्थ का यह संन्यासी नाथपन्थ के लोक-कल्याण पथ पर साहस, दृढ़ता, अद्‌भुत निर्णय क्षमता के साथ सभी बाधाओं को वेधता हुआ बेरोक-टोक गतिमान है।

महायोगी गोरक्षनाथ के इस यशस्वी प्रतिनिधि श्री महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने धार्मिक-आध्यात्मिक क्षेत्र में श्री गोरखनाथ मन्दिर की समस्त परम्पराओं को आगे बढ़ाया है। यद्यपि कि भारत की सन्त परम्परा का मूल्यांकन जाति-पाति आधारित नहीं हो सकता तथापि देश के तथाकथित बुद्धिजीवियों एवं मीडिया की जानकारी के लिए यहाँ बताना आवश्यक लगता है कि श्रीगोरखनाथ मन्दिर में बिना किसी जाति-पाति, मत-मजहब के भेद के सभी को पूजा-पाठ हेतु प्रवेश की छूट है। श्रीगोरक्षनाथ मन्दिर के प्रधान पुजारी दलित हैं। श्री गोरक्षपीठाधिपति के भण्डारे के कई भण्डारी दलित जाति के हैं। श्री गोरक्षनाथ मन्दिर द्वारा संचालित मठ-मन्दिरों के पुजारी बिना जाति-पाति पूछे नाथपन्थ की दीक्षा के आधार पर महन्त एवं पुजारी बनते हैं।

श्रीगोरखनाथ मन्दिर का भण्डारा सभी के लिए खुला होता है। प्रतिदिन महायोगी गोरखनाथ को भोग लगाने के बाद आस-पास के सभी को सहभोज हेतु भण्डारा खुल जाता है। प्रतिदिन लगभग 500 भक्त, दीन-दुखी, गरीब एवं असहाय प्रसाद के रूप में भोजन ग्रहण करते हैं। मन्दिर की गोशाला गो-सेवा का एक विशिष्ट मॉडल है। वर्ष भर के पर्व-त्योहार पर श्रीगोरखनाथ मन्दिर एवं उसके महन्त का सामाजिक सहभाग भी अपने तरह का अनूठा है। विजयादशमी पर्व पर श्रीराम का राजतिलक, शस्त्रपूजन, शोभा-यात्रा, महाशिवरात्रि पर्व पर भव्य-आयोजन, कृष्ण-जन्माष्टमी पर कृष्ण-जन्मोत्सव, दीपावली पर एक दीप शहीदों के नाम के साथ दीपोत्सव एवं वनटाँगियों के साथ गोरक्षपीठाधीश्वर का दीपावली मनाना, होली में नृसिंह की पूजा के साथ होलिका दहन के जुलूस में सम्मिलित होना तथा भगवान नृसिंह के रथ पर सवार होकर हजारों की संख्या में होलिकोत्सव

मनाती महानगर की जनता के साथ रंग खेलना तथा विगत तीन वर्षों से अयोध्या में दीपोत्सव मनाने की अनूठी परम्परा की नींव रखना इस पीठ के सामाजिक सहभाग के कुछ विशिष्ट उदाहरण हैं। ये सभी आयोजन सामाजिक समरसता एवं सामाजिक एकता को ही समर्पित होते हैं।

श्रीगोरक्षनाथपीठ योग को जन-जन तक पहुँचाने हेतु मासिक पत्रिका 'योगवाणी' के प्रकाशन, लोगों के सुख-दुख में सम्मिलित होने, लोक-कल्याण से जुड़े हर धार्मिक-सामाजिक-राजनीतिक विषय पर सक्रिय हस्तक्षेप के द्वारा जन-सरोकारों से जुड़ी हुई है। श्रीगोरक्षपीठ ने एकान्तिक योग-साधना के साथ-साथ सेवा और सामाजिक सहभाग का मॉडल देश-दुनिया के मठ-मन्दिरों के लिए प्रस्तुत किया है। नाथपन्थ की यह सर्वोच्च धर्मपीठ नाथपन्थ के वैचारिकी, भारतीय सनातन संस्कृति के मूलतत्त्व एवं 'हिन्दुत्त्व ही राष्ट्रीयता' के वैचारिक अधिष्ठान का संगम है। श्री गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वरों ने स्वतन्त्र भारत में लोक-कल्याणार्थ भारतीय राजनीति में भी सक्रिय हस्तक्षेप किया। धर्माधारित राजनीति के सिद्धान्त को मूर्त रूप दिया। आज उत्तर प्रदेश को योग्यतम शासन एवं नयी कार्यसंस्कृति देने में जुटे श्री योगी आदित्यनाथ जी श्रीगोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर, श्रीगोरखनाथ मन्दिर के महन्त, नाथपन्थ के सर्वोच्च धर्मगुरु हैं।

■

Vimarsh

An Interdisciplinary Journal

Subscription Form

Editor,
Vimarsh
Maharana Pratap P.G. College
Jungle Dhusan, Gorakhpur-273014

Dear Editor,
I/ We should like to subscribe to the *Vimarsh*, an interdisciplinary journal, published by you. Subscription amount Rs./US$..........................is being enclosed herewith by cheque*/demand draft no...drawn on .... Kindly enrol my/ our - Annual/ Five Year/ Life subscription** and arrange to send the issues of the journal on the following address:

Name of Individual/ Institution : ....
Address : ....
....
City : ....Pin/Zip :..

State : ....Country :...

Subscription Rates

	Individual		Institutional	
Annual	Rs. 100	US $ 5	Rs. 200	US $ 10
Five Years	Rs. 400	US $ 20	Rs. 800	US $ 40
Life (15 Years)	Rs. 1300	US $ 60	Rs. 2500	US $ 100

* All cheques/demand drafts should be drawn in favour of ***Pracharya, Maharana Pratap Snatkottar Mahavidyalaya, Jungle Dhusan*** payable at **Gorakhpur**. In case of outstation cheques please add Rs. 30/US$ 2 for clearing expenses.

** Please tick the desired subscription period.

Maharana Pratap P.G. College
Jungle Dhusan, Gorakhpur-273014
Mob.: 9794299451, 9452971570 • E-mail : vimarshmppg@gmail.com

GUIDELINES FOR CONTRIBUTORS

1. Contribution should be submitted in duplicate, the first two impressions of the typescript. It should be typed in font Walkman-Chanakya (Hindi) and in Times New Roman (English) on a quarter or foolscap sized paper, in double-space and with at least one and a half inch margin on the right. Two copies of a computer printout along with a CD are preferred. They should subscribe strictly to the journal format and style requirements.
2. The cover page of the typescript should contain: (i) title of the article, (ii) name(s) of author(s), (iii) professional affiliation, (iv) an abstract of the paper in less than 150 words, and (v) acknowledgements, if any. The first page of the article must also provide the title, but not the rest of the item of cover page.
3. Though there is no standard length for articles, a limit of 5000 words including tables, appendices, graphs, etc., would be appreciated.
4. Tables should preferably be of such size that they can be composed within one page area of the journal containing about 45 lines, each of about 85 characters (letter/digits). The source(s) should be given below each table containing data from secondary source(s) or results from previous studies.
5. Figures and charts, if any, should be professionally drawn using such materials (like black ink on transparent papers) which allow reproduction by photographic process. Considering the prohibitive costs of such process, figures and charts should be used only when they are most essential.
6. Indication of notes should be serially numbered in the text of the articles with a raised numeral and the corresponding notes should be given at the end of the paper.
7. A reference list should appear after the list of notes. It should contain all the articles, books, reports, etc., referred in the text and they should be arranged alphabetically by the names of authors or institutions associated with those works:
   (a) Reference to books should present the following details in the same order: author's surname and name (or initials), year of publication (within brackets), title of the book (underlined/ italic), place of publication. For example:

   Chakrabarti, D.K. (1997), *Colonial Indology: Socio-politics of the Ancient Indian Past,* pp. 224-25, New Delhi

   (b) Reference to institutional publications where no specific author(s) is(are) mentioned should present the following details in the same order, institution's name, year of publication (within brackets), title of the publication (underlined/italic), place of publication. For example:

   Ministry of Human Affairs (2001), *Primary Census Abstract,* New Delhi, pp. xxxviii.

   (c) Reference to articles in periodicals should present the following details in the same on: the author's surname and name (or initials), year of publication (in brackets), title of the article (in double quotation marks), title of periodical (underlined/italic), number of the volume and issue (both using Arabic numerals); and page numbers. For example:

   Siddiqui, F.A. and Naseer, Y. (2004), "Educational Development and Structure of Works participation in western Uttar Pradesh", *Population Geography,* Vol. 26, Nos. 1&2, pp.25-26.

   (d) Reference in the text or in the notes should simply give the name of the author or institution and the year of publication, the latter within brackets; e.g. Roy (1982), Page numbers too may be given wherever necessary, e.g. (Roy 1982: pp. 8-15)

विमर्श

अन्तः अनुशासनात्मक शोध पत्रिका

हिन्दू जीवन पद्धति दुनिया की श्रेष्ठतम् जीवन पद्धति है। हमारे ऋषियों महर्षियों ने अनेक पीढ़ियों की तपस्या से मानवता को सुख और शान्ति प्रदान करने वाली संस्कृति का विकास किया। मनुष्य की कौन कहे इस सृष्टि के चर-अचर सभी में ईश्वर का दर्शन किया और इसका उपदेश दिया। ऐसी श्रेष्ठतम् संस्कृति में छूत-अछूत, ऊँच-नीच, पुरुष-महिला विभेद की बात हास्यापद लगती है। यह हिन्दू समाज की विकृति है जिसे दूर किए बगैर हिन्दू संस्कृति के तेजोमय प्रकाश का दर्शन नहीं किया जा सकता।

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

ISSN 0976-0849

9 770976 084007

महाराणा प्रताप स्नातकोत्तर महाविद्यालय
जंगल धूसड़, गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

Published by Maharana Pratap Post Graduate College, Jungle Dhusan, Gorakpur (U.P.)
E-mail : vimarshmppg@gmail.com
Printed at : LAXDEEP DIGITAL INDIA (Delhi, Bharat) 783 897 5278, 770 389 2262